भा र त में
अँगरेजी अत्याचार

Bharat Main Angreji Atyach

भारत में अँगरेजी अत्याचार

Ram Sharan

लेखक—रामशरण विद्यार्थी

एम० ए० एल० एल० बी०

Dip Shika Karyalaya,

दीप शिखा कार्य्यालय, हाथरस

Hathras

प्रकाशक—
जयकिशोर शर्मा
किला गेट, हाथरस

6/—

मूल्य छै रुपया

मुद्रक—
जयकिशोर शर्मा
परिवर्तन प्रेस हाथरस

सूची

भाग—१—विगत इतिहास पर एक दृष्टि

भाग—२—भारत छोड़ो आन्दोलन को लाने वाली घटनाएँ

भाग—३—भारत की रक्षा और स्वतंत्रता

भाग—४—सन् बयालीस का अगस्त आन्दोलन

भाग—५—सरकारी ज्यादतियाँ

भाग—६—क्या काँग्रेस पर आन्दोलन का उत्तरदायित्व है ?

भाग—७—गम्भीर चेतावनी

भाग—८—विश्व के सुख और शान्ति का—सुप्रभात भारतीय स्वतंत्रता

परिशिष्ट

शुद्धिपत्र

भूमिका लेखक

भूमिका

अपनी पुस्तक की सामग्री एकत्रित करने में श्री विद्यार्थी जी ने बड़ा कष्ट उठाया है। इन्होंने अपनी सामग्री सरकारी प्रकाशनों, प्रान्तीय सरकार की रिपोर्टों तथा अन्य विश्वसनीय स्रोतों से संग्रह की है। ऐसेम्बली के वादाविवाद में जो सामग्री आई, उससे भी उन्होंने काफी सामग्री ली है।

हो सकता है कि इन्होंने जिन स्रोतों का आधार लिया है वह विश्वसनीय न हों, हो सकता है कि जिनको इन्होंने समझा वह ऐसे न रहे हों, परन्तु इसमें इनका अपराध नहीं। इन्होंने जो लिखा है उसके सत्य की खोज करने में पूर्ण सावधानी से काम लिया है और यह ऐसे व्यक्ति नहीं जिनको सरलता से धोका दिया जा सके।

श्री विद्यार्थी जी की यह पुस्तक अपने ढङ्ग की पहली पुस्तक होगी, जिसमें सन् ४२ के ऐतिहासिक वर्ष की घटनाओं की सम्पूर्ण कहानी का वर्णन है। मेरा विश्वास है कि इतिहास के विद्यार्थी इस पुस्तक को उपयोगी पाएँगे।

रफ़ी अहमद किदवई

१८-११-४६ ई०

पुस्तक के सम्बन्ध में

इतिहास मेरे लिए सदा एक रुचिकर विषय रहा है। जब भारत अगस्त सन् १९४२ के ऐतिहासिक दिनों में से गुजर रहा था तब मुझे फ्रांस की क्रान्ति के सम्बन्ध में वर्ड्सवर्थ का कहा हुआ निम्न पद याद आया "उस युग में जीवन धारण करना आनन्द था और तरुण होना तो स्वर्ग ही था" समय की आवश्यकता और स्फूर्ति से उत्साहित होकर अगस्त सन् ४२ के क्रान्तिकारी दिनों का इतिहास लिखने के लिए सामग्री एकत्र करने का निश्चय किया। परन्तु यह काम न हो सका क्योंकि कांग्रेसजन होने के नाते मुझको जेल में बन्द कर दिया गया। यद्यपि आन्दोलन के इतिहास की सामग्री एकत्रित करने का कार्य्य रुक तो अवश्य गया परन्तु जेल में उस कार्य्य के लिए मेरा निश्चय और भी दृढ़ होगया।

सन् ४३ में जेल से छूटने पर मैंने इस कार्य्य का दत्तचित्त हो प्रारम्भ किया। कानपुर में विशेष सुविधा देखकर अपने घर मेरठ को छोड़कर मई सन् ४४ तक वहीं ठहरा रहा। किसी प्रकार सरकार को मेरे इस कार्य का पता चल गया। सी० आई० डी० पुलिस ने २० मार्च सन् ४४ को कानपुर में मेरे स्थान की तलाशी ली, जिसमें उसको निराश होना पड़ा।

उसके बाद ४४ मई सन् ४४ को कानपुर से आने पर मेरठ में १६ मई सन् ४४ को मेरे घर की पुन: तलाशी ली गई, जिसमें अन्य पुस्तकों के साथ "भारत में अँगरेजी अत्याचार" नामक पुस्तक की पाण्डुलिपि भी पाई गई, और मुझ पर सी० आई० डी० द्वारा धारा ३९ (१) बी० भारत रक्षा विधान के अनुसार मुकदमा चलाया गया, और यह आरोप लगाया गया कि सामग्री आपत्तिजनक अर्थात् "राजद्रोहात्मक" है। सरकारी पक्ष का कहना था कि पाण्डुलिपि का कोई विशेष अंश तो नहीं बताया जा सकता परन्तु सर्व सङ्कलन ही आपत्तिजनक है।

मजिस्ट्रेट महोदय ने इस मत से सहमत होते हुए उक्त पाण्डुलिपि को आपत्तिजनक ठहराकर, इसका परिणाम ब्रिटिश भारत में कानून से स्थापित सरकार के विरुद्ध क्षोभ और घृणा फैलाना बतलाया, साथ ही इसको अपने पास रखने के अपराध में २४ जनवरी सन् ४५ को मुझे १८ मास के कठिन कारावास का दण्ड दिया गया।

जब मैं डिस्ट्रिक्ट जेल मेरठ में था तो १७ जून सन् ४५ को हिन्दोस्तान टाइम्स में (१५ जून सन् ४५) पं० जवाहरलाल नेहरू के अलमोड़ा जेल से छूटने पर दिये गए भाषण का उद्धरण पढ़ा।

'यदि अँगरेज यह सोचते हैं कि इन तमाम सालों में जेल में रखकर हमारे उत्साह को भङ्ग कर दिया, तो वह भारी भूल करते हैं, मैं कहता हूं वह भारी भूल करते हैं"। राजनीतिक

पीड़ितों की ओर सङ्केत करते हुये कहा "मेरा इससे कोई सम्बन्ध नहीं कि इन लोगों ने क्या किया, परन्तु यह पैशाचिक बात थी कि उनके अपराधों के लिए उनके कुटुम्बियों को पीड़ित किया जाय। ऐसा करने वाले जंगली थे, वे ऐसे लोग थे, जिन्होंने बेशर्मी के साथ अपने जंगलीपन को माना। कुछ ऐसे भी लोग थे जो इस जंगलीपन को चलाते रहे। इससे यह प्रतीत होता था कि मनुष्य गिरावट के गर्त में कितनी गहराई तक पहुँच सकता था और उससे यह भी प्रतीत होता था कि देश में किसके कारण वह अपना यह स्थान समझते थे।"

इन पंक्तियों ने मेरे अन्दर स्फूर्ति पैदा करदी कि मैं अपने पूर्व निश्चित इस ऐतिहासिक कार्य को पूरा करदूँ। पीड़ित भारत की सच्ची कहानी जनता के समक्ष फैसले के लिए रख दूँ। यदि सत्य और वह भी ऐतिहासिक सत्य का लिखना अपराध तथा राजविद्रोह है तो हर एक सच्चा इतिहास-लेखक इस बात का अपराधी हो सकता है, और फिर मैं ही स्वरक्षा का साहस किस प्रकार कर सकता हूं, कि अपने आप को निर्दोष साबित करके दण्ड से बचूँ।

जज ने इस मुकद्दमे में फैसला देते समय लिखा था कि अभियुक्त पहिले भी राजनीतिक अपराधों में सज़ा पा चुका है, लेकिन अब वह वकील हो गया है, और इस क्षेत्र में अपने को लगाये रखने का इरादा रखता है। मैं आशा करता हूं कि अपने जेल से छूटने पर, लगातार

वकालत करने से वह लाभ उठावेगा और यह अनुभव करेगा कि सुधार से पहिले यह आवश्यक है कि मुकदमे के वाक़यात को समझा जाय, बजाय इसके कि अनिश्चित तथा ऊपरी उदाहरण अन्य देशों तथा ऐसे समय के दिए जायँ, जो वर्तमान परिस्थितियों से लेशमात्र ही समानता रखते हों।" जज महोदय यह मानते हैं कि राजनीतिक मामलों में मुझको पहिले भी दण्ड दिया जा चुका है। भारतवर्ष जैसे गुलाम देश में देश प्रेम के अलावा और राजनीतिक अपराध हो ही क्या सकता है? जो अपने देश के स्वतन्त्रता युद्ध में लड़ने के लिए कमर कस चुके हैं, उनके विश्वास को जेल की दीवारें तः क्या, कोई भी शक्ति नहीं हिला सकती। मैं ब्रिटिश जज की नसीहत के बारे में केवल इतना ही कहना चाहता हूं कि "हकीम पहले अपना इलाज तो करे।"

अब मैं यह किताब, बिना किसी भेद भाव के सब पाठकों के सामने उपस्थित करता हूं। मेरी प्रार्थना है कि विदेशी पाठक जिनको भारत का अधिक ज्ञान नहीं है, या युवक और अनभिज्ञ भारतवासी भारत की वर्तमान सरकार के प्रति वैर और घृणा से भड़क न उठें। इस पुस्तक को लिखने का उद्देश्य केवल यह है कि आप शान्ति पूर्वक सोचें और सोचकर ही किसी निर्णय पर पहुँचें। भारत के विषय में काफ़ी जानकारी रखने वाले विदेशियों या वयोवृद्ध और अनुभवी भारत-वासियों का भारतस्थित अँगरेजी राज्य के सम्बन्ध में क्या निर्णय होगा यह छिपा नहीं है। फिर भी लेखक इच्छुक है कि वह घटनाओं पर अपनी सम्मति के रूप में कुछ शब्द लिखे,

जिनसे वास्तविकता स्पष्ट रूप से प्रकट हो जाय।

सन् १९४२—४३ में अँगरेजी ज्यादतियों के कारनामे अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुके थे, यहाँ तक कि ब्रिटिश सरकार द्वारा भारतवासियों पर किये गये १८५७ के, पंजाब मार्शल ला, तथा १९३० और ३२ के सत्याग्रहकालीन अत्याचार सन् १९४२—४३ में की गई ज्यादतियों के सामने फीके पड़ जाते हैं, और इस दावे को साबित करने के लिए मैंने ब्रिटिश सरकार के १८५७-१९१९-१९३० और १९३२ के कारनामों का थोड़ा विवरण भी दे दिया है। इसके साथ ही साथ मैंने उन घटनाओं का पूरा विवरण दिया है, जिनके फलस्वरूप गान्धी जी का "भारत छोड़ो" प्रस्ताव आया। कुछ परिणाम भी निकाले गए हैं जो कि ब्रिटिश सरकार की भारतीय शासन नीति से निकलने स्वाभाविक हैं। अपनी ओर से कोई आलोचना न करने का प्रयत्न किया गया है, क्योंकि बाद के पृष्ठों में दिए वाक़यात आप ही ब्रिटिश राज द्वारा किये गये कारनामों का आदि से अन्त तक वर्णन करते हैं। इस किताब को पढ़ने से यह ज्ञात हो जायगा कि भारत की ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत दशा, और भारतवासियों के साथ जो व्यवहार किया गया, वह न केवल जर्मनी में नाजियों के किये गये कारनामों बल्कि मानव-इतिहास के घोरतम् अन्धकार युग की याद दिलाता है।

जो सबूत जुटाये गये हैं वह उतने ही सच्चे और निष्पक्ष हैं, जितने वर्तमान परिस्थिति में होने सम्भव हैं, वह

केवल उदाहरणार्थ दिये गये हैं न कि उनकी पूर्ण रूप से गणना की गई है। क्योंकि प्रतिबन्धों के समय में जो कि भारत सरकार ने प्रायः भारतीय अधिकारियों द्वारा ही हम पर लाद दिये थे, ऐसा करना सम्भव न था।

अन्त में अपने भारतीय बन्धुओं को प्रेरणा की है कि वह हिम्मत न हारें, और मातृभूमि की स्वतन्त्रता के संग्राम को साहस के साथ चलाते रहें, साथ ही संसार के मनुष्यों को मानव-भावना से भी प्रेरणा की है कि वह भारत में अंगरेजी राज्य के द्वारा किये गये कृत्यों से उत्पन्न परिस्थिति का अनुभव करें।

पुस्तक के परिशिष्ट में गान्धी जी के तत्सम्बन्धी पत्र और भाषण तथा ८ अगस्त सन् ४२ का प्रस्ताव दे दिया गया है, जिससे वस्तुस्थिति का ठीक-ठीक अध्ययन किया जा सके।

यह पुस्तक जिन परिस्थितियों में लिखी गई है, वह समय ऐसा था जब भारत में नागरिक स्वतन्त्रता नाम मात्र को न थी, इस कारण मुझको सामिग्री एकत्र करने में बहुत अधिक कठिनाई का सामना करना पड़ा, और यथासम्भव सावधानी भी रखनी पड़ी। इस पर, पूरी सामिग्री एकत्र भी न कर पाया था कि मुझ पर मुकदमा चल गया। इसके पश्चात् बिना उपयुक्त परिस्थितियाँ आये इसके प्रकाशन का विचार ही छोड़ दिया था, क्योंकि इस पुस्तक को द्रोह–

राने और संशोधन करने का मुझे अवसर न मिल सका. इस कारण इसमें सम्भवतः ऐसी भी भूलें रह गई होंगी, जिनको दूर किया जा सकता था। उसके लिये मैं उदार पाठकों से क्षमा याचना करता हूं।

माननीय श्री रफ़ी अहमद किदवई (गृहमन्त्री यू० पी० सरकार) ने मेरी प्रार्थना पर इस पुस्तक की भूमिका लिखने की कृपा की है; मैं उनका हृदय से आभारी हूं।

प्रकाशक महोदय, तथा अन्य अनेकों मित्र जिन्होंने मुझे इस पुस्तक के प्रकाशन में सहायता दी है, उनका हृदय से कृतज्ञ हूं।

रामशरण विद्यार्थी
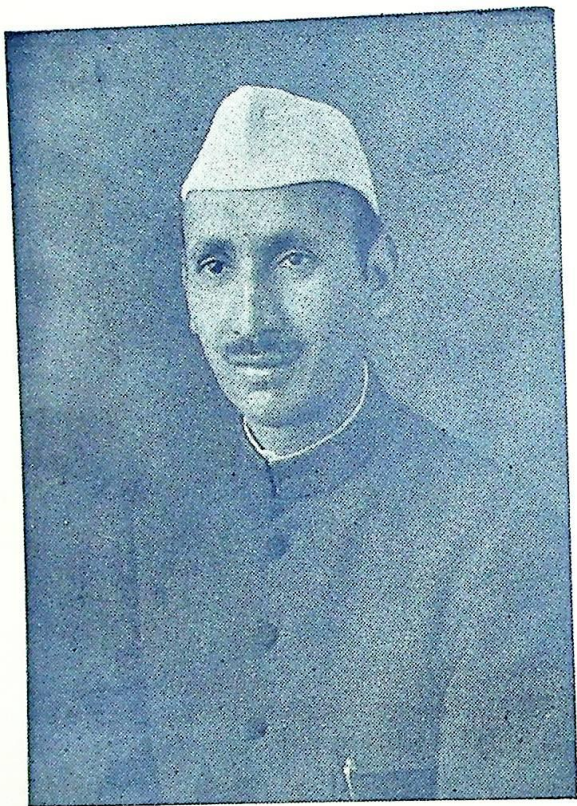
लेखक

प्रथम भाग

विगत इतिहास पर एक दृष्टि

प्रथम अध्याय

कम्पनी राज

भारत में अंग्रेजी राज का आरम्भ ईस्ट-इण्डिया कम्पनी के आधीन प्लासी के युद्ध सन् १७५७ ई० के समय से माना जाता है। इसी समय से भारतीयों के दिलों में अंग्रेजों और अंग्रेजी राज के प्रति क्रोध और असन्तोष के भाव बढ़ते जारहे थे। यह सब को विदित ही है कि किस प्रकार क्लाइव से लेकर डलहौजी के समय तक कम्पनी के प्रतिनिधियों ने अपने वादों और दस्तखती सन्धि-पत्रों की अवहेलना कर भारत की अगणित देशी रियासतों को अङ्गरेजी राज में मिला कर हड़प किया, किस प्रकार देश के प्राचीन उद्योग धन्धों को नष्ट कर लाखों भारतीयों से उनकी जीविका छीनी, किस प्रकार असहाय बेगमों और रानियों के महलों में घुस कर उन्हें लूटा और अपमानित किया, किस प्रकार अनेकों जमींदारों की जमींदारियाँ जब्त कीं, और किस प्रकार लाखों भारतीय किसानों को उनकी जमीनों और गृहों से वञ्चित किया। इन्हीं सब घटनाओं से भारतीय नरेश और साधारण जनता भारत में अङ्गरेजी राज के प्रति असन्तोष और विरोध के भाव से भर गई।

डलहौजी ने इस नीति का अनुसरण और भी अधिक वेग से किया। भारतीय नरेशों में जो गोद लेने की प्राचीन प्रथा थी उसे बन्द कर अनेक रियासतों को कम्पनी के राज में शामिल कर लिया। इससे भारतीय नरेशों, सरदारों और जमींदारों के दिलों में अङ्गरेजी राज के विरुद्ध क्रोधाग्नि धधक उठी। साधारण प्रजा को भी अङ्गरेजों का व्यवहार असह्य होता जा रहा था। अङ्गरेज अफ़सर अपने सामने से आने वाले घोड़े पर सवार भारतीयों को घोड़े से उतर कर चलने को वाध्य करते थे। उनके धार्मिक और सामाजिक रिवाजों का अपमान किया जाता था। एक बार सहारनपुर (संयुक्त प्रान्त) में एक अस्पताल खोला गया, जिसमें हर मज़हब और जाति के पुरुषों और स्त्री रोगियों को, यहाँ तक कि परदा नशीन स्त्रियों तक को इलाज के लिये इस अस्पताल में आने को विवश किया गया और देशी हकीम या वैद्य को किसी भी रोगी को दवा देने या इलाज करने से वर्जित किया गया। सब से अधिक उत्तेजक बात थी अङ्गरेजों की भारतीयों को ईसाई बनाने की आकांक्षा और योजना तथा अङ्गरेज अफ़सरों का भारतीय सेनाओं में ईसाई मत-प्रचार।

निम्न उद्धरणों से उपरोक्त बातें प्रमाणित होती हैं

मद्रास कौंसिल का सदस्य जॉन सलीवन लिखता है:—

"जब किसी देशी रियासत का अन्त किया जाता है, तो वहाँ के नरेश को हटा कर एक अंग्रेज उसकी जगह नियुक्त कर दिया जाता है। उस अंग्रेज को कमिश्नर कहा जाता है। तीन या चार दर्जन खानदानी देशी दरबारियों और मंत्रियों के स्थान पर कमिश्नर के तीन या चार सलाहकार नियुक्त हो जाते हैं। प्रत्येक देशी नरेश जिन सहस्रों सैनिकों का पालन करता है उनकी जगह हमारी सेना के चन्द सौ सिपाही नियुक्त कर दिये जाते हैं। वह पुराना छोटा-सा दरबार लोप हो

जाता है, वहाँ का व्यापार ढीला पड़ जाता है, राजधानी वीरान हो जाती है, लोग निर्धन हो जाते हैं, अंग्रेज फलते-फूलते हैं और स्पन्ज की तरह गंगा के किनारे से धन खींच कर उसे टेम्स के किनारे जा कर निचोड़ देते हैं।"

इतिहास लेखक लडलो लिखता है:—

"निस्संदेह यदि इस तरह के हालात में जिन नरेशों की रियासतें अङ्गरेजी राज में मिला ली गईं उनके पक्ष में अङ्गरेजों के विरुद्ध भारत वासियों के भाव न भड़क उठते तो भारतवासियों को मनुष्यत्व से गिरा हुआ कहा जाता। निस्संदेह एक भी स्त्री ऐसी न होगी जिसे इन रियासतों के अपहरण ने हमारा शत्रु न बना दिया हो, एक भी बच्चा ऐसा न होगा जिसे हमारे इन कार्यों के कारण फिरङ्गी राज के विरुद्ध आरम्भ से घृणा की शिक्षा न दी हो।"

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अध्यक्ष मिष्टर मैङ्गल्स ने १८५७ ई० में पार्लियामेण्ट के अन्दर कहा था:—

"परमात्मा ने हिन्दोस्तान का विशाल साम्राज्य इङ्गलिस्तान को सौंपा है। इसलिये ताकि हिन्दोस्तान के एक सिरे से दूसरे सिरे तक ईसा मसीह का विजयी झण्डा फहराने लगे। हममें से हर एक को अपनी पूरी शक्ति इस काम में लगा देनी चाहिये, ताकि समस्त भारत को ईसाई बनाने के महान कार्य में देश भर के अन्दर कहीं पर भी किसी कारण जरा भी ढील न होने पाये"

एक दूसरे विद्वान अँग्रेज रेवरेण्ड कनेडी ने लिखा:—

"हम पर कुछ भी आपत्तियाँ क्यों न आयें जब तक भारत में हमारा साम्राज्य कायम है तब तक हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि हमारा मुख्य उद्देश्य उस देश में ईसाई मत को फैलाना है। जब तक रासकुमारी से लेकर हिमालय तक सारा हिन्दोस्तान ईसा के मत को ग्रहण न

कर ले और हिन्दू और मुसलमान धर्मों की निन्दा न करने लगें तब तक हमें लगातार प्रयत्न करते रहना चाहिये। इस कार्य के लिये हम जितने भी प्रयत्न कर सकें, हमें करने चाहिये और हमारे हाथों में जितने अधिकार और जितनी सत्ता है, उसका इसी के लिये उपयोग करना चाहिये।"

"कॉजेज आफ दी इन्डियन रिवोल्ट" नामक पत्रिका का भारतीय रचयिता लिखता है :—

"सन् १८५७ के युद्ध में हिन्दुस्तानी सेना के बहुत से करनल सेना को ईसाई बनाने के अत्यन्त घोर तथा दुष्कर कार्य में लगे हुए पाये गये। उसके बाद यह पता चला कि इन जोशीले अफ़सरों में से अनेक × × × न रोज़ी के ख़याल से फ़ौज में भरती हुए थे, न इसलिये भरती हुए थे कि फ़ौज का कार्य उनकी प्रकृति के अत्यन्त अनुकूल था, बल्कि उनका केवल मात्र और एक मात्र उद्देश्य यही था कि इस ज़रिये से लोगों को ईसाई बनाया जाय। फ़ौज को उन्होंने ख़ास तौर पर इसलिये चुना कि शान्ति के दिनों में फ़ौज के अन्दर सिपाहियों और अफ़सरों दोनों को हद दरजे की फ़ुरसत रहती है, और वहाँ पर बिना ख़र्च, परिश्रम इत्यादि के या बिना गाँव-गाँव भटकने के हर तरफ़ बहुत बड़ी संख्या में ग़ैर ईसाई मिल सकते हैं। × × × इन लोगों ने हिन्दू और मुसलमान अफ़सरों और सिपाहियों में प्रचार करना और उनमें ईसाई पुस्तकों के अनुवाद और पत्रिकाएँ बाँटना शुरू किया। शुरू में सिपाहियों ने कभी घृणा के साथ और कभी उदासीनता के साथ यह सब बरदाश्त कर लिया। किन्तु जब इन लोगों का कार्य बराबर जारी रहा, जब इनके ईसाई बनाने के प्रयत्न दिन प्रति दिन अधिकाधिक गहरे और क्लेश कर होते गए, तो दोनों धर्मों के सिपाही चौंक उठे। × × × इस अरसे में ये विचित्र अफ़सर जिन्हे 'मिशनरी करनल' और 'पादरी लेफ्टेनेएट' कहा जाने लगा था, चुप न बैठे। सिपाहियों की सहन शीलता

से इनका साहस और बढ़ गया और वे पहले की अपेक्षा और अधिक जोश दिखलाने लगे । हिन्दू धर्म और इस्लाम की वह पहले से अधिक जोरदार शब्दों में निन्दा करने लगे। पहले से अधिक जोश के साथ वे इन अविश्वासी लोगों पर जोर देने लगे कि अपने तैंतीस करोड़ कुरूप देवी देवताओं को छोड़ कर उनकी जगह एक सच्चे परमात्मा की, उसके बेटे ईसा के रूप में पूजा करो । मोहम्मद और राम को अभी तक वे केवल ऐसे वैसे व्यक्ति कहा करते थे, अब वे उन्हें बड़े दगाबाज और पक्के धूर्त बतलाने लगे। × × × धीरे-धीरे इन धर्म प्रचारक करनलों ने सिपाहियों को रिश्वतें दे दे कर उन्हें ईसाई बनाना शुरू किया, और ईसाई बनने वालों को तरक्की तथा दूसरे इनामों का लालच भी दिया। इस नापाक काम में उन्होंने निर्लज्जता के साथ अपने अफसरी के प्रभाव का उपयोग किया। सिपाहियों ने एतराज किया, उनके यूरोपियन अफसरों ने वादा किया कि हर सिपाही को, जो अपना धर्म छोड़ देगा हवलदार बना दिया जायगा, हर हवलदार को सूबेदार मेजर बना दिया जायगा, इत्यादि। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय सिपाहियों में बहुत बड़ा असंतोष फैलने लगा।"

दूसरा अध्याय

--: सन् ५७ का स्वाधीनता - संग्राम :--

सन् ५७ के स्वाधीनता संग्राम के प्रारम्भ का बहाना गाय और सुअर की चरबी से सने हुए कारतूसों का प्रयोग था जो उसी समय भारतीय फ़ौजों में नये-नये उपयोगार्थ चालू किये गये थे। यह नये कारतूस हाथ से नहीं परन्तु दाँत से काटे जाते थे। सन् ५७ के संग्राम का वास्तविक रूप और महत्व स्वयं अंग्रेज इतिहास लेखकों द्वारा स्पष्ट रूप से प्रकट किया गया है। उनकी राय

नीचे उद्धृत करते हैं।

जस्टिन मेक्कार्थी लिखता है :—

"सच यह है कि हिन्दोस्तान के उत्तरीय और उत्तर पश्चिम प्रान्त के अधिकाँश भाग में देशी क़ौमें अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध खड़ी हो गईं × × × चरबी की कारतूसों का झगड़ा केवल इस तरह की एक चिनगारी थी जो अकस्मात इस समस्त स्फोटक मसाले में आ पड़ी। × × × वह एक राष्ट्रीय और धार्मिक युद्ध था!"

एक दूसरा इतिहास लेखक मैडले लिखता है :—

"किन्तु वास्तव में जमीन के नीचे ही नीचे जो स्फोटक मसाला अनेक कारणों से बहुत दिनों से तैयार हो रहा था, उस पर चरबी लगे हुए कारतूसों ने केवल दियासलाई का काम किया।"

चार्ल्स बॉल ने अपने विप्लव के इतिहास में लिखा है

डिज़रेली, जो बाद में इंगलिस्तान का प्रधान मंत्री हुआ, कहा करता था कि कोई भी मनुष्य कारतूसों को विप्लव का वास्तविक कारण नहीं मानता।

संयुक्त प्रान्त, देहली और बिहार के बहुत से स्थानों में अंग्रेजी सत्ता का अन्त कर भारतीयों ने स्वतंत्रता का हरा झन्डा फहराया। शेष भारत भी इसके प्रति उदासीन या मौन नहीं रहा परन्तु सर्वत्र भारत में अंग्रेजी राज को अन्त करने के थोड़े या बहुत प्रयत्न किये गये। अङ्गरेजों का साथ देने वालों में मुख्यतः सिख और गुरखे सिपाही थे। दूसरे सब भारतीय सिपाही भारतीय नरेशों, नवाबों और सरदारों के नेतृत्व में अङ्गरेज सेनाओं के विरुद्ध अनेकों लड़ाइयाँ सफलता पूर्वक लड़े। नागरिक शासन पूर्ण सफलता और व्यवस्था से सञ्चालित किया गया। यद्यपि बहुत से अङ्गरेज अफ़सर और साधारण व्यक्ति मारे गये, परन्तु अंग्रेज स्त्री

और बच्चों की रक्षा की गई। सिवाय एक दो ऐसी घटनाओं के जो कि भारतीय सैनिकों ने क्रोधावेश में और बिना क्राँन्तिकारी नेताओं की आज्ञा के कर डालीं। इसके विपरीत अङ्गरेज अत्याचारों और बदले की भावना से प्रेरित क्रूर कृत्यों की कहानी इतनी लम्बी, भयानक और घृणित है कि उनका विस्तृत वर्णन स्थानाभाव के कारण नहीं दिया जा सकता।

पुरुष, स्त्री और बच्चों के सताये जाने, कोड़े लगाने, फाँसी पर चढ़ाने और जान से मारने के अनेकों तरीके और उपाय सर्वत्र उपयोग में लाये गये। गाँव के गाँव बेधड़क जलाये गये और निर्दोष गाँव वालों को जीवित ही जलाया गया। जिन्होंने भागने का प्रयत्न किया वह या तो गोली का शिकार बनाये गये या धधकती हुई अग्नि में फेंके गये। उपरोक्त कथनों को प्रमाणित करने के लिये निम्न उद्धरण दिये जाते हैं।

"जनरल नील के सिपाही एक-एक गाँव में घुसते थे। जितने मनुष्य उन्हें मार्ग में मिलते थे उन्हें वे बिना किसी तमीज के तलवार के घाट उतार देते थे या गोली से उड़ा देते थे या फाँसी पर लटका देते थे। स्थान-स्थान पर फाँसी के तख्ते खड़े किये गये जिन पर चौबीस-चौबीस घन्टे बराबर काम जारी रहता था। जब इनसे भी काम न चला तो अङ्गरेज अफसरों ने दरख्तों की शाखों से फाँसी का काम लेना शुरू किया। जिस मनुष्य को फाँसी देनी होती थी उसे प्रायः हाथी पर बिठाया जाता था। हाथी को किसी ऊंची डाल के पास ले जाया जाता था। उस मनुष्य की गरदन रस्सी से डाल के साथ बाँध दी जाती थी फिर हाथी को हटा दिया जाता था और लटकती हुई लाश को उसी जगह छोड़ दिया जाता था।

"जो लोग फाँसी पर लटकाये जाते थे। उनके हाथ और पैरों को विनोद की गरज से अङ्गरेजी के अक्षर आठ और नौ (8 & 9) की शकल में बाँध दिया

जाता था ।

एक अङ्गरेज अपने एक पत्र में लिखता है:—

"हमने एक बड़े गाँव को आग लगाई जिसमें लोग भरे हुए थे। हमने उन्हें घेर लिया और जब वे आग की लपटों से निकल कर भागने लगे तो हमने उन्हें गोलियों से उड़ा दिया।"

इतिहास लेखक 'सर जान के' लिखता है:—

"फ़ौजी और सिविल दोनों तरह के अङ्गरेज अफ़सर अपनी-अपनी खूनी अदालतें लगा रहे थे, अथवा बिना किसी मुकदमे का ढोंग रचे और बिना मर्द, औरत या छोटे बच्चे का विचार किये भारतवासियों का संहार कर रहे थे। इसके बाद खून की प्यास और भी अधिक भड़की। भारत के गवरनर जनरल ने जो पत्र इंगलिस्तान भेजे उनमें हमारी बृटिश पार्लिमेण्ट के कागजों में यह बात दर्ज है कि "बूढ़ी औरतों और बच्चों का उसी तरह वध किया गया है जिस प्रकार उन लोगों का जो विप्लव के दोषी थे" इन लोगों को सोच समझ कर फाँसी नहीं दी गई, बल्कि उन्हें उनके गाँव के अन्दर जला कर मार डाला गया, शायद कहीं-कहीं उन्हे इत्तफ़ाक़िया गोली से भी उड़ा दिया गया। अङ्गरेजों को गर्व के साथ यह कहते हुये अथवा पत्रों में लिखते हुए भी सङ्कोच नहीं हुआ कि हम ने एक भी हिन्दोस्तानी को नहीं छोड़ा और काले हिन्दोस्तानियों को गोलियों से उड़ाने में हमें बड़ा विनोद और आश्चर्यजनक आनन्द अनुभव होता था।"

एक पुस्तक में जिसका बड़े-बड़े अङ्गरेज अफसरों ने समर्थन किया है, लिखा है:—

"सड़कों के चोरस्तों पर और बाज़ारों में जो लाशें टंगी हुई थीं, उनको

उतारने में सूर्योदय से सूर्यास्त तक मुरदे ढोने वाली आठ-आठ गाड़ियाँ बराबर तीन-तीन महीने तक लगी रहीं, और इस प्रकार [एक स्थान पर] छै हजार मनुष्यों को झटपट खत्म कर परलोक पहुँचा दिया गया।

× × × जब कोई अङ्गरेज़ यह पढ़ता है कि किसी काले रङ्ग के बदनाश ने किसी मिस्टर चैम्बर्स या किसी मिस जेनिङ्गस को काट डाला तो क्रोध के मारे उसका दम घुटने लगता है, किन्तु भारतवासियों के इतिहासों में अथवा यदि इतिहास न हुए तो उनके परम्पपरा गत वृत्तान्तों में हमारी कौन के विरुद्ध यह स्मरण रहेगा कि भारत की माताएँ, पत्नियाँ और बच्चे, जिनके नामों से हम इतनी अच्छी तरह परिचित नहीं हैं, अंग्रेजों के प्रतिकार की पहली बाढ़ के निर्दयता के शिकार हुए।"

इलाहाबाद के अपने एक दिन के कृत्यों को बयान करते हुए एक अँग्रेज अफ़सर लिखता है--

"एक यात्रा में मुझे अदभुत आनन्द आया। हम लोग एक तोप लेकर एक स्टीम पर चढ़ गये। सिख और गोरे सिपाही शहर की तरफ़ बढ़े। हमारी किश्ती ऊपर को चलती जाती थी और हम अपनी तोप से दाँए और बाँएँ गोले फेंकते जाते थे। यहाँ तक कि हम विद्रोही ग्रामों में पहुँचे। किनारे पर जाकर हमने अपनी बन्दूकों से गोलियाँ बरसानी शुरू कीं। मेरी पुरानी दो नली बन्दूक ने कई काले आदमियों को गिरा दिया। मैं बदला लेने का इतना प्यासा था कि हमने दाँए और बाएँ गाँवों में आग लगानी शुरू की। लपटें आसमान तक पहुँची और चारों ओर फैल गईं। हवा ने उन्हें फैलने में मदद दी, जिससे मालूम होता था कि दगाबाज़ बदमाशों से बदला लेने का दिन आगया है। हर रोज हम लोग विद्रोही ग्रामों को जलाने और मिटा

देने के लिये निकलते थे, और हमने बदला ले लिया है। ××× लोगों की जान हमारे हाथों में है और मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि हम किसी को नहीं छोड़ते । ××× अपराधी को एक गाड़ी के ऊपर बैठा कर किसी दरख्त के नीचे ले जाया जाता है। उसकी गरदन में रस्सी का फन्दा डाल दिया जाता है। फिर गाड़ी हटा ली जाती है, और वह लटका हुआ रह जाता है।"

इतिहास लेखक होम्स दुख के साथ लिखता है—

"बूढ़े आदमियों ने हमें कोई नुकसान न पहुँचाया था, असहाय स्त्रियों से जिनकी गोद में दूध पीते बच्चे थे, हमने उसी तरह बदला लिया जिस तरह बुरे से, बुरे अपराधियों से ।"

सर जार्ज कैम्पबेल लिखता है:—

"और मैं जानता हूं कि इलाहाबद में बिना किसी तमीज़ के कत्ले आम किया गया था। ××× और उसके बाद नील ने वे काम किये जो कत्ले आम से भी अधिक मालूम होते थे, उसमें लोगों को जान बूझ कर इस तरह की यातनाएँ दे दे कर मारा जिस तरह की यातनाएँ, जहाँ तक हमें सबूत मिले हैं, भारतवासियों ने कभी किसी को नहीं दीं।

नाना साहब के द्वारा अँग्रेज स्त्रियों के साथ दुर्व्यवहार के सम्बन्ध में अनेकों झूठी अफवाहें उड़ाई गईं जो बाद में पूर्णतया झूठी प्रमाणित हुईं।

जेस्टिन मेकार्थी इन अफवाहों के विषय में लिखता है—

"लोगों की क्रोधाग्नि को इस तरह की अफवाहें उड़ा उड़ा कर भड़काया गया कि आम तौर पर स्त्रियों की बेइज्जती की गई और निर्दयता के साथ उनके अङ्ग भंग किये गये। सौभाग्यवश ये अफवाहें झूठी थीं ××× सच यह है कि सिवाय उनसे नाज पिसवाने के और किसी तरह का भी अपमान अँग्रेज स्त्रियों का नहीं किया गया। ××× सामान्य अर्थों में किसी स्त्री पर

अत्याचार नहीं किया गया। न किसी अँग्रेज स्त्री के कपड़े उतारे गए, न किसी की बेइज्जती की गई और न जान बूझ कर किसी को अंग भंग किया गया।

किस प्रकार ५५ नंबर की हिंदुस्तानी पैदल पलटन के १५० सिपाही होती मरदान (सीमा प्रान्त) में मार डाले गये उसका हृदय द्रावक वर्णन अँग्रेजी इतिहास "नरेटिव आफ दि इन्डियन रिवोल्ट—पृष्ठ ३५ और ३६ में इस प्रकार दिया गया है:—

"५५ नंबर पैदल पलटन के कैदियों के साथ अधिक भयंकर व्यवहार किया गया, ताकि दूसरों को शिक्षा हो। उनका कोर्ट मार्शल हुआ, उन्हें दण्ड दिया गया और उनमें से हर तीसरे मनुष्य को तोप के मुँह से उड़ाने के लिये चुन लिया गया।"

एक अँग्रेज अफसर, जो इन लोगों के तोप से उड़ाये जाने के समय उपस्थित था, उस दृश्य का वर्णन करते हुए लिखता है :—

"उस दिन की परेड का दृश्य विचित्र था। परेड पर लग भग नौ हजार सिपाही थे × × × एक चौरस मैदान के तीन ओर फौज खड़ी कर दी गई। चौथी ओर दस तोपें थीं। × × × पहले दस कैदी तोप के मुँह से बाँध दिये गये। इसके बाद तोपखाने के अफसर ने अपनी तलवार हिलाई, तुरन्त तोपों की गरज सुनाई दी और धुएं के ऊपर हाथ, पैर और सिर चारों ओर हवा में उड़ते हुए दिखाई देने लगे। यह दृश्य चार बार दोहराया गया। हर बार समस्त सेना में से एक जोर की गूँज सुनाई देती थी जो दृश्य की वीभत्सता के कारण लोगों के हृदय से निकलती थी। उस समय से हर सप्ताह में एक या दो बार उसी तरह के प्राण दण्ड की परेड होती रहती है और हमें उसकी इतनी आदत हो गई है कि अब हम पर उसका कोई असर नहीं होता × × ×।

एक अफ़सर ने जिसने देहली के युद्ध में स्वयं भाग लिया था अपने अँग्रेज़ी में लिखे हुए इतिहास, "हिस्ट्री आफ़ दि सीज़ आफ़ देहली में लिखा है :—

"अम्बाले से दिल्ली तक की यात्रा में अंग्रेजी फ़ौज ने जो-जो अकथनीय अत्याचार किए, वे किसी अंश में जनरल नील के अत्याचारों से कम अमानुषिक न थे। मार्ग में असंख्य ऐसे लोगों को, जो पंजाब से देहली की ओर जा रहे थे, इस सन्देह में कि वे दिल्ली के क्रान्तिकारियों की सहायता के लिये जा रहे हैं, पकड़-पकड़ कर मार डाला गया। इन लोगों का मारना भी क्षम्य क़रार दिया जा सकता था। किन्तु एक अंग्रेज अफ़सर जो उस यात्रा में सेना के साथ था, लिखता है कि अम्बाले से दिल्ली तक रास्ते की जनता के ऊपर अंग्रेजी सत्ता का दबदबा फिरसे क़ायम करने के लिये सैकड़ों ग्रामों में हज़ारों ही निर्दोष ग्राम निवासी अत्यन्त तीव्र यातनायें दे देकर मार डाले गये, उनके सरों से एक-एक कर बाल उखाड़े जाते थे, उनके शरीरों को सङ्गीनों से बींधा जाता था और सब से अन्त में, किन्तु मृत्यु से पहले, भालों और सङ्गीनों के ज़रिये इन हिन्दू ग्राम निवासियों के मुँह में गाय का माँस ठूँस दिया जाता था।"

जनरल हैवलोक और मेजर रिनज़ की अँग्रेज सेनाओं ने अपनी इलाहाबाद से कानपुर की यात्रा में जो नार्किक कृत्य भारतीय ग्रामीणों पर किये उनका वर्णन इतिहास लेखक सर चार्ल्स डिक्ले ने अपनी पुस्तक "ग्रेटर ब्रिटेन" में इस प्रकार किया है:—

"सन् १८५७ में जो पत्र इंगलिस्तान पहुँचे उनमें एक ऊँचे से दरजे का

अफ़सर, जो कानपुर की ओर अंग्रेजी सेना की यात्रा के साथ था, लिखता है कि— "मैंने आज की तारीख़ में खूब शिकार मारा। बाग़ियों को उड़ा दिया।" यह याद रखना चाहिये कि जिन लोगों को इस प्रकार फाँसी दी गई या तोप से उड़ाया गया वे सशस्त्र बाग़ी न थे, बल्कि गाँव के रहने वाले थे जिन्हें केवल "सन्देह में" पकड़ लिया जाता था। इस कूँच में गाँव के गाँव इस क्रूरता के साथ जला डाले गये और इस क्रूरता के साथ निर्दोष ग्राम निवासियों का संहार किया गया कि जिसे देख कर एक बार मुहम्मद तुग़लक भी शरमा जाता।"

जनरल हैवलॉक ने कानपुर नगर में घुसने के बाद जो किया उसका वर्णन चार्ल्स बॉल ने अपनी पुस्तक "इन्डियन म्यूटिनी" में इस प्रकार दिया है :—

"जनरल हैवलॉक ने सर ह्यू व्हीलर की मृत्यु के लिये भयंकर बदला चुकाना शुरू किया। हिन्दुस्तानियों के गिरोह के गिरोह फाँसी पर चढ़ गये। मृत्यु के समय कुछ क्रान्तिकारियों ने जिस प्रकार चित्त की शान्ति और अपने व्यवहार में ओज का परिचय दिया, वह उन लोगों के सर्वथा योग्य था जो कि किसी सिद्धान्त के नाम पर शहीद होते हैं।"

इनमें से एक व्यक्ति की मिसाल देते हुए चार्ल्स बॉल लिखता है कि "वह बिना ज़रा सी भी घबराहट के ठीक इस प्रकार फाँसी के तख्ते पर चढ़ गया जिस प्रकार एक योगी अपनी समाधि में प्रवेश करता है।"

सब से पहले गोरे और सिख सिपाहियों को नगर लूटने की आज्ञा दी गई। उसके बाद फाँसियों का बाज़ार गर्म हुआ। लिखा है कि बीबीगढ़ में ज़मीन के ऊपर खून का एक बड़ा धब्बा था। सन्देह था कि यह खून गोरी मेमों और बच्चों का है। शहर के अनेक ब्राह्मणों को लाकर जिनपर 'सन्देह था' कि उन्होंने विप्लव में भाग लिया है, उन्हें उस खून को ज़बान से चाटने और फिर झाड़ू

से धोकर साफ़ करने की आज्ञा दी गई । इसके बाद इन लोगों को फाँसी दे दी गई । उस समय के अंग्रेज अफ़सर ने इस अनोखे दण्ड का कारण इस प्रकार बयान किया —

"मैं जानता हूँ कि फिरङ्गियों के खून को छूने और फिर उसे मेहतर की झाड़ू से साफ़ करने से एक उच्च जाति का हिन्दू अपने धर्म से पतित हो जाता है । केवल इतना ही नहीं, चूँकि मैं यह जानता हूँ इसीलिये मैं उनसे ऐसा कराता हूँ । जब तक हम उन्हें फाँसी देने से पहले उनके समस्त धार्मिक भावों को पैरों तले न कुचल लेंगे, तब तक हम पूरा बदला नहीं ले सकते, ताकि उन्हें यह सन्तोष न हो कि हम हिन्दू धर्म पर क़ायम रहते हुए मरे ।"

दिल्ली पर कम्पनी का क़ब्ज़ा होने के बाद जो अत्याचार किये गये उनके बिषय में लार्ड एल फिन्सटन ने सर जॉन लारेन्स को लिखा :--

"मोर्चों के ख़तम होने के बाद से हमारी सेना ने जो अत्याचार किये हैं उन्हें सुन कर हृदय फटने लगता है । विना मित्र या शत्रु के भेद किये ये लोग सब से एक सा बदला ले रहे हैं । लूट में तो वास्तव में हम नादिरशाह से भी बढ़ गये ।"

मोर्चे के दिनों में क़िले के छत्ते में बीमार और घायल सिपाहियों का एक अस्पताल था । कम्पनी की सेना जिस समय क़िले के अन्दर घुसी, जितने घायल और बीमार अस्पताल के अन्दर दिखाई दिये उन सब को उसने अपनी गोलियों से सदा के लिये रोग मुक्त कर दिया । इसी प्रकार और अनेक जगह जहाँ घायल और बीमार पाए गये, क़त्ल कर दिए गए ।

माण्टगुमरी मार्टिन लिखता है:—

जिस समय हमारी सेना ने शहर में प्रवेश किया तो जितने नगर

निवासी शहर की दीवारों के अन्दर पाए गए उन्हें उसी जगह संगीनों से मार डाला गया; आप समझ सकते हैं उनकी संख्या कितनी रही होगी, जब मैं आपको यह बताऊँ कि एक-एक मकान में चालीस-चालीस और पचास-पचास आदमी छिपे हुए थे। ये लोग विद्रोही न थे बल्कि शहर के वे वाशिन्दे थे, जिन्हें दयालुता और क्षमाशीलता पर विश्वास था। मुझे खुशी है कि उनका भ्रम दूर हो गया।"

मॉंटरे टामसन ने सर हेनरी काटन से कहा था कि दिल्ली में कुछ मुसलमानों को नङ्गा करके, जमीन से बाँध कर सिर से पाँव तक जलते हुए ताँबे के टुकड़ों से अच्छी तरह दाग दिया गया था।

इन लोगों को मारने से पहले कभी-कभी उनको धर्म भ्रष्ट करने की घृणित क्रिया भी की जाती थी। एक अङ्गरेज पादरी की विधवा ने लिखा है कि बहुत से लोगों को पकड़ कर पहले उनसे सङ्गीनों के बल गिरजा में झाड़ू दिलवाई गई और फिर सब को फाँसी दे दी गई।

रसल लिखता है कि :—

"कभी-कभी मुसलमानों को मारने से पहले उन्हें सूअर की खालों में सिलवा दिया जाता था, उन पर सूअर की चरबी मल दी जाती थी और फिर उनके शरीर जला दिये जाते थे और हिन्दुओं को जबरदस्ती धर्म भ्रष्ट किया जाता था।"

हत्या से पहले जिस प्रकार की क्रूर यातनाएँ लोगों को दी गईं उसकी कई मिसालें रसल ने अपनी पुस्तक में दी हैं। उनमें से एक हम नीचे उद्धृत करते हैं :—

" कुछ सिपाही अभी जीवित थे और उन्हें दया के साथ मारा गया। किन्तु इनमें से एक को खींच कर मकान से बाहर रेतीले मैदान में लाया गया। उसे टाँगों

से पकड़ कर खींचा गया, एक सुविधा की जगह लाया गया। कुछ अँग्रेज सिपाहियों ने उसके मुँह और शरीर में संगीनें भोंक कर उसे लटका रक्खा। दूसरे लोग एक छोटी सी चिता के लिये ईंधन जमा कर लाए। जब सब तैयार हो गया तो उसे जिन्दा भून दिया। इस काम के करने वाले अँग्रेज थे, और कई अफसर खड़े देखते रहे, किन्तु किसी ने हस्तक्षेप न किया। इस नारकीय अत्याचार की वीभत्सता उस समय और भी अधिक बढ़ गई जब कि उस अभागे दुखिया ने अधजली और जिन्दा हालत में भागने का प्रयत्न किया। अकस्मात प्रयत्न करके वह चिता से कूद पड़ा। उसका मांस हड्डियों से लटक रहा था। वह कुछ गज दौड़ा फिर पकड़ लिया गया। उसे फिर आग पर रख दिया था और जब तक राख न हो गया संगीनों से दबा कर रखा गया।"

इसके विपरीत भारतीय क्रान्तिकारी नेताओं का व्यवहार बहुत समझदारी का ही नहीं परन्तु उदारता का था।

सम्राट बहादुरशाह और नाना साहब, बेगम हजरत महल और रानी लक्ष्मी बाई चारों ने समय-समय पर अँग्रेज स्त्रियों और बच्चों की रक्षा का पूरा प्रयत्न किया। फारेस्ट लिखता है कि अवध के नेताओं ने एक एलान द्वारा अपने अनुयाइयों को आज्ञा दी कि "स्त्रियों या बच्चों की हत्या से अपने आन्दोलन को कलंकित न करना" अवध के अन्दर असंख्य मिसाले ऐसी मिलती है जिनमें क्रान्तिकारी जमींदारों और जनता ने अँग्रेज स्त्रियों और बच्चों, यहाँ तक कि आश्रित अँग्रेज पुरुषों को अपने महलों और कमरों में आश्रय दिया। इसके विपरीत जनरल नील कूपर, हैवलॉक, हडसन जैसे अनेकों ने स्थान-स्थान पर जिस तरह के कृत्य किये उनके विषय में स्वयं गवरनर जनरल लार्ड कैनिङ्ग ने २४ दिसम्बर सन् १८५७ को अपनी कौंसिल के अन्दर कहा था:—

"न केवल छोटे बड़े हर तरह के अपराधी ही बल्कि वे लोग भी जिनका अपराध कम से कम अत्यन्त सन्दिग्ध था, बिना किसी भेद भाव के फाँसी पर लटका दिए गये। ग्रामों को आम तौर पर जला डाला गया और लूट लिया गया। इस तरह दोषी और निर्दोषी पुरुष और स्त्री, बच्चे और बूढ़े सब को बिना भेद भाव दण्ड दिया गया।"

तीसरा अध्याय

फूट फैलाओ और शासन करो

सन् १८५७ के बाद अधिकांश अङ्गरेज नीतज्ञ इस बात को और अधिक ज़ोरों के साथ अनुभव करने लगे थे कि भारतवासियों के दिलों मे राष्ट्रीयता के रहे सहे भावों को मिटा देना और आइन्दा इस तरह के भावों को पनपने न देना अङ्गरेजी साम्राज्य की स्थिरता के लिये आवश्यक है। इसके उस समय दो मुख्य उपाय सोचे गये—(१) भारत में ईसाई मत-प्रचारक और (२) अङ्गरेजी शिक्षा।

विलियम एडवर्डस् विप्लव के दिनों में कम्पनी का मुलाज़िम था और बाद में आगरा हाई कोर्ट का जज हुआ। उसकी राय थी :—

हम विदेशी आक्रामक और विजेता समझे जाते हैं और सदा समझे जायँगे, × × × हमारे लिये अपनी रक्षा का सबसे अच्छा उपाय यह है कि हम देश को ईसाई बना लें; देशी ईसाइयों की बस्तियाँ जब इधर उधर देश में फैल जायेंगी तो वे अनेक वर्षों तक हमारी मज़बूती के लिये स्तम्भों का काम देंगी, क्यों कि जब तक अधिकांश जनता मूर्तिपूजक (हिन्दू) या मुसलमान रहेगी, तब तक ये ईसाई लोग अवश्य राजभक्त रहेंगे।

भारत की विचित्र स्थिति में देश को ईसाई बनाने का प्रयत्न अधिक न चल सका और न अधिक खुले तौर पर उसे शासन नीति का एक अङ्ग बनाया जा सका। भारत में अङ्गरेजों की शासन की नीति का सार ही इसमें

रहा है कि 'फूट फैलाओ और शासन करो'। कथन की पुष्टि में निम्न उद्धरण पर्याप्त हैं।

एक अङ्गरेज अफसर कारनेशास ने एशियाटिक जर्नल १८२१ मई में लिखा था :—

"हमारे राजनैतिक, मुल्की और फ़ौजी तीनों तरह के भारतीय शासन का उसूल, 'फूट फैलाओ और शासन करो' होना चाहिये।"

सन् १८३१ की जाँच के समय मेजर जनरल सर-लिओनेल स्मिथ ने कहा था:—

" × × × अभी तक हमने साम्प्रदायिक और धार्मिक पक्षपात के द्वारा ही मुल्क को वश में रखा है—हिन्दुओं के खिलाफ़ मुसलमानों को और इसी तरह अन्य जातियों को एक दूसरे के खिलाफ़ × × × ।"

विप्लव के बाद करनल जान कोक ने जो उस समय मुरादाबाद की पल्टनों का कमाण्डर था, लिखा था:—

"हमारी कोशिश यह होनी चाहिये कि भिन्न-भिन्न धर्मों और जातियों के लोगों में हमारे सौभाग्य से जो अनैक्य मौजूद हैं उसे पूरे जोरों में क़ायम रक्खा जाय, हमें उन्हें मिलाने की कोशिश नहीं करनी चाहिये। भारत सरकार का उसूल यही होना चाहिये,—"फूट फैलाओ और शासन करो।"

सन् १८५७ की क्रान्ति से यह सिद्ध है कि हिन्दू और मुसलमान एक साथ मिल कर अंग्रेजी राज के विरुद्ध लड़े और सम्मिलित नेतृत्व में क्रान्तिकारी सेनाओं का पथ-प्रदर्शन किया गया। हिंन्दू मुस्लिम का भाव सर्वथा आपस में नहीं रहा। इसी कारण अंग्रेजों ने हिंन्दू मुसलमानों को आपस में लड़ाने की नीति पर विशेष जोर दिया।

सन् १८५८ से १८८४ तक मुसलमानों को संदेह की दृष्टि से देखा गया।

उनको हर जगह दबाया, दिक़ किया और कुचला गया। इसी समय के लगभग अर्थात् १८८४-८५ में 'इण्डियन नेशनल काँग्रेस' की स्थापना सरकारी संरक्षता में हुई। इसके प्रारम्भिक निर्णय किसी को तनिक भी न चुभने वाले होते थे। परन्तु बाद में वह सरकारी नीति के कुछ-कुछ आलोचनात्मक होने लगे। इसके अलावा हिन्दू लोग जो कि अब तक सरकार के विशेष कृपा पात्र बने थे, इसके कार्य में विशेष भाग लेते थे। मुसलमान भी काँग्रेस की ओर खिंच रहे थे। सर सैयद अहमद खाँ जो उस समय मुसलिम पुनरुद्धार के पिता थे, और मुसलमान नेता जैसे अल्लामा शुबली नुअमानी, श्री बदरुद्दीन तैयब जी, मीर हिमायूँ जहाँ, धार्मिक नेता जैसे मौलाना रशीद अहमद गंगोही, मौलवी लुत्फुल्ला अलीगढ़, मुल्ला मोहम्मद मुराद मुजफ्फर नगर संक्षेप में उस समय के मुस्लिम विद्वान हिन्दुओं के साथ एक समान कार्य क्रम चाहते थे। सर सैयद अहमद खाँ उस समय के बङ्गाली हिन्दुओं से बहुत प्रभावित थे। वह प्रायः कहा करते थे कि भारत में बंगाल के हिन्दू ही ऐसे हैं जिन पर हम उचित रूप से गर्व कर सकते हैं, और उन्हीं के कारण भारत में स्वतंत्रता और राष्ट्रीयता के आदर्श की उन्नति कर सके हैं।

यह प्रवृत्तियाँ हानिकर समझी गईं और इनकी गतिविधि में परिवर्तन आवश्यक समझा गया। इसी कारण यह निश्चय किया गया 'अब इसके बाद से सरकार के कृपा पात्र हिन्दू नहीं, मुसलमान होने चाहिये।' विचार यह था कि हिंन्दू-मुसलमानों का मेल तथा एक समान भारतीय राष्ट्रीयता के विकास को रोका जाय। "फूट फैलाओ और शासन करो" यह सिद्धान्त इतना ही पुराना है जितना कि स्वयं साम्राज्यवाद। परन्तु भारत में जिसने इसकी नींव डाली वह एम० ए० ओ० कॉलेज अलीगढ़ के प्रिंसीपल श्री 'बैक' थे। श्री बैक ने सर सैयद को काँग्रेस से बाहर निकाल लेने में बड़ा प्रयत्न किया। उसने

उनके सामने अङ्गरेज—मुसलमान मेल के सुन्दर और आकर्षक प्रलोभन को रखा, बूढ़ा आदमी इस प्रलोभन में फंस गया। श्री बेक ने "इन्स्टिट्यूट गजेट" का सम्पादकत्व अपने हाथ में लिया जिसका सम्पादन वर्षों से सर सैयद अहमद कर रहे थे और उसकी नीति को बदल दिया। इसके बाद "इन्स्टीच्यूट गजेट" काँग्रेस की माँग को मुसलमान विरोधी कहने लगा। इसके बाद बंगाल के पत्रों से विवाद खड़ा हो गया जो कि सर सैयद अहमद पर यह मान कर कि वही गजट के लेखों के लेखक हैं आक्रमण करने लगे।

सन् १८८९ में चार्ल्स ब्रडला ने पार्लिमेण्ट में एक बिल इस उद्देश्य से पेश किया कि भारत में लोक-तंत्र शासन प्रणाली प्रारम्भ की जाय। इस पर श्री बेक चौंक पड़े। उन्होंने भारतीय मुसलमानों की ओर से एक आवेदन पत्र तैयार किया जिसमें लोक-तंत्र शासन प्रणाली का भारत के लिये इस आधार पर विरोध किया था कि भारत एक राष्ट्र नहीं है। उन्होंने इस आवेदन पत्र पर २०, ७३५ हस्ताक्षर कराये थे और इस कार्य में अपने विद्यार्थियों का उपयोग किया था।

तीन साल बाद अर्थात १८९३ में उन्होंने एक मुसलमानों का संगठन 'मुसलमान-अंग्रेज पूर्वीय रक्षा संघ [*The Mohammedan Anglo oriental Defence Association*] स्थापित करने में सहायता की, जिसके उद्देश्य थे:-(१) अंग्रेजों को साधारणतया और सरकार को विशेषतया मुस्लिम सम्प्रदाय के विचारों से परिचित कराना और मुसलमानों के राजनैतिक अधिकारों की रक्षा करना, (२) ऐसे कामों का समर्थन करना जिनसे भारत में अंग्रेजी राज को शक्ति प्राप्त हो, (३) लोगों में राजभक्ति के भाव फैलाना और (४) मुसलमानों में राजनैतिक आन्दोलन के प्रसार को रोकना। श्री बेक इसके मंत्री थे। इस संस्था ने काँग्रेस के सीमाप्रान्त की अग्रगामी-नीति के विरोध की शक्ति से

प्रतिरोध किया,

श्री बेक ने अपने भारत के किये हुऐ कृत्यों से ही सन्तुष्ट न होकर एक अंग्रेजी पत्र में लेख लिखा जिसमें उन्होंने यह दर्शाया कि "भारत में पिछले कुछ वर्षों में दो आन्दोलन प्रकट हुऐ। एक इण्डियन नेशनल कॉंग्रेस, दूसरा गो-हत्या के विरुद्ध आन्दोलन। पहला आन्दोलन अंग्रेजों के और दूसरा मुसलमानों के विरोध में है। यह परमावश्यक है कि मुसलमान और अंग्रेजों द्वारा एक साथ मिल कर इन आन्दोलनकारियों का मुक़ाबिला किया जाय और लोक-तंत्र प्रणाली जो कि देश की आवश्यकताओं और प्रचलित भावनाओं के अनुपयुक्त है उसका भारत में लागू किया जाना रोका जाय। हम इस लिये सरकार के प्रति भक्ति और अंग्रेजों तथा मुसलमानों के सहयोग का प्रतिपादन करते हैं।

अतः भारत की मानसिक परिस्थिति की लोक-सत्तात्मक शासन के लिये अनुपयुक्तता का "कि जिसका उपयोग हाल में बहुत किया गया, आविष्कार एक अङ्गरेज, कालेज के पढ़ाने वाले के द्वारा किया गया था। श्री बेक का १७ साल तक मुस्लिम राजनीतिं पर प्रमुख प्रभाव रहा। इस बीच उन्होंने प्रायः सर सैयद की आड़ में ही काम किया। उनकी मृत्यु सन् १८९९ में हुई। उनके बाद उनका काम श्री थ्योडेर मारिसन ने सँभाला, जो कि अंग्रेज-मुस्लिम-रक्षा-समिति के लण्डन कार्यालिय के संचालक थे। सन् १९०५ में श्री मारिसन के बाद श्री आर्चबाल्ड ने यह कार्य सँभाला। इन्होंने भी "मुस्लिम हितों "की सेवा की। यह वह समय था कि जब मिण्टो मार्ले सुधार हवा में थे। श्री आर्चबाल्ड ने श्री नवाब महसिन-उल-मुल्क को एक पत्र १० अगस्त १९०६ को लिखा, जिसमें उन्होंने वायसराय के पास एक प्रतिनिधि

मण्डल भेजने के विचार का प्रतिपादन किया और उसकी सब तफ़सील दी। पत्र में उन्होंने लिखा —

"कर्नल डनलप स्मिथ प्राइवेट सेक्रेटरी, वायसराय, मुझे सूचित करते हैं कि वायसराय महोदय मुस्लिम प्रतिनिधि मण्डल से भेंट करने को रज़ामन्द हैं। इन्होंने सलाह दी है कि एक साधिकार स्पष्ट पत्र उनका वायसराय से मिलने की अनुमति प्राप्त करने के लिये लिख दिया जाना चाहिये इस सम्बन्ध में मैं कुछ बातें बताना चाहता हूँ। ऐसा पत्र कुछ मुस्लिम प्रतिनिधियों के हस्ताक्षर से भेजा जाना चाहिये। प्रतिनिधि मण्डल में सब प्रान्तों के प्रतिनिधि होने चाहिये। तीसरी बात जो विचारणीय है वह है आवेदन-पत्र का विषय। इस बारे में मेरी राय हैं कि हमें राजभक्ति के प्रदर्शन प्रारम्भ करने चाहिये। सरकार के स्वायत्त-शासन की ओर क़दम बढ़ाने के निश्चय की सराहना करनी चाहिये। परन्तु हमको अपनी आशंका प्रकट कर देनी चाहिये कि यदि चुनाव का सिद्धान्त काम में लाया गया तो वह मुस्लिम अल्पमत के हितों के विरुद्ध सिद्ध होगा। इस में सम्मान यह सुझाया जाना चाहिये कि नामज़दगी या प्रतिनिधित्व "धर्म" के आधार पर मुसलमानों की राय के अनुकूल होगा। व्यक्तिगत रूप से मैं यह सोचता हूँ कि मुसलमानों के लिये इसमें बुद्धिमत्ता होगी कि वह नामज़दगी का प्रयोग के लिये समर्थन करें क्यों कि अभी चुनाव के लिये उपयुक्त समय नहीं आया है। चुनाव में मुसलमानों के लिये अपना उपयुक्त भाग पाना कठिन होगा। परन्तु इन सब विचारों में मुझे पीछे छिपा रखना चाहिये। यह विचार तुम्हारे द्वारा प्रकट होने चाहिये।

मैं तुम्हारे लिये आवेदन पत्र का मसविदा तैयार करने या उसे दोहराने का काम कर सकता हूँ। कृपया यह स्मरण रखिये कि यदि हम शक्तिशाली आन्दोलन संगठित करना चाहते हैं तो थोड़े समय का ध्यान रखते हुए हमें

शीघ्रता करनी चाहिये ।"

जब वायसराय को यह विश्वास हो गया कि प्रतिनिधि मण्डल सरकार की आलोचना नहीं करेगा तब उसने अनुमति दे दी। श्री आगा खाँ उसके नेता बने। आवेदन पत्र "भारत के मुसलमानों की ओर से" ऐसा विश्वास किया जाता है, जो आर्चबाल्ड ने तैयार किया था। लार्ड मिण्टो ने क्या ही चातुर्य भरा उत्तर दिया।

"तुम्हारे आवेदन पत्र का आशय, जैसा कि मैं समझता हूँ, लार्ड मिण्टो ने कहा, "यह है कि तुम यह अधिकार चाहते हो कि चुनाव की प्रणाली में, चाहे वह म्यूनिसपैल्टी में, चाहे वह डिस्ट्रिक्ट बोर्ड में, चाहे वह लेजिस्लेटिव कौंसिल में, जहाँ पर उसके प्रचलित करने या चुनाव के संगठन को बढ़ाने का प्रस्ताव है, वहाँ पर मुस्लिम सम्प्रदाय को सम्प्रदाय के नाते प्रतिनिधित्व का अधिकार मिलना चाहिये। तुम इस ओर भी ध्यान आकर्षित करते हो कि बहुत से स्थानों पर चुनाव-क्षेत्र ऐसे बने हैं जहाँ से मुसलमान प्रतिनिधि नहीं चुना जा सकता यदि चुना भी तो प्रतिनिधि को अपने विचारों का बहुसंख्यक जाति के ऐसे विचारों के लिये बलिदान करना पड़ेगा जो कि उसकी जाति के विरोधी हैं और जिसका वह किसी प्रकार भी प्रतिनिधित्व नहीं करेगा, और तुम्हारी यह माँग न्याय संगत है कि तुम्हारा प्रश्न तुम्हारी संख्या के आधार पर निश्चय नहीं होना चाहिये, परन्तु तुम्हारी जाति की राजनैतिक महत्ता और साम्राज्य के लिये की हुई सेवाओं के आधार पर निश्चित होना चाहिये, मैं तुमसे पूर्णतया सहमत हूँ।

जातीय चुनाव मार्ले मिन्टो सुधार में बड़ी शीघ्रता से जोड़ा गया और जैसी आशा थी उसने हिन्दू और मुसलमानों के बीच की खाई को और अधिक चौड़ा किया। श्री रामजेमेकडॉनल्ड ने अपनी पुस्तक "भारत की जागृति"

[*Awakening of india*] में लिखा है कि "अधिकारियों के कारण ही प्रथक-चुनाव पद्धति की माँग की गई और उन्हीं के कारण वह वास्तव में प्रचलित की गई" लार्ड मार्ले जो उस समय भारत मंत्री थे, कुछ स्थानों के संयुक्त चुनाव सुरक्षित होने के पक्ष में थे। उन्होंने बाद में यह घोषित किया कि वायसराय ने ही पहले मुसलमानों के कान, अपने भाषण से, उनके अतिरिक्त अधिकारों के सम्बन्ध में खड़े किये थे। इस प्रकार भारत में हिन्दू मुसलिम साम्प्रदायिक भावनायें जो बड़ी दक्षता से अँग्रेजी सरकार द्वारा उत्पन्न की गईं, ने अँग्रेजी सरकार को मजबूत करने में बड़ी सहायता की और आज भी उनका उपयोग साम्प्रदायिक भेद और झगड़े दिखाने के लिये किया जा रहा है। इससे यह सिद्ध है कि यह अँग्रेजी नीति है जो तमाम साम्प्रदायिक भेदों और पारस्परिक हिन्दू मुसलमानों के झगड़ों की उत्तरदायी है।

शीघ्रता करनी चाहिये ।"

जब वायसराय को यह विश्वास हो गया कि प्रतिनिधि मण्डल सरकार की आलोचना नहीं करेगा तब उसने अनुमति दे दी। श्री आगा खाँ उसके नेता बने। आवेदन पत्र "भारत के मुसलमानों की ओर से" ऐसा विश्वास किया जाता है, श्री आर्चबाल्ड ने तैयार किया था। लार्ड मिण्टो ने क्या ही चातुर्य्य भरा उत्तर दिया।

"तुम्हारे आवेदन पत्र का आशय, जैसा कि मैं समझता हूँ, लार्ड मिण्टो ने कहा, "यह है कि तुम यह अधिकार चाहते हो कि चुनाव की प्रणाली में, चाहे वह म्यूनिसपैल्टी में, चाहे वह डिस्ट्रिक्ट बोर्ड में, चाहे वह लेजिस्लेटिव कौंसिल में, जहाँ पर उसके प्रचलित करने या चुनाव के संगठन को बढ़ाने का प्रस्ताव है, वहाँ पर मुस्लिम सम्प्रदाय को सम्प्रदाय के नाते प्रतिनिधित्व का अधिकार मिलना चाहिये। तुम इस ओर भी ध्यान आकर्षित करते हो कि बहुत से स्थानों पर चुनाव-क्षेत्र ऐसे बने हैं जहाँ से मुसलमान प्रतिनिधि नहीं चुना जा सकता यदि चुना भी तो प्रतिनिधि को अपने विचारों का बहुसंख्यक जाति के ऐसे विचारों के लिये बलिदान करना पड़ेगा जो कि उनकी जाति के विरोधी हैं और जिसका वह किसी प्रकार भी प्रतिनिधित्व नहीं करेगा, और तुम्हारी यह माँग न्याय सगत है कि तुम्हारा प्रश्न तुम्हारी संख्या के आधार पर निश्चय नहीं होना चाहिये, परन्तु तुम्हारी जाति की राजनैतिक महत्ता और साम्राज्य के लिये की हुई सेवाओं के आधार पर निश्चित होना चाहिये, मैं तुमसे पूर्णतया सहमत हूँ।

जातीय चुनाव मार्ले मिन्टो सुधार में बड़ी शीघ्रता से जोड़ा गया और जैसी आशा थी उसने हिन्दू और मुसलमानों के बीच की खाई को और अधिक चौड़ा किया। श्री रामजेमेकडॉनल्ड ने अपनी पुस्तक "भारत की जागृति"

[*Awakening of india*] में लिखा है कि "अधिकारियों के कारण ही प्रथक-चुनाव पद्धति की माँग की गई और उन्हीं के कारण वह वास्तव में प्रचलित की गई" लार्ड मार्ले जो उस समय भारत मंत्री थे, कुछ स्थानों के संयुक्त चुनाव सुरक्षित होने के पक्ष में थे। उन्होंने बाद में यह घोषित किया कि वायसराय ने ही पहले मुसलमानों के कान, अपने भाषण से, उनके अतिरिक्त अधिकारों के सम्बन्ध में खड़े किये थे। इस प्रकार भारत में हिन्दू मुसलिम साम्प्रदायिक भावनायें जो बड़ी दक्षता से अँग्रेजी सरकार द्वारा उत्पन्न की गईं, ने अँग्रेजी सरकार को मजबूत करने में बड़ी सहायता की और आज भी उनका उपयोग साम्प्रदायिक भेद और झगड़े दिखाने के लिये किया जा रहा हैं। इससे यह सिद्ध है कि यह अँग्रेजी नीति है जो तमाम साम्प्रदायिक भेदों और पारस्परिक हिन्दू मुसलमानों के झगड़ों की उत्तरदायी है।

चौथा अध्याय

पञ्जाब का भीषण हत्याकाण्ड

सन् १९१९ के प्रारम्भ में रौलट- बिल ने देश को अपने दर्शन दिये। यह दो बिल थे। एक तो अस्थायी था — जिसका उद्देश्य था 'भारत रक्षा क़ानून के समाप्त होने से जो स्थिति पैदा हो उसका मुकाबिला करना।' उसमें यह विधान था कि क्रान्तिकारियों के मुक़दमे हाईकोर्ट के तीन जजों की विशेष अदालत में पेश हों जिसका वह शीघ्र फ़ैसला कर दें और जिन स्थानों में क्रान्तिकारी अपराध प्रचलित हों वहाँ अपील का भी अधिकार न हो। इसके अतिरिक्त सरकार को क्रान्तिकारी अपराधों में दण्ड देने के बहुत विस्तृत अधिकार दिये गये थे। दूसरा बिल साधारण फ़ौजदारी क़ानून में एक स्थायी परिवर्तन चाहता था। किसी भी राजद्रोही सामिग्री का प्रकाशन या वितरण करने के उद्देश्य से पास रखना, ऐसा अपराध करार दे दिया जाता जिसमें जेल की सज़ा हो सकती थी। पहला मार्च १९१९ के तीसरे सप्ताह में पास हो गया और दूसरा वापस ले लिया गया। गान्धी जी ने यह घोषणा की कि यदि रौलट कमीशन की शिफ़ारिशों को बिल का रूप दिया गया तो वह सत्याग्रह युद्ध छेड़ देंगे।

अतः गान्धी जी ने आन्दोलन का श्री गणेश किया। ३० मार्च १९१९ का दिन हड़ताल, उपवास, ईश्वर प्रार्थना, प्रायश्चित तथा देश भर में सार्वजनिक सभायें करने के लिये नियत किया गया था। बाद में यह तारीख बदल कर ६ अप्रेल की गई। परन्तु इस परिवर्तन की सूचना दिल्ली नहीं पहुँची। इसलिये वहाँ ३० मार्च को ही जलूस निकला और हड़ताल हुई और सरकार ने गोली भी चलाई। दिल्ली के रेलवे स्टेशन पर कुछ

झगड़ा हो गया जिसमें गोली चली और ५ मरे तथा अनेक घायल हुऐ। ६ अप्रेल को देश व्यापी प्रदर्शन हुऐ। हिन्दू-मुस्लिम भ्रातृभाव इस समय की प्रमुख भावना थी। जलूसों के झण्डों और नारों दोनों से हिन्दू मुसलमानों का मेल ही प्रकट होता था। एक जगह तो एक मस्जिद के इमाम पर खड़े हो कर नेताओं को बोलने भी दिया गया था।

सर माइकेल ओडवायर इस बात पर तुला हुआ था कि वह अपने प्रान्तों में कॉंग्रेस आन्दोलन की छूत की बीमारी को न फैलने दे। और वास्तव में कॉंग्रेस और उसमें इस बात पर रस्सा कशी थी कि आया १९१९ में अमृतसर में होने वाली कॉंग्रेस पञ्जाब में हो या न हो। एक दिन प्रातः काल ही (१०-४-१९१९) अमृतसर के जिला मजिस्ट्रेट ने डा० किचलू और डा० सत्यपाल को, जो कि कॉंग्रेस का संगठन कर रहे थे, अपने बँगले पर बुला भेजा, और वहाँ से चुपचाप किसी अज्ञात स्थान को भेज दिया। इस घटना से एक सनसनी फैल गई। खबर फौरन ही दूर-दूर तक पहुँच गई और लोगों का एक झुण्ड जिला मजिस्ट्रेट के यहाँ उनका पता पूछने के लिये जाने वाला था, परन्तु उस चौराहे पर, जो शहर से सिविल लाइन की ओर जाते हुऐ सिविल लाइन और शहर के बीच में है, फौजी सिपाहियों ने भीड़ को रोक लिया। अब ईंटों के फेकने की वह कहानी आती है जो सरकार की मदद के लिये हर वक्त तैयार रहती है। भीड़ पर गोली चलाई गई, जिसके फल स्वरूप एक या दो की मृत्यु के साथ-साथ अनेक घायल हुऐ। लोगों की भीड़ अब शहर को वापस लौटी और मरे हुऐ तथा घायलों का शहर में होकर जलूस निकाला। रास्ते में नेशनल बैंक की इमारत में आग लगा दी और उसके योरोपियन मैनेजर को मार डाला। इस प्रकार लोगों की उत्तेजित भीड़ ने ५ अँग्रेजों को मारा और बैंक, रेलवे का गोदाम तथा सार्वजनिक

इमारतों को जलाकर खाक कर दिया। स्वभावतः अधिकारी इन घटनाओं से आग बगूला हो गये और खून से बदला लेने की ठान ली। स्थानीय अधिकारियों ने अपने ही आप १० अप्रेल को शहर फौज के अधिकार में दे दिया, इस आशा से कि ऊपर के अधिकारी इसकी स्वीकृति दे देंगे। कसूर और गुजरानवाला में भी जनता का व्यवहार कम निन्दनीय न था।

गुजरानवाला और कसूर में अत्यधिक खून खराबी हुई। कसूर में तो १२ अप्रेल को भीड़ ने रेलवे स्टेशन को बहुत नुकसान पहुंचाया। तेल के एक छोटे गोदाम को जला दिया। तार और सिगनल फोड़ डाले। एक ट्रेन पर आक्रमण किया, जिसमें कुछ योरोपियन थे। दो आदमियों को इतना पीटा कि उनके प्राण निकल गये। एक ब्राञ्च पोस्ट आफिस को लूट लिया। मुख्य पोस्ट आफिस को जला डाला। मुन्सफी कचहरी में आग लगादी और बहुत सी इमारतों को नुकसान पहुंचाया। यह सरकारी बयान का साराँश है। परन्तु लोगों का यह कहना है कि पहले भीड़ को उत्तेजना दिलाई गई थी।

गुजरान वाले में १४ अप्रेल को भीड़ ने एक दम ट्रेन को घेर लिया और उस पर पत्थर बरसाये। एक छोटे से रेलवे पुल को जला दिया और एक दूसरे रेलवे पुल को जलाया, जहाँ कि गाय का मरा हुआ एक बच्चा लटका हुआ था। लोगों का कहना हैं कि उसे पुलिस ने मार डाला और हिन्दुओं की भावनाओं को ठेस पहुँचाने के लिए पुल पर टाँग दिया था। इसके साथ ही साथ तार-घर, डाकखाना, और रेलवे स्टेशन में भी आग लगा दी थी। डाक बँगला, कलक्टरी कचहरी, एक गिरजा, एक स्कूल और एक रेलवे का गोदाम भी जला दिया था।

ये तो हुईं खास-खास घटनायें। अन्य छोटे-छोटे स्थानों में भी कुछ

साधारण सी गड़बड़ हुई । जैसे रेल गाड़ियों पर पत्थरों का फेंका जाना, तारों का काटा जाना और रेलवे स्टेशनों में आग लगाया जाना ।

इन्हीं दिनों में देश के विभिन्न भागों में इक्के दुक्के हिंसा काण्ड हुए लाहौर में भी लूट मार हुई और गोली चली । कलकत्ते जैसे सुदूर स्थान से भी बुरे समाचार प्राप्त हुए । पंजाब की दुर्घटनाओं की बात सुनकर तथा स्वामी श्रद्धानन्द और डा० पाल के बुलाने पर गान्धी जी ८ अप्रेल को दिल्ली के लिये चल पड़े । रास्ते में ही उन्हें हुक्म मिला कि पंजाब और दिल्ली के भीतर प्रवेश न करो । उन्होंने इस हुक्म को मानने से इनकार कर दिया । इस पर उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और दिल्ली से कुछ दूर पलवल नामक स्टेशन से एक स्पेशल ट्रेन में बिठाकर १० अप्रेल को बम्बई भेज दिया ।

गान्धी जी की गिरफ्तारी के समाचार से अहमदाबाद में कई उपद्रव होगए, जिनमें कुछ अंग्रेज और हिन्दुस्तानी अफसर जान से मारे गये । १२ अप्रेल को वीरमगाँव और नडियाद में भी कुछ उत्पात हुए । कलकत्ते में भी उपद्रव हुआ था। वहां गोली चली थी जिससे ५ या ६ आदमी मारे गये थे और १२ बुरी तरह घायल हुये थे । बम्बई पहुँच कर गान्धी जी ने स्थिति को शान्ति करने में मदद की और फिर वहाँ से अहमदाबाद को चल पड़े । उनकी उपस्थिति ने शान्ति स्थापित करने में बहुत काम किया । इन उपद्रवों के कारण उन्होंने सत्याग्रह को स्थगित कर दिया और उसके सम्बन्ध में एक वक्तव्य निकाला । एक ओर यह स्थिति थी तो दूसरी ओर अमृतसर में दुर्घटनायें विकट रूप धारण करती जा रही थीं । यहाँ स्मरण रखना चाहिए कि १३ अप्रेल तक फौजी कानून जारी करने की कोई घोषणा नहीं की गई थी । वैसे सरकार यह बात स्वीकार करती है कि १० अप्रेल से ही व्यवहारिक रूप में फौजी कानून

जारी था। सच पूछिये तो लाहौर और अमृतसर में १५ अप्रेल को ही फ़ौजी कानून जारी करने की घोषणा की गई थी। उसके बाद ही पंजाब के दो तीन जिलों में वह और जारी कर दिया गया था। १३ अप्रैल (वर्ष प्रतिपदा) को, जो कि हिन्दुओं के संवत सर का दिन था, अमृतसर में एक सार्वजनिक सभा करने की धारणा की गई। और जलियाँवाला बाग में एक महती सभा हुई। यह खुला हुआ स्थान शहर के मध्य में है। शहर के मकान ही इसकी चहार दीवारी बनाये हुये हैं। इसका दरवाजा बहुत ही सकड़ा है। इतना कि एक गाड़ी उसमें होकर नहीं निकल सकती। बाग में जब २० हजार आदमी इकट्ठे हो गये, जिनमें पुरुष, स्त्रियाँ और बच्चे भी थे तब जनरल डायर ने उसमें प्रवेश किया। उसके पीछे सौ सशस्त्र सिपाही थे जो कि हिन्दुस्तानी थे और पचास गोरे सैनिक थे। जिस समय ये लोग घुसे उस समय हंसराज नाम का एक आदमी व्याख्यान दे रहा था। इसी समय जनरल डायर ने घुसते ही गोली चलाने का हुक्म दे दिया। जैसा कि 'हण्टर कमीशन' के सामने उसने अपनी गवाही में कहा था कि—"उसने लोगों को तितर बितर होने की आज्ञा दी और फिर बाद गोली चलाने का हुक्म दे दिया। लेकिन उसने यह स्वीकार किया कि तितर बितर हो जाने के हुक्म देने के तीन मिनट बाद ही उसने गोली चलवा दी थी। यह बात तो स्पष्ट ही है कि बीस हजार आदमी दो तीन मिनट में तितर बितर नहीं हो सकते थे और वह भी विशेष कर एक बहुत ही तंग दरवाजे में होकर। गोली तब तक चलती रही जब तक सारे कारतूस खतम नहीं हो गये। कुल १६०० फैर किये गये थे। सरकार के स्वयं अपने बयान के मुताबिक ४०० मरे और घायलों की संख्या १ और २ हजार के बीच में थी। गोली हिन्दुस्तानी फौजों से चलवाई

गई थी, जिसके पीछे गोरे सिपाहियों को लगा दिया गया था। ये सब के सब बाग में एक ऊंचे स्थान पर खड़े हुए थे। सब से बड़ी दुखद बात वास्तव में यह थी कि गोली चलाने के बाद मृतक और वे लोग जो सख्त घायल हो गये थे उन्हें, सारी रात वहीं पड़ा रहने दिया गया। वहाँ उन्हें रात भर न तो पानी ही पीने को मिला और न डाक्टरी या कोई अन्य सहायता ही। डायर का कहना था जैसा कि बाद को उसने प्रकट किया 'चूंकि शहर फौज के कब्जे में दे दिया गया था और इस बात की डोंडी पिटवा दी गई थी कि कोई भी सभा करने की इजाजत नहीं दी जायगी, तो भी लोगों ने इसकी अवहेलना की, इसलिए उन्हें एक सबक सिखा देना चाहा, ताकि वे उसकी खिल्ली न उड़ा सकें। आगे चल कर उसने कहा कि मैंने और भी गोली चलाई होती अगर मेरे पास कारतूस होते। मैंने सोलह सौ बार ही गोली चलाई, क्यों कि मेरे पास कारतूस खतम हो गये थे। "आगे चल कर उसने कहा—"मैं तो एक फौजी गाड़ी (आरमर्ड कार) ले गया था, लेकिन वहाँ जाकर देखा कि वह बाग के भीतर घुस ही नहीं सकती थी इसलिए उसे वहीं छोड़ दिया था।'

जनरल डायर के राज्य में कुछ ऐसी सजायें भी देखने को मिलीं जिनका सपने में भी खयाल नहीं हो सकता था। उदाहरण के लिये अमृतसर में नलों में पानी बन्द कर दिया गया था। बिजली का सिलसिला काट दिया गया था। सबके सामने बेंत लगाना आम तौर पर चालू था। लेकिन "पेट के बल रेंगने के हुक्म" ने इन सब को मात कर दिया था। मिस शेरवुड नाम की एक पादरी लेडी डाक्टर पर उस समय कुछ लोगों ने आक्रमण किया था जब कि वह एक गली में साइकिल पर जा रही थी। उस गली में जितने आदमी रहते थे सभी को पेट के बल रेंग कर जाना और आना पड़ता था, हालाँकि उस गली में रहने वाले भले आद-

मियों ने ही मि० शेरवुड की रक्षा की थी। तारीफ तो यह है कि बड़ी कौंसिल में क्वार्टर मास्टर जनरल हटसन के लिये यह घटना हंसी का विषय बन गई।

रेलवे स्टेशनों पर तीसरे दर्जे का टिकट बेचने की मनाही कर दी गई थी। इससे लोगों का सफर करना आम तौर पर बन्द हो गया था। दो आदमियों से अधिक एक साथ पटरियों पर नहीं चल सकते थे। साइकिलें सब की सब फौज ने अपने कब्जे में ले ली थीं। केवल योरोपियन लोगों की साइकिलें उनके पास रहने दी गई थीं। जिन लोगों ने अपनी दूकानें बन्द कर दी थीं उन्हें खोलने के लिये बाध्य किया गया। न खोलने वाले के लिये कठोर दण्ड की आज्ञा थी। चीजों की क़ीमत फौजी अफसरों ने नियत कर दी थीं। बैलगाड़ियाँ उन्होंने अपने कब्जे में कर ली थीं। किले के नीचे नंगा करके सब के सामने बेंत लगवाने के लिये एक चबूतरा बनवाया गया था और शहर के अनेक भागों में बेंत लगवाने के लिये टिकटियाँ लगवा दी गई थीं।

अमृतसर में खास अदालत द्वारा जिन मुकदमों का फैसला किया गया था, उनके कुछ आँकड़े यहाँ देते हैं। संगीन जुर्मों के अभियोग में २९८ आदमियों पर मार्शल-ला-कमीशन के सामने मुकदमे चले। मुकदमा चलाने में कानून सफाई, तथा जाब्ते के साधारण नियमों के पालन करने का भी, जिनके अनुसार आम तौर पर सब जगह मुकदमे चलाये जाते हैं, कोई ध्यान नहीं रक्खा गया था। इनमें से २१८ आदमियों को सजायें दी गईं। ५१ को फाँसी की सजा, ४६ को आजन्म कालापानी, २ को १०-१० बरस की सजा, ७९ को ७-७ बरस की सजा, १० को ५-५ की, १३ को ३-३ की और ११ को थोड़ी-थोड़ी मियाद की सजायें दी गईं। इसमें वे मुकदमे शामिल नहीं हैं जिनका फैसला सरसरी में फौजी अफसरों ने किया था। इनकी संख्या ६० थी जिसमें ५० को सजा हुई थी। १०५ आदमियों को मार्शलला के अनुसार मुल्की मजिस्ट्रेटों ने सजा दी थी।

हण्टर कमेटी के सदस्य जस्टिस रैंकिन के प्रश्न के उत्तर में जनरल डायर ने जो उत्तर दिया था उसे भी यहाँ देते हैं:—

जस्टिस रैंकिन—जनरल, मुझे इस प्रकार के प्रश्न करने के लिये जरा क्षमा कीजिये कि आपने जो कुछ किया वह क्या एक प्रकार का भय प्रदर्शन नहीं था ?

जनरल डायर—नहीं वह भय प्रदर्शन नहीं था। वह एक भयानक कर्त्तव्य था जिसका मुझे पालन करना पड़ा। मेरा खयाल है कि वह एक दया पूर्ण कार्य था। मैंने सोचा कि मैं खूब अच्छी तरह गोली चलाऊँ और इतने जोर के साथ चलाऊँ कि मुझे या अन्य किसी को फिर कभी गोली न चलानी पड़े। मेरा खयाल है कि यह सम्भव था कि बिना गोली चलाये हुए भी मैं भीड़ को तितर बितर कर देता। लेकिन वे फिर वापस आ जाते और हंसी उड़ाते और मैं एक बेवकूफ बनाया गया होता।

जनरल डायर के कार्य को सर माइकेल ओडवायर ने, जो पंजाब के गवर्नर थे, उचित ठहराया था। आपकी ओर से जनरल डायर को एक तार दिया गया था, जिसमें लिखा था "आपका कार्य ठीक था, लेफ्टिनेण्ट गवर्नर सराहना करते हैं।'

जिस समय दुर्घटना घटी थी उस समय तो मामूली समाचार भी प्राप्त नहीं हो सके थे। यही नहीं, उसके महीनों बाद तक कुछ विशेष पता नहीं चला था। लेकिन एक साल के बाद तो सारी सच्ची कहानी प्रकट हो गई थी। उपर्युक्त बातें जो लिखी गई हैं वे तो वह हैं जिन्हें हन्टर कमीशन के सामने १९२० के आरम्भ में जनरल डायर ने स्वयं स्वीकार किया था। अमृतसर की दुर्घटना के बाद, पंजाब से आने वालों की इतनी कड़ी निगरानी थी कि दुर्घटना का विस्तारपूर्वक समाचार

काँग्रेस- कमेटी को भी जुलाई १९१९ से पहले नहीं ज्ञात हो सका। और मालूम भी हुआ तो खुल्लमखुल्ला नहीं। लेकिन कलकत्ते के लॉ एसोशियेशन के भवन में जब काँग्रेस की बैठक हो रही थी, यह समाचार कानों कान लेकिन हाँपते हुए कहा गया—यही नहीं बल्कि यह सावधानी भी रक्खी गई कि यह समाचार औरों से न कहा जाय।

पंजाब की दुर्घटना अमृतसर तक ही सीमित न रही। बल्कि लाहौर, गुजरानवाला और कसूर आदि स्थानों को भी कर्नल जोनसन, बोस्वर्थ स्मिथ और कर्नल ओब्रायन तथा अन्य अधिकारियों के अत्याचार बर्बरतापूर्ण और अमानुष कृत्यों का शिकार होना पड़ा था जिनकी कथा सुनकर खून खौलने लगता है।

पार्लमेण्ट के लिए तैयार किये गये श्वेतपत्र की सरकारी रिपोर्ट के अनुसार अन्य स्थानों की अपेक्षा लाहौर में फौजी कानून का बहुत जोर था। करफ्यू आर्डर तो तुरन्त ही जारी कर दिया गया था। यदि कोई व्यक्ति शाम के ८ बजे के बाद बाहर निकलता तो वह गोली से मार दिया जा सकता था, बेंत लगाये जा सकते थे, जुर्माना हो सकता था, जेल हो सकती थी या और कोई दण्ड दिया जा सकता था। जिनकी दूकानें बन्द थीं उन्हें खोलने की आज्ञा दे दी गई थी। जो न खोले उसे या तो गोली से उड़ाया जा सकता था या उसकी दूकान खोल कर सारा सामान लोगों में मुफ्त बाँट दिया जा सकता था।

वकील तथा दलालों को यह आज्ञा दे दी गई थी कि वे अपने को रजिस्टर्ड करा लें। बिना आज्ञा शहर से कहीं जाने की उनके लिये मनाही थी। जिनके मकानों की दीवारों पर फौजी कानून के नोटिस चिपकाए गये थे उन्हें यह हुक्म दे दिया गया था कि वे उनकी हिफाजत करें यदि किसी ने उन्हें बिगाड़ दिया

या फाड़ दिया तो वे सजा के मुस्तहक होंगे, हाँलाकि रात्रि के समय उन्हें बाहर रहने की इजाजत नहीं थी। एक साथ बराबर दो आदमियों से अधिक चलने की मनाही थी कॉलेज के विद्यार्थियों को यह आज्ञा थी कि वे दिन में चार बार फौजी अफसरों के सामने विभिन्न स्थानों पर हाजिरी दिया करें। लंगर या अन्न क्षेत्र बन्द कर देने का हुक्म दे दिया गया था। हिन्दुस्तानियों की मोटर बाइसकिलें, तथा मोटरों को फौज में जमा कर देने का हुक्म जारी कर दिया गया था। इतना ही नहीं, अधिकारियों को वे स्तैमाल के लिये भी दे दी गई थीं। हिन्दुस्तानियों के पास अपने जो बिजली के पंखे थे उन्हें तथा बिजली के अन्य सब सामान को घरों से निकलवा कर गोरे सिपाहियों के स्तैमाल के लिये जमा करा लिया गयाथा। किरायेपर चलने वाली सवारियोंको शहरसे बहुत दूरतक एक स्थान पर हाजिरी लिखानी पड़ती थी। एक दिन एक बूढ़ा आदमी शाम को ८ बजे के बाद अपनी दूकानके द्वारके बाहर गलीमें अपनी गायकी देखभाल करते पाया गया वह तुरन्त ही गिरफ्तार कर लिया गया और करफ्यू आर्डर तोड़ने के इलजाम में उसके बेत उड़वा दिये गये। ताँगे वालों ने भी हड़ताल में भाग लिया था। इन लोगों को सबक सिखाने के लिये। ३०० ताँगे जमाकर लिये गये थे और यह हुक्म दे दिया गया था कि वे नगर की घनी आबादी से बाहर, कुछ खास मुकर्रिर वक्त और जगहों पर, अपनी हाजिरी दिया करें। इसमें तुर्रा यह था कि फौजी अफसर, चाहें जिस ताँगे को चाहे जब, अपनी इच्छा पर ही रोक लेता था और इसमें उसकी दिन भर की कमाई पर पानी फिर जाता था। कर्नल जोनसन ने इस बात को स्वीकार किया था कि उसकी बहुत सी आज्ञायें पढ़े लिखे तथा पेशेवर आदमियों के लिये ही थीं, जैसे वकील आदि। उसका खयाल था कि यही वे लोग हैं जिनमें से राजनैतिक आन्दोलन करने वाले पैदा होते हैं।

व्यापारी लोग तथा अन्य निवासियों को, जिनकी इमारतों पर फ़ौजी कानून के आडर्र चिपके हुए थे, उन नोटिसों की रक्षा के लिये चौकी पहरा बिठाना पड़ा था ताकि उन्हें कोई बिगाड़ या फाड़ न जाय। मुमकिन था कि पुलिस का गुर्गा ही उन्हें फाड़ फूड़ जाय। एक आदमी ऐसा पकड़ा भी गया था। जब लोगों ने चौकीदारों के लिये पासों की दरख्वास्त दी ताकि वे लोग रात के आठ बजे के बाद बाहर रह कर उन नोटिसों की रखवाली कर सकें, तो उत्तर मिला था कि उन्हें अपने पास मिल सकते हैं, नौकरों के लिये नहीं। १६से२० वर्ष की उम्र के लड़कों तथा विद्यार्थियों पर विशेष-रूप से कड़ी नजर थी। लाहौर जैसे शहर में, जहाँ कई कॉलेज हैं, विद्यार्थियों को दिन में ४ बार हाजिरी देने का हुक्म था। जहाँ हाजिरी ली जाती थी उनमें से एक हाजिरी का स्थान कालेज से ४ मील की दूरी पर था। अप्रेल मास की कड़ाके की धूप में जो कि पंजाब में वर्ष का सब से अधिक गर्म महीना होता है और जब कि गरमी १०० डिग्री से ऊपर होती हैं, इन नौ जवानों को रोजाना १६ मील पैदल चलना पड़ता था। इनमें से कुछ तो रास्ते में बेहोश होकर गिर जाते थे। कर्नल जोनसन का खयाल था कि इससे उनको लाभ होता है और वे शरारत करने से बाज़ रहते हैं। एक कालेज की दीवार से फौजी कानून का एक नोटिस फाड़ डाला गया था। इस अपराध में कालेज के वेतन भोगी सारे कर्मचारी जिनमें कालेज के प्रिंसीपल भी शामिल थे गिरफ्तार कर लिये गये थे और फौजी पहरे में उन्हें किले तक कवायद करते हुऐ ले जाया गया था, जहाँ कि वह फौजी पहरे में तीन दिन तक कैद रक्खे गये थे। किले के एक कोने में उन्हें रहने को स्थान दिया गया था और छत पर सोने की आज्ञा दे दी थी। लंगर और सदावर्त इसलिये बन्द कर दिये गये थे कि जोनसन साहब का यह खयाल था कि

उनका उपयोग राजद्रोहात्मक प्रचार के लिये किया जाता है। लेकिन जब उनसे जिरह की गई तो वह अपने इस दावे की पुष्टि में कोई प्रमाण न दे सके। उनके पास इस सम्बन्ध में न तो कोई गवाह ही था और न वह यही कह सकते थे कि यह सूचना उन्हें किसने दी थी।

एक गाँव के मुखिया को पेड़ से बँधवा कर सबके सामने बेंत लगवाए। यह इसलिये कि इससे सब को नसीहत मिल जाय। गाँव में न तो किसी प्रकार की कोई अदालत थी और न कसम खाने को जब्ते की ही कोई पाबन्दी थी। जो कुछ था वह सरसरी बेंत की सजा दे देना।

इतना होने पर भी कर्नल जोनसन, इन दिनों में जो कुछ भी उन्होंने किया उससे बहुत प्रसन्न थे और लाहौर के योरोपियनों ने तो उन्हें विदाई देते समय एक दावत दी थी और "गरीबों का रक्षक" की उपाधि से अलंकृत करके उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की थी। उन गरीबों का रक्षक जिन्होंने उनके राज्य में ६ सप्ताह तक घोर कष्ट सहे थे। कर्नल ओब्रायन जिन्होंने कि गुजरानवाला में फौजी कानून चलाया था, केप्टिन जेकैटन जिनके अधीन कसूर था, और मिस्टर वासवर्थ स्मिथ जो कि एक सिविलियन अफसर थे और जिनको शेखूपुरा में तैनात किया था इन्होंने तो खास तौर पर अत्याचार करने में खूब नाम कमा लिया था।

गुजरानवाला में जो बम-वर्षा की गई थी उसके सम्बन्ध में लोगों को यह विश्वास करने के लिये कहा जाता है कि इस अन्धाधुन्ध बम-वर्षा और मशीन गन के कुल २५५ फायरों से केवल ६ आदमी जान से मारे गये और १६ घायल हुए!

कर्नल ओब्रायन ने कमेटी के सामने अपनी गवाही में कहा था

भीड़ जहाँ कहीं पाई गई वहीं उस पर गोली चला दी गई। यह बात उन्होंने हवाई जहाजों के सम्बन्ध में कही थी। एक बार एक हवाई जहाज ने जो कि लेफ्टीनेण्ट डाडकिन्स के चार्ज में था, एक खेत में २० किसानों को एकत्र देखा। लेफ्टी० डाडकिन्स का कहना है कि उन्होंने उन पर मशीन गन से तब तक गोली चलाई जब तक कि वह भाग नहीं गये। उन्होंने एक मकान के सामने आदमियों के एक झुण्ड को देखा। वहाँ एक आदमी व्याख्यान दे रहा था। इसलिये, वहाँ उन्होने उन पर एक बम गिरा दिया। क्यों कि उनके दिल में इस तरह का कोई शक था कि वे लोग किसी शादी या मुर्दनी के लिये एकत्र नहीं हुए थे। मेजर कार्मी वह सज्जन हैं जिन्होंने लोगों के एक दल पर इसलिये बम ठरसाये कि उन्होंने सोचा कि वे बलवाई हैं, जो शहर से आ जा रहे हैं। इन महाशय के चित्त की हालत और विचारों का पता इनके बयान और नीचे के उद्धरणों से भली प्रकार चल जायगा:—

"लोगों की भीड़ दौड़ी जा रही थी और मैंने उनको तितर-वितर करने के लिये गोली चला दी, ज्योंही भीड़ तितर-वितर हो गई, मैंने गाँव पर ही मशीन गन लगा दी। मेरा ख्याल है कि कुछ मकानों में गोलियाँ लगी थीं। मैं निर्दोष और अपराधी में कोई भेद नहीं कर सकता था। मैं दो सौ फीट की ऊंचाई पर था और यह भले प्रकार देख सकता था कि मैं क्या कर रहा हूँ। मेरे उद्देश्य की पूर्ति केवल बम बरसाने से ही नहीं हुई।

"गोली केवल नुकसान पहुँचाने के लिये ही नहीं चलाई गई थी, वह स्वयं गाँव वालों के हित के लिये चलाई गई थी। कुछ को मार

कर, मैं समझता था गाँव वालों को फिर एकत्र होने से रोक दूँगा। मेरे इस कार्य का असर भी पड़ा था।

"इसके बाद शहर की तरफ मुड़ा। वहाँ बम बरसाए और उन लोगों पर गोलियाँ चलाईं, जो भाग जाने की कोशिश कर रहे थे।"

गुजरानवाला कसूर और शेखूपुरा में भी अमृतसर और लाहौर के समान ही करफ्यू आर्डर जारी कर दिया गया था, हिन्दुस्तानियों की आमद रफ्त रोक दी गई थी, एकान्त में और सबके सामने बेंत लगवाए जाते थे, झुण्ड के झुण्ड एक साथ गिरफ्तार कर लिये जाते थे और सरसरी तथा खास अदालतों से सजायें दिला दी जाती थीं।

कर्नल ओब्रायन ने एक यह हुक्म जारी किया था कि जब कोई हिन्दुस्तानी किसी अंग्रेज अफसर से मिले तो वह उसको सलाम करे, अगर सवारी में जा रहा हो या घोड़े पर सवार हो तो उतर जाय, अगर छाता लगाये + हुऐ हो तो उसे नीचे झुका दे। कर्नल ओब्रायन ने कमेटी के सामने कहा था कि यह हुक्म इसलिये अच्छा था कि लोगों को यह मालूम हो जाय कि हम उनके नये मालिक कैसे हैं।' लोगों के कोड़े लगवाये गये, जुर्माना किया गया और पूर्वोक्त राक्षसी हुक्म न मानने पर अन्य अनेक प्रकार की सजायें दी गईं। उन्होंने बहुत से आदमियों को गिरफ्तार कराया था, जिनको बिना मुकदमा चलाये ही हफ्तों तक जेल में रक्खा। एक बार उन्होंने शहर के बहुत से प्रमुख नागरिकों को यकायक पकड़ कर मालगाड़ी के एक डब्बे में भर दिया। उस डब्बे में उन लोगों को एक के ऊपर एक करके लाद दिया, वह भी तब जब कि वे कड़ाके की धूप में कई मील पैदल चला कर लाये गये थे

कुछ लोगों के बदन पर तो पूरे कपड़े भी नहीं थे। माल गाड़ी के डब्बे में भर कर उन्हें लाहौर भेज दिया था। उन्हें पाखाना पेशाब तक करने की आज्ञा नहीं दी गई थी। इसी अवस्था में वे मालगाड़ी के डब्बे में ४४ घन्टे तक रक्खे गये। उनकी जो भयानक दयनीय दशा होगई थी उसका वर्णन करने की विशेष आवश्यकता नहीं। वे जिस समय गलियों में हो कर ले जाये जारहे थे उस समय उनके साथ-साथ रास्ते चलते और लोग भी यों हीं पकड़ लिये जाते थे और इसलिये उनकी संख्या सदैव बढ़ती रहती थी। उन्हें हाथों में हथकड़ियाँ डाल-कर और जंजीरों से बाँध कर निकाला गया था। हिन्दू और मुसलमान दोनों ही जंजीरों से बाँधकर ले जाये गये थे। लोग समझते थे कि हिन्दू मुस्लिम एक्य का यह मज़ाक उड़ाया जा रहा है।

कर्नल ओब्रायन का कहना था कि यह इत्तिफ़ाक़ से हुआ था। यह सारी कार्यवाही किस स्प्रिट में की जा रही थी इसे देखने के लिये यह बता देना काफी होगा कि नगर के एक वयोवृद्ध महानुभाव भी इस घटना के शिकार हुए थे। वह शहर के एक बड़े ही उपकारक सज्जन थे, जिन्होंने एक लाख रुपया सम्राट की भारत-यात्रा के उपलक्ष में किंग जार्ज स्कूल को दान दिया था। बाद में रिलीफ फन्ड और वार-लोन में भी आपने बहुत कुछ रुपया दिया था।

दूसरी मिसाल, कर्नल ओब्रायन के कारनामों की यह है कि उन्होंने एक बुड्ढे किसान को गिरफ्तार किया था। वह इसलिये कि बेचारा अपने दो लड़कों को पेश नही कर सका। इतना ही नहीं, आपने उसकी सारी सम्पत्ति भी जब्त करली थी, और लोगों को यह चेतावनी दे दी थी, कि अगर किसी ने भी उसको अपनी फसल से मदद की तो उसे गोली से उड़ा दिया जायगा। उन्होंने कमेटी के सामने यह स्वीकार किया था कि

बुड्ढे ने स्वयं कोई अपराध नहीं किया था :-"लेकिन उसने यह नहीं बताया कि उसके बेटे कहाँ हैं।"

कर्नल ओब्रायन के बड़े-बड़े कारनामों के इतिहास में से यह कुछ नमूने यहाँ दिये गये हैं। दो आदमियों को सरसरी अदालतों से सजाएँ मिलीं। बेंत की सजा या एक महीने से लेकर दो वर्ष तक की सजा का दन्ड दिया गया। कमीशन ने १४६ आदमियों को सजा दी, जिनमें से २२ को फाँसी, १०८ को आजन्म काला पानी तथा शेष को दस साल और उससे कम की सजा का दंड। कर्नल ओब्रायन का अन्तिम कार्य यह था कि उन्हें जब यह मालूम हुआ कि कल फौजी कानून समाप्त होने वाला है तो उन्होंने बहुत से लोगों के मुकदमों को २४ घन्टे के भीतर ही खत्म कर देने की व्यवस्था की। इन लोगों को अपनी सफाई को बहुत कम मौका दिया गया। ओब्रायन महाशय इतने आतुर थे कि जिन मुकदमों की तारीख कई दिन पहले की डाली गई थी, उनका अदालत द्वारा तत्काल ही फैसला करा दिया गया। क्योंकि कहीं ऐसा न हो कि फौजी कानून खत्म हो जाये और लोग उनके न्याय से वंचित रह जायें !

कैप्टिन डोवटन कसूर के इलाके में एक प्रकार सर्वेसर्वा थे। इस स्थान पर लोगों को खुले आम फाँसी देने के लिये फाँसी घर बनाया गया। यद्यपि यह कभी काम में नहीं लाया गया। बाद में उच्च अधिकारियों की आज्ञा से हटवा दिया गया। यह स्थान वहाँ के निवासियों के लिए, एक आतंक गृह हो गया था। रेलवे स्टेशन के पास एक पिंजड़ा बनवाया गया था, जिसमें एक सौ पचास आदमी रक्खे जा सकते थे। जिन लोगों के ऊपर संदेह होता था उन्हें इसमें बन्द कर दिया जाता था, ताकि आम जनता उन्हें देख सके। नगर के सारे पुरुष निवासियों की परेड शनाख्त करने के लिए कराई जाती थी।

लोगों को खुले आम बेंत लगवाए गये। इन घृणित घटनाओं की तो तस्वीरें भी मौजूद हैं, जिनसे यह पता चलता हैं कि लोगों को सिर से पैर तक नङ्गा करके तार के खम्भे या टिकटियों से बाँधा जाता था। यह सार्वजनिक प्रदर्शन और प्रकाशन आकस्मिक नहीं था, बल्कि सोच समझ कर निश्चित किया हुआ था। नगर के इन "बदमाशों" को जलील करने के लिए, यदि अधिक नहीं तो कम से कम एक बार नङ्गा करके पिटता हुआ देखने के लिए, शहर की वेश्याओं को लाया गया था। इस घटना के लिए कैप्टिन साहब को हन्टर कमीशन के सामने गवाही देते हुये जब अधिक दबाया गया तो कुछ शर्म मालूम हुई थी ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कर्नल जान्सन को एक बरात को बेंत लगवाने के मामले में कमेटी के सामने "दुख हुआ था।" कैप्टिन साहब का कहना था कि उन्होंने पुलिस सब-इन्स्पेक्टर को हुक्म दिया था कि बदमाशों को बेंत लगना देखने के लिए बुला लाओ। लेकिन जब वहाँ मैंने स्त्रियों को देखा तो मैं दङ्ग रह गया। परन्तु कैप्टिन साहब उन वैश्याओं को वापस इस लिए नहीं भेज सके कि उनके पास उस समय उन्हें पहुंचाने के लिए सिपाही न थे। सो वे बेंतों की मार देखने के लिए वहीं बनीं रहीं।

कैप्टिन डोवटन छोटी-छोटी सजाओं का आविष्कार करने में बड़े दक्ष थे। इनके आविष्कार करने में उनका एक मात्र उद्देश्य यह था, जैसा कि उन्होंने कमेटी को बताया, कि वह स्थिति को इतना आसान और नरम बनाना चाहते थे जितना कि उस परिस्थिति में सम्भव था।"

फौजी कानून के अपराधियों से रेलवे स्टेशनों के माल गोदामों पर मालगाड़ियों में माल लादने और उतारने का काम लिया जाता था। उसने एक ऐसा नियम चलाया कि जिसके अनुसार लोगों को नाक रगड़नी पड़ती

थी। यह एक तरह से जनरल डायर के पेट के बल रेंगने के हुक्म का एक दूसरा रूप था।

मि० बॉसवर्थ एक सिविलियन अफसर थे जिन्होंने शेखूपुरा में फौजी कानून का दौर दौरा किया था। उन्होंने अपने बयान में इस बात को स्वीकार किया था कि फौजी कानून "आवश्यक" न था, परन्तु मेरी राय में वह 'वाञ्छनीय' था और उसका जारी रखना तो "अच्छा" था। उन्होंने अपने हल्के के सारे मुकदमों का फैसला किया था और जैसा कि अन्य स्थानों में हुआ था, उनके यहाँ से भी बेंत की सजायें दी जाती थीं और अदालत उठने ही अपराधियों के बेंत लगवा दिए जाते थे। ६ मई से लेकर २० मई तक उन्होंने ४७७ आदमियों के मुकदमे किये थे।

फौजी अधिकारियों ने एक हुक्म जारी किया था, इसके अनुसार स्कूल के लड़के बाध्य थे कि वे दिन में तीन बार परेड करें और झण्डे को सलामी दें। यह हुक्म स्कूल की छोटी जमातों के बच्चों के लिये भी लागू था, जिनमें ५ और ६ बरस के बच्चे भी शामिल थे। यह बात तो सचमुच हुई थी कि इस परेड और सलामी की वजह से कितने ही बच्चे लू लग कर मर गये थे। इस बात को तो उन्होंने भी स्वीकार किया है कि धूप के कारण बहुत से बच्चे बेहोश हो जाते थे। इस बात का भी आरोप किया गया था कि कुछ मौकों पर लड़कों से यह भी कहलाया जाता था, "मैंने कोई अपराध नहीं किया है, मैं कोई अपराध नहीं करूंगा, मुझे अफ़सोस है, मुझे अफ़सोस है मुझे अफसोस है।

"मेजर स्मिथ से जो कि गुजरानवाला, गुजरात, और लायलपुर में फौजी कानून के अधिष्ठाता थे, जब सर चिम्मनलाल शीतलवाड ने पूछा कि आया यह हुक्म उनके सारे इलाके भर में लागू कर दिया गया था और आया यह

सब क्लासों पर लागू था और छोटे बच्चों की क्लास भी उसमें शामिल थीं? मेजर ने जवाब दिया कि "उनके इलाके में जहाँ-जहाँ फौजें थीं, वहाँ-वहाँ सब जगह हुक्म किया गया था। यहाँ तक कि पाँच और छः बरस तक के बच्चों से भी परेड कराई जाती थी, लेकिन छोटे बच्चों को शाम की परेड में शामिल होने से बरी कर दिया गया था।"

कर्नल ओब्रायन ने अपनी गवाही में कहा था:—

"मैं एक दिन वजीराबाद में था। मैंने देखा कि एक लड़का झण्डे की ओर मार्च करने में बेहोश होकर गिर पड़ा। मैंने फौज के अधिकारियों को इसके सम्बन्ध में लिखा। मुझे नहीं मालूम कि दूसरे दिन उसकी ड्यूटी दो तीन बार और अधिक बढ़ा दी गई थी।" इस प्रश्न के उत्तर में कि यदि ऐसा किया गया था तो क्या बच्चों के साथ सख्ती नहीं की गई थी? कर्नल ओब्रायन ने उत्तर दिया "नहीं"।

इस प्रकार भारतीय पुरुषत्व और स्त्रीयत्व को इतना अपमानित और पददलित किया गया कि उनके ध्यान मात्र से मानव खून खौलने लगता है।

पाँचवाँ अध्याय

नमक सत्याग्रह आन्दोलन १९३०--३१

गान्धी जी ने असहयोग आन्दोलन सन् १९२९ में ऐसे समय में रोक दिया जब कि वह एक सार्वजनिक आन्दोलन का रूप धारण करने वाला था और गान्धी जी को भय था कि कहीं उस के परिणाम स्वरूप हिंसात्मक उपद्रव न हो जाँय। परन्तु १९३० का महान आन्दोलन प्रारम्भ से ही सार्व-जनिक था। सरकार ने भी प्रारम्भ से ही कठोर दमन नीति से काम लिया। इसका विवरण नीचे दिया जाता है:—

२६ जून १९३० को स्वाधीनता दिवस देश भर में बड़ी धूम-धाम से मनाया गया। एक न एक कारण से भारत में गिरफ्तारियाँ प्रबल वेग से हो रही थीं। मेरठ के ३२ अभियुक्तों में से एक के सिवा सब दौरा सुपुर्द कर दिये गये। कलकत्ते में सुभाष बाबू और साथियों को एक-एक वर्ष की कड़ी सजा दी गई। काँग्रेस के आदेश पर कौंसिल के १७२ सदस्यों ने फरवरी १९३० तक स्तीफे दे दिये।

१४, १५ और १६ फरवरी को साबरमती में कार्य समिति की बैठक हुई। इस बैठक का मुख्य प्रस्ताव सविनय अवज्ञा के सम्बन्ध में था।

इस प्रस्ताव ने गान्धी जी और उनके विश्वस्त साथियों को सविनय अवज्ञा करने का अधिकार दिया। कुछ समय बाद अहमदाबाद में महासमिति की बैठक हुई, उसने इस अधिकार का और भी विस्तार करके सविनय अवज्ञा का आन्दोलन चलाने की सत्ता भी उन्हें दे दी।

साबरमती की बैठक के बाद थोड़े दिनों में वातावरण नमक ही नमक से व्याप्त हो गया।

यहाँ कोई गुप्त योजना तो होती नहीं। परन्तु कोई घड़ी-घड़ाई योजना भी नहीं थी। ये योजनाएं तो अपने आप प्रकट होती हैं। जैसे सत्याग्रही के ललाट में प्रकाश-दीप रहता है। उससे आगे का कदम अपने आप दीखता जाता था।

प्रस्तुत नमक-सत्याग्रह का इस प्रकार विकास होने वाला था। गान्धी जी किसी नमक के क्षेत्र में जाकर नमक उठायेंगे। दूसरे नहीं उठायेंगे।

यदि आन्दोलन जनता में फैल जाय तो वकीलों को अदालतें और विद्यार्थियों को पढ़ाई छोड़ देनी थी।

गान्धी जी की योजना सदा उनकी अन्तः प्रेरणा से बनी है, मस्तिष्क के भावना-हीन, हानि-लाभ-दर्शक तर्क से नहीं। उनका गुरु और मित्र अन्तःकरण ही रहा है। इस प्रकार उन्होंने "सदियों की प्रगति का निचोड़" दस वर्ष में निकाल दिया। सदा की भाँति इस बार भी (२ मार्च १९३०) उन्होंने लार्ड अर्विन को चिट्ठी भेजी। लार्ड अर्विन का उत्तर भी तुरन्त और साफ-साफ मिला। वाइसराय साहब ने खेद प्रकट किया कि गान्धी जी ऐसा काम करने वाले हैं जिससे निश्चित रूप से कानून और सार्वजनिक शान्ति भंग होगी। गान्धी जी का प्रत्युत्तर भी उनके योग्य ही था।

उन्होंने लिखा, मैंने दस्तवस्ता रोटी का सवाल किया था और मिला था पत्थर। अंग्रेज जाति सिर्फ शक्ति का ही लोहा मानती है। इसलिये मुझे वाइसराय के उत्तर पर कोई आश्चर्य नहीं है। हमारे राष्ट्र के भाग्य में तो जेलखाने की शान्ति ही एक मात्र शान्ति है। सारा भारत ही एक विशाल कारागृह

है । मैं इस अंग्रेजी कानून को मानने से इनकार करता हूँ और इस जबरदस्ती की शान्ति की मनहूस एक रसता को भंग करना अपना परम पवित्र कर्त्तव्य समझता हूँ ! इस शान्ति से राष्ट्र का गला रुँधा हुआ था। अब उनके हृदय का चीत्कार प्रकट होना चाहिये

इस प्रकार गान्धी जी का "कूच" अनिवार्य हो गया था। उधर वल्लभभाई अपने 'गुरु' के पहले ही आने वाली तपस्या और संकटों के लिये तैयार होने की प्रेरणा करने के लिये गाँवों में पहुँच चुके थे। सरकार ने प्रथम प्रहार करने में विलम्ब नहीं किया। उसने तुरन्त मार्च के प्रथम सप्ताह में वल्लभ भाई को रास गांव में गिरफतार कर लिया और उन्हें तीन मास की सजा दे डाली। इस घटना के साथ-साथ गुजरात का बच्चा बच्चा सरकार के खिलाफ खड़ा हो गया।

साबरमती के रेतीले तट पर ७५ हजार स्त्री—पुरुषों ने एकत्र होकर यह निश्चित किया:—

"हम अहमदाबाद के नागरिक सङ्कल्प करते हैं कि जिस रास्ते वल्लभ भाई गये हैं उसी रास्ते हम जायेंगे और ऐसा करते हुए स्वाधीनता को प्राप्त करके छोड़ेंगे। देश को आजाद किए बिना हम न चैन लेंगे, न सरकार को लेने देंगे। हम शपथ पूर्वक घोषणा करते हैं कि भारतवर्ष का उद्धार सत्य और अहिंसा से ही होगा।"

गान्धी जी अपने ७९ साथियों को लेकर १२ मार्च १९३० को दंडी की कूच पर निकल पड़े। कूच को देखने और अपने अलौकिक उद्धारक के प्रति श्रद्धा प्रदर्शित करने के लिये भीड़ सर्वत्र मिलती थी।

गान्धी जी को कूच में २४ दिन लगे। रास्ते भर वह इस बात पर जोर देते रहे कि वह तीर्थ यात्रा है। इसमें शरीर को क़ायम रखने मात्र के लिये

खाने में ही पुण्य है, स्वादिष्ट भोजन करने में नहीं है। वह बराबर आत्म-निरीक्षण करते रहे।

५ अप्रेल को गान्धी जी दाण्डी पहुँचे। प्रातः काल की प्रार्थना के थोड़ी देर बाद गान्धी जी और उनके साथी समुद्र तट में नमक बना कर नमक-कानून तोड़ने निकले।

नमक कानून तोड़ते ही गान्धी जी ने यह वक्तव्य प्रकाशित किया :—

नमक कानून विधिवत भंग हो गया। अब जो कोई सजा भुगतने को तैयार हो, वह जहाँ चाहे और जब सुविधा देखे, नमक बना सकता है। मेरी सलाह यह है कि सर्वत्र कार्य कर्ता नमक बनावें।

६ अप्रेल से नमक सत्याग्रह की छुट्टी क्या मिली, देश में इस छोर से उस छोर तक आग सी लग गई। सारे बड़े- बड़े शहरों में लाखों की उपस्थिति में विराट सभायें हुईं। कराँची, पूना, पटना, पेशावर, कलकत्ता, मदरास और शोलापुर की घटनाओं ने नया अनुभव कराया और प्रकट कर दिया कि इस सभ्य सरकार का एक मात्र आधार हिंसा है। पेशावर में सेना की गोलियों से कई आदमी मारे गये। मदरास में भी गोली चली।

कराँची की दुर्घटना का उल्लेख करते हुए गान्धी जी ने लिखा:—

"बहादुर युवक दत्तात्रेय, कहते हैं, सत्याग्रह को जानता भी न था। पहलवान था, इसलिये सिर्फ शान्ति कायम रखने के लिये गया था। गोली लग कर मारा गया। १८ साल का नौजवान मेघराज रामचन्द्र गोली का शिकार हुआ। इस प्रकार जयरामदास सहित ७ मनुष्य गोली के शिकार हुए।"

घटना चक्र का सिंहावलोकन करते हुए गान्धी जी ने "कलुषित शासन" शीर्षक लेख में लिखा :—

"यदि सरकार न तो लोगों को गिरफ्तार करेगी और न नमक को कर मुक्त करेगी तो उसे मालूम हो जायगा कि लोग यन्त्रणायें भुगतने से गोली के सामने छाती खोल कर बढ़ना पसन्द करते हैं।"

२३अप्रेल को बंगाल आर्डीनेन्स फिर से जारी कर दिया गया। २७ अप्रेल को वायसराय साहब ने भी कुछ संशोधन करके १९१० के प्रेस-एक्ट को आर्डीनेन्स-रूप में फिर से जीवित कर दिया। इस समय गान्धी जी ने वायसराय साहब के लिये अपना दूसरा पत्र तैयार किया और धारासना और छरसाड़ा के नमक के कारखानों पर धावा करने का इरादा जाहिर किया। उसके बाद गान्धी जी की गिरफ्तारी हुई। इसकी खबर जनता को ५ तारीख को लगी। परन्तु गान्धी जी तो उस समय तक यरवदा-जेल में ले जाकर बन्द भी कर दिये गये थे।

रात को १ बज कर १० मिनट पर गान्धी जी को मोटर लारी पर बिठा दिया गया। साथ में पुलिस वाले थे। बम्बई के पास बोरीवली तक रेलगाड़ी में और वहाँ से यरवदा जेल तक मोटर में पहुँचा दिया गया।

गान्धी जी की गिरफ्तारी पर देश के इस छोर से उस छोर तक सहानुभूति की लहर अपने आप फैल गई। गिरफ्तारी का समाचार पहुँचना था कि बम्बई, कलकत्ता, और अनेक स्थानों पर सम्पूर्ण और स्वेच्छा पूर्वक हड़ताल हो गई। गिरफ्तारी के दूसरे दिन की हड़ताल और भी व्यापक थी। बम्बई में विराट जलूस निकला। शाम को इतनी विशाल सभा हुई कि कई मंचों पर से भाषण देने पड़े। ८० में से ४० के लगभग मिलें बन्द रहीं,

कारण ५० हजार मजदूर विरोध-स्वरूप निकल आये थे। जी० आई० पी० और बी० बी० सी० आई० के कारखानों के मजदूर भी काम छोड़ कर हड़ताल में शरीक हो गये थे। गिरफ्तारी पर अपनी नाराजी जाहिर करने के लिये कपड़े के व्यापारियों ने ६ दिन की हड़ताल का निश्चय किया। गान्धी जी पूना में नज़र बन्द किये गये थे। वहाँ भी पूरी हड़ताल हुई। समय-समय पर सरकारी पदों और पदवियों के छोड़ने की घोषणा होने लगी। देश ने प्रायः सर्वत्र महात्मा जी के उपदेशों का आश्चर्य जनक रूप में पालन किया। एक दो स्थानों पर झगड़ा भी हो गया। शोलापुर में ६ पुलिस चौकियाँ जलादी गईं, जिसके फल स्वरूप पुलिस ने गोली चलाई। जिसमें २५ व्यक्ति मरे और लगभग १०० घायल हुए। कलकत्ते में शहर की हड़तालें तो शान्ति पूर्ण रहीं, परन्तु हावड़ा और पंचतल्ला में भीड़ को तितर-बितर करने के लिये पुलिस ने गोली चला दी। १४४ वीं धारा के अनुसार ५ से अधिक मनुष्यों के एकत्र होने की मनाही करदी गई। परन्तु गान्धी जी की गिरफ्तारी का असर तो विश्वव्यापी हुआ।

महात्मा जी के स्थान पर श्री अब्बास तैयब जी नमक सत्याग्रह के नायक हुऐ थे। वह भी १२ अप्रेल को गिरफ्तार कर लिये गये। गिरफ्तारियों, लाठी प्रहारों और दमन का दौर दौरा जारी रहा। एक के बाद दूसरा स्वयं सेवक-दल नमक के आगारों पर धावा बोलता रहा। पुलिस उन्हें लाठियों से मारती रही बहुतों को सख्त चोटें आईं।

श्रीमती सरोजनी देवी, श्री तैयब जी की गिरफ्तारी का समाचार सुनकर जल्दी से धारासना लौट आईं और धावे का संचालन करने का गान्धी जी को दिया हुआ अपना वचन पूरा किया। वह और उनका स्वयं सेवक-दल जाब्ते

से गिरफ्तार तो १६ तारीख को कर लिये गये, किन्तु बाद में पुलिस के घेरे से निकाल कर उन्हें रिहा कर दिया गया। उसी दिन शाम को पुलिस ने २२० स्वयं सेवकों को गैर कानूनी संस्था का सदस्य करार देकर गिरफ्तार कर लिया और धारासना की अस्थाई जेल में नजरबन्द कर दिया।

१८ तारीख को प्रातः काल ही बड़ाला के कारखाने पर स्वयं सेवक बड़ी संख्या में एकत्र हो गये। पुलिस की तत्परता के कारण धावा न हो सका। उस दिन पुलिस तमंचे लेकर आई थी। उसने ४०० सत्याग्रहियों को पकड़ लिया।

नमक के धावे और भी होते रहे। २१ मई को धारासना पर सामुहिक धावा हुआ। इसमें सारे गुजरात से आये हुए २५०० स्वयं सेवकों ने भाग लिया। इमाम साहब उनके नायक बने। यह ६२ वर्ष के वृद्ध पुरुष गान्धी जी दक्षिण के अफ्रीका से साथी थे। धावा तड़के ही शुरू हो गया। जिधर से स्वयं सेवक नमक के ढेरों पर हमला करते उधर ही से पुलिस उन्हें लाठियां मार-मार कर खदेड़ देती।

"हजारों मनुष्यों ने यह दृश्य देखा। दो घण्टे तक द्वन्द्व युद्ध चलता रहा। फिर इमाम साहब, प्यारेलाल और मणिलाल गान्धी आदि नेता पकड़ लिए गये और बाद में सरोजनी देवी भी गिरफ्तार हो गईं। उस दिन कुल मिल कर २६० स्वयं सेवक घायल हुये। इन चोटों से श्रीभाई लालभाई डायाभाई नामक स्वयंसेवक तो चल ही बसा। उसके बाद पुलिस ने सेना की सहायता से धारासना और ऊंटड़ी के सब रास्ते बन्द करके इनका सम्बन्ध बाहर से काट दिया। ऊंटड़ी से सब स्वयं सेवकों को पुलिस न जाने कहाँ ले गई और फिर उन्हें छोड़ दिया।

३ जून को ऊंटड़ी की छावनी से २०० स्वयंसेवकों के दो दल धारासना के नमक भण्डार पर आक्रमण करने निकले। दोनों को पुलिस ने रास्ते में ही रोक लिया और जब भीड़ वर्जित सीमा में घुसी तो उस पर लाठियाँ चला दीं। घायलों को छावनी के अस्पताल में पहुँचा दिया गया।

बड़ाला के नमक के कारखाने पर कई धावे हुए। २२ ता० को

१८८ स्वयं सेवक पकड़े गये और वर्ली भेज दिये गये। २५ ता० को १०० स्वयं सेवकों के साथ २००० दर्शकों की भीड़ भी गई। पुलिस ने लाठी प्रहार करके १७ को घायल किया और ११५ को गिरफ्तार। धावा दो घन्टे तक रहा। तीसरे पहर फिर हुआ। इसमें १८ घायल हुए। प्रसिद्ध उड़ाके श्री कवाड़ी भी इसमें शामिल थे। २६ ता० को ६५ स्वयं सेवक मैदान में गये और ४३ गिरफ्तार हुए। बाकी भीड़ के साथ नमक लेकर भाग गये। उस समय एक सरकारी विज्ञप्ति में कहा गया कि अब तक जो गड़बड़ें हुई हैं। वे अधिकतर दर्शकों ने की हैं और इनमें सैनिकों का-सा अनुशासन नहीं है, अतः जनता को धावों के समय बड़ाला से दूर रहना चाहिये। किन्तु सबसे चमत्कारी धावा तो १ जून को हुआ। युद्ध समिति उसके लिये बड़े परिश्रम से तैयारियाँ कर रही थी। उस दिन सुबह १५००० सैनिकों और असैनिकों ने बड़ाला के विशाल सामुहिक धावे में भाग लिया।

पोर्ट-ट्रस्ट के रेल्वे चौराहे पर एक के बाद दूसरा दल पहुँचता और वहीं पुलिस उन्हें और भीड़ को रोक लेती। थोड़ी देर में धावा करने वाले स्त्री और बच्चे तक पुलिस का घेरा तोड़ कर कीचड़ पार करके कढ़ाइयों तक पहुँच जाते। लग भग १५० कॉंग्रेसी सैनिकों के मामूली चोटें आईं। पुलिस ने धावा करने वालों को खदेड़ दिया। यह सब खुद होम मेम्बर साहब की देख रेख में हुआ।

३ जून को वर्ली की अस्थाई जेल में बड़ा उपद्रव हो गया। स्थिति को सँभालने के लिये पुलिस को दो बार प्रहार करने पड़े और सेना बुलानी पड़ी। उस दिन बड़ाला के ४ हज़ार सत्याग्रहियों से पुलिस की भिड़न्त हो गई। लगभग ९० घायल हुए। २५ को सख्त चोटें आईं।

किन्तु जिस प्रकार धावा करने वालों के साथ पुलिस ने बर्ताव किया

उन पर जनता में बड़ा रोष फैला। दर्शक लोग उस निर्दय दृश्य को देख कर चकित रह गये। बम्बई की अदालत खफीफा के भूतपूर्व न्यायाधीश श्री हुसेन, श्री के० नटराजन और भारत सेवक समिति के अध्यक्ष श्री देवधर धारासना का धावा देखने खुद गये थे। **उन्होंने अपने बयान में कहा:—**

"हमने अपनी आँखों देखा कि सत्याग्रहियों को नमक की सीमा के बाहर भगा देने के बाद भी यूरोपियन सवार हाथों में लाठियाँ लिये हुए अपने घोड़े सरपट दौड़ाते और जहाँ सत्याग्रही धावे के लिये पहुँच गये थे वहाँ से गाँव तक लोगों को मारते रहे। गाँव के रास्तों पर भी खूब तेजी से घोड़े दौड़ा कर स्त्री-पुरुषों और बच्चों को तितर बितर किया। ग्रामवासी दौड़ दौड़ कर गलियों और घरों में छिप गये। संयोगवश कोई न भाग सका तो उस पर लाठियाँ पड़ीं।"

'न्यू फ्री मेन' के सम्वाददाता वेब मिलर साहब ने धारासना के इस घृणित दृश्य पर इस प्रकार प्रकाश डाला:—

"मैं २२ देशों में १८ वर्ष से सम्वाददाता का काम कर रहा हूँ। इस अर्से में मैंने असंख्य उपद्रव, मारपीट और विद्रोह देखे हैं, किन्तु धारासना के से पीड़ा-जनक दृश्य मेरे देखने में कभी नहीं आये। कभी-कभी तो ये इतने दुखद हो जाते थे कि क्षण भर के लिये आँखें फेर लेनी पड़ती थीं। स्वयं सेवकों का अनुशासन अद्भुत चीज थी। मालूम होता था इन लोगों ने गान्धी जी के अहिंसा-धर्म को घोलकर पी लिया है।

लण्डन के 'डेली हेरल्ड' पत्र के प्रतिनिधि जार्ज स्लोकाम्ब साहब भी नमक के कुछ धावों के प्रत्यक्ष-दर्शी थे। उन्होंने लिखा:—

"मैंने बड़ाला की मालाकार पहाड़ियों के एक स्थान पर खड़े होकर ये घटनाएँ देखीं। एक अंग्रेज के लिये यह बड़ी लज्जा की बात प्रतीत होती थी कि वह उत्साही, मित्र भाव रखने वाले और भावनापूर्ण स्वयं सेवकों और उनके साथ सहानुभूति रखने वाले जन समूहों के बीच में खड़ा हुआ अपने देश के प्रतिनिधि-शासकों को यह गन्दा काम करते हुए देखा करे।"

परन्तु एक-एक बात को कहाँ तक गिनावें? घटनाओं का क्या पार था? लार्ड अर्विन ने अपनी सत्ता का पेंच कसना शुरू कर दिया। आरम्भ में तो उन्होंने गान्धी जी को गिरफ्तार नहीं करने दिया। परन्तु गान्धी जी की कूच का रोग तो सारे राष्ट्र को लग गया। सर्वत्र कूच के नक्कारे बजने लगे। उनकी पुकार पर हजारों महिलायें मैदान में निकल आईं। इनके कारण सरकार बड़े चक्कर में पड़ गई। उन्होंने आते ही शराब और विदेशी कपड़े की दूकानों पर धरना देने का काम अपने हाथों में ले लिया और जब तक शौर्य पर स्वेच्छाचार ने विजय प्राप्त न करली तब तक पुलिस भी उनके आगे कुछ न कर सकी। ऐसी स्थिति में गान्धी जी को खुला छोड़ा जाय? न जाने वह कहाँ से देश की छिपी हुई शक्ति को ढूंढ़ कर निकाल लावे। उनके हाथ में जादू की लकड़ी थी। उसे जरा घुमाया कि धन-जन का ढेर लग जाता था। अतः उन्हें गिरफ्तार तो करना था, पर समय पाकर। कारण गान्धी पर हाथ डालना सारे राष्ट्र-रूपी भिड़ के छत्ते को छेड़ना था। १४ अप्रैल को जवाहरलाल को पकड़ कर सजा दे दी गई। जवाहर क्या बन्दी हुआ, काँग्रेस बन्दी हो गई। सारा देश एक विशाल जेलखाना बन गया। धरना, कर बन्दी और सामाजिक बहिष्कार सब की रोक के लिए अर्डीनेन्स निकल गये। राष्ट्रीय झण्डे पर अनेक मुठभेड़ें हुईं। सजायें दिन-दिन कठोर होने लगीं। कैद के साथ-साथ जुर्माने

किये जाने लगे। लाठी प्रहार भी आ पहुँचे। लोगों को विश्वास ही नहीं होता था कि लाठियों और सब शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित करके पुलिस को जो क़वायद और परेट सिखाई जा रही है वह सत्याग्रहियों के सिर पर आजमाई जायेगी। यह कोरी धमकी या आशङ्का नहीं निकली। लाठी प्रहार तो भयङ्कर सत्य के रूप में प्रकट हुआ। सभा भङ्ग की आज्ञा तो होती थी देश के साधारण कानून के अनुसार, और उस पर हमला होता था लाठी के निर्दय प्रहारों से। नमक कानून के साथ-साथ ताज़ीरात हिन्द की धारायें मिला कर लम्बी से लम्बी सजायें दी जाने लगीं।

"ए" वर्ग तो नाम मात्र का ही था "बी" क्लास भी बड़ी कंजूसी के साथ दिया जाता था। विपुल सम्पत्ति के स्वामी और ऊंचे रहन सहन के अभ्यासी सरकार की शर्तों के अनुसार भी उच्च वर्ग के हक़दार थे। पर उन्हें भी प्रायः "सी" क्लास में ही सत्याग्रहियों के साथ डाल दिया जाता था और काम भी उन्हें जेलों में पत्थर तोड़ने, घानी पेलने, और पानी निकालने का दिया जाता था।

आरम्भ में तो गिरफ्तारियों और भारी जुर्मानों की नीति आजमाई गई, परन्तु थोड़े ही दिन बाद मार पीट आ पहुँची। बाजार में सौदा खरीदते हुए खद्दर या गान्धी टोपी धारी मनुष्य पीट दिए जाते थे मालाबार की फौजी पुलिस को आन्ध्र के ब्रह्मपुर से एलोर तक कोकानाडा और राजमहेन्द्री होकर सिर्फ इसलिए घुमाया गया कि रास्ते चलते खद्दर धारियों की मरम्मत करने का आनन्द लूटा जाय। ये करतूतें आखिर एलोर के विरोध से बन्द हुईं। वहाँ पुलिस ने गोली चलाई। दो तीन आदमी मरे और ५—६ घायल हुए।

महासमिति गैर कानूनी ठहरा दी गई पंडित मोतीलाल नेहरू को

३० जून १९३० के दिन गिरफ्तार करके ६ महीने की सजा दे दी गई । दमन-पुराण में इतनी वृद्धि और हुई कि बहिष्कार आन्दोलन की तीव्रता के साथ साथ दमन चक्र की कठोरता भी बढ़ती गई । बम्बई के स्वयं सेवक संगठन में कोई कसर बाकी न थी। स्त्रियाँ आती ही गयीं और जब ये कोमलाँगियाँ केसरिया साड़ी पहन-पहन कर अत्यन्त विनम्रता के साथ धरना देती थीं, तो लोगों के हृदय बात की बात में पिघल जाते थे। कोई दूकानदार अपने माल पर मोहर न लगवाता तो उसी की पत्नी धरना देने आ बैठती! अन्यत्र की तरह बम्बई में भी सार्वजनिक सभाएं वर्जित करार दे दी गईं। पर इन आज्ञाओं को मानता कौन था? ब्रेल्स-फोर्ड साहब ने आन्दोलन के समय इस देश की यात्रा की थी और जनता के साथ जो पाशविक व्यवहार किया जाता था, उसे अपनी आँखों देखा था । १२ जनवरी १९३१ के मेनचेस्टर गार्जियन में उन्होंने अपना अनुभव इस प्रकार लिखा :---

'पुलिस के खिलाफ जिम्मेवार भारतीय नेताओं की जगह-जगह इतनी शिकायतें हैं कि उनकी जाँच करना बड़ी टेढ़ी खीर है। वर्जित सभाओं को भङ्ग करने में पुलिस की पशुता की शिकायत सभी जगह सुनी जाती है।'

शोलापुर में परिस्थिति बड़ी भद्दी तरह से बिगड़ी। स्वयं सेवक रास्तों पर व्यवस्था और आवागमन का नियन्त्रण कर रहे थे । ऐसा कई दिन तक होता रहा। पुलिस वस्तुतः बेकार हो गई । अधिकारियों को यह कब पसन्द आता ? इस प्रकार की परिस्थिति में पुलिस एवं स्वयं सेवकों में संघर्ष के अवसर आने सम्भव ही थे । आखिर भिड़न्त हो ही गई और चार पाँच पुलिस वाले मार दिए गये। १९१९ में पंजाब में जैसा फौजी कानून जारी किया गया था, शोलापुर में भी वैसा हुआ। इसके साथ-साथ जो गन्दगी आती है, वह भी आई।

एक बड़े सेठ और तीन अन्य व्यक्तियों को फाँसी पर लटका दिया गया। कई आदमियों को फौजी कानून के अनुसार लम्बी लम्बी सजायें दे दी गई। जुलाई, अगस्त में समझौते की बात चीत (जो कि अन्त में असफल रही) में इन्हीं कैदियों के छुटकारे का प्रश्न झगड़े का विषय बन गया था। इसका जिक्र आगे किया जायगा।

२३ अप्रेल १९३० को पेशावर में जो घटनाएँ हुईं उनका भी सार यहाँ दे देना ठीक होगा। भारत के अन्य भागों की भाँति सीमाप्रान्त में भी कानून भङ्ग का आन्दोलन चल रहा था। पेशावर शहर में काँग्रेस की ओर से घोषणा की गई कि २३ अप्रेल से शराब की दूकान पर पहरा लगेगा। परन्तु शकुन अच्छे नहीं हुए। २२ अप्रेल का महासमिति का प्रतिनिधि-मण्डल पेशावर पहुँचने वाला था। इसका उद्देश्य सीमाप्रान्त के विशेष कानूनों के अमल की जाँच करना था। मण्डल अटक में ही रोक दिया गया और प्रान्त में उसे घुसने नहीं दिया गया। इस समाचार पर पेशावर में जलूस निकला और शाही बाग में विराट सभा हुई। दूसरे दिन तड़के ही ६ नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। ६ बजे दो नेता और पकड़ लिये गये। परन्तु जिस मोटर लारी में पुलिस उन्हें थाने में ले जा रही थी, वह बिगड़ गई। नेताओं ने थाने पर आ जाने का आश्वासन दिया और वे छोड़ दिये गये। तदनुसार जनता उक्त नेताओं का जलूस बनाकर काबुली दरवाजे के थाने पर ले गई। पर थाना बन्द था। इतने में एक पुलिस अफसर घोड़े पर आ पहुँचा। उसके आते ही जनता नारे लगाने और राष्ट्रीय गीत गाने लगी। अफसर चला गया और अकस्मात २-३ सशस्त्र मोटरें आ पहुँची और भीड़ के भीतर घुस गईं। इसी समय एक अँग्रेज

मोटर-साइकिल से तेजी के साथ आरहा था, उसकी मोटर-साइकिल सशस्त्र मोटर से टकरा कर चूर-चूर हो गई। मोटर से किसी ने गोली चलाई और संयोग से मोटर में आग लग गई। डिप्टी कमिश्नर अपनी सशस्त्र मोटर में से उतरा और थाने में जाते हुए, जीने पर गिर पड़ा। वह बेहोश हो गया किन्तु जल्दी ही होश में आगया। उसके बाद सशस्त्र मोटरों में से गोलियाँ चलने लगीं। लोगों ने मृत शरीरों को वहाँ से हटाने का प्रयत्न किया। फौजी दस्ते और मोटरें भी हटाली गईं। दूसरी बार फिर गोलियाँ चलाई गईं और वे करीब ३ घन्टे तक चलती रहीं। दुर्घटनाओं के सम्बन्ध में सरकार द्वारा प्रकाशित वक्तव्य में मृतकों की संख्या ३० और घायलों की संख्या ३५ दी गई हैं किन्तु लोग इन संख्याओं को ७ से १० गुना तक बतलाते थे। शाम को फौज कॉंग्रेस दफ्तर में आई और कॉंग्रेस के बिल्लों और राष्ट्रीय भएडों को उठा ले गई। २८ तारीख को पुलिस ने फिर आकर कॉंग्रेस और खिलाफत के स्वयं सेवकों से जो शहर के दरवाजों पर पहरा दे रहे थे, सब शहर का चार्ज ले लिया। ४ मई को शहर पर फौज ने कब्जा कर लिया। ६ मई को सरकार ने घटनाओं के सम्बन्ध में जो वक्तव्य निकाला था उसे यहाँ दे देना उचित होगा। जिन दो नेताओं ने लोगों के प्रतिनिधि बन कर थाने में हाजिरी देना मन्जूर किया था, वक्तव्य में कहा गया है कि उन्हें भीड़ ने पुलिस की हिरासत से छुड़ा लिया। कहा जाता है कि जिस पुलिस अफसर ने नारे और राष्ट्रीय गायन सुने उसने पुलिस थाने से लौट कर डिप्टी कमिश्नर को सूचित किया था कि "पुलिस स्टेशन के पास भारी भीड़ खड़ी है, पुलिस उसे रोकने में असमर्थ है। मैं एक रोड़े से घायल भी हुआ हूँ।" जब डिप्टी कमिश्नर वहां होकर निकला तो

उसकी मोटर पर भी रोड़े और पत्थर फेंके गये । उसने पीछे फिर कर देखा तो उसे एक दूसरी सशस्त्र मोटर के पहिये के नीचे मोटर साइकिल वाला डाकिया दिखाई दिया । सशस्त्र मोटर उससे रुकी खड़ी थी । कहा गया था कि भीड़ में से किसी ने डाकिये के सिर में घूँसा मार कर मोटर साइकिल से नीचे गिरा दिया था । उसके बाद उसके ऊपर से सशस्त्र मोटर निकल गई । डिप्टी कमिश्नर जब भीड़ से बात चीत करने की कोशिश कर रहा था, तो उस पर रोड़े और पत्थर फेंके गये । सशस्त्र मोटर के फौजी अफसर पर हमला किया गया था और उसके तमन्चे को छीन लेने की कोशिश की गई थी । डिप्टी कमिश्नर को धक्का मारा गया था, जिससे वह बेहोश हो गया । उसे पुलिस स्टेशन में ले जाना पड़ा । सशस्त्र मोटर में भी भीड़ ने आग लगा दी थी ।

उसके बाद डिप्टी कमिश्नर ने गोली चला कर भीड़ को तितर बितर करने का हुक्म दिया था । २६ अप्रेल को जो दुर्घटनाएँ हुई उनमें २० मरे ३० घायल हुए थे । पेशावर काँग्रेस कमेटी ने पोस्टर और बुलेटिन निकाले थे, जिनमें लिखा था कि हम तुरंगजई के हाजी से पत्र-व्यवहार कर रहे हैं । हमने उसे बुलाया है और वह पेशावर जिले में आने के लिये लश्कर जमा कर रहा है । काँग्रेस और नवजवान भारत सभा इस समय विद्रोह कराने के प्रयत्न में लगी थीं ।

३१ मई १९३० को सविनय अवज्ञा आन्दोलन के जमाने में गंगासिंह केम्बोज नाम के एक सज्जन, जो कि एक फौजी डेयरी में सरकारी नौकर थे, अपने बाल बच्चों के साथ पेशावर में एक ताँगे में काबुली दरवाजे से गुजर रहे थे । उन पर के० ओ० वाई० एल० आई० के अँग्रेजी लेन्स जमादार ने गोली

चलाई, जिससे बीबी हरपालकौर नाम की एक ६।। साल की उनकी लड़की और काका वचीतरसिंह नाम का १६ मास का उनका लड़का ये दो बच्चे मारे गये और ताँगे से ऐसे गिर गये जैसे चिड़िया के बच्चे उसके घोंसले से गिर जाते हैं। उन बच्चों की मा श्रीमती तेजकौर बाँह और छाती में सख्त घायल हुईं। उनका स्तन तो बिल्कुल उड़ ही गया था। उन बच्चों के मृत शरीरों का जुलूस डिप्टी कमिश्नर की आज्ञा से निकाला गया और उसमें हजारों लोगों ने भाग लिया। किन्तु डिप्टी कमिश्नर की आज्ञा लेने पर भी फौज ने अर्थियाँ उठाने वाले और जुलूस वालों पर तितर-बितर होने की कोई सूचना दिये बिना ही केवल दो गज के फासले से गोलियाँ चलाईं। अर्थियों के पहले उठाने वाले मारे जाते तो अर्थियाँ जमीन पर गिर जातीं और उन्हें फिर नये लोग आकर उठा लेते। ऐसा बार-बार हुआ। इस प्रकार असेम्बली में दिए गए सरकारी उत्तर के अनुसार भी १७ बार गोलियाँ चलाने पर जुलूस के ६ आदमी मारे गये और १८ घायल हुये।

जुलाई १६३० में सरकार ने ऐक और वक्तव्य निकाला था, जिसमें दिखलाया गया था कि ११ नं० प्रेस आर्डीनेंस के अनुसार २ लाख ४० हजार रुपये की जमानतें १३१ अखबारों से उस समय तक माँगी जा चुकी थीं। इनमें से ६ पत्रों ने जमानतें नहीं दीं, अतः उनका प्रकाशन बन्द हो गया।

१ अगस्त १६३० को बम्बई में लोकमान्य तिलक की बरसी मनाई गयी थी और श्रीमती हंसा मेहता की पेशवाई में, जो उस समय नगर काँग्रेस की डिक्टेटर थीं, एक जलूस निकाला गया था। काँग्रेस कार्यसमिति की बैठक नगर में लगातार तीन दिन से हो रही थी। वह उस समय वहाँ गैर कानूनी घोषित नहीं हुई थी क्योंकि सरकार उस हुक्म को एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में धीरे-धीरे जारी कर रही थी। कार्यसमिति के कुछ सदस्य सायंकाल के

जलूस में शामिल हो गये थे और जिस समय वे आगे बढ़े चले जा रहे थे उस समय इन्हें जलूस निकालने की निषेधाज्ञा का हुक्म और दफा १४४ का नोटिस मिला। उस समय तक जलूस में हजारों आदमी हो गये थे। जिस समय वह हुक्म मिला उस समय सड़क पर एक विशाल जन समुदाय बैठा था और सारी रात पानी बरसते रहने के बाद भी एक इंच हटना नहीं चाहता था। लोग सचमुच पानी के पोखरों में ही बैठे थे। यह आशा की जा रही थी कि जलूस को आधी रात के बाद आगे बढ़ने दिया जायगा। जैसा कि एक बार पहले हुआ था। किन्तु वह न हुआ। चीफ प्रेसीडेन्सी मजिस्ट्रेट ने इस स्थिति की सूचना पूना-स्थित होम मेम्बर को दी। मि० हाडसन ने उत्तर दिया कि जब तक मैं न आ जाऊं तब तक कुछ भी नहीं करना चाहिये। वह सुबह के पहले घंटों में वहाँ पहुँचे और भीड़ को विक्टोरिया-टर्मिनस की इमारत की गैलरी की एक छत से देखने लगे। कुछ चुने हुए आदमी सुबह गिरफ्तार कर लिये गये और उनके साथ करीब सौ महिलाएँ भी। और तब भीड़ को तितर बितर करने के लिये लाठी प्रहार का हुक्म हुआ। कार्यसमिति के जो मेम्बर उस समय गिरफ्तार हुए वे पं० मदनमोहन मालवीय, वल्लभभाई पटेल, जयरामदास दौलतराम और श्रीमती कमला नेहरु थे। श्रीमती मणिबहन, वल्लभभाई की सुपुत्री जिनका यश गुजरात के नमक-सत्याग्रह में और बोरसद के कर-बन्दी-आन्दोलन में काफ़ी दूर तक फैल चुका था, जलूस में थीं इसलिये वह भी गिरफ्तार करली गई थीं। लगभग सौ अन्य महिलाएँ भी गिरफ्तार की गई थीं, जिनमें पंजाब की श्रीमती अमृत कौर और डिक्टेटर श्रीमती हंसा मेहता भी थीं।

बम्बई में निषेध आज्ञाओं के विरुद्ध जब कभी कोई सार्वजनिक सभा

की जाती थी तो उस समय के दृश्य मानो खून जमा देते थे। पुराना पुलिस कमिश्नर साफ इस कानून से बदल दिया गया था कि वह काफी कठोर नहीं था और उसकी जगह पर एक नया लाया गया था। उनका नाम विल्सन था। उसे आशा थी कि मैं भीड़ों को तुरन्त तितर बितर कर सकूंगा। उनके चार्ज लेने के बाद पहला अवसर जब आया तो जो लाठी अब तक शरीरों पर पड़ती थीं वह सीधी सिरों पर गिरने लगीं। खून बहने लगा और स्वयं सेवक बेहोश हो-हो कर लुढ़कते हुए जमीन पर गिरने लगे। पीड़ितों का यह दृश्य इतना दुख जनक और साथ ही इतना प्रभाव जनक था कि जो भीड़ पड़ोस में खड़ी देखती थी उनमें से हजारों लोग निकल-निकल कर श्रोताओं में शामिल हो गये। सभा में बैठे हुए लोगों की संख्या ५ हजार से बढ़ते-बढ़ते २५ हजार हो गई। किन्तु जब अचानक आन्दोलन का अन्त होने को आया, इसमें कोई सन्देह नहीं कि अहिंसा को अधिकाधिक हिंसा से दबाने में जो असफलता हुई वह भी उस अन्त में एक कारण थी। शायद अन्तिम बड़ी टक्कर स्वाधीनता का प्रस्ताव पास होने का दिन मनाने के अवसर पर हुई थी। आधी रात के समय एक लाख आदमी इकठ्ठे हुए। प्रदर्शन का यही समय नियत हुआ था। यह अवसर तो पुलिस द्वारा गोली चलाने के लिये प्रसिद्ध है।

बम्बई में आजाद-मैदान लड़ाई का स्थान था। गान्धी जी ४ मई १९३० को गिरफ्तार हुए थे। इस सारे आन्दोलन-काल में हर मास की ४तारीख को गान्धी-दिवस मनाया जाता था और हर मास के अन्तिम रविवार को झन्डा दिवस। इन प्रदर्शनों में हजारों लोग शामिल होते थे और वे केवल लाठी प्रहार से ही बिखर सकते थे। किन्तु ज्यों ही मनुष्य एक स्थान से बिखरते त्यों हीं वे मैदान के दूसरे स्थान पर इकठ्ठे हो जाते। इस प्रकार भीड़ों को बिखेरना

पुलिस का एक काम ही बन गया था। बम्बई में एक महाराज ने लाठी प्रहार देख कर कहा था कि लाठी प्रहार से तो मार्शल-लॉ (फौजी कानून) कहीं अच्छा होता है। जो जाति लाठी प्रहार के सामने ठहर सकती है वह मार्शल-लॉ का मुकाबिला बहुत अच्छी तरह से कर सकती है। वह महाराज बीकानेर नरेश थे। वह बम्बई में एक जलूस को जो कि पं० मोतीलाल की ३० जून १९३० की गिरफ्तारी से पहले उनकी मौजूदगी में निकाला गया था, देखने के लिये गये थे। इन घटनाओं में आश्चर्य की बात यह थी कि जब पिता और चाचा गोलमेज परिषद में गए हुए थे तब उनकी पुत्रियाँ और भतीजियाँ भारतवर्ष में अपना खून बहा रहीं थी।

मदरास में यह मारपीट इतनी आम थी कि एक अवसर पर एक मिशनरी रैव पेटन एक पुलिस स्टेशन के पास ही बुरी तरह से पीटे गये थे। शाम का समय था और वह उस समय खादी के कपड़े पहने, हैट लगाये, पास से धरना और लाठी प्रहार देख रहे थे। इसी कारण पुलिस के तरीकों पर सख्त एतराज भी प्रकट किया गया किन्तु सरकार और पुलिस कोई भी, न तो इनमें सुधार करते थे और न इनकी अंधाधुंधी को ही स्वीकार करते थे। दक्षिण में मि० खारतान नामक मिशनरी को भारतवर्ष छोड़ जाने का हुक्म दिया और उस बेचारे को तदनुसार वहाँ से जाना पड़ा।

पुलिस ने गैर कानूनी जमायत बनाने वालों को सजा देने का एक नया ढंग शुरू किया था। ह धरना देने वालों को भिन्न-भिन्न स्थानों से इकट्ठा करके लारी में रख कर शहर से बहुत दूर ले जाती और उन्हें वहाँ छोड़ आती। वे लोग बिना पैसे तकलीफ पाते हुए, जैसे होता वैसे अपने स्थानो पर वापस आते। बम्बई में व्यापारियों की दूकानों में विदेशी कपड़े का धरना और

मुहरबन्दी दोनों कार्य इतनी तीव्रता से हुए कि एक बार छिपे-छिपे विदेशी कपड़ा ले जाने वाली लारी को रोकने के लिए उसके सामने बाबू गणू नामक लड़का खड़ा हो गया। घटना कालबा देवी रोड की है। हुआ यह कि मोटर लड़के के ऊपर होकर निकल गई और लड़का मर गया।

गुजरात में, बारडोली और बोरसद ताल्लुकों में जिस तरह करबन्दी आन्दोलन सफलता पूर्वक चलाया गया था, वह सारे आन्दोलन की नाक थी। उसे दबाने के लिये अधिकारियों ने ऐसे-ऐसे जुल्म किये थे कि उनसे तंग आकर ८० हजार आदमी अंग्रेजी सीमा से निकल-निकल कर अपने पड़ौस के बड़ौदा राज्यस्थ गावों में चले गये थे।

खुद श्री वल्लभ भाई पटेल की माँ, जिनकी उम्र ८० वर्ष से ऊपर है, जो अपना खाना पका रही थीं, उनके पकाने के बर्तन को पुलिस ने नीचे गिरा दिया था। चावल में पत्थर, बालू और मिट्टी का तेल मिला दिये गये थे। बेचारे देहातियों को जो और शारीरिक कष्ट दिये गये वह अलग रहे। किन्तु फिर भी उनका संगठन आश्चर्य-जनक था। पर उससे भी आश्चर्य जनक थी अहिंसा में उनकी दृढ़ता आचार में भी और भावना में भी।

इस लम्बी कहानी को संक्षिप्त करने के लिये केवल यह कह देना जरूरी है कि राष्ट्रीय आन्दोलन में भारतवर्ष के हर एक प्रान्त और भाग ने अपने-अपने हिस्से का कष्ट सहन किया।

इस रोमाञ्चकारी दुख कथा को हम २१ जनवरी १९३१ के दिन एक उत्सव मनाने के समय बोरसद में दिखाई हुई महिलाओं की वीरता के एक वर्णन के साथ समाप्त कर देंगे। पुलिस प्रदर्शन को रोकने का निश्चय कर चुकी थी। स्त्रियों ने जुलूस वालों को पानी पिलाने के लिए भिन्न-भिन्न स्थानों

पर पानी के बड़े-बड़े बर्तन रख छोड़े थे । पुलिस ने पहले इन बर्तनों को ही तोड़ा फिर स्त्रियों को बलपूर्वक तितर बितर कर दिया । यह भी कहा जाता है कि जब स्त्रियाँ गिर गईं तो पुलिस वाले उनके सीनों को बूटों से कुचलते हुए चले गये। पुलिस के गुण्डेपन का कदाचित यह अन्तिम कार्य था । २६ जनवरी को समझौते की बात चीत चलाने योग्य वातावरण उत्पन्न करने के लिये गान्धी जी और उनके २६ साथियों को बिना शर्त छोड़ देने की विज्ञप्ति प्रकाशित हुई ।

इस प्रकार जनता के शान्त कष्ट सहन ने केवल नैतिक और वास्तविक विजय ही प्राप्त नहीं की अपितु अँग्रेजी पाशविक बल को एक बार ऐसा परास्त किया जिसकी महत्ता और शान इतिहास में सदा बनी रहेगी ।
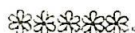
छटवाँ अध्याय

सविनय अवज्ञा आन्दोलन १९३२-३३

१९३०-३१ के आन्दोलन के परिणाम स्वरूप भारत सरकार ने वायसराय लार्ड अर्विन के द्वारा काँग्रेस के साथ अस्थाई संधि विवश हो ४मार्च १९३१ को की, परन्तु लार्ड अर्विन के उत्तराधिकारी लार्ड वेलिङ्गडन अपने शासन काल के प्रारम्भ से ही काँग्रेस के साथ की हुई अस्थाई संधि को अन्त करने के पक्ष में थे और उसको एक बार सदा के लिये कुचलना चाहते थे। उनके इस कार्य में उन्हें सहायता के लिये भारत में उन्नति विरोधी प्रतिक्रिया वादियों की कमी नहीं थी।

सच तो यह है कि जब गाँधी जी और लार्ड अर्विन के बीच समझौता हुआ तो उसके बादही भारत में उन सब उन्नति विरोधी लोगों ने, जो समझौते को पसंद नहीं करते थे, शीघ्रता के साथ अपनी शक्तियों को संगठित किया और भारतीय राष्ट्रवादियों को शिकस्त देने के लिये अपना सम्मिलित गुट बना लिया था। इस षडयंत्र की आँशिक रचना तो शिमला में हुई थी जो कि भारत सरकार का सदर मुकाम है। ४ जनवरी १९३४ को सरकारी प्रहार शुरू हो गया। काँग्रेस की तथा उससे सम्बन्धित हर एक संस्था को गैरकानूनी करार दे दिया गया और काँग्रेसी लोग कानून या आर्डीनेन्स के, जो कि गैर क़ानूनी कहलाने लगे थे, खिलाफ कोई प्रत्यक्ष कार्य करें या नहीं, उन्हें गिरफ्तार कर करके जेलों में भेजा जाने लगा। इस प्रकार सरकार ने तो लड़ाई वहीं से शुरू की, जहाँ से कि उसे छोड़ा था, पर काँग्रेस को सब कुछ नए सिरे से शुरू करना पड़ा। सरकारी लाठी-प्रहार आन्दोलन (१९३०) के समय शुरू में नहीं बल्कि

बाद में जारी हुआ था। लेकिन १९३२ में सत्याग्रहियों को सबसे पहले उसी का मुकाबिला करना पड़ा।

गान्धी जी गुजरात के उन ताल्लुकों में जाने का इरादा कर रहे थे, जिन्हें १९३० की लड़ाई में बहुत कष्ट उठाना पड़ा था। लेकिन पेश्तर इसके कि वह वहाँ जायँ उन्हें और उनके विश्वस्त सहायक वल्लभ भाई को ४ जनवरी १९३२ के बड़े सवेरे गिरफ्तार करके शाही कैदी बना दिया गया। खान साहब और जवाहरलाल पहले ही गिरफ्तार हो चुके थे। अब जो भारतीय राजनीतिज्ञ बाकी बचे थे, उन्हीं को लड़ाई का सञ्चालन करना पड़ा। हजारों की तादाद में सत्याग्रही मैदान में आये। १९२१ में उनकी संख्या ३० हजार थी, जो एक बड़ी तादाद मानी गई थी—१९३०-३१ में दस महीनों के थोड़े समय में ही ९० हजार स्त्री-पुरुष और बच्चे दोषी करार देकर जेलों में ठूँस दिए गए थे। यह कोई नहीं जानता कि मार कितनों पर पड़ी, लेकिन जितनों को कैद की सजा हुई थी, पिटने वालों की संख्या उनसे ३ या ४ गुनी से ज्यादा तो होगी ही। लोगों को पीटते-पीटते किसी काम के लायक ही न रहने दिया गया, या छिनने और घर दबोचने की नीति से उन्हें थका दिया गया। जेलों में कैदियों की पिटाई फिर शुरू हो गई। काँग्रेस के दफ्तर की जो गुप्त या खानगी बातें थीं, उनके रहस्योद्घाटन करने के लिए कहा गया। "तुम्हारे (काँग्रेस के) कागज-पत्र रजिस्टर और चंदे व स्वयं सेवकों की फेहरिस्तें कहाँ हैं" यह सरकार की माँग थी। नौजवानों को तरह-तरह से तंग किया गया, न कहने योग्य बातें (अपशब्द) उन्हें कही गईं और अकथनीय सजाओं के आयोजन करके उनको अमली रूप दिया गया। हाईकोर्ट के एक एडवोकेट को सताने के लिये एक-एक करके उसके बाल उखाड़े गये और यह सिर्फ इसलिये कि उसने पुलिस को अपना

नाम और पता नहीं बताया था। जैसे-जैसे परिस्थिति बदलती गई, उसके अनुसार नए-नए आर्डीनेन्स निकलते गये।

युक्त प्रान्तीय इमरजेन्सी आर्डीनेन्स १४ दिसम्बर १९३१ को जारी हुआ। इसके द्वारा प्रान्तीय सरकार को अधिकार दिया गया कि वह किसी खास हल्के के निवासियों पर सामुहिक जुर्माना कर सकती थी और उसकी वसूली उसी तरह हो सकती थी जैसे कि मालगुजारी वसूल की जाती हैं।

सीमा प्रान्त सम्बन्धी तीन आर्डीनेन्स २४ दिसम्बर १९३१ को जारी किये गये। इनमें से एक तो युक्त प्रान्त-सम्बन्धी आर्डीनेन्स की ही तरह था और सरकारी रकम की वसूली के लिये निकाला गया था। बाकी दो में से एक का नाम "सीमाप्रान्तीय इमरजेन्सी पावर्स आर्डीनेन्स" था और दूसरे का "अन-लॉ फुल एसोशियेशन आर्डीनेन्स" था।

४ जनवरी को चार नए आर्डीनेंस और जारी हुए— (१) इमर्जेन्सी पावर्स आर्डीनेंस, (२) अन-ला फुल इंस्टिगेशन आर्डीनेन्स (३) अन-ला फुल असोसियेशन आर्डीनेंस, और (४) प्रिवेन्शन आफ मालेस्टेशन एण्ड बायकाट आर्डीनेन्स।

१९३२-३३ की घटनाएँ भी प्रायः १९३०-३१ की ही तरह रही, अलबत्ता लड़ाई इस बार और भी जोरदार एवं निश्चयात्मक थी। दमन और भी अन्धाधुन्धी के साथ चला और लोगों को पहले से भी कहीं ज्यादा कष्ट सहन करना पड़ा।

सरकारी आक्रमण ४ जनवरी के बड़े सवेरे म० गान्धी और राष्ट्रपति सरदार वल्लभभाई पटेल की गिरफ्तारी के साथ आरम्भ हुआ। १९३० के उपर्युक्त आर्डीनेन्स उसी दिन सवेरे जारी हुए और कई प्रान्तों पर लागू कर

दिये गये। इसके बाद कुछ ही दिनों में, अमली तौर पर, सारे देश में वे लागू हो गये। अनेक प्रान्तीय और मातहत काँग्रेस कमेटियों, आश्रमों, राष्ट्रीय स्कूलों तथा अन्य राष्ट्रीय संस्थाओं को गैर कानूनी करार दे दिया गया और उनकी इमारतों, फर्नीचरों, रुपये पैसे और अन्य चल सम्पत्ति को सरकारी कब्जे में ले लिया गया। देश के खास-खास काँग्रेसियों में से अधिकाँश को एकदम जेलों में ठूँस दिया गया। इस प्रकार देखते ही देखते काँग्रेस के पास न तो नेता रहे, न रुपया पैसा न निवास स्थान। लेकिन आकस्मिक और दृढ़ झपट्टे के बावजूद जो काँग्रेसी बच रहे थे वे भी साधन-हीन नहीं हो गये थे। जो जहाँ था वहीं उसने काम शुरू कर दिया। कार्य-समिति ने तय कर लिया कि १९३० की तरह इस बार खाली होने वाले स्थानों की पूर्ति न की जाय और सरदार बल्लभभाई पटेल ने अपनी खुद की गिरफ्तारी का खयाल करके अपने बाद क्रमशः कार्य करने वाले व्यक्तियों की एक सूची बनाई। कार्य-समिति ने अपने सारे अधिकार अध्यक्ष के सुपुर्द कर दिये और अध्यक्ष ने उन्हें अपने उत्तराधिकारियों को सौंप दिया जो क्रमशः अपने उत्तराधिकारियों को नामजद करके वे अधिकार दे सकते थे। प्रान्तों में भी जहाँ कहीं सम्भव हुआ, काँग्रेस-संगठन की सारी सत्ता एक ही व्यक्ति को दे दी गई। इसी प्रकार जिलों, थानो, ताल्लुकों और गाँवों तक की काँग्रेस कमेटियों में भी हुआ। यही व्यक्ति आम तौर पर डिक्टेटर या सर्वेसर्वा के रूप में प्रसिद्ध हुए। एक बड़ी कठिनाई सविनय अवज्ञा-आन्दोलन के संचालकों के सामने यह थी कि अवज्ञा अर्थात् आज्ञा भंग के लिये किन कानूनों को चुना जाय, ? यह तो स्पष्ट ही है कि हरेक या चाहे-जिस कानून का भंग नहीं किया जा सकता। आर्डीनेंसों की इस सर्व व्यापकता ने काँग्रेस के लिये

और भी कठिनाई पैदा कर दी थीं। अस्तु भिन्न-भिन्न प्रान्तों में भिन्न-भिन्न विषय चुने गये, जब कि कुछ विषयों का समय-समय पर कार्य वाहक-राष्ट्रपति की ओर से आदेश मिलता रहा। शराब और विदेशी कपड़े की दूकानों तथा बृटिश माल की पीकेटिङ्ग सब प्रान्तों में समान रूप से लागू हुई। लगान बन्दी युक्त प्रान्त में काफी बड़ी हद तक और बंगाल में आंशिक रूप से एक महत्व का विषय रहा। बिहार व बंगाल के कुछ स्थानों में चौकी दारी टैक्स देना बन्द कर दिया गया। मध्य प्रान्त व बरार, कर्नाटक, युक्तप्रान्त मदरास, प्रेसीडेन्सी तथा बिहार के कुछ स्थानों में जंगलात के कानूनों को भंग किया गया। गैर कानूनी नमक बनाने, एकत्र करने और बेचने के रूप में नमक कानून को तो अनेक स्थानों में भंग किया गया। सभाओं और जलसों की तो जरूर मनाही की गई, लेकिन निषेधाज्ञाओं के होते हुए भी सभाऐं हुईं और जलूस भी निकाले गये। लड़ाई की शुरूआत में खास-खास दिनों का मनाया जाना बहुत लोक प्रिय रहा, जो कि बाद में विशेष उत्सव के दिन ही बन गये। ये किन्हीं खास घटनाओं या व्यक्तियों अथवा कार्यों को लेकर मनाये जाते थे, जैसे गान्धी दिवस मोतीलाल दिवस, सीमाप्रान्तीय-दिवस शहीद दिवस, झण्डा दिवस इत्यादि। जैसा कि अभी कह चुके हैं, कांग्रेस के दफ्तरों व आश्रमों को सरकार ने अपने कब्जे में कर लिया था। अतः अनेक स्थानों में उन्हें सरकारी कब्जे से वापस अपने हाथों में लेने का प्रयत्न किया गया, जिसका प्रयोजन उस आर्डीनेन्स का भंग करना था जिसके अनुसार इन स्थानों में जाना निषिद्ध औ गैर कानूनी करार दे दिया गया था। ये प्रयत्न "धावों" के नाम से मशहूर हैं। आर्डिनेंस के कारण कोई प्रेस कांग्रेस का काम नहीं कर सकता था। इस अभाव की पूर्ति के लिये बेज़ाब्ता हस्तपत्रक, परचे, संवाद पत्र, रिपोर्टें आदि निकाले गये। जो या तो टाइप किये होते थे या साइक्लोस्टायल

अथवा । डुप्लीकेटर से निकले हुए और कभी-कभी छपे हुए भी-लेकिन जैसा कि कानूनन होना चाहिये उन पर प्रेस या मुद्रक का नाम नहीं होता था और कभी-कभी ऐसे नाम दे दिये जाते थे जिनका अस्तित्व ही कहीं नहीं होता था, यह मजे की बात है कि पुलिस के सतर्क रहने पर भी ये सम्वाद-पत्र और हस्त-पत्रक नियमित रूप से प्रकाशित होकर, जो कुछ होरहा था उसकी, सारे देश को खबरें पहुँचाते रहे। डाक और तार विभाग के दरवाजे काँग्रेस के लिये बन्द हो गये थे इसलिये काँग्रेस ने अपनी डाक प्रान्त के एक स्थान से दूसरे स्थान तक ही नहीं बल्कि महासमिति के कार्यालय से विभिन्न प्रान्तों तक का भेजने की खुद ही व्यवस्था की। कभी कभी यह डाक ले जाने वाले स्वयं सेवक पकड़े भी गये और तब उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया, या और कोई कार्रवाई की गई। १६३० के आन्दोलन के उत्तरार्द्ध में वस्तुतः यह प्रथा प्रारम्भ हुई थी और १६३२ में जाकर यह लगभग पूर्णता को पहुँच गई। और तो और महासमिति या प्रान्तीय कमेटियों के दफ्तरों का भी सरकार पता नहीं लगा सकी, जहाँ से न केवल हस्त पत्रक ही निकलते थे बल्कि आन्दोलन चलाने के सम्बन्ध में हिदायतें भी जारी होती रहतीं थीं, और जब कभी ऐसा काम करने वाले किसी दफ्तर या व्यक्ति का पता लगा कर काम में रुकावट डाली गई कि तुरन्त ही उसकी जगह दूसरा तैयार हो गया और काम चलाने लगा। दूसरी बात जिससे लोगों में बड़ा उत्साह पैदा हुआ और जिससे पुलिस को भी कम परेशानी नहीं उठानी पड़ी, काँग्रेस के अधिवेशन का किया जाना था, जिसके बाद प्रान्तों व जिलों की परिषदों के रूप में देशभर में काँग्रेसी सम्मेलनों की लड़ी लग गई। कई जगह स्वयं सेवकों ने जंजीर खींच कर चलती रेलगाड़ियों को रोकने के रूप में, रेलों के नियमित काम काज में खलल डालने की कोशिश की। एक बार तो रेलों को नुकसान पहुँचाने की

दृष्टि से बहुत बड़ी तादाद में बिना टिकिट रेल में जाने का भी प्रयत्न किया गया, लेकिन जिम्मेवार हलकों ने इस चेष्टा को प्रोत्साहन नहीं मिला इसलिये बाद में यह बन्द कर दी गई।

हाँ, बहिस्कार ने बहुत जोर पकड़ा। इसके एक-एक अंग को चुनकर उन पर शक्तियाँ केन्द्रित की गईं। कई स्थानों में विदेशी कपड़े, ब्रिटिश दवाइयों, ब्रिटिश बैंकों, बीमा कम्पनियों, विदेशी शक्कर, मिट्टी का तेल और खास तौर पर ब्रिटिश माल के बहिस्कार का जोरदार आन्दोलन करने के लिये अलग-अलग सप्ताह भी निश्चित किये गये।

यह तो खयाल ही नहीं करना चाहिये कि नेताओं को गिरफ्तार कर लेने के बाद सरकार खामोश या नरम पड़ गई। आर्डीनेन्सों में उल्लिखित सब अधिकारों का उसने उपयोग किया। यहाँ तक कि दमन के कुछ ऐसे तरीके भी अख्तियार किये गये जिनकी उन आर्डीनेन्सों तक में इजाजत नहीं थी, जो अपनी भयंकरता के लिये बदनाम हैं। यह कहने की तो जरूरत ही नहीं कि गिरफ्तारियाँ बहुत बड़ी तादाद में हुईं, लेकिन वे की गईं चुन-चुन कर। सजा पाने वालों की कुल संख्या एक लाख से कम न होगी। यह बात शीघ्र ही स्पष्ट हो गई कि कैम्प तथा अस्थाई जेलों के बनाये जाने पर भी जेल जाने वाले सब सत्याग्रहियों को कैद में रखने की जगह नहीं थी। इसलिये कैदियों का चुनाव करना जरूरी होगया और साधारणतः उन्हीं को जेलों में भेजा गया जिनके लिये यह समझा गया कि उनमें संगठन का कुछ माद्दा है या काँग्रेस क्षेत्र में उनका विशेष महत्व है। जेलों में उन सब की व्यवस्था करना भी कुछ आसान न था। अतः ९५ फी सदी से ज्यादा व्यक्तियों को 'सी' क्लास में रक्खा गया। 'बी' क्लास में बहुत कम लोग रक्खे गये। और 'ए' क्लास तो कई स्थानों में

बराय नाम ही रहा, बाकी जगह भी बहुत कम को ही वह मिला।

अलावा इनके जेलजीवन की साधारण परस्थितियाँ भी ऐसी नहीं थीं कि जो लोग अच्छी हालत में रहे थे और रहन सहन के बारे में जिनके अपने विचार थे वे आसानी से उन्हें बरदाश्त कर लेते। इन सब कारणों से जेल अधिकारियों के साथ अक्सर उनका संघर्ष हो जाता था, जिसके फल स्वरूप भिन्न-भिन्न प्रकार की ऐसी सजाएं उनको दी जाती रहीं जिनकी जेल के नियमों में स्वीकृति थी। अनेक बार पिटाई व दूसरे ऐसे जुल्म भी किये गये जो जेल की चहार दीवारी के भीतर किसी को पता लगने के भय से रहित होकर आसानी से किये जा सकते हैं। एक खास तरह की अपमान प्रद स्थिति में बैठने से इनकार करने पर मारपीट और हमला करने के अत्याचार का एक मामला तो अदालत में भी पहुँचा, जिसके परिणाम स्वरूप नासिक जेल के जेलर, उसके सहायक तथा अन्य व्यक्तियों को सजा भी हुई ; परन्तु सत्याग्रही कैदियों के लाठी से पीटे जाने की घटनाएं तो अक्सर ही होती रहीं। अस्थाई जेलों में रहना तो बिल्कुल ही नाकाबिल बर्दाश्त था, क्योंकि उनमें जो टीन के छप्पर पड़े हुए थे उनसे न तो मई जून की गर्मी से बचाव होता था, न दिसम्बर जनवरी की ठण्ड का ही, इससे वहाँ तन्दुरस्ती अच्छी रह नहीं सकती थी। इसमें शक नहीं कि कुछ जेलें ऐसी भी थीं जहाँ का व्यवहार किसी हद तक बर्दाश्त किया जा सकता था : लेकिन वह तो नियम नहीं, बल्कि किसी तरह अपवाद स्वरूप ही था। हालत तो कुछ स्थायी जेलों की भी बहुत अच्छी न थी। अनेक जेलों में खासकर कैम्प जेलों में, कैदियों का स्वास्थ्य बहुत बिगड़ रहा था! आमातिसार का तो सभी जगह जोर था, वर्षा और ठण्ड के साथ निमोनियाँ व फेफड़े की नाजुक बीमारियों ने भी बहुतों को आ दबोचा। फलतः अनेक तो जेलों में

हीं मर गये। कई जगह तो स्थायी जेलों में भी हालत कोई बहुत अच्छी नहीं थी। जेलों में जिस जेल कर्मचारी से कैदियों का साबिका पड़ता उनके शील स्वभाव पर ही बहुत कुछ जेलों में उनके साथ होने वाला वर्ताव निर्भर था, और वे कुछ खास अपवादों को छोड़कर आमतौर पर न तो विवेक-शील थे और न उनमें कोई लिहाज मुलाहिजा ही था।

लाठी मार-मार कर लोगों की भीड़ और जलूसों को भङ्ग करने का तरीका तो पुलिस ने शुरूआत में ही अख्तियार कर लिया था, किसी भी प्रान्त में मुश्किल से ही कोई खास जगह ऐसी रही होगी जहाँ आन्दोलन में जीवन के चिन्ह दिखाई दिये हों और फिर भी लाठी प्रहार न हुआ हो। चोट खाने वालों की संख्या भी कुछ कम न थी। अनेक स्थानों में तो लोगों के गहरी चोटें लगीं। लोगों की यह आदत थी कि जहाँ कहीं सत्याग्रहियों का कोई जुलूस निकल रहा हो, कोई सभा हो रही हो या वे किसी धावे पर जा रहे हों, तो यह जानने के लिये जुट जाते थे कि देखें क्या होता है। लेकिन जब लाठी प्रहार होता था तो इस बात का कोई भेद भाव नहीं किया जाता था कि इनमें कौन तो कानून भंग के लिये एकत्र हुए हैं और कौन सिर्फ तमाशबीन हैं। ऐसी घटनाएँ कुछ कम नहीं हुईं कि जब इन तमाशबीनों को भी लाठी प्रहारों का शिकार होना पड़ा और गिरफ्तार हो कर हवालातों या जेलों के अधिक शान्त और कम जोशीले वातावरण में भी, सत्याग्रही कैदियों के समान अपमान और कष्ट सहने पड़े। यह आम चर्चा थी कि अनेक स्थानों में तो इतने जोरों से जुल्म हुए कि जिनका बयान नहीं किया जा सकता। इन जोरो जुल्म की कमी ज्यादती और निर्दयता में एक दूसरे स्थानों पर

जो कुछ फर्क रहा वह सिर्फ उससे सम्बन्धित अधिकारियों की अपनी-अपनी बुद्धि, साधन सम्पन्नता और हृदय-हीनता की बदौलत ही रहा। और तो और स्त्रियों, लड़कों और छोटे-छोटे बच्चों तक को नहीं बख्शा गया। आखिर एक नया उपाय सरकार के हाथ लगा। जेलों व मार पिटाई की सख्तियों के लिये तो सत्याग्रही तैयार ही थे, और अनेक तो गोली खाकर मर जाने को भी तैयार थे—लेकिन, सरकार ने सोचा, अगर इनकी सम्पत्ति पर आक्रमण किया जाय तो इनमें से बहुत से, उसे बरदाश्त न कर सकेंगे। अतएव सजा देते वक्त उन पर भारीजुर्माने किये गये। कभी-कभी तो जुर्माने की रकम पाँच अंकों तक चली जाती थी। जहाँ मालगुजारी, लगान या अन्य करों का देना बन्द किया गया वहाँ तो ऐसी बकाया रकमों और करों तथा जुर्मानों की वसूली के लिये न केवल उन्हीं की मिल्कियत पर धावा बोला गया जिनसे कि उन्हें वसूल करना वाजिब था, बल्कि साथ में संयुक्त परिवारों की और कभी-कभी नाते रिश्तेदारों की मिल्कियत भी कुर्की करके बेच डाली गई। कुर्की और बिक्री तक ही बात रहती तो भी गनीमत थी, लेकिन यहाँ तो कुर्की के बाद बड़ी-बड़ी कीमत की मिल्कियतों को बिल्कुल कौड़ी के मोल ही बेच डाला गया और कुर्की व बिक्री की कानूनी कार्रवाई से भी बढ़ कर जो दुखदायी बात हुई वह तो है कानून से बाहर जाकर गैर कानूनी तरीकों से सताया जाना और नुकसान पहुँचाना, जिसे हृदय-हीन लूट और बर्बादी ही कह सकते हैं। न केवल फर्नीचर, बर्तन-भाण्डे, गहने मवेशी और खड़ी फसल जैसी चल सम्पत्ति ही कुर्क करके बेच या कभी-कभी नष्ट कर दी गई, बल्कि जमीन और घर बार भी नहीं छोड़ा गया। गुजरात युक्त प्रान्त और कर्नाटक में बहुत लोग ऐसे हैं जो आज भी जमीनों से हाथ धोये बैठे हैं। हालांकि उनका कष्ट सहन बिलकुल स्वेच्छा पूर्ण था, क्यों कि जिस रकम को चुकाने

से उन्होंने इनकार किया, अगर अपने को और अपने माल असबाब को बेचना ही उनका उद्देश्य होता तो किसी न किसी तरह उसे वह चुका ही देते। सच तो यह है कि ये आफतें उन पर लादी गई थीं। क्यों कि अगर बकाया की वसूली ही प्रयोजन होता तो उन्हें इस तरह नष्ट न किया जाता। गुजरात के किसानों ने, और जिन्होंने लगान मालगुजारी न देने के आन्दोलन में भाग लिया उन्हें, ऐसे कष्ट सहन की लपटों से गुजरना पड़ा जिसका वर्णन नहीं हो सकता फिर भी वे हिम्मत न हारे। अनेक स्थानों में अतिरिक्त ताजीरी-पुलिस तैनात की गई थी, कम से कम ४ लाख सत्तर हजार रुपया वहाँ के निवासियों से ताजीरी कर के रूप में वसूल किया गया। मिदनापुर जिले (बंगाल) के कुछ हिस्सों में ताजीरी फौज की तैनाती से ऐसा सर्वनाश और आतंक फैला कि जिले के दो स्थानों में रहने वाले हिन्दुओं में से अधिकाँश तो सचमुच ही अपने घर बार छोड़ कर आस पास के स्थानों में चले गये। उन्हें इतने अवर्णनीय कष्टों का सामना करना पड़ा कि उनकी स्त्रियों की तो मृत्यु तक हो गई।

इस तरह के ताजीरी कर के अलावा अनेक स्थानों में सामुहिक जुर्माने भी किये गये, जिनकी वसूली वहाँ रहने वाले लोगों से की गई। देश के कई स्थानों में गोली वार भी हुए, जिनमें अनेक व्यक्ति मरे और मरने वालों से भी ज्यादा घायल हुए। इस तरह मरने और घायल होने वालों में सीमाप्रान्त का नम्बर सब से आगे रहा।

इस प्रकार सरकार के अत्याचार सन् १८५७ ई० से उत्तरोत्तर वृद्धि करते चले आ रहे हैं। नये-नये और अधिक शक्तिशाली अत्याचार के तरीके, जनता की "स्वतंत्र" होने की अकांक्षा और प्रयत्नों के लिये बराबर व्यवहार में आ रहे हैं। परन्तु यह स्मरण रहे कि स्वाधीनता संग्राम एक बार प्रारम्भ होने पर बिना विजय प्राप्त किये कभी भी समाप्त नहीं होता।

❀

दूसरा भाग

★★★दूसरा भाग★★★

'भारत छोड़ो' आन्दोलन को लाने वाली घटनाएँ

पहला अध्याय

कांग्रेस और युद्ध

पहली सितम्बर १९३९ को जर्मनी ने पोलैण्ड पर हमला किया और फ्रान्सीसी सरकारों ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की। ब्रिटिश कानून के मातहत ब्रिटेन का युद्ध घोषणा करना भारत को भी अपने आप लड़ाई में सम्मिलित कर जर्मनी का शत्रु बना देने के लिये पर्याप्त था। यह वायसराय पर छोड़ा हुआ था कि वह केवल इस निश्चय की जो लण्डन में हुआ था, कि भारत भी युद्ध में शरीक है, घोषणा करदे,और यह वायसराय ने अविलम्ब कर दी।

लड़ाई के छिड़ने पर ब्रिटिश, फ्रान्सीसी और जर्मन साम्राज्यों के अलावा और कोई सरकार या लोग लड़ाई में शरीक नहीं हुए थे। न्यूनाधिक शेष सभी संसार के स्वतंत्र लोग इन तीन लड़ने वाले सामाज्यों के अलावा तटस्थ थे। यहाँ तक कि ब्रिटिश सामाज्य के अन्तरगत ही आयरलैण्ड अन्त तक तटस्थ रहा। यद्यपि कनाड़ा, आस्ट्रेलिया और न्यूजी लैण्ड ब्रिटिश साम्राज्य के भाग

हैं। तथापि वह अपने आप ही लड़ाई में नहीं खेंचे गये अपितु उन्होंने अपनी पार्लिमेण्टों और सरकारों द्वारा जर्मनी से लड़ना निश्चय किया।

ब्रिटिश सरकार इण्डियन नेशनल काँग्रेस के लड़ाई और शान्ति सम्बन्धी रुख से अपरिचित नहीं थी। जब कि उसने भारत को बिना उसकी सलाह के लड़ाई में शरीक घोषित किया। अपने चार वार्षिक अधिवेशनों में लगातार काँग्रेस ने भारत के लोगों की ओर से यह निश्चय किया था कि भारत उस पर ब्रिटिश द्वारा बरबस लादी हुई किसी भी लड़ाई में भाग नहीं लेगा और नाहीं उसका प्रतिरोध करेगा जो कि काँग्रेस द्वारा निर्धारित वैदेशिक नीति के विरुद्ध जायेगी। इस नीति के आधार स्तम्भ यह थे।

पहिला, भारत लड़ाई में शरीक न समझा जाय और नाहीं उसके धन और जन का लड़ाई में उपयोग बिना भारतीयों की सलाह के किया जाय।

दूसरा, लड़ाई का निश्चय स्वतंत्र भारत ही कर सकता है।

तीसरा, हिटलर और दूसरों का सैन्यवाद (फैसिज्म) को जिसने अपने लोगों की स्वतंत्रता को कुचला और दूसरे लोगों को पराजित कर गुलाम बनाया, भय की दृष्टि से देखता है। परन्तु बृटेन और दूसरों का साम्राज्य वाद भी उतनी ही सीमा तक संसार की गुलामी, हिंसा और लड़ाइयों का मूल कारण है। इसको छोड़कर भी कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद अपने आधीनस्थ लोगों के साथ क्या करता है और दूसरे देशों को जो भली भाँति हथियार बन्द हैं अपने मुकाबिले में आगे बढ़ने के लिये प्रोत्साहन देता हैं, ब्रिटिश वैदेशिक नीति इन बातों की भी उत्तरदायी ठहराई जानी चाहिये उसने बुराई करने वाली शक्तियों को प्रेरणा दी जैसे कि इटली और हबश के युद्ध में, स्पेन, चीन और जापान की लड़ाइयों में, और इसी प्रकार इस संसार-व्यापी महा समर को

शीघ्र प्रारम्भ कराने में। इसलिये भारत ऐसे किसी भी युद्ध से अपना सम्बन्ध नहीं रख सकता जिसका लक्ष्य किसी प्रकार से साम्राज्यवाद या सैन्यवाद (फैसिज्म) को प्रचलित रखना हो। संसार लड़ाई के अपराध से तभी सुरक्षित रह सकता है जब कि साम्राज्यवादी और सैन्यवादी (फैसिस्ट) प्रणालियों को नष्ट कर दिया जाय।

चौथे, भारत अपना सहयोग संसार के लोगों के सामुहिक, रक्षा, स्वतंत्रता और लोकतंत्रता के कार्य में प्रदान करता है।

पाँचवे, दिनों दिन बढ़ते हुए शस्त्रों के उपयोग और उत्पादन को संसार के भविष्य के लिये घोर चिन्ता जनक होने का कारण मानता है। इसी नीति और कार्य के अनुसार और भारत सरकार के समुद्र पार भारतीय सेनाओं के भेज देने के बावजूद भी काँग्रेस कार्य कारिणी समिति ने, वर्तमान युद्ध के छिड़ने से पहिले ही, काँग्रेस सदस्यों को केन्द्रीय धारा-सभा के अधिवेशन से वापिस बुला लिया था।

इसके पश्चात घटनाएँ तेजी और गड़बड़ी के साथ उस समय तक होती रहीं जब तक १४ सितम्बर को काँग्रेस कार्य समिति ने अपना घोषणा पत्र निकाला। इस घोषणा-पत्र में वर्तमान युद्ध से सम्बन्धित विषयों का परीक्षण किया और उनके प्रति भारत के रुख को निश्चित किया।

पहले, इसने इस बात पर आपत्ति की, कि जैसे भारत लड़ाई में खींचा गया है और प्रान्तीय सरकारों के अधिकारों और कार्यों पर विविध विशेष कानूनों [आर्डीनेन्सों] द्वारा प्रतिबन्ध लगाये गये हैं, वैसे भारत सरकार के इस कार्य में काँग्रेस कार्य समिति भारतीयों की इच्छाओं का जान बूझ कर

अवहेलना किया जाना देखा है।

दूसरे, घोषणा पत्र में यह स्पष्ट किया गया कि भारत बरबस्ता और बिना अपनी स्वतंत्र रजामन्दी के, जो कि वह अपनी स्वतंत्रता पा जाने का विश्वास हो जाने और लड़ाई के लक्ष्य को उपयुक्त समझने की दशा में दे सकता है; लड़ाई में अपना सहयोग नहीं दे सकता। घोषणा पत्र में कहा गया था कि "सहयोग बराबर वालों में पारस्परिक रजामन्दी से और ऐसे लक्ष्य के लिये ही जिसको दोनों योग्य समझें होना चाहिये।"

तीसरे, कार्य समिति ने ब्रिटिश सरकार के भूत और उसकी वैदेशिक नीति की ओर, जिसने बार-बार अपनी प्रजा के उच्च आदर्शों और भावनाओं की अवहेलना की, ध्यान आकर्षित किया। सन् १९१४-१८ की लड़ाई, जो कि प्रजातन्त्र की रक्षा, आत्म-निर्णय और छोटे राष्ट्रों की स्वतंत्रता के लिये लड़ी गई थी, ऐसी सन्धि के द्वारा समाप्त हुई कि जिसमें इन सब बातों का कोई ध्यान नहीं रक्खा गया। बाद में ब्रिटिश सरकार ने मन्चूरिया, एबीसीनिया [हबस देश] स्पेन और जेकोस्लोवेकिया में प्रजातंत्र और शान्ति के साथ विश्वास-घात किया।

चौथे, उस घोषणा में आज भी संसार की भयानक स्थिति का विश्लेषण किया। उसमें कहा "असंख्य स्त्री, पुरुष और बच्चे खुले शहरों में बम-वर्षा द्वारा मौत के घाट उतारे गये। वीभत्स हत्याकाण्ड, यातनाएँ और असीम अपमान एक के बाद एक शीघ्रता से इन भयानक वर्षों में हुए हैं। भय बढ़ रहा है और हिंसा और हिंसा की धमकी संसार में फैल रही है, जब तक इसको रोका और समाप्त नहीं किया जाता, यह पिछले दिनों की संरक्षित मूल्यवान सम्पति को नाश कर देगी।" जर्मनी की नाजी सरकार के पोलेण्ड के

विरुद्ध किए हुए पिछले हमले की निन्दा करते हुए घोषणा पत्र ने जर्मन नाजियों और फासिस्टों के आदर्शों और कार्यों उनकी युद्ध और हिंसा की सराहना उनके चिरस्थापित सिद्धान्तों और सभ्यता के व्यवहारों का नाश और मानव भावना का दमन-के प्रति भर्त्सना की भावना प्रकट की।

पाँचवे, घोषणा पत्र ने वर्तमान युद्ध का कारण "सामाजिक और राजनैतिक संघर्ष और विरोध जो कि पिछले महायुद्ध से बहुत अधिक बढ़ गये हैं" मैंने बताया। इन संघर्षों की उत्पत्ति मुख्यत तथा संसार के किसी भी भाग में साम्राज्यवादी अधिकारी के रखने के प्रयत्नों से होती है। इन संघर्षों के समाप्त करने और नवीन समतुलन तथा संसार शान्ति स्थापन के लिए एक देश के दूसरे देश पर अधिकार की समाप्ति और आर्थिक सम्बन्धों का सब के समान हित के लिए पुनः संगठन करना पड़ेगा। इस प्रकार समान रूप से साम्राज्यवाद और फासिज्म का अन्त करना होगा।

छठा, कार्यसमिति ने "ब्रिटिश सरकार को अपने लड़ाई के लक्ष्य को प्रजातंत्र, साम्राज्यवाद और प्रस्तावित नवीन संगठन के सम्बन्ध में घोषित करने के लिये" आमंत्रित किया। सारी समस्या का भारत को सार मानते हुए घोषणा पत्र में मुख्यतः प्रश्न किया गया कि क्या लड़ाई के लक्ष्य में साम्राज्यवाद का हटाना और भारत के साथ स्वतंत्र-राष्ट्र जैसा व्यवहार करना और भारत के लोगों को यह अधिकार देना कि वह अपना विधान विधान-सभा [कान्स्टीटुयेन्स एसेम्बली] के द्वारा और बिना बाह्य हस्तक्षेप के बना सकें और क्या इन लक्ष्यों को त्वरित ही जहाँ तक सम्भव हो सके काम में लाया जायगा," सम्मिलित है?

सातवाँ, घोषणा पत्र में यह दावा किया गया कि "स्वतंत्र लोकतंत्रीय

भारत, दूसरे राष्ट्रों के साथ हमले के विरुद्ध" पारस्परिक रक्षा और आर्थिक सहकारिता के लिये, प्रसन्नता से साथ देगा" और कार्यकारिणी समिति की इसमें भी रज़ामन्दी प्रकट की गई कि भारत यूरोप और चीन में भय को रोकने के काम में सहयोग दे।

आठवें, कार्य समिति ने तत्परता से "भारत के लोगों से तमाम आन्तरिक झगड़े और विवाद समाप्त करने के लिये तथा संकट के गम्भीर समय में संयुक्त रास्ट्र बन कर एक साथ रहने और भारत की स्वतंत्रता संसार की विशाल स्वतंत्रता के अन्तर्गत प्राप्त करने के लिये दृढ़ निश्चय हो कटिबद्ध रहने के लिये" आवाहन किया।

समिति ने एक युद्ध-विशेष परिस्थिति-उपसमिति भी पं० जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में नियुक्त की।

१० अक्टूबर को अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी ने कार्य समिति के घोषणा पत्र का अनुमोदन किया और ब्रिटिश सरकार को अपने युद्ध और शान्ति के लक्ष्य बताने के लिये आमंत्रित किया। अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी ने काँग्रेस के लक्ष्यों में फिर से अपना विश्वास प्रकट करते हुए कहा "काँग्रेस सदा अपने लक्ष्य, भारत वासियों के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति और भारत स्वतंत्र प्रजातंत्रिक राज्य की स्थापना जिसमें सब अल्पमतों के अधिकार और हित सुरक्षित हों, से निर्देशित होती रही हैं। अपने संघर्षों और कार्यों में इसने जिन साधनों का प्रयोग किया वह शान्तिमय और वैध रहे हैं और इसने युद्ध और हिंसा को सदा भय की और उन्नति तथा सभ्यता विरोधी दृष्टि से देखा है।"

अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी के विवाद में कार्य-समिति के ब्रिटिश

सरकार से उसके 'युद्ध और शान्ति' के उद्देश्यों को घोषित करने के आमंत्रण की आवश्यकता और उपयुक्तता पर प्रश्न किया गया था। प्रश्न कर्त्ताओं ने कहा कि क्या यह उद्देश्य सब को स्पष्ट नहीं थे। ब्रिटिश साम्राज्यवाद का विगत क्या रहा है और उसका वर्तमान ढाँचा और संसार को गुलाम बनाकर उस पर अपना अधिकार जमाने की आवश्यकता सब को स्पष्ट रूप से प्रतीत नहीं होती? विवाद के अन्त में इस प्रश्न का उत्तर देते हुए पं० जवाहरलाल नेहरू ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद की इस विचित्र परिस्थिति का हवाला दिया, जिससे वह एक ओर अपना आधिपत्य और शोषण कार्य संसार के बहुत बड़े भाग पर चालू रखता है और दूसरी ओर वह यह दावा करता है कि वह अत्याचार के विरुद्ध तथा स्वतंत्रता और संसार की शान्ति की रक्षा के पक्ष में युद्ध कर रहा है। यह उसके कथन और आचरण का विरोध, संसार के करोड़ों आदमियों को स्पष्ट नहीं। इसलिए कार्य समिति के आमंत्रण ने ब्रिटिश सरकार को विवश किया कि वह या तो अपने कथन को छोड़ कर अपने सच्चे रूप में आवे या वह अपने साम्राज्यवाद को छोड़ कर अपने कथनानुसार आचरण करे। ब्रिटिश सरकार पर यह दबाव डालना कि वह संसार के सामने उस सत्य को प्रकट करे, यह भारत की और सारे स्वतंत्रता प्रेमी संसार की सेवा थी। इसीलिए कार्य समिति के घोषणा पत्र को भारत से बाहर के लोगों ने भी "दलितों का अधिकार पत्र" कह कर अपनाया।

इसी बीच लण्डन में ब्रिटिश सरकार ने भारत मंत्री द्वारा काँग्रेस को उत्तर देने का प्रयत्न किया और कहा कि काँग्रेस की माँग अस्वाभाविक है और ब्रिटेन के लोग सम्मान व्यवहार के आदी हैं। यदि भारत मंत्री का 'सम्मान' से यह भाव था कि भारतीय लोग और अधिक सरकार का सम्मान करने और उसके पूर्णतया आज्ञाकारी बने रहने को। तैयार नहीं हैं तो वह वास्तव में

ठीक था। और यदि उनका सौजन्यता के व्यवहार से मतलब था तो ब्रिटिश सरकार, जिसने सब लोगों की प्रबल इच्छाओं को ठुकराया और अपने कथनों के विपरीत आचरण किया और भारतीय काँग्रेस, जिसने संसार की शान्ति और स्वतंत्रता के नाम पर आवाज़ उठाई, इन दोनों में से किसको पसन्द किया जाय इसका निर्णय करना कठिन नहीं। यह साम्राज्यवादी दुर्व्यवहार और भारत मंत्री ही थे कि जिन्होंने ऐसे सम्पूर्ण जन समुदाय को क्रोधित किया जो कि साधारणतः क्षमा वृति के लोगों का समुदाय है।

वायसराय ने बहुत से लोगों से भेंट की, कुछ महत्व के थे क्योंकि भारतीय लोग उनको ऐसा समझते थे और बहुत से ऐसे थे जिनको सरकार ने ही महत्व दिया था। कुल मिला कर वायसरा ने ५० आदमियों से भेंट की। ८ अक्टूबर को उसने काँग्रेस के घोषणा पत्र का उत्तर ब्रिटिश सरकार की ओर से दिया।

पहले, अपने शान्ति और लड़ाई के उद्देश्यों के विषय में वायसराय ने कहा कि ब्रिटिश सरकार लड़ाई से अपना कोई लाभ नहीं चाहती अपितु वह तो अत्याचार को रोकने और संसार में शान्ति स्थापित करने के लिये लड़ने को विवश हुई है। वायसराय के इस उत्तर में काँग्रेस के प्रश्नों (संसार की भावी भलाई-बुराई निर्भर होगी) से इधर उधर हट कर बातें कहीं गईं। काँग्रेस ने पूछा था कि क्या ब्रिटिश सरकार अपने इन अनुचित लाभों को, जो कि उसे संसार के चौथाई भाग पर जमाए हुए अपने प्रभुत्व और शोषण से हो रहे हैं, छोड़ने को तय्यार है ? उत्तर मिला कि वह और नये लाभ नहीं चाहते। काँग्रेस ने पूछा था कि क्या ब्रिटिश सरकार लड़ाई के, कारणों का, जो कि साम्राज्यवाद और फैसिज्म में निहित हैं, अन्त कर ता [illegible]

लड़ाइयों का होना ही असम्भव कर देने को तैयार है, परन्तु उनके उत्तर में यह बताने से मना कर दिया कि वह किस प्रकार संसार की शान्ति प्राप्त करने के लिये तैयार हैं। उनके मन में सम्भवतः वही पुराना तरीका शत्रु को हराने और उसकी भित्ति पर अनिश्चित शान्ति खड़े करने का था।

दूसरे, भारत सम्बन्धी उनके उद्देश्यों के बारे में वायसराय ने कहा कि ब्रिटिश सरकार औपनिवेशिक स्थिति में भारत को रखने के अपने लक्ष्य पर बद्ध है और भारतीय प्रतिनिधियों से इस विषय में परामर्श करेगी कि लड़ाई के बाद वह किस रूप में इस कार्य को आगे बढ़ाये।

वायसराय साहिब के इस वक्तव्य में "स्वतंत्र भारत" शब्द भी नहीं आए और यह स्पष्ट है कि ब्रिटिश सरकार इन शब्दों से सम्भवतः इतना ही डरती हैं जितना सिर पर मंडराते हुए एक बम-वर्षक हवाई जहाज से या जितना उन्हें अपने अन्तःकरण से डरना चाहिये। वे अपने भारत के विषय में भविस्य में निर्णय करने के अधिकार को जो कि उनके लिये मूल्यवान और भारत के लिये दुखदायी है, छोड़ने के लिये तैयार नहीं और वे इसके लिये भी तय्यार नहीं थे कि लड़ाई के बाद भारतीय प्रतिनिधियों को परामर्श के लिये बुला लें। ब्रिटिश सरकार यह भूल जाती है कि भारतीय लोग परामर्श और बातचीत करने के स्थान से ऊपर उठ चुके हैं, वे अब अपने देश में मालिक बन कर रहना चाहते हैं और विदेशी शासकों के केवल सलाहकार मात्र रहना नहीं चाहते।

तीसरे, फौरन क्या देने का प्रयत्न किया जाय इस विषय में वायसराय भारतीय प्रतिनिधियों की एक परामर्श कारिणी समिति लड़ाई में सहयोग देने के लिये बुलाने का तय्यार थे। यह कहना व्यर्थ है कि वायसराय की

प्रस्तावित परामर्श कारिणी समिति और काँग्रेस की अधिक से अधिक प्रजा-तान्त्रिक और स्वायत्त शासन की माँग में सदियों का अन्तर था। हाँ, वास्तव में वायसराय ने भारतीय मत भेदों पर, जिसका पता उनको उन ५० भेंट करने वालों से मिला था जिनको उन्होंने इस कार्य के लिये बुलाया था: अधिक से अधिक जोर देने के अवसर को हाथ से नहीं जाने दिया।

वायसराय के वक्तव्य का उत्तर भारत के प्रतिनिधियों की ओर से त्वरित ही संक्षिप्त और स्पष्ट रूप से दिया गया। तार आदि के आने के कुछ घन्टों को छोड़ कर महात्मा गांधी के विचार वायसराय के वक्तव्य के फौरन बाद ही सारे देश को विदित हो गये। गांधी जी ने कहा कि "काँग्रेस को फिर बियाबान की ओर जाना पड़ेगा। भारतीय वक्तव्य से स्पष्ट है कि भारत में प्रजा-तंत्र यदि ब्रिटेन उसे रोक सका तो स्थापित ही नहीं हो सकता। वायसराय का लम्बा वक्तव्य यही प्रदर्शित करता है कि भारत में 'फूट फैलाओ और शासन करो' नीति ही प्रचलित रहेगी।'

मौलाना आजाद और पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कहा कि "यदि यही ब्रिटिश सरकार का भारतीय लोगों के लिये अन्तिम उत्तर है तो हमारे दोनों के बीच कोई मिलने का स्थान नहीं और हमारे रास्ते पूर्णतया विभिन्न हैं।" पंडित जवाहर लाल नेहरू ने युक्त प्रान्तीय काँग्रेस के प्रधान पद से घोषित किया, "तय्यार रहो, याद रक्खो चाहे जो कुछ भी हो हमें अपने ऊँचे सिद्धान्तों के विरुद्ध और भारत के सम्मान के प्रतिकूल कुछ भी नहीं करना चाहिये। शान्त, गम्भीर और अनुशासन में रहो। तैयार रहो।"

काँग्रेस कार्यसमिति ने अपने असाधारण और संचित अधिवेशन के

बाद २२ अक्टूबर के प्रस्ताव में निश्चय किया कि यह "ब्रिटेन को सहायता देने में असमर्थ है, कारण इसका अर्थ होगा साम्राज्यवादी नीति का समर्थन, जिसका कॉंग्रेस ने सदा विरोध किया है। इस ओर पहला कदम उठाने के रूप में समिति कॉंग्रेस मंत्री-मण्डलों को त्याग-पत्र देने के लिये आवाहन करती है।

इसके आगे समिति ने सभी कॉंग्रेस कमेटियों और कॉंग्रेस जनों से साधारणतः आवाहन किया कि "वह हर प्रकार की घटनाएँ और आपत्तियों के लिये तैयार रहें तथा वचन और कर्म में संयम का प्रदर्शन करें और कोई जल्दबाजी का कार्य सविनय अवज्ञा, राजनैतिक हड़तालें और इसी प्रकार के दूसरे काम के रूप में न कर बैठें।"

कॉंग्रेस जनों को उपदेश दिया गया कि प्रतिरोध के कार्यक्रम के लिये जो देश के महान प्रश्न के अनुकूल हो, कॉंग्रेस जनो में पूर्ण अनुशासन और कॉंग्रेस संगठन भी पूर्ण दृढ़ता की आवश्यकता है। "घटनाएँ घटित और शीघ्रता से घटित हो रहीं थीं। कॉंग्रेस जन और जनता साधारणतः यह प्रतीत करते थे कि वे यह ऐसे महान समय में कर रहे हैं जब कि उनको अपने तुच्छ जीवनों का बलिदान कर देना चाहिए और सैनिकों की भाँति अपने-अपनी भोजन सामग्री के थैलों पर सो रहना चाहिये। महान आदर्शों के लिये असीम साहसिकता की सुगन्ध वायु में फैल गई थी।

कॉंग्रेस मंत्रिमंडलों ने त्याग पत्र दे दिये थे, तब प्रान्तों में जिनमें कॉंग्रेस मंत्रिमण्डल थे, गवर्नर ऐसे मंत्रिमण्डल फिर न बना सके जिनमें जनता का विश्वास हो; अतः उनको इन प्रान्तों में विधान स्थागित करना पड़ा आठवें प्रान्त आसाम में जहाँ पर मिश्रित मंत्रिमण्डल था, गवर्नर ने नया मंत्रिमण्डल बना लिया। इस प्रकार उस समय का, जो २७ महीने तक

चालू रहा था, अन्त हुआ । विधान तोड़ दिया गया। जैसे ही ब्रिटिश निर्मित विधान और कांग्रेस की मौलिक प्रतिज्ञा, भारत की स्वतंत्रता के पालन करने की परीक्षा वास्तविकता के स्पर्श से होने लगी, विधान की अव्यवहारिकता सिद्ध हो गई । बृटिश सरकार को स्वयं अपने हाथों ही उसे भंग करना पड़ा । सात प्रान्तों के लोगों ने अपने चुने प्रतिनिधियों के द्वारा प्रान्तीय धारा सभाओं में कांग्रेस कार्य समिति के घोषणा पत्र के अनुकूल ही प्रस्ताव स्वीकार किये ।

कॉंग्रेस कार्य समिति ब्रिटिश सरकार से असहयोग करने के निश्चय और लगभग सारे विधान के भंग हो जाने के बीच ही वायसराय ने गान्धी जी, कॉंग्रेस प्रधान श्री राजेन्द्र प्रसाद और मुस्लिम लीग के प्रधान श्री जिन्ना को अपने से मिलने के लिए आमंत्रित किया । इन भेंटों और कुछ पत्र व्यवहार, के पश्चात वायसराय ने ५ नवम्बर को समाचार पत्रों में एक वक्तव्य देते हुए बताया कि "आज भी प्रमुख दलों के प्रतिनिधियों में मौलिक प्रश्नों पर पूरा-पूरा मतभेद हैं। और इसके परिणाम स्वरूप समझौते की बातचीत असफल रही, परन्तु इस असफलता से बिना डरे वह धारणा करते हैं कि वह फिर इन महान दलों के नेताओं और नरेशों से मिलकर यह देखने का प्रयत्न करेंगे कि अभी एकता प्राप्त करने की संभावना है या नहीं।"

इस असफलता की बात को, एकता और मौलिक मतभेदों को समझने के लिये वायसराय और कॉंग्रेस-प्रधान के पत्र व्यवहार का परीक्षण आवश्यक है। वायसराय ने कॉंग्रेस और मुस्लिम लीग से एक साथ मिल कर यह समझौता करने को कहा कि वह किस प्रकार अपने-अपने प्रतिनिधि केन्द्रीय सरकार में वायसराय की कार्यकारिणी-समिति के सदस्यों के रूप में भेज सकते हैं, तथा

प्रान्तों में एक सुर हो कर काम कर सकते हैं। वायसराय ने यह भी बताया कि उनकी कार्यकारिणी-समिति के काँग्रेसी और मुस्लिम लीगी सदस्यों के वही अधिकार और कर्त्तव्य होंगे जो कि उस समय के कार्यसमिति के सदस्यों के थे। यह था वायसराय महोदय का पूर्ण प्रस्ताव।

जहाँ तक काँग्रेस का सम्बन्ध था यह प्रस्ताव सर्वथा व्यर्थ था। काँग्रेस यह निश्चय कर चुकी थी कि वह विदेशी शासकों के सलाहकार होने का कार्य नहीं करेगी और नाहीं भारतीय धन और जन का शोषण शान्ति या युद्ध के समय में, होने देने में सहायता करेगी। काँग्रेस तो संसार की शान्ति, सब लोगों की स्वतंत्रता द्वारा चाहती है और इसी लिये उसने तो ब्रिटिश सरकार से यह कहा कि वह भारतीयों को अपना विधान विधायक-सभा (कान्स्टीटुयेन्ट असेम्बली) के द्वारा बनाने के अधिकार को स्वीकार कर ऐसी मध्यवर्ती योजना के लिए राजी हो जाय जिसमें भारतीय प्रतिनिधियों को अधिक से अधिक शक्ति प्राप्त हो। यह था एक उच्च राष्ट्रीय आदर्श और उतना ही भला अन्तराष्ट्रीय उद्देश्य। परन्तु वायसराय फिर इन बातों के सम्बन्ध में मौन रह गये।

फिर बात चीत की असफलता किन के बीच, मौलिक मतभेद किन के बीच और एकता का अभाव किन के बीच? निश्चय ही काँग्रेस और ब्रिटिश सरकार के बीच, न कि काँग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच! क्या यह बताया गया कि भारत के मुसलमान या उनका अंशतः प्रति[illegible] सत्तात्मक संगठन भी, मय मुस्लिम लीग के अपने देश की स्वतंत्रता या संसार की शान्ति नहीं चाहता? यह सिद्ध करने को कोई भी लिखित प्रमाण नहीं मिलता। अब यह हमारे कहने की बात नहीं कि वायसराय साहब विचारों के अस्तव्यस्त होने के

अपराधी हैं या अपनी पुरानी नीति "फूट फैलाओ और शासन करो" द्वारा काँग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच मतभेद की खाई खोद रहे हैं।

मुस्लिम लीग के प्रधान के उत्तर ने भी स्थिति को स्पष्ट कर दिया था। श्री जिन्ना ने अपने ४ नवम्बर के पत्र में कहा था कि "काँग्रेस उस समय तक किसी भी केन्द्र या प्रान्तों के सम्बन्ध के प्रश्नों पर विचार करने को तैयार नहीं जब तक कि ब्रिटिश सरकार अखिल भारतीय काँग्रेस के प्रस्ताव में कथित माँग को नहीं दे देती।" दूसरे शब्दों में जब तक ब्रिटिश सरकार भारत पर से अपना अधिकार उठा लेने का फैसला नहीं कर लेती। श्री जिन्ना ने इस पर किसी भी सम्बन्ध में इस पत्र में अपने और काँग्रेस के मतभेद की चर्चा नहीं की। इसीलिए काँग्रेस प्रधान राजेन्द्र प्रसाद ने वायसराय को लिखे अपने पत्र में न्याय और शान के साथ बताया कि "हमको इसका दुख है कि इस सम्बन्ध में साम्प्रदायिक प्रश्नों को खींचा जा रहा है। इसमें मुख्य प्रश्न धुँधला हो जाता है। काँग्रेस की ओर से यह कहा गया है कि हम साम्प्रदायिक उलझनें समझौते के द्वारा सुलझाना चाहते हैं और इस ओर हमारे प्रयत्न अभी भी जारी रहेंगे। लेकिन मैं यह बात बता देना चाहता हूँ कि यह प्रश्न भारतीय स्वतंत्रता की घोषणा (जिसका कि काँग्रेस ने प्रस्ताप किया है) के मार्ग में बाधक नहीं होता।"

काँग्रेस अपनी भारत की स्वतंत्रता की माँग में अपने या किसी जाति विशेष के लिए अधिकार नहीं चाहती। विधान का निर्णय विधान निर्मात्री परिषद के द्वारा होगा जो कि "विस्तृत से विस्तृत मताधिकार के आधार पर बनेगी और जिसमें साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व का निबटारा पारस्परिक समझौते से होगा।" इस प्रकार काँग्रेस ब्रिटिश सरकार से राजनैतिक शक्ति लेने और भारत

के लोगों को देने के लिए लड़ती है। इस प्रमुख बात को ब्रिटिश सरकार और कुछ अन्य लोगों के द्वारा आँखों से ओझल किया जा रहा है। कोई भी संगठन भारत में इस या उस आदर्श को प्राप्त करने के लिए और किसी भी एक हित को साधने के लिए इच्छुक हो, वह कांग्रेस के साथ मिलकर स्वतन्त्रता संग्राम में सहयोग देगा और अपने लिये देश के शासन में उपयुक्त भाग प्राप्त करने के लिये निर्वाचकों और जनता को प्रसन्न करने का प्रयत्न करेगा।

पहला कदम वह था जब कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार से असहयोग की घोषणा की। इसके बाद कांग्रेस के सामने दो ही मार्ग खुले थे। एक जिसे कांग्रेस ग्रहण कर सकती थी वह था सरकार के साथ असहयोग को त्वरित सविनय प्रतिरोध में परिवर्तन कर देना और भारतीय जन और धन के उपयोग को साम्राज्यवादी लड़ाई में रोकने के लिये अपनी प्रतिरोध की नीति का प्रयोग करना और बड़ी अकड़ के साथ राष्ट्रीय सम्मान तथा स्वतन्त्रता के सिद्धान्त को ब्रिटिश चुनौती के विरुद्ध सुरक्षित रखना। दूसरा जिसे कांग्रेस ने प्रस्ताव में ग्रहण किया वह था असहयोग, जो कांग्रेस ने प्रारम्भ कर दिया था, उसके और सविनय अवज्ञा, जब उसकी आवश्यकता हो, के बीच का मार्ग अर्थात तैयारी का। इस तैयारी के समय को भयंकर राष्ट्रीय निर्बलताओं के दूर करने के प्रयत्नों में लगाना था। इन दोनों नीतियों के पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है परन्तु दूसरे के पक्ष में सबसे अधिक बलशाली तर्क यही है कि वह नीति, कार्य समिति ने निश्चित कर ली थी।

इसके बाद ही दिसम्बर सन १९३९ में रामगढ़ इन्डियन नेशनल कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन ने अपनी नीति पर एक प्रस्ताव कांग्रेस कार्य समिति और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के युद्ध सम्बन्धी

प्रस्तावों और कार्य्यों को समर्थन करते हुए, स्वीकार किया । इसमें सर्व प्रथम यह घोषित किया गया कि "काँग्रेस किसी भी प्रकार से इस लड़ाई में भाग नहीं ले सकती, जिसका अर्थ उस घोषणा को, जो कि भारत तथा दूसरे एशिया-और अफ्रीका के देशों में किया जा रहा है, जारी और सदा के लिये जारी रखना है और यह भी बल पूर्वक प्रकट किया गया कि पूर्ण स्वतंत्रता से कम कोई भी चीज भारत के लोग स्वीकार नहीं कर सकते ।" फिर साम्प्रदायिक समझौते के विषय में कहा गया कि कोई स्थायी समझौता सिवाय विधान निर्मात्री सभा के द्वारा जिसमें सभी माने हुए अल्पसंख्यक समुदायों के अधिकार, समझौते के द्वारा सुरक्षित किये जायें, सम्भव नहीं हो सकता ।" जहाँ राज्य की सर्वोत्तम-सत्ता का प्रश्न था; यह स्पष्ट कर दिया गया कि "भारत में सर्वोत्तम -सत्ता फिर चाहे वह प्रान्तों में हो चाहे वह देशी रियासतों में, सर्व साधारण के हाथों में रहेगी ।"

इस प्रस्ताव में जहाँ यह कहा गया था कि काँग्रेस ने मंत्री-मण्डलों को प्रान्तों से इसलिये वापस बुला लिया कि वह भारत को लड़ाई से प्रथक रखें और भारत को विदेशी निमंत्रण से मुक्त करने के दृढ़ निश्चय को पूरा करे वहाँ इसमें अनुशासन और रचनात्मक कार्यक्रम पर भी जोर दिया गया था ।

इसके लग भग १ साल बाद काँग्रेस ने अपना व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन नवम्बर १९४० में प्रारम्भ किया । संक्षेप में आरम्भ से काँग्रेस की वर्तमान युद्ध के सम्बन्ध में उपरोक्त नीति और रुख रहा है ।

दूसरा अध्याय

गान्धी जी और युद्ध

गान्धी जी ने वर्तमान युद्ध के प्रारम्भ में ही जब वायसराय ने उनको भेंट करने के लिये बुलाया हिंसात्मक युद्ध और उसके भयंकर परिणामों के प्रति अपनी घोर घृणा प्रकट की। इस मुलाकात के बाद ही ५ सितम्बर १९३९ को गांधी जी ने एक वक्तव्य प्रकाशित किया जिसमें मुख्यतः युद्ध द्वारा किये गये विनाश के प्रति घृणा प्रकट की। उन्होंने कहा "इसी कारण मैं अभी भारत के छुटकारे की बात नहीं सोच रहा हूँ। वह होगा तो, परन्तु किस मूल्य का यदि इङ्गलैण्ड या फ्रांस का पतन होगया या अगर वह नष्ट भ्रष्ट और अपमानित जर्मनी पर विजयी हुए।" इससे स्पष्ट है कि गान्धी जी को जर्मनी के नाश और अपमान के विचार मात्र पर भी उतना ही दुख था जितना कि इङ्गलैण्ड और फ्रांस की पराजय पर। इसी प्रकार गान्धी जी को लण्डन और वेस्ट मिनिस्टर गिरजे के नाश पर दुख केवल मानवता की दृष्टि से ही हुआ था। गान्धी जी ११ सितम्बर को उन लोगों को, जिन्होंने उनके ब्रिटिश नाश पर हृदय को द्रवित होते देख भूल में यह समझा था कि वह ब्रिटेन को विशेष चाहते हैं, समझाते हुए कहा कि मैं तहस नहस हुए जर्मनी के अवशेष पर अपने देश की स्वतंत्रता खड़ी करना नहीं चाहता। मैं जर्मनी के प्राचीन स्मारकों के नष्ट होने के ध्यान मात्र से भी उतना ही

दुखी होता हूँ।" इससे यह स्पष्ट है कि गान्धी जी की सहानुभूति जहाँ तक लड़ाई के द्वारा विनाश का सम्बन्ध है वहाँ तक पीड़ितों के साथ चाहे वह जर्मनी हो या ब्रिटेन, समान रूप से है।

वायसराय से भेंट करने के बाद गान्धी जी ने जितनी सहानुभूति ब्रिटेन और फ्रांस के साथ प्रकट की थी उतनी ही जर्मनी के साथ। जो काँग्रेस-नीति तथा उनके युद्ध, हिंसा और शस्त्रीकरण के प्रति अरुचि के निजी सिद्धान्त के अनुकूल ही था। उन्होंने लड़ाई के भड़काने वालों से यह अनुरोध किया कि वह मानव जीवन और सम्पत्ति को, जो कि ईश्वर और मनुष्य की सुन्दरतम कृतियाँ हैं, के नाश के मार्ग से अलग रहें।

गान्धी जी ने ब्रिटिश सरकार तथा उसके लक्ष्य का व्यक्तिगत रूप से नैतिक समर्थन किया था। उन्होंने काँग्रेस को भी यही उपदेश दिया था कि वह बिना किसी शर्त के ब्रिटिश सरकार की उसके आपत्ति और परीक्षा के समय में नैतिक सहायता करें वह ब्रिटिश सरकार के युद्ध सम्बन्धी प्रयत्न में किसी प्रकार की भी बाधा डालने के विरोधी थे। इसी कारण उनकी १९४१ के सत्याग्रह की ऐसी योजना थी जिसमें भारत के युद्ध सम्बन्धी प्रयत्नों में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप न हो। उन्होंने ऐसे ही सत्याग्रहियों को छाँटा था जिनको अहिन्सा में पूर्ण विश्वास था और वह भी केवल नाम मात्र के 'सत्याग्रह' करने के लिये। उनके सत्याग्रहियों ने पहिले ही सरकार को अपने सत्याग्रह करने के समय और स्थान की सूचना देकर सत्याग्रह किया था जो कि सिवा इसके कुछ नहीं था कि वे अपना अहिन्सा में विश्वास और सब प्रकार की हथियार बन्द लड़ाइयों, हिंसा तथा उनमें धन या जन से सहायता देने के विरोध में, एक नारा लगा कर अविश्वास प्रकट करते हैं। परन्तु

वह केवल एक 'प्रतीक' मात्र होने के कारण सरकार के युद्ध प्रयत्नों में किसी प्रकार से हस्तक्षेप नहीं करते थे। इनमें से अधिकाँश सत्याग्रही तो नारा लगाने या नारा लगाने के स्थान पर पहुंचने से पहले ही, जैसे ही सरकार के पास सूचना पहुचती थी, पकड़ लिये जाते थे।

गान्धी जी ने भारत और ब्रिटेन के झगड़े के प्रश्न को समझते हुए लण्डन के एक पत्र के लिये १४ नवम्बर के अपने संदेश में कहा था "यदि ब्रिटेन और काँग्रेस के बीच लड़ाई होती है तो संसार को जानना चाहिए कि वह किस बात के लिए। मुख्य प्रश्न यह है कि क्या ब्रिटेन भारत को स्वतंत्र राष्ट्र मानने का विचार रखता है या भारत को ब्रिटेन के आधीन ही बना रहना है? ब्रिटिश सरकार के समर्थकों के द्वारा इस मुख्य प्रश्न को, अल्पसंख्यकों के बहाने जिसमें भारत के योरोपियनों और नरेशों को दूसरे अल्पसंख्यकों के साथ मिला कर खड़ा कर दिया गया था, उलझन और गड़बड़ी में डालने का प्रयत्न किया गया। गान्धी जी ने कहा कि यदि योरोपियनों के हितों की रक्षा करनी है तो "विजय द्वारा प्राप्त अधिकार यथावत बने रहते हैं।" नरेशों के सम्बन्ध से गान्धी जी का कहना है कि "नरेशों का प्रश्न उठाना और भी अधिक असंगत है। वे तो प्रमुख शक्ति के भाग हैं। दुख की बात है कि ब्रिटिश राजनीतिज्ञ रियासतों के करोड़ों लोगों के बारे में इतना सब कुछ नहीं कहते।"

यह बताया जा सकता है कि रियासतों के करोड़ों आदमियों ने ३०० से कुछ अधिक नरेशों के विरुद्ध अखिल भारतीय रियासत प्रजा सम्मेलन के द्वारा युद्ध सम्बन्धी काँग्रेस के रुख का समर्थन किया है। सीमा प्रान्त में जहाँ पर भारत के किसी भी भाग से अधिक मुसलमानों की संख्या है, गवर्नर धान को भंग कर स्वयं शासन करता रहा क्योंकि प्रान्त के लोगों ने ब्रिटिश

युद्ध-नीति से सहयोग करने से मना कर दिया। काँग्रेस के अलावा और
दूसरे मुसलमानों के संगठन जैसे जमैतुल उल्मा, अहरार, कुछ मोमिन,
शिया और दूसरे लोगों ने भी युद्ध के सम्बन्ध में काँग्रेस की नीति को ही
अपनाया।

गान्धी जी और ब्रिटिश सरकार की भारत और वर्तमान युद्ध सम्बन्धी
नीति पर श्री लुई फिशर अमेरिका के प्रसिद्ध पत्रकार ने, एक भाषण अमे-
रिका की एक सार्वजनिक सभा में दिया था, जिसके कुछ आवश्यक उद्धरण नीचे
दिये जाते हैं :-

"गान्धी जी की सत्य में भक्ति है और उनकी मुक्त जव्हा है जो कि
उनसे पूरी-पूरी बात कहला देती है जिसके कारण वह सब प्रकार की कठिना-
इयों में फंस जाते हैं। उदाहरणार्थ उन्होंने मुझसे कहा और बाद में लिखा
"मैं जापान जाऊंगा और जापान के साथ संधि पर हस्ताक्षर करूंगा।" बाद
में मुझसे बात करते समय कहा "मैं जानता हूँ कि अंग्रेज मुझे जापान कभी
भी नहीं जाने देंगे और यदि मैं कभी जापान चला भी गया तो जापानी मुझ
से कभी भी सन्धि नहीं करेंगे।" फिर इसकी बात ही क्यों ? क्योंकि उनको
एक विचार सूझ गया और गान्धी जी के लिए कोई विचार असम्भव है
इसका अर्थ यह नहीं कि वह उसकी चर्चा न करें। जो भी हो इन
वक्तव्य ने, उन लोगों को, जिनका छिपा हुआ कुछ प्रयोजन था और गान्धी जी
को बदनाम करना चाहते थे, यह कहने का अवसर दिया कि गान्धी जी जापान
के पक्ष में हैं। आजकल बहुत से अमेरिकनों और अंग्रेजों के शब्द इस बारे में
कि जापान के पक्ष में कौन है, मेरे लिए मान्य नहीं, क्योंकि उनमें से बहुत से
अमेरिकन और अंग्रेज स्वयं जापान के पक्ष में थे और जापानियों को प्रसन्न

रखना चाहते थे तथा लोहा और तेल भेजते थे, जिसे आज हमारे बच्चे भयंकर रूप में वापिस पा रहे हैं। एक आदमी है जिसके शब्द को मैं मान्य समझता हूँ कि कौन जापान के पक्ष में और कौन जापान के विरोध में है और वह हैं च्यांग-काइ-शेक। वह गान्धी जी और भारतीय स्वतंत्रता का पक्षपाती है। उसने प्रेसीडेण्ट रूजवेल्ट और मिस्टर चर्चिल से पिछले महीनों में लगातार जैसा मैंने आपको बताया इस दृष्टि से आग्रह किया कि ब्रिटिश नीति भारत के सम्बन्ध में उदार होनी चाहिए। च्यांग-काइ-शेक जानता है कि गान्धी जी जापान विरोधी और चीन-प्रेमी तथा युद्ध राष्ट्रों के मित्र में हैं और गान्धी जी ने यह सिद्ध भी कर दिया परन्तु, गान्धी जी केवल अपने बोलने के ढंग के ही कारण इन झूठे आरोपों के शिकार बनते हैं।"

गान्धी जी ने ऐसा ही वर्तमान राजनैतिक कठिनाइयों के समय में किया। भारत के अनन्त दुख, बढ़ते हुए क्रोध और कटुता की पृष्ठ भूमि पर अंग्रेजों की सैनिक पराजय सुदूर पूर्व हांग कांग, मलाया, सिंघापुर और बर्मा में हुई और अँग्रेजों का रौब घट कर शून्य हो गया। भारत भयभीत हो गया। भारतीयों को यह आशंका हुई कि अंग्रेज भारत से भी ऐसे ही भाग जायेंगे जैसे हाल में वह बर्मा से भागे थे। भारतीयों को यह विश्वास नहीं रहा कि इङ्गलैण्ड में भारत की रक्षा करने की शक्ति भी है। अँग्रेज सरकार ने लण्डन में यह प्रतीत किया। भारत में एक असाधारण परिस्थिति उत्पन्न हो गई। परन्तु प्रेसीडेन्ट रूजवेल्ट के कहने पर ही ब्रिटिश युद्ध समिति ने अपने एक सदस्य श्री स्टफर्ड-क्रिप्स को फौरन भारत में इस हानि को पूरा करने के लिए भेजा। क्रिप्स के असफल होने के कुछ भी कारण हों परन्तु जैसे उनको भारत से लौटने पर ब्रिटेन की अन्तरंग युद्ध समिति से निकाला

गया उससे यह स्पष्ट है कि क्रिप्स का भारत आना उसके नाश की योजना का एक भाग था। किस प्रकार उनको अन्तरङ्ग युद्ध समिति से निकाला गया। उनको युद्ध समिति में उस समय लिया गया था जब कि चर्चिल की अन्तरंग समिति, (केबनेट) सिंघापुर के पतन और जर्मनी के डोबी लड़ाकू जहाजों (पाकेट-बैटल-शिप) के इङ्गलिश चैनेल से अंग्रेजों के हवाई और समुद्री जहाजी बेड़ों के बीच से निकलभा गने के कारण, हिल गई थी। तब चर्चिल को क्रिप्स की सार्वजनिक सहायता की आवश्यकता थी। इसीलिए उसे युद्ध की अन्तरंग समिति में लिया और मिश्र में रोमेल की हार के तीन दिन के और हमारे उत्तरी अफ्रीका में उतरने के बाद क्रिप्स को युद्ध-अन्तरङ्ग सभा से निकाल बाहर किया। स्टेलिन अपने प्रतिद्वन्दी को गोली मार देता है और चर्चिल अपने प्रतिद्वन्दी को हज्म कर लेता है। क्रिप्स ने भारत में सफल होने का प्रयत्न किया परन्तु वह असफल रहा क्योंकि कुछ उन्नति-विरोधी साम्राज्यवादी उसकी सफलता नहीं चाहते थे—नहीं चाहते थे कि वह इङ्गलैण्ड में, जितना बड़ा आदमी था उससे अधिक बडा बन जाय। क्रिप्स की असफलता के कुछ भी कारण हों परन्तु यह सच्ची घटना है कि वह उपरोक्त हानि को पूरा नहीं कर सका। अतः हानि और भी बढ़ गई। इस भारतीय स्थिति के बिगड़ने की आन्तरिक प्रतिक्रिया के कारण ही गान्धी जी ने कहा "मैं इससे तंग आ गया हूँ, अंग्रेजों को अब अवश्य चला जाना चाहिए।" फिर उन्होंने विचार किया, मित्रों ने उनसे चर्चा की, और उन्होंने कहा, "वह भूल थी, मुझे उसके कहने का कोई अधिकार नहीं।" गान्धी संसार के गिने चुने महापुरुषों में एक है जो इतना महान है कि अपनी भूलों को सार्वजनिक रूप से मान लेता है। गान्धी ने कहा "मैं अंग्रेजों से जब तक यह युद्ध चालू है भारत छोड़ने को नहीं कह सकता। इसका अर्थ होगा भारत की धुरी राष्ट्रों को भेंट।" गान्धी जी ने उस दिन से आज तक यही

कहा, "अंग्रेज और अमेरिकन भारत में ठहर सकते हैं। वे भारत में अपनी शस्त्र सेना बढ़ा सकते हैं। वे भारत को धुरी राष्ट्रों के विरुद्ध लड़ने का अपना अड्डा बना सकते हैं।" न गान्धी और न दूसरा कोई भारतीय नेता लड़ाई के दौरान में अंग्रेजों को भारत से बाहर निकालना चाहता है नाही वे इस दौरान में पूर्ण स्वतन्त्रता की आशा करते हैं। जो कुछ भी गान्धी या दूसरे भारतीय नेता चाहते हैं वह है एक भारतीय-राष्ट्रीय-सरकार, जिसको गान्धी जी ने सुस्पष्ट शब्दों में कहा और यह बात को प्रकाशित भी हुए। भारतीय राष्ट्रीय सरकार सैनिक कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करेगी, अपितु वह संयुक्त राष्ट्र से शीघ्र ही पारस्परिक सहयोग की संधि करेगी जिससे हमें विजय प्राप्त करने में सहायता मिलेगी। "भारतीय नेताओं का तर्क है कि भारत को देकर कुछ रियायत, ऐसी कुछ किश्त लड़ाई के दौरान में ही, लड़ाई के बाद पूर्ण स्वतंत्रता के मिलने के सम्बन्ध में देकर ही भारत वासियों में स्वतंत्रता के लिये युद्ध में सहायता करने को उत्साह उत्पन्न किया जा सकता है। यदि हम अपने से पूछें कि रूसी और चीनी क्यों इतनी दृढ़ता और अच्छाई से लड़ रहे हैं और भारतीय क्यों इस लड़ाई से उदासीन हैं, तो उत्तर मिलेगा कि वह लड़ाई उसी तरह लड़ रहे हैं जैसे कि हम और आप, क्योंकि हमको इस लड़ाई से कुछ हानि या भय और कुछ लाभ की आशा है। परन्तु भारतीयों के पास खोने को कुछ भी नहीं है और कुछ पाने के लिए स्पष्ट शब्दों में किसी ने कुछ भी नहीं कहा।

इसके विपरीत सितम्बर १९४१ में जब चर्चिल प्रेसिडेन्ट रूजवेल्ट से अटलाँटिक महासागर में, जहाँ पर उन्होंने 'अटलाँटिक चार्टर' (अधिकार पत्र) तैयार किया था, भेंट कर हाउस आफ कामन्स (इङ्गलैण्ड की पार्लामेंट

की साधारण सभा) में आज तक मैं जहाँ की गैलरी में बैठा था, वहाँ पार्लामेंट का एक सदस्य उठा और बोला "प्रधान मंत्री महोदय ! क्या अटलाँटिक चार्टर की धारा ३ (जो कि प्रत्येक देश को अपने शासन का रूप निश्चय करने का अधिकार देती है) भारत पर भी लागू होती है" चर्चिल ने खड़े हो कर उत्तर दिया, "नहीं जनाब !" और बैठ गये। उस दिन से स्मट्स या हैलिफैक्स या क्रिप्स या और किसी अंग्रेज की ओर से वक्ता ने जो कुछ भी कहा वह इन दो शब्दों "नहीं जनाब" की कानूनी शक्ति को तनिक भी कम या ढीला नहीं करता। वास्तव में चर्चिल ने स्वयं १० नवम्बर को इन्हीं शब्दों पर फिर जोर दिया जब कि लण्डन में बोलते हुए उन्होंने कहा "इङ्गलैण्ड अपने स्थान पर अटल बना रहेगा। मैं राजा का प्रधान मंत्री इस लिये नहीं बना हूँ कि ब्रिटिश साम्राज्य की अन्त्येष्टि क्रिया के पवित्र पद को सुशोभित करूँ।" ब्रिटिश साम्राज्य को ब्रिटिश सार्वजनिक सम्पत्ति, कहने से उसके रङ्ग के धब्बे बदल नहीं जाते। कनाडा, न्यूजीलैण्ड, दक्षिणी अफ्रीका और आस्ट्रेलिया स्वतंत्र उपनिवेश हैं। परन्तु भारत दलित और दुखी प्रदेश है। यदि हम भारत को जापान के हराने के लिये अपना अड्डा बनाना चाहते हैं तो हमको भारत के करोड़ों आदमियों में गड़बड़ी, कटुता और असंतोष में रहते हुए वहाँ बड़ा दुखद समय बिताना पड़ेगा।

इस लड़ाई में हमारे क्या उद्देश्य हैं? चार स्वतंत्रता में—भाषण और प्रकाशन की स्वतंत्रता, पूजन की स्वतंत्रता आवश्यकता से स्वतंत्रता (अर्थात समृद्धि और सुरक्षा) भय से स्वतंत्रता (अर्थात शान्ति)। यह वस्तुएँ हम अपने लिये चाहते हैं। यह लड़ाई नक्शों के सम्बन्ध में नहीं है। इस युद्ध के बाद सम्भव है शान्ति सम्मेलन कभी भी न हो। एक देश का कूँचा उठा और दूसरे को गर्त में डाल कर या एक देश का कोई टुकड़ा लेकर दूसरे में जोड़ने

मे शान्ति स्थापित नहीं होगी। यह युद्ध हमारे सम्बन्ध में है, यह सामाजिक युद्ध है, यह युद्ध उन जीवन के मौलिक सिद्धान्तों के विषय में है जिनको हम निर्वाह कर रहे हैं।

कुछ लोग जो ठो रूस मे सोचते हैं, कहते हैं "हिटलर, मुसोलिनी, फ्रान्स और जापान के सैन्यवादियों ने इस युद्ध को छेड़ा" यह ठीक है परन्तु हमने ही तो उनको बनाया। हिटलर सिड़ी और पागल हो परन्तु वह है तो हमारी ही [illegible] की सन्तान। वह हमारे समाज की उत्पत्ति है। हमने कैसर को हराया, हमने पाया हिटलर। हम हिटलर को हराकर उससे भी बुरा हिटलर पावेंगे, जब तक उस भूमि और बीज को नष्ट नहीं कर देते जो हिटलरवाद को पैदा करते हैं। इसलिए यह लड़ाई केवल विदेशी फौजों और विदेशी हिटलरों के विरुद्ध ही नहीं है। यह समान रूप से ५० प्रतिशत, १० प्रतिशत और २ प्रतिशत हिटलरों के विरुद्ध भी है जो प्रजातंत्रों में बसते हैं और जिन्होंने इस तथा दूसरी लड़ाइयों के होने में सहायता दी है। शान्ति हम पर या जो कुछ हम लड़ाई के बीच [illegible] और करते हैं उस पर निर्भर है। आखिर शान्ति उन आदमियों से तो अच्छी नहीं होगा जो उसको प्राप्त करेंगे? सरकारें शान्ति अपने निज के ही रूप में उत्पन्न करती हैं। शान्ति का भी दान के समान प्रारम्भ अपने ही घर से होता है और उसी सीमा तक शान्ति प्राप्त होती है जिस सीमा तक हम उसके लिए तैय्यारी करते हैं। एक दिन हम गॉन्धी के प्रति कृतज्ञ होंगे कि उसने यह मौलिक प्रश्न हम सबके सामने उठाया कि क्या हम अपने आपको लड़ाई के दौरान में पवित्र कर सकते हैं? जिससे लड़ाई के बाद दुनियाँ को अधिक अच्छा बनाने में समर्थ हो सकें।

४ जुलाई को जब मैं भारत में था ब्रिटिश वायसराय लार्ड लिनलिथगो

ने अपने संगमरमर के महल नई देहली में अमेरिका का ब्रिटिश साम्राज्य से स्वतन्त्रता प्राप्त करने का दिन मनाने के लिए एक दावत दी उस दावत में मैंने वह सब तर्क सुने जो ब्रिटिश साम्राज्य से भारत के स्वतंत्र होने के विरुद्ध दिये गये। एक ब्रिटिश जनरल ने जो बरमा में था मुझसे कहा "क्या स्वतंत्र भारत लड़ाई के बाद अपनी रक्षा कर सकेगा?" मैंने उससे कहा "क्या इङ्गलैण्ड कर सकेगा?" आज कल कोई देश अकेला रह कर अपनी रक्षा कर सकता है? इङ्गलैण्ड नहीं, फ्रांस नहीं, इटली नहीं, सम्भव है अमेरिका और रूस भी नहीं कर सकते। यदि केवल वही देश, जो अपनी रक्षा अपने आप कर सकेंगे लड़ाई के बाद स्वतंत्र रह सकेंगे, तब तो बहुत ही थोड़े स्वतंत्र देश होंगे। जनरल के प्रश्न का यही अर्थ है कि इस लड़ाई के बाद एक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन बनाना पड़ेगा जो तमाम देशों की, ज्यादती करने वालों से रक्षा करेगा। उसी दावत में मुझे लेडी लिनलिथगो, जो कि एक सुन्दर और शाही स्त्री तथा वायसराय साहब की धर्मपत्नी हैं, के बराबर बिठाया गया। वह मुझसे मौसम के सम्बन्ध में, जो भारत में सर्वत्र बात चीत का विषय है, बात करने लगीं। वहाँ प्रायः प्रातः से दोपहर तक ११० डिग्री गरमी रहती है। परन्तु मैंने शीघ्र ही उन्हें राजनीति और भारत की स्वतंत्रता के विषय पर आकर्षित कर लिया और उन्होंने कहा "परन्तु क्या यह लोग अपने ऊपर स्वयं शासन करने के योग्य हैं?" कभी-कभी मैं बात चीत में स्पष्टवादी हो जाता हूँ। मैंने उत्तर दिया, "लेडी लिनलिथगो, ऐसी रात को जैसी कि यह है, ऐसा प्रश्न पूछना बड़ा विचित्र लगता है। ठीक यही बात ब्रिटिश टोरियों (अनुदार दकियानूसी लोगों) ने १३ उपनिवेशों [उत्तरी अमेरिका] के बारे में १७७६ में कही थी।" और जैसा कि सभापति ने अपने भाषण में बताया, जो आज के अखबार में छपा है,

उस समय बहुत से अमेरिकन थे, अविश्वासी, वाशिंगटन के दिन के सनकी जिनको यह विश्वास नहीं था कि साधारण पुरुष और स्त्रियों में भी स्वतंत्रता और स्वायत्त शासन की योग्यता होती है।" मैंने वायसराय की धर्म पत्नी से नहीं कहा, लेकिन सोचता रहा कि जब यह देख पड़ता है कि सभ्य कहे जाने वाली जातियों ने संसार में यह गड़बड़ी मचा रखी है, तो हमको 'असभ्य' कही जाने वाली जातियों जैसे चीन और भारत को संसार पर शासन करने में सहायता देने के लिये आवाहन करना चाहिए। हम मशीनें और बम आदि बनाने में बहुत आश्चर्य जनक हैं परन्तु हमने एक ही पीढ़ी में दो संसार-व्यापी युद्ध करा दिए- और यह कोई प्रमाण नहीं कि हम संसार के मामलों का प्रबन्ध करने की क्षमता रखते हैं। ऐसा तो है ही कि जैसे अधिकांश लोग अमेरिका में वाशिङ्गटन के समय में यह प्रतीत करते थे कि वह स्वतंत्रता के अधिकारी थे। इसी प्रकार भारत और एशिया के लोग यह प्रतीत करते हैं कि उनको स्वतंत्रता की आवश्यकता है और यदि उनको रोका जायगा तो उत्पात मचेगा। स्वतंत्रता के प्रयोग की योग्यता सीखी जाती है, जन्म से नहीं होती। आप भी उसे जन्म से नहीं लाए थे। उसको स्वतंत्रता के अभ्यास से सीखा जाता है।

मैं भारत से इस पूर्ण विश्वास के साथ आया कि यदि इच्छा हो तो भारत में एक रात में राजनैतिक एकता स्थापित की जाय। वह वास्तव में सामाजिक और आर्थिक एकता की ओर प्रथम कदम होगा। मैं भारत से इस विश्वास के साथ आया कि भारतीय स्वतंत्रता में बाधा भारत की ओर से नहीं परन्तु इङ्गलैण्ड की ओर से है। भारत बहुत सुन्दर वस्तु है। बहुत से हित, कम्पनियाँ और कुटुम्ब; इङ्गलैण्ड में भारत के आधार पर धनी बने हैं। परन्तु यह प्रश्न उससे भी बड़ा है कि नेविलि

चेम्बरलेन प्रसन्न या सन्तुष्ट रखने वाला था क्योंकि वह डरता था कि अगर कहीं इङ्गलैण्ड लड़ाई में लिया गया तो उसका इङ्गलैण्ड (अर्थात जाति, विशेषाधिकार, धन और उच्च वर्ग वाला इङ्गलैण्ड) मर जाता। लेकिन चर्चिल कहता है कि "नहीं, इङ्गलैण्ड यह लड़ाई लड़ और जीत सकता है और पुराना इङ्गलैण्ड भी बना रह सकता है।" और चर्चिल के इङ्गलैण्ड में भारत भी है, पीवरेज रिपोर्ट का ढाँचा भी है और सब प्रकार के प्रतिक्रियावादी कानून भी।

इसलिए प्रश्न यह नहीं है कि क्या भारत स्वतंत्रता के लिये तैयार है प्रश्न तो यह है कि क्या हम भारतीय स्वतंत्रता के लिये तय्यार हैं। यदि इस लड़ाई में से एक नया इङ्गलैण्ड निकलने वाला होता और अगर नया इङ्गलैण्ड चर्चिल और चेम्बरलैन के पुराने इङ्गलैण्ड के स्थान पर स्थापित होता, तो वह भारत को अधीन न रखता ! यह है वास्तविक प्रसंग। गान्धी जी इस बात के लिए सदैव इच्छुक थे कि जापानी हमले से भारत की रक्षा की जाय और वे इसी लक्ष्य से भारत की स्वतंत्रता चाहते थे। इसी कारण वे 'भारत छोड़ो' आन्दोलन चलाने के लिए बिवश हो गये। गान्धी जी अपने सिद्धान्तों को पालन करते हुए सदैव इसी बात की इच्छा और प्रयत्न करते रहे कि शान्ति पूर्ण समझौता हो जाय तथा युद्ध और हिंसा से बचा जाय।

तीसरा अध्याय

क्रिप्स मिशन और उसकी विफलता के परिणाम
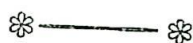
पर्दे के पीछे से सरकार किस प्रकार क्रिप्स योजना को असफल बनाने की रचना कर रही थी और उसके परिणामों का सामना करने को तैयार थी, इसका बहुत सुन्दर वर्णन श्री देवदास गान्धी ने "क्रिप्स योजना क्यों फेल हुई" नामक पुस्तक में किया है, तत्सम्बन्धी अंश नीचे उद्धृत किया जाता है।

"कोई भी देश केवल सर स्टैफर्ड क्रिप्स को, उसकी असफलता के लिए बदनाम नहीं करेगा, अगर उसके प्रति कटु समालोचना होती है तो वह उसके घनिष्ट मित्रों की ओर से ही है, जिसका कारण क्रिप्स के वे वक्तव्य हैं जो उन्होंने इस वाद विवाद के बाद प्रकाशित किए। तथापि ब्रिटिश अधिकृत वक्ताओं में वही एक ऐसे हैं जिन्होंने इस समझौते की बातचीत की विफलता के बाद, पारस्परिक कटुता को हटाने पर विशेष जोर दिया, जबकि दूसरों ने शान्ति परन्तु स्पष्ट घृणा के साथ उनकी कोमलता का विरोध किया और उनका विरोध करने में ही प्रसन्न हुए।" सप्ताहों बाद मैं एक अंगरेजी समाचार पत्र के प्रतिनिधि से नई दिल्ली में मिला, उसने स्पष्ट शब्दों में कहा :—

"मैं यह नहीं सोचता कि ब्रिटिश सरकार का क्रिप्स के प्रस्ताव में विश्वास था, सरकार ने क्रिप्स को भारत में उन प्रस्तावों को लेकर भेजा था, जिनको उसकी

कुछ हानि नहीं होती थी दूसरे शब्दों में अंग्रेजी लोकमत ने स्थाई रूप से ब्रिटिश कैबिनेट को विवश कर दिया था, कि वह भारत से समझौता करे, लेकिन सर क्रिप्स के वे घनिष्ट परिचित लोग ही उस समय मंत्रिमण्डल में थे जिनका भारतीय नीति पर अधिकार था, इसलिए वे भारत से लेन-देन (*Give and take*) की नीति में सफल रहे।"

मिस्टर एमरी सर स्टेफर्ड क्रिप्स से अधिक जानते थे कि भारत के असन्तुष्ट और असंगठित लोग जापान के शिकार बनने की आशङ्का से चौकन्ने हो रहे हैं इसलिए वह भविष्य की स्वतंत्रता के वचन से शीघ्र-स्वतंत्रता प्राप्ति को अधिक मूल्यवान समझते हैं।

क्रिप्स जब भारत में आया तो पहले से उसके विरोध में पांसा पड़ा हुआ था, यह बात इससे सिद्ध होती है कि उसके बाद ही उनको युद्ध मंत्रिमण्डल से निकाल दिया गया। सरकारी तौर पर भी नई देहली में यह कहा गया था कि क्रिप्स प्रस्तावों के भारत में स्वीकार किए जाने की आशङ्का नहीं है।

भारत में इस मत का एक प्रबल पक्ष है जो नीति के नाते यह मानता है कि काँग्रेस को उन प्रस्तावों को स्वीकार करना चाहिये था, इसका स्पष्ट उत्तर यह है कि काँग्रेस कार्यसमिति ने परिस्थिति का पूर्ण अध्ययन करते हुए समझौते का भरसक प्रयत्न किया, लेकिन समझौता न हो सका। काँग्रेस ने अपनी बहुत सी आवश्यक बातों के लिए जिद भी नहीं की, केवल इसीलिये कि समझौता हो जाय। जिसके लिये मुस्लिम लीग और दूसरी संस्थाएँ भी राजी हो जायँ।

लेकिन पूर्ण राजीनामा न होने का कारण, उन लोगों को निराश ही

होना पड़ा जो इसमें इङ्गलैण्ड के साम्राज्य का अन्त देखते थे। इसके अतिरिक्त चर्चिल, एमरी और उनके समर्थकों के अलावा हर एक सच्चा भारतीय और अंगरेज अपने को अकथनीय बुरी परिस्थिति में पाता है।

दूसरा पक्ष यह हो सकता था कि काँग्रेस को चित्र से निकालकर जापान और भारत दोनों के विरुद्ध भारत रक्षा की तय्यारी की जाय, इसमें भी पुराने साम्राज्य-रक्षकों की कुछ हानि न थी, यह उनका साधारण कार्यक्रम था, उन्होंने इसकी कल्पना भी नहीं की थी कि इसके परिणाम स्वरूप भारत में कितनी जानें; गोली, कोड़े, जेल-यातना और सामूहिक जुर्माने की बलि चढ़ जायँगी। प्रचार की भावनाओं से वे इन सब घटनाओं का उत्तरदायित्व काँग्रेस नेताओं पर मढ़ते हैं आज जबकि एक लाख के लगभग नर नारियाँ जेल के सींखचों में बन्द हैं तब उनका पक्ष प्रतिपादन करने वाला कौन है? लेकिन एक ऐसे व्यक्ति के नाते जिसका सम्बन्ध काँग्रेस नेताओं से रहा है, मैं यह महत्व पूर्ण इतिहास उपस्थित करना चाहता हूँ, जिसका इस प्रश्न से सम्बन्ध है।

अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी ने बम्बई में अपना प्रस्ताव ८ अगस्त सन् १६४२ ई० को लगभग ८ बजे रात्रि में स्वीकार किया, उसी रात्रि को मैंने एक मित्र से फोन द्वारा देहली से बम्बई में बातचीत की। उसने कहा कि दिनभर के व्यस्त और ओजमय अधिवेशन के बाद हर एक आदमी सो गया है, जब मैंने अगले कदम के बारे में पूछा तो उसने कहा कि गान्धी जी ने सोने से पहले व्यक्तिगत बातचीतों में कहा था कि मैंने संघर्ष को बचाने का पूर्ण निश्चय किया है; और हर हालत में कम से कम तीन सप्ताह तक तो मैं प्रतिज्ञा करूँगा, उसके बाद ही कोई कदम उठाने की बात सोची जायगी।

जब गान्धी जी बम्बई में इस प्रकार समझौता की बात कर रहे थे

तभी वायसराय की कार्यकारिणी समिति एक असाधारण बैठक में अपने उस निश्चय की तफ़सील तैयार कर रही थी, जिसके अनुसार अब से तीन सप्ताह पूर्व यह निश्चय किया गया था कि *A. I. C. C*, में प्रस्ताव पास होते ही उसे जेल में ठूँस दिया जाय। अपने इस निश्चय को कार्यान्वित करने से पूर्व सरकार ने परिवर्तित परिस्थिति का कुछ भी ध्यान नहीं किया, अपनी निश्चय पूर्ति के भयङ्कर परिणामों की कुछ भी परवाह नहीं की।

जब प्रातः काल गान्धी जी को गिरफ्तार करने पुलिस पहुँची तो वे विस्मित हो गए, इसके बाद देश में जो भयङ्कर गड़बड़ मची, वह स्वाभाविक ही नहीं अपितु गम्भीर भी थी। देश में जो हिंसा और जो रक्तपात हुआ वह सरकारी सैनिक ज्यादतियों के परिणाम स्वरूप था, उसका उत्तरदायित्व काँग्रेस के मत्थे मढ़ना जले पर नमक छिड़कने के समान है, तब तो यह परिस्थिति और भी हास्यास्पद हो जाती है जब इसका उत्तर दायित्व काँग्रेस के उन नेताओं के मत्थे मढ़ा जाता है, जिनको घटनाओं से पूर्व ही कारागार में सुरक्षित रूप से बन्द कर दिया गया था, उनके पास उत्तर तक का कोई साधन न था, सिवाय इसके कि वे दया की भीख मागें। यह खुले आम न्याय की उसी प्रकार हत्या थी जैसे मित्र राष्ट्र-पक्ष की भारत में।

क्रिप्स की योजना काँग्रेस या गान्धी के कारण असफल नहीं हुई बल्कि उसके निर्माताओं ने ब्रिटेन में पहले से ही उसकी नींव रख दी थी। गान्धी जी की स्थिति इस विषय में बहुत स्पष्ट है, जैसा कि मौलाना आज़ाद ने ११ अप्रैल (१९४२) के प्रेस वक्तव्य में कहा था :—"गान्धी जी की युद्ध में भाग लेने सम्बन्धी विचार प्रकट हैं, यह कहना असत्य होगा कि कार्य्य कारिणी के फैसले उनके विचारों से प्रभावित हुए। वास्तव

में गान्धी जी ने कार्य्य कारिणी समिति को अपना निर्णय करने में स्वतंत्रता कर दिया था। गान्धी जी तो कार्य्य कारिणी की प्रारम्भिक बैठकों में भाग लेना भी नहीं चाहते थे, मैने ही उन्हें विवश किया।"

१७ जून सन १९४२ को बम्बई में पं० जवाहर लाल नेहरू ने इस सम्बन्ध में कहा —"सर स्टफर्ड क्रिप्स का यह वक्तव्य कि काँग्रेस कार्य-कारिणी ने प्रस्तावों को स्वीकार कर लिया था, परन्तु बाद में गान्धी जी के परामर्श से रद्द कर दिया, पूर्णतया असत्य है। समाचार पत्रों की यह कल्पनाएँ थीं कि काँग्रेस कार्य समिति प्रस्तावों को स्वीकार कर लेगी, किन्तु ये केवल निराधार कल्पनाएँ थीं।"

अन्त में राजगोपालाचार्य ने कहा था कि "गान्धी जी जेल में हैं और इस निराधार कहानी का खण्डन नहीं कर सकते, मैं आरम्भ से अन्त तक उस वार्तालाप के समय उपस्थित था, और अधिकार पूर्वक कह सकता हूँ कि गान्धी जी आखिरी समय तो देहली में भी नहीं थे, और बातचीत असफल हो जाने का उत्तरदायित्व उनपर नहीं हो सकता। महात्मा जी ने तो आरम्भ में ही अपना विरोध प्रकट कर दिया था, लेकिन फिर भी कार्य समिति ने सर स्टैफर्ड क्रिप्स से अपनी नीति के अनुसार बात चीत की और गान्धीजी ने उसमें कोई हस्तक्षेप नहीं किया। क्रिप्स प्रस्तावों को काँग्रेस ही ने नहीं, भारत के किसी भी राजनीतिक दल ने स्वीकार नहीं किया। काँग्रेस की राष्ट्रीय सरकार की माँग प्रस्ताव से पूरी नहीं होती थी, इसलिए प्रस्ताव का अस्वीकार करना स्वाभाविक ही था। क्रिप्स मिशन की असफलता का कारण भारत ही नहीं अमेरिका भी भली भाँति जानता है, जिसको प्रसन्न करने का प्रयत्न अंग्रेजी सरकार बराबर करती रही है।

पं० जवाहर लाल नेहरू ने ४ अप्रैल सन् ४२ ई० को अपने वक्तव्य

में काँग्रेस और भारत पर क्रिप्स मिशन की प्रतिक्रिया के बारे में भली प्रकार बतलाया उसी वक्तव्य में जापान के प्रति भी पंडित जी का रुख स्पष्ट हो जाता है, तत्सम्बन्धी उद्धरण नीचे दिया जाता है।

"भारत आज लड़ाई का केन्द्र है। प्रत्येक दल यह जानता है कि भारत तभी अच्छी तरह काम कर सकता है जबकि भारतीयों को अपने तरीक़े पर काम करने दिया जाय। नई देहली और अंग्रेजों के अतिरिक्त प्रत्येक देश इस बात को अच्छी तरह अनुभव करता है। क्रिप्स वार्तालाप के सम्बन्ध में बताते हुये पं० जी ने कहा साधारण भारतीय अंग्रेजों के प्रति नाराज हैं, हम कटु तो नहीं हो सकते, कटुता से मस्तिस्क अंधकार मय हो जता है, और भयङ्कर परिस्थिति में निर्णय नहीं हो पाता। इस समय प्रमुख प्रश्न यह नहीं है कि अंग्रेजों ने हमारे साथ या हमने उनके साथ क्या किया, अब प्रश्न है भारत के खतरे का और उसके प्रति हमारे कर्त्तव्य का। चाहे हमारे साथ कुछ भी हुआ हो, फिर भी हम अंग्रेज और अमेरिकन मित्रों के युद्ध प्रयत्नों में बाधा डालना नहीं चाहते। हमारे सामने प्रश्न यह था कि लड़ाई के प्रयत्नों में बिना भाग लिए और सरकार के युद्ध प्रयत्नों में बिना बाधा डाले ऐसी स्थिति पैदा करें जिससे भारत स्वतंत्र हो। यही प्रश्न था जिसको अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी अपने भावी अधिवेशन में निश्चय करना चाहती थी।"

पं० नेहरू ने कहा कि "हम किसी भी आक्रमणकारी के सामने घुटने नहीं टेक सकते"

वह यह बात सहन नहीं कर सकते थे कि वह या कोई भी चुपचाप बैठे रहें जब कि भारत का युद्ध दो विदेशी सेनाओं के बीच में लड़ा जा रहा हो, वह किसी प्रकार भी निष्क्रिय रुख

सहन नहीं करते थे, लेकिन किसी विशेष परिस्थिति में क्या करेंगे, यह उस समय की परिस्थितियों पर ही निर्भर था। परन्तु यह बात स्पष्ट थी, जैसे कि उन्होंने पिछले बाईस सालों में अंग्रेजों के सामने झुकने से मना कर दिया वैसे ही वे किसी भी आक्रमणकारी के सामने झुकने को तैयार नहीं थे। वे हमले का विरोध अधिक से अधिक असहयोग प्रतिरोध और हर मुमकिन तरीके से यथासम्भव बाधा डाल कर करना चाहते थे।

जवाहरलाल जी ने कहा कि हर एक काँग्रेस जन और देशवासी का कर्त्तव्य है कि वह आत्म रक्षा और आत्म निर्भरता के लिए अपने को संगठित करे। इस मामले में ब्रिटिश सरकार और काँग्रेस का बुनियादी मतभेद था, काँग्रेस जनता पर आश्रित थी और ब्रिटिश सरकार आज भी जनता पर विश्वास नहीं करती। सशस्त्र रूप से तो राज्य ही रक्षा कर सकता है, बिना राज्य की सहायता लोग कैसे अपनी सेना खड़ी कर सकते थे। लेकिन काँग्रेस ने आत्मनिर्भरता और आत्मरक्षा का प्रोग्राम विशेष कर गावों में आरम्भ कर दिया। जिसका लक्ष्य विभिन्न भागों में असुविधा होने पर भोजन की पूर्ति करना था, ये टुकड़ियाँ हमलावर सेना का मुकाबिला नहीं कर सकतीं थीं, लेकिन ये टुकड़ियाँ इन सब परिस्थितियों की अव्यवस्था को रोक सकती थीं, उत्पादन द्वारा और जनता में अनुशासन पैदा करके।

क्रिप्स वार्तालाप की असफलता के लिए किसका उत्तरदायित्व था? इस प्रश्न के उत्तर में पं० नेहरू ने सविस्तार समझाते हुए बतलाया—"यदि क्रिप्स की अन्तिम भेंट से पूर्व उनसे पूछा जाता तो उन्होंने निश्चित रूप से कहा होता कि समझौते की ७५ प्रतिशत सम्भावना है।" परन्तु उस भेंट में क्रिप्स ने अपने प्रस्तावों की जो रूपरेखा खींची वह ऐसी थी जिससे पण्डित

जो सहमत न हो सके। पं० जी ने कहा कि इसमें तो कहीं बड़ा अन्तर हो गया है। उन्होंने कहा-"निश्चित रूप से ऐसा जान पड़ता है कि क्रिप्स और दूसरों में झगड़ा हो गया है।" फिर पण्डित जी ने हँसी के बीच कहा कि "वह दूसरे हम नहीं हैं। मेरी प्रबल इच्छा थी कि कोई ऐसा उपाय निकाला जाय जिससे भारत अपनी रक्षा के लिए कुछ महत्वपूर्ण कार्य करके, लड़ाई के प्रयत्नों को सार्वजनिक बना सके, मेरी इतनी प्रबल इच्छा थी कि मैं ऐसी चीजों को छोड़ने को भी तय्यार था, जिन्हें मैं पच्चीस वर्ष से पकड़े हुए था, और किसी भी भाव उन्हें छोड़ने का विचार नहीं कर सकता था। मेरा पूर्ण विश्वास है कि अँग्रेजी सरकार के सिरक से अंतिम रूप में जैसे प्रस्ताव निकले वैसे स्वीकार करना असम्भव था। मैं काँग्रेस के प्रस्ताव तथा सभापति के पत्र से पूर्णतया सहमत हूँ।"

जहां तक मैंने भारत को समझा है भारत की भावना अँग्रेजों के प्रति शत्रुता की है। आप डेढ़सौ बरसों के इतिहास को जड़ से उखाड़ कर नहीं फेंक सकते वह भारतीय आत्मा के बीच व्याप्त हो गया है। उसको हम उसी रूप में बदल सकते थे यदि भारतीय जनता के बीच स्वतंत्रता की स्फूर्ति पैदा की जा सकती। आज प्रमुख भावना अँग्रेजी सरकार के प्रति अविश्वास या द्रोह की है, यह भावना जापानियों के पक्ष की नहीं वरन् अँग्रेजों की विरोधी भावना है।

कभी-कभी कुछ व्यक्ति जापान के पक्ष में विचार प्रकट कर देते हैं यह अदूरदर्शिता और दास मनोवृत्ति है। यह गुलामों के सोचने का तरीका है, जिसके द्वारा हम एक व्यक्ति से मुक्ति पाने के लिए दूसरे व्यक्ति की सहायता की आशा करते हुवे यह नहीं समझते कि फिर दूसरा पक्ष हम पर आधिपत्य जमा लेगा। स्वतंत्र लोगों को ऐसा नहीं सोचना चाहिए। जब कोई भी भारतीय जापानियों द्वारा

भारत की स्वतंत्रता सोचता है तब मुझे दुख होता है। जापान का गत इतिहास दूसरों पर अधिकार जमाने का रहा है। जापान यहाँ पर या तो साम्राज्यवादी कारणों से आता है या अंग्रेजी सरकार से प्रति द्वंदिता के कारण। चाहे जो हो वह भारत को स्वतंत्र करने नहीं आ रहा है।

दूसरा प्रश्न यह है कि यदि कोई सेना श्री सुभाषचन्द्र बोस के नेतृत्व में आवे तो हमारा क्या कर्त्तव्य है। इसका उत्तर देने से पहिले पण्डित जी ने श्री बोस और काँग्रेस के अन्तर की ओर संकेत किया और कहा "मैं श्री बोस की नीयत में शक नहीं करता। मैं यह समझता हूँ कि उनका विचार भूल भरा है फिर भी यह वह विचार है जिसको श्री बोस भारत के लिए हितकर समझते हैं। हम उनसे काफी पहिले अलग हो गए उसके बाद हमारे बीच का अन्तर बढ़ता ही गया और आज हम उनसे बहुत दूर हैं। यह मेरे लिए बहुत अच्छी बात नहीं क्योंकि मेरी उनके साथ पुरानी दोस्ती रही है और मैं उनके लक्ष में संशय नहीं करता। उन्होंने जो मार्ग पकड़ा है वह पूर्ण रूप से भ्रम पूर्ण है जिसको मैं स्वीकार ही नहीं कर सकता अपितु विरोध भी करूँगा, यदि वह अस्तित्व में आया। क्योंकि बाहर से आने वाली यह शक्ति एक मूक शक्ति के समान जापान का आधिपत्य हमारे ऊपर लेकर आनी। वास्तव में वह जापानियों की सहायक शक्ति होगी चाहे वह धोके में ही सहायता करे कि जापान हमारे साथ सद्व्यवहार करेगा। भारत वासी सहायता से मुक्ति की बात सोचता है, वास्तव में यह मनोवैज्ञानिक रूप से भारतीय जनता के लिए बुरी बात है।

मैं सोचता हूं कि आज प्रत्येक भारतीय का यह काम होना चाहिए कि वह भारत में रहे और भय तथा आशकाओं का सामना करे, फिर चाहे भारत में कुछ भी हो।"

क्रिप्स के प्रस्ताव इतने असंतोष प्रद पाए गए कि किसी राजनीतिक दल या जनमत ने उनको स्वीकार नहीं किया। लग-भग सभी मुख्य राजनीतिक दल और व्यक्तियों ने उसकी निन्दा की। चाहे वह मुस्लिम लीग थी या अछूतवर्ग या अम्बेडकर, या सर सप्रू या डाक्टर जयकर। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि क्रिप्स भारतीयों के हृदयों को जीतने नहीं बल्कि जले पर नमक छिड़कने आया था।

चतुर्थ अध्याय

बर्मा और अँग्रेजी अत्याचार

सन् अठारहसौ पिचासी की बर्म्मा लड़ाई के बाद बर्म्मा भारत का एक भाग बना दिया गया था। सन् १९३५ के भारतीय विधान के अनुसार उसको भारत से अलग कर दिया गया और सन् ३६ के विधानानुसार बर्म्मा में नया विधान चालू किया गया। बर्म्मा के लोकप्रिय प्रधान मंत्री श्री पू ने महायुद्ध के आरम्भ में, युद्ध में सहायता देने के लिए पूर्ण स्वतंत्रता की माँग को वह अपनी देश भक्ति की भावना से प्रेरित होकर इङ्गलैंड गया और वहां जाकर स्वदेश रक्षा के नाम पर स्वतंत्रता की माँग पेश की लेकिन खेद है कि उनकी बात ही नहीं सुनी गई वरन् उसे बन्दी भी बना लिया गया और उसके बाद इस सम्बन्ध में कुछ भी नही सुना गया। उसके देशवासी उसे याद करते रहे। देश में उसका सम्मान बढ़ता आता रहा।

इसके थोड़े दिन बाद जापान ने बर्म्मा पर हमला किया, अंग्रेज उसकी रक्षा न कर सके, सारे देश पर जापानी फौजें फैल गईं और बर्म्मा में अंग्रेजी राज्य नष्ट भ्रष्ट कर दिया गया। बर्म्मा के अंग्रेज निवासी नागरिक और सैनिक सभी सुन्दर और संभव मार्गों से अविलम्ब भारत को भाग आए और

बर्म्मा में भारतियों की भयानक दुर्दशा हुई। वे किधर के भी न रहे। अंग्रेजों ने उन्हें धोका दे दिया और बर्म्मी उनकी कुछ सहायता न कर सके। जापानी सैनाओं से ऐसे समय सहायता की क्या आशा की जा सकती थी। बेचारे भारतियों ने भारत भाग आने का ही प्रयत्न किया। लेकिन यह सरल मार्ग न था। सारे संभव मार्ग और साधन अंग्रेजों के हाथ में थे, और भारतियों को उनके प्रयोग की मनाही थी। इसलिए उनको इसके सिवा कोई मार्ग न बचा कि वह कठिन, निर्जन, पहाड़ी और भयानक जंगली मार्गों से चले, वह मार्गों में अधिकाँश भूख और प्यास से मरगए। उन्हें अपने स्त्री बच्चों और सब सामान को वहीं छोड़कर भागना पड़ा, इस प्रकार धनी और कुटम्बी बेघरबार रास्ते के भिखारी बन गए। बर्म्मा के इस युद्ध का वर्णन एक नागरिक अंग्रेज ने किया है जिससे वास्तविकता पर प्रकाश पड़ता है। श्री टी० एल० हास ने सैन्ट्रल ऐशियन सोसायटी के सामने भाषण देते हुए कहा कि "बर्म्मा की स्थिति ऐसी थी जैसी ब्रिटेन की फ्रॉस-पतन के समय हुई थी परन्तु इङ्गलैड ने शीघ्र अपनी अवस्था को सुधार लिया और कभी हमले का स्वाद न चखा इसके विपरीत बर्म्मा को साँस लेने का भी समय न मिला। जापानी सैनाओं ने बर्म्मा पर पर्ल हारबर के पतन के दो दिन बाद ही हमला कर दिया। हास ने बतलाया कि बर्मा का पतन इसलिए हुआ कि हमारे पास सैनिक शक्ति अपर्याप्त थी और जापानी सेना हमसे अधिक बलशाली थी। बर्मा में पाँच महीने तक युद्ध चलने से हमें एक लाभ यह हुआ कि हमें भारत रक्षा की तय्यारी के लिए समय मिल गया। जिन कार्यों और बुराइयों के लिए बर्म्मा की सरकार जिम्मेदार थी, उनका प्रभाव युद्ध पर कुछ भी नहीं था, केवल अधिक सेना और सैन्य सामग्री के बल पर ही युद्ध का रुख मोड़ा जा

सकता था, यदि यह सिद्ध किया जा सकता कि वहाँ का शासन बिलकुल नष्ट हो चुका था और सेना की कुछ सहायता नहीं कर सका, तो बर्मा की हार का कारण वहाँ के नागरिकों पर भी लागू हो सकता था, लेकिन हम इसे नहीं मानते। इनका कहना है कि वहाँ का शासन अनेक कठिनाइयों के बावजूद भी अन्त तक चालू रहा।

बर्मा का खाली किया जाना

बर्मा से लोगों का हटाना अधिकारियों के लिए एक महान प्रश्न बन गया था, रंगून पतन के बाद हमारी सेनाएँ हारी नहीं थी और जनरल अलेक-जेण्डर ने हमला करने की आशा नहीं छोड़ी थी, यदि वहां के स्थानीय अधिकारियों ने सब मामलों को छोड़कर लोगों को वहाँ से भेजने का ही प्रबन्ध किया होता तो आशा थी कि सब मार्गों में भोजन आदि का प्रबन्ध समुचित रूप से किया जा सकता। यदि यह अनुभव हो जाता कि बर्मा में उनके गिने चुने दिन शेष हैं तो जनरल अलेकजेण्डर के भारत लौटने के निश्चय से सेनाओं और आवश्यक सेवकों का उदाहरण आदर्श हुआ होता।

बर्मा छोड़कर भारत आने वालों की संख्या अनुमानतः चार लाख थी, सैनिक अव्यवस्था के कारण आने वालों की स्थिति दयनीय हो गई। मार्ग में कितने आदमी चल बसे इसके सही आँकड़े नहीं मिले, पर इनकी संख्या अनुमानतः दस हजार थी, जो वहाँ की सारी आबादी का

ढाई प्रतिशत थी। यह संख्या वास्तविक संख्या से बहुत थोड़ी है, इसमें प्रोम और माण्डले में कौलरा आदि रोगों से मरे लोगों की गिनती नहीं दी गई, और न वे लोग शरीक किए गए जो भारत आने के बाद मरे। उस भयङ्कर मार्ग की करुण कहानी श्रवण और ज्ञान शक्ति के बाहर है।

भारतीयों के कष्ट सहन और दुखों की कहानी भारत में उनसे भी पहले आ गई, एक सिरे से दूसरे सिरे तक भारत दहल गया, नाटक का सबसे दुखान्त भाग वह था जिसमें बर्मा में भारतीयों के ऊपर अँग्रेजी जुल्म ढाए गए। भारतीय दुखों की दयनीय कहानियाँ, बर्मा निवासी भारतीयों द्वारा वर्णन की गई हैं, भारत की आत्मा दुख से काँप गई। विशेषतः अँग्रेजों ने भारतियों के साथ जो काले गोरे का भेद और पैशाचिक बर्ताव किया इसी कारण भारत सरकार द्वारा बर्मा के खाली करने की सरकारी रिपोर्ट प्रकाशित नहीं की गई, इसके लिए जो कारण साधारणतः जनता को बतलाया गया, उससे भिन्न ही जान पड़ता है। एन० बी० खेर साहब ने केन्द्रीय एसेम्बली में सरदार मङ्गलसिंह के प्रश्न पर कहा कि बर्मा खाली किए जाने के सम्बन्ध में चन्दा साहब की रिपोर्ट शत्रुओं को अपना भेद भाव बताए बिना प्रकाशित नहीं की जा सकती। इस प्रश्न के ऊपर सरकार ने फिर विचार किया, और पूर्ण विचार के बाद इस निश्चय पर आई कि "वर्तमान समय में कोई भी रिपोर्ट प्रकाशित न की जाय" इससे भारतीयों के भावों को बड़ी चोट पहुंची, और भारतीयों के हृदय पर उदासी के बादल छागए, उनके अन्दर अंग्रेजों के प्रति क्रोध और द्वेष ही नहीं भरा था बल्कि वे चिन्तित भी थे।

हरेक भारतीय भारत पर जापानी हमले के समय अपनी दुखद दशा का चित्र देख सकता था। विशेष रूप से भारतीय जनता बर्मा में अंग्रेजों

के विश्वासघात पूर्ण बर्ताव से बहुत भयभीत हो गई थी। उनके हृदय में अँग्रेजों के पन्जे से निकल कर स्वतंत्र होने की तीव्र इच्छा थी, अँग्रेजों का नियन्त्रण भारतीयों के जीवन और स्वतंत्रता का दम घोंट रहा था, और जापान से भारत की रक्षा किए जाने के मार्ग में बड़ा रोड़ा था। भारत में अँग्रेजी सरकार के रहते हुए, भारतीयों को जीवन-दान के लिए तय्यार नहीं किया जा सकता था, क्योंकि उसका अर्थ अपनी दासता को सुरक्षित करना होता। तर्क और मनोविज्ञान का भी यही नारा निकलता था कि भारत स्वतंत्र हो, इसलिए गान्धी जी ने भारत की नब्ज पहचान कर 'भारत छोड़ो' का नारा बुलन्द किया।

तीसरा भाग

भारत की रक्षा और स्वतन्त्रता

तीसरा भाग

भारत की रक्षा और स्वतन्त्रता

प्रथम अध्याय

काँग्रेस कार्य्य कारिणी की इलाहाबाद मीटिङ्ग

बर्मा पतन और उसके पश्चात उसकी अवस्था, विशेष रूप से बर्मा में भारतीयों की दुर्दशा और तत्पश्चात क्रिप्स मिशन की असफलता से गान्धी जी बहुत गम्भीरता से भारत रक्षा के प्रश्न को सोचने लगे उनके मस्तिष्क की गति विधि का पता हरिजन में प्रकाशित उनके लेखों से चलता था। उन्होंने जनता द्वारा भारत की रक्षा करने पर जोर दिया, साथ ही उन्होंने इस पर भी विशेष जोर दिया कि हमें अँग्रेजी सरकार पर अवलम्बित नहीं रहना चाहिए, क्योंकि बर्मा और सिङ्गापुर की अवस्थाओं ने उनकी कमजोरी प्रकट कर दी है। गान्धी जी या काँग्रेस जापान के पक्ष में थे, यह विचार बिल्कुल झूँठ है। पहले अध्याय में भी यह प्रकट किया है। यहाँ फिर गान्धी जी और पंडित नेहरू के विचारों से इसकी पुष्टि करेंगे। भारत सरकार ने ५ अगस्त सन् १९४२ की एक विज्ञप्ति में, इलाहाबाद कार्य्य समिति की मीटिङ्ग में हुई अनधिकृत कार्य्यवाही प्रकाशित की। गांधी जी मीटिङ्ग में उपस्थित नहीं थे, फिर भी उन्होंने मीरा बेन द्वारा एक प्रस्ताव भेजा था। समिति ने इस प्रस्ताव पर

बहुत गम्भीरता से सोचा, इसी प्रस्ताव के सम्बन्ध में ५ अगस्त को पं० नेहरू ने एक वक्तव्य दिया।

"मैंने सरकारी विज्ञप्ति में कार्यसमिति की कार्यवाही देखी, मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि भारत सरकार कैसे निन्दनीय और अविश्वसनीय साधनों का उपयोग करने पर उतर आई है। साधारणतः इस तरह की चीजों का कोई उत्तर नहीं देना चाहिए, लेकिन कहीं गलत फहमी न हो जाय इससे इसे स्पष्ट कर देना चाहता हूँ।

काँग्रेस कार्यसमिति की कार्यवाही ब्यौरेवार लिखी नहीं जाती, केवल अन्तिम निर्णय लिखे जाते हैं। इस अवसर पर सहायक मन्त्री ने अनधिकृत रूप से संक्षिप्त विवरण भी लिख लिया था, यह विवरण अत्यन्त अस्पष्ट था। यह कार्यवाही कई दिन तक चलती रही, जिसमें मैं कई घण्टे बोला, लेकिन वह सब, केवल दो चार वाक्यों में लिखा गया, जिनका मनमाना अर्थ किया जा सकता था। हममें से किसी ने उन्हें नहीं देखा था, वह प्रायः असन्तोषप्रद, अपूर्ण और गलत था।

हमारे बीच गान्धी जी नहीं थे, हमें प्रश्न पर पूर्ण रूप से विचार करना था, और प्रत्येक शब्द और वाक्यों को भली प्रकार तौलना था। यदि गान्धी जी उपस्थित होते तो यह सब वाद विवाद न होता।

मैंने कहा था कि अगर अँग्रेजों की सशस्त्र सेनाएं भारत से चली गईं तो जापान निर्बाध रूप से भारत में बढ़ा चला आयगा। यह कठिनाई उस समय सुलझ गई जब गाँधी जी ने यह बताया कि आक्रमण को रोकने के लिए सशस्त्र सेनाएँ रह सकती हैं। गाँधी जी का यह विश्वास था कि जब तक अँग्रेज भारत और अन्य उपनिवेशों के सम्बन्ध में अपनी नीति नहीं बदलते तब तक

वह नाश की ओर बढ़ रहे हैं। हाँ यदि उन्होंने अपनी नीति को ठीक-ठीक बदल दिया, और जनता की स्वतंत्रता के लिए युद्ध लड़ा गया, तो निश्चय संयुक्तराष्ट्रों की विजय होगी। शिमला में जापान के सम्बन्ध की नीति भी गलत तरीके से उद्धृत थी। गाँधी जी अपने शत्रु के पास सदैव युद्ध की सूचना भेजते हैं। उन्होंने जापान को ही भारत से लौटने को न कहा होता, बल्कि चीन को भी खाली करने के लिए कहते। वह कभी भी भारतीयों को आक्रमणकारी के सामने झुकने के लिए नहीं कहते।

यह कहना पूर्णतया असत्य है कि हमने जापानियों के साथ कोई समझौता कर लिया था, हमारी नीति हर मुमकिन तरीके से आक्रमणकारियों का मुकाबिला करने की थी।

गान्धी जी ने इस सम्बन्ध में कहा—"सरकार का इस प्रकार काँग्रेस कागजों को उठा ले जाना बहुत अनुचित था। काँग्रेस गैरकानूनी संस्था नहीं है। इसके प्रतिनिधियों ने सफलता पूर्वक शासन किया है, ऐसी संस्था के साथ सरकार को उपयुक्त व्यवहार करना चाहिये था। सरकार का काम तब तो और भी निन्दनीय हो जाता है, जबकि उठाए हुए कागजों का इस प्रकार दुरुपयोग किया। उन्हें कागजात को काँग्रेस से प्रमाणित करा लेना था। कागजों में कोई भी बात अनुचित न थी। इस विषय पर पत्रकारों का क्या मत रहा यह मुझे मालूम नहीं।

इसी विषय पर पत्रकारों से गान्धी जी की इस प्रकार बातचीत हुई.—

प्रश्न—क्या आपका विचार कि जापान और जर्मनी लड़ाई जीतेंगे, निश्चय किया हुआ मत है?

उत्तर—इस विषय पर पं० जवाहर लाल नेहरू का जो वक्तव्य मुझे आपने दिखलाया है, उसके बाद मुझे इस प्रश्न का उत्तर देने की आवश्यकता ही नहीं रह जाती। मैंने जो मसविदा सेवाग्राम से इलाहाबाद भेजा था, उसमें जानबूझ कर कांग्रेस की वैदेशिक नीति का उल्लेख नहीं था। क्योंकि मैंने स्पष्ट कह दिया था, कि मैं अपनी प्रेरणा और ज्ञान, विदेश सम्बन्धी बातों में, पं० जवाहर लाल जी से लेता हूँ, इसलिए यह भाग पण्डित जी पूरा करेंगे।

लेकिन मैंने यह कभी नहीं कहा कि मित्रराष्ट्र युद्ध में विजय प्राप्त नहीं कर सकते। यदि अंग्रेजों ने साम्राज्यवाद को छोड़ दिया तो मैं उनकी विजय में कोई सन्देह नहीं देखता। मैं फिर दोहराता हूँ कि यदि मेरी इच्छा के विरुद्ध अंग्रेज और मित्रराष्ट्र हार ही जाए, तो इसका कारण उनकी साम्राज्य लिप्सा ही होगी। संसार की पद दलित जातियाँ फैसिज्म और साम्राज्यवाद में कोई अन्तर नहीं करतीं। वास्तव में इनका अन्तर केवल नाम में किया जाता है, न कि गुण में। इसलिए मैं बड़े आग्रह पूर्वक कहता हूँ कि ब्रिटेन को साम्राज्यवाद का धब्बा धो देना चाहिए, अमेरिका भी अंग्रेजों पर यही जोर दे। फिर अंग्रेजों की विजय का विश्वास किया जा सकता है, फिर कम से कम करोड़ो मूक प्राणियों की सद् इच्छाएं उनके साथ होंगी और मित्रराष्ट्रों को धन जन के अलावा हार्दिक सहयोग मिलेगा, मेरी दृष्टि में इस सब का बहुत अधिक मूल्य है।

प्रश्न—पं० जवाहर लाल के कथनानुसार अंग्रेजों के चले जाने के बाद आपकी जापानियों से समझौता करने की योजना है, जिसमें आप उनको नागरिक नियंत्रण, सैनिक मोर्चे और अड्डे तक देने को तय्यार हैं?

उत्तर—गाँधी जी ने खेद प्रकट करते हुए कहा कि आपने हरिजन में मेरे लेखों का अध्ययन नहीं किया, अन्यथा मेरे सम्बन्ध में आप ऐसे विचार प्रकट न करते। मैंने जानबूझ कर जापान से समझौते की बात कही थी, और बाद में अपने साथियों के आग्रह पर उसे मसविदे से निकाल दिया था, परन्तु उस विषय में मेरे विचार अनिश्चित नहीं थे। मेरा तो यह सिद्धान्त है कि विरोधी को भी सद्कार्य करने का अवसर अवश्य देना चाहिए। यदि भारत स्वतंत्र हो जाय और मैं जीवित रहूँ तो मैं तत्कालीन सरकार से अनुरोध करूंगा कि वह मुझे जापान भेज दे। और मेरी जापान से सबसे पहली माँग यह होगी कि वह चीन को स्वतंत्र करे। यदि उसने ऐसा न किया तो उनको करोड़ों ऐसे मनुष्यों का घोर प्रतिरोध सहन करना पड़ेगा जिन्होंने अपनी स्वतंत्रता प्राप्त कर ली है।

मेरी यह विनम्र चेतावनी सैनिक बल पर नहीं होगी, इसके पीछे अहिंसात्मक असहयोग की नैतिक शक्ति होगी। मेरी यह अपील निराशा पूर्ण नहीं होगी, यही सब भाव मेरे उस वाक्य में निहित था कि इसके लिए यदि मुझे दोषी ठहराया जाय तो मैं भारत की स्वतंत्रता पाने का भी दोषी हूँ।

इसी सम्बन्ध में गाँधी जी ने सन् बयालीस में लिखा था—भारत में मित्रराष्ट्रों की सेनाओं के रहने से, जनता के मस्तिस्क में वास्तविक भय है। अंग्रेज़ों के यहाँ से चले जाने के बाद भारत की जनता और धनिक समुदाय मित्रराष्ट्रों के युद्ध की सराहना नहीं कर सकता। लेकिन यदि इसकी आवश्यकता सिद्ध हो गई, तो जनता इसमें सहयोग भी देगी। सम्भव है मेरे लेख में कुछ कमी रह गई हो, लेकिन मैं इसका दोषी नहीं ठहराया जा सकता, कि मैं मित्रराष्ट्रों से कोई ऐसी बात करा रहा था

कि जिससे उनकी हार हो जाती। यदि मेरा प्रस्ताव मान लिय जाता तो वह अफ्रीका को भी स्वतंत्र कराता और अंग्रेजों के लिए कोई युद्ध का कारण भी न रह जाता। अंग्रेजों की ओर से, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, प्रजातंत्रवाद और न्याय की जो बराबर दुहाई दी जाती है, भारत उन कथनों की परीक्षा करना चाहता है।

क्या देशी राज्य प्रजातंत्र हैं? अंग्रेज न्याय के नाम पर तब तक विजय नहीं पा सकते, जब तक वे एशिया और अफ्रीका के अपने आधीन देशों को स्वतँत्र नहीं कर देते। मेरी बात से अँग्रेजों को अपनी आर्थिक नीति में कितना परिवर्तन करना पड़ेगा, यह मैं नहीं कह सकता लेकिन यह निश्चय है कि इस युद्ध के लिए उन्हें यह परिवर्तन करना ही पड़ेगा। यदि अँग्रेजों ने मेरी बात मान ली तो कौन कह सकता है कि इसके परिणाम स्वरूप, धुरी राष्ट्रों की मनोवृति बदल नहीं जायगी जिससे कि युद्ध की समाप्ति हो जाय। मैं जब भारत से अंग्रेजों की सेना हटाने की बात कहता था, तो उसका आधार मेरा अहिंसा में विश्वास था। परन्तु मैं यह दावा नहीं कर सकता कि सारा भारत अहिंसा में विश्वास करता है, इसीलिए मैं अब भारत से अंग्रेजों की सेना हटाने की बात को कहना उचित नहीं समझता। अबतो इतना पर्तात है कि भारत का जापान से कोई झगड़ा नहीं; इसलिए उसे अपनी रक्षा के लिए सेनाओं की आवश्यकता नहीं है। परन्तु भारत अपने किसी भी कार्य से चीन और मित्रराष्ट्रों की हानि नहीं चाहता, इसीलिए जब तक भारत का अहिंसा में पूर्ण विश्वास नहीं है, तब तक भारत अपनी रक्षा के लिए लड़ाई में मित्रराष्ट्रों की सेना को भारत से हटाने का आग्रह नहीं कर सकता। इसी सम्बन्ध में गाँधी जी ने हरिजन में पहले भी इस प्रकार

लिखा था :—

"कि यदि मैं भारत से अँग्रेजों का जुआ उतार फेंकने के लिए व्याकुल हूँ तो इसका कारण भारत की उदासी, और अंग्रेजों की हार पर हरेक भारतीय की प्रसन्नता है। जिससे भारत पर जापानियों के विजय चिन्ह दिखाई देते हैं। स्वतंत्र भारत कभी भी जापानियों को भारत में नहीं घुसने देना चाहेगा। भारत की उदासीनता और असन्तोष, भारत की रक्षा के लिए, अंग्रेजों के हार्दिक सहयोग में परिणत हो जायगा।।

इस सम्बन्ध में काँग्रेस का मत उसके विभिन्न प्रस्तावों में भली प्रकार प्रकट किया गया है। वह सब के सब, निश्चित विचार और भावनाओं को प्रकट करते हैं। २७ अप्रेल सन् ४२ के राजेन्द्र बाबू के प्रस्ताव में कहा गया था "यदि जापान भारत पर हमला करे तो भारतीयों को जापानियों के साथ पूर्णतया असहयोग करना चाहिए। आगे चलकर असहयोग को इस प्रकार समझाया:—

१—हम आक्रमक के सामने न झुकें, और उसकी आज्ञाओं का पालन न करें २—हम उससे किसी प्रकार की रियायत न चाहें और न रिश्वत के लालच में फंसें। ३—हम अपने खेतों का प्राण रहते कब्जा न दें। ४—यदि आक्रमक रोग से पीड़ित, प्यास से व्याकुल होकर हमारी सहायता चाहे, तो हमें मना नहीं करना चाहिए ५—जहाँ पर जापानी और अंग्रेज लड़ते हों वहां हमारा असहयोग निरर्थक होगा, तब असहयोग का अर्थ होगा, शत्रु की सहायता। उस समय अंग्रेजों के मार्ग में बाधा न डालना ही, हमारा असहयोग होगा। अंग्रेज हमारी सहायता चाहते भी नहीं हैं, वह तो दास भारतीयों की सहायता चाहते हैं, जो परिस्थिति हमें स्वीकार नहीं।

इसी प्रकार के भाव अखिल भारतीय कॉंग्रेस कमेटी के १ मई सन् ४२ तथा ८ अगस्त सन् ४२ और कॉंग्रेस कार्य समिति के १४ जुलाई सन् ४२ के अधिवेशनों में रक्खे गए थे।

कॉंग्रेस प्रस्तावों के लक्ष्य और मन्तव्य स्पष्ट हैं, इनके अर्थों में किसी प्रकार का संशय नहीं है। संक्षेप में उसका एक ही भाव है "भारत की वास्तविक रक्षा के लिए भारत की स्वतंत्रता अनिवार्य है। इसी कारण यह प्रस्ताव किया गया था कि भारतीय स्वतंत्रता के अधिकार की पुष्टि के लिए सार्वजनिक संग्राम अहिंसात्मक उपायों द्वारा आरम्भ कर दिया जाय।

जहाँ तक गाँधी जी का सम्बन्ध है, वे सरकार से युद्ध न करने के लिए बहुत इच्छुक थे, इसीलिए उन्होंने वायसराय से मिलने की इच्छा प्रकट की, और संसार के नेताओं को पत्र लिखे। अहिंसा में उनका पूर्ण विश्वास रहा है, और वे जब तक जेल में न ठूँस दिए गए तब तक इसी बात पर दृढ़ प्रतिज्ञ रहे। जेल में भी वे निश्चेष्ट न रहे, बल्कि वायसराय से पत्र व्यवहार किया जो कि परिशिष्ट में उद्धृत है। जब उनको वायसराय से कोई सन्तोष-प्रद उत्तर न मिला, तो एक सच्चे सत्याग्रही के नाते उन्होंने तपस्या के लिए इक्कीस दिन का उपवास किया।

अब यह पूर्णतया सिद्ध है कि उन सब घटनाओं के लिए जो ९ अगस्त सन् ४२ को कॉंग्रेस नेताओं की गिरफ्तारी के बाद घटित हुई, कॉंग्रेस या गाँधी जी का कोई उत्तरदायित्व नहीं।

गाँधी जी के नेतृत्व में कॉंग्रेस का ऐसा लक्ष्य नहीं था कि ब्रिटेन के भय को अपना अवसर बनाती। गाँधी जी का सारा जीवनवृत्त इस बात का

साक्षी है कि उनके तथा काँग्रेस जनों के विरुद्ध लगाए गए सारे आरोप निराधार हैं। वह लड़ाई के आरम्भ से ही किसी प्रकार के सरकारी युद्ध प्रयत्नों में बाधा डालने के विरुद्ध थे, वह उदासीनता की नीति का पालन करना चाहते थे, और सरकार की युद्ध योजना को स्वतंत्र छोड़ देने के पक्ष में थे। इस सब के बावजूद वे जापान की विजयों के कारण आन्दोलन के लिए विवश हो गए। विशेषतः अँग्रेजों ने बर्मा के साथ जो व्यवहार किया, वह गान्धी और काँग्रेस का ब्रिटिश शक्ति में अविश्वास पैदा कर देने के लिये पर्याप्त था। ऐसी परिस्थिति में गाँधी जी के पास काँग्रेस और देश को ब्रिटिश राज्य से स्वतंत्र होने के लिए आदेश देने के अतिरिक्त कोई मार्ग अवशिष्ट नहीं रहा। इसका स्पष्ट अभिप्राय जापानियों के हमले और अंग्रेजों की हारती हुई सेनाओं के बीच भारत को विनाश से बचाने तथा निशस्त्र और दुर्बल भारतीयों को मृत्यु और विनाश का मुकाबिला करने के लिए तय्यार करना था। विदेश आक्रमकों द्वारा भारत का पद-दलन, गान्धी जी और काँग्रेस एक असहाय द्रष्टा के रूप में नहीं देख सकते थे। इसलिए बम्बई में काँग्रेस ने जो निर्णय किया वही एक मात्र सीधा और सच्चा मार्ग था।

काँग्रेस का अगस्त-प्रस्ताव हिन्सा अहिन्सा के प्रश्न पर बहुत स्पष्ट है। उसमें साफ तौर से कहा गया है "कि जो स्थाई सरकार बनेगी, हमले के विरुद्ध भारत की रक्षा करना उसका प्रथम कर्तव्य होगा। इस कार्य में शस्त्र बल, अहिन्सा शक्ति और मित्रराष्ट्रों के सहयोग का पूरा उपयोग किया जायगा।" यह काँग्रेस की अधिकृत नीति थी इसमें मत भेद नहीं था।

गान्धी जी ने अपने इलाहाबाद के मसविदे में स्पष्ट लिखा था कि "जहाँ पर जापानी और अँग्रेजी फौजें लड़ती होंगी, वहाँ हमारा असहयोग

निरर्थक और अनावश्यक होगा। इसलिये अँग्रेजों की सेनाओं के मार्ग में बाधा न डालना ही जापानियों के प्रति असहयोग प्रदर्शन होगा।"

बम्बई का प्रस्ताव भारत की रक्षा के लिए एक सद्प्रयत्न था, यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है। और इसी अभिप्राय से उसमें भारतीय स्वतंत्रता के लिए खासा उद्बोधन मिलता है। वास्तव में यह सब काँग्रेस या गान्धी जी का ब्रिटिश सरकार की पीठ में छुरा भोंकने का प्रयत्न न था।

काँग्रेस के विरुद्ध इस प्रकार के बेबुनियाद आरोप लगाकर भारत में अँग्रेजी सरकार द्वारा किए गए घोर अत्याचारों की झूँठी सफाई पेश करना है। अंग्रेज इसी सिद्धान्त में विश्वास रखते हैं कि दूसरे पर पहिले हमला कर देने में सब से सुन्दर सफाई है। परन्तु इस सब से सरकार अपने उन काले कारनामों और अमानुषिक अत्याचारों पर जो कि उसने असहाय और निर्दोष भारतीयों पर ढाए, के उत्तरदायित्व से बरी नहीं हो सकती, अगले अध्यायों में इसे पूर्णतया सिद्ध करेंगे।

——:·:·:·:·:——
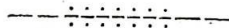
तृतीय अध्याय
आन्दोलन की रूपरेखा

——(०)——

पहले अध्यायों में भारत छोड़ो प्रस्ताव का लक्ष्य बताया जा चुका है कि गाँधी जी का यह महान आन्दोलन अहिन्सात्मक होने वाला था। अहिन्सात्मक युद्ध के साधन और उपाय भिन्न होते हैं, जिन्हें हिन्शात्मक लड़ाई लड़ने वाले सरलता से नहीं समझ सकते। इस विषय में यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि गान्धी जी अंग्रेजों के स्थान पर जापानियों का राज्य नहीं चाहते थे। गान्धी जी ने हरिजन में लिखा था कि "मैं अहिन्सात्मक उपायों को, जापानियों के विरुद्ध सफल रहने का दावा नहीं करता। भारत से अंग्रेजी सैनाएँ चले जाने का परिणाम यह भी हो सकता है कि जापानियों का भारत पर कब्जा होकर चीन का पतन हो जाय। इसलिए मैं अनुभव करता हूं कि यदि मेरे प्रस्ताव को स्वीकृति के बाद भारत से अंग्रेज चले भी जाँय तो भी अंग्रेजी सैनाएँ जापानियों को रोकने के लिए भारत में रह सकती हैं।" गान्धी जी ने फिर ६ अगस्त सन् ४२ को एक पत्र प्रतिनिधि से भेंट करते हुए कहा:—"अहिन्सात्मक लड़ाई में सदा इसी बात पर जोर दिया जाता है कि यथासम्भव शान्ति स्थापित की जाय, और युद्ध 'अनिवार्य' होने पर ही लड़ा जाय। गांधी जी ने स्पष्ट कहा कि कांग्रेस के प्रस्ताव पास कर देने के बाद लड़ाई छेड़ने में समय

लगेगा, यह निश्चित है कि एक पत्र वायसराय को लिखा जायगा जो युद्ध की चुनौती नहीं बल्कि शान्ति का निमन्त्रण होगा। लोग मानें या न मानें, अहिन्सात्मक युद्ध में ईश्वर ही मेरा पथ-प्रदर्शक होता है। मैं जनरल वैविल की तरह अपने युद्ध की रूपरेखा पहले से निश्चित नहीं रखता। मैं अपनी घोषित नीति के अनुसार प्रत्येक उपाय का प्रयोग करूँगा, मेरी सार्वजनिक लड़ाई शत्रुता की भावना पर अवलम्बित नहीं। मैं हर प्रकार से सावधान रहूँगा, यदि आम हड़ताल आवश्यक हुई तो मैं उसे करते हुए हिचकूँगा नहीं।"

गान्धी जी ने जहाँ संघर्ष को बचाने के लिए इतनी उत्सुकता दिखाई वहाँ सरकारी दमन नीति की आलोचना करते हुऐ १२ अगस्त के वायसराय को लिखे पत्र में अपने आन्दोलन की रूपरेखा इस प्रकार बतलाई थी :—"भारत सरकार ने जो परिस्थिति पैदा करदी, वह उनकी बड़ी भारी भूल थी। मेरे सार्वजनिक आन्दोलन आरम्भ करने तक सरकार को प्रतीक्षा करनी चाहिए थी। मैंने स्पष्ट घोषणा कर दी थी कि मैं आन्दोलन से पूर्व आपको एक पत्र लिखूँगा, उस पत्र में मैं यह अपील करने वाला था कि आप काँग्रेस के मामले की निष्पक्ष रूप से परीक्षा करें। यदि आपने मुझे अवसर दिया होता तो मैं हर कठिनाई को सुलझाने का प्रयत्न करता। काँग्रेस ने किसी भी कदम पर हिन्सा करने की बात नहीं सोची थी, अहिन्सा की परिभाषा समझने में बड़ी भूल की गई है, उसका ऐसा अर्थ लगाया गया है कि काँग्रेस कोई हिन्सात्मक योजना बना रही थी। काँग्रेस की कोई भी बात छिपी हुई नहीं थी। काँग्रेस-आन्दोलन का एक ही अभिप्राय था कि वह जनता को इस हद तक बलिदान के लिए आवाहन करे जिससे वह दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करले। काँग्रेस सिद्ध करना चाहती थी कि उसके साथ कितना सार्वजनिक सहयोग है क्या इस

प्रकार के अहिंसात्मक आन्दोलन का दमन करना बुद्धिमानी थी ? काँग्रेस केवल मित्रभाव से ही आगे बढ़ रही थी। काँग्रेस साम्राज्यवाद का नाश करना चाहती थी, केवल भारत के लिए नहीं अपितु अंग्रेजों और सारे मानव समाज के लिए। काँग्रेस की माँग का सरकार ने जो दमन पूर्ण उत्तर दिया उसका एक ही अर्थ निकलता है कि अंग्रेजी सरकार मित्रराष्ट्रों के हित की रक्षा नहीं चाहती थी।" वह तो अपना साम्राज्यवाद बनाए रहने के लिए भारत पर अपना कब्जा बनाए रहना चाहती थी।

काँग्रेस और गान्धी जी की नीति स्पष्ट रूप से बताई जा चुकी है, वह भारत रक्षा और मानव हित के लिये अहिंसात्मक रूप से भारत की स्वतंत्रता चाहते थे। उनको किसी भी विदेशी राजसत्ता या सैनिक बल की आकांक्षा न थी।

इस विषय पर बड़े सुन्दर और संरक्षित शब्दों में श्री जैम्स मेक्सटन ने १२ सितम्बर सन् ४२ के मान्चेस्टर गार्जियन में लिखा था, "मैं कभी भी विश्वास नहीं कर सकता कि किसी भारतीय राजनीतिज्ञ या काग्रेस के सहायक ने, एक भी पुलिस के सिपाही की जान ली हो। प्रधान मंत्री और भारत मंत्री भारत को सुशासन देना नहीं चाहते थे, इसके लिये यह सब अँग्रेजों की राजनीतिक चाल थी।"

गान्धी जी आदि नेताओं की गिरफ्तारी के पूर्व कोई गुप्त सभा नहीं हुई थी; और न ही काँग्रेस की अधिकृत नीति के अनुसार कोई गुप्त चिट्ठियाँ आदि ही भेजी गईं। हर एक चीज खुली हुई थी। कोई निश्चित कार्यक्रम न था, और नकोई सूचनाएँ कार्यकर्ताओं तथा जनता को दी गईं थीं। प्रत्येक आदमी अपना भावी कर्त्तव्य निश्चित करने के लिये गान्धी जी को

ओर देख रहा था। पं० जवाहरलाल जैसे नेता कोई कार्यक्रम नहीं दे सके थे कोई कार्यक्रम देने से पूर्व ही नेता और कार्यकर्ताओं को जनता के बीच से गिरफ्तार कर लिया गया। इसके बाद देश में जो कुछ भी हुआ वह सब सरकार की घोर दमन नीति की प्रक्रिया थी। हम सब के लिये सरकार ने पहले ही से योजना रची थी। काँग्रेस का दमन करने की सरकारी योजना पर प्रकाश डालने से पूर्व भारत छोड़ो प्रस्ताव के मन्तव्य को स्पष्ट कर देना आवश्यक होगा।

अँग्रेजों की हार और बर्म्मा के साथ दुर्व्यवहार में गान्धी जी के मस्तिष्क में "भारत छोड़ो" आन्दोलन का जन्म हुआ। गान्धी जी के कार्य में दो भावनाएँ प्रमुख रूप से निहित थीं। पहली भावना भारत को जापानी हमले से सुरक्षित रखने की, और दूसरी भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति थी। जिसके बिना भारतीयों को युद्ध में वास्तविक रूप से प्रेरित नहीं किया जा सकता था, लोग अपनी दासता की रक्षा के लिये नहीं लड़ सकते थे। वास्तव में कांग्रेस और गान्धी जी का प्रमुख उद्देश्य भारत को उस भयङ्कर स्थिति से बचाना था जो बर्म्मा, मलाया, हिन्द चीन, डच इण्डीज और ईरान में बीती थीं। इस सब का लक्ष्य भी केवल भारत हित ही न था बल्कि संसार के स्वतंत्र-मोर्चे की रक्षा थी। भारत की पराधीनता साम्राज्यवाद का वह चिन्ह था जो जापानी हमले को शक्ति और पुष्टि दे रहा था। स्वतंत्र भारत पर हमला करने का कोई भी साहस नहीं कर सकता था। इसलिये स्वतन्त्र भारत अँग्रेजों के ऊपर ऐसा भार नहीं हो सकता था जिसकी उन्हें रक्षा करनी पड़ती। बल्कि वह एक निश्चित शक्ति होती जो कि मित्रराष्ट्रों की सहायता करती, और बर्म्मा, मलाया, हिन्द चीन आदि देशों

को स्वतंत्र कराने में सहायक होती । इन भावनाओं से प्रेरित होकर गाँधी जी ने काँग्रेस के सामने भारत छोड़ो प्रस्ताव रक्खा। उन्होंने एक महान अहिंसात्मक आन्दोलन का विचार किया था जिसमें वह जनता से उच्चतम त्याग की आशा करते थे।

गाँधी जी की ये सद्भावनाएँ भारत सरकार ने क्यों न ठीक - ठीक समझीं, और आन्दोलन के वास्तविक प्रारम्भ तक प्रतीक्षा क्यों नहीं की ? इन प्रश्नों का उत्तर देना बहुत कठिन नहीं—स्पष्ट ही है कि साम्राज्यवाद स्वेच्छा से हटा नहीं करता, बल्कि नष्ट किया जाता है। चर्चिल ने ठीक ही कहा था कि:—मैं प्रधान मंत्री इसलिए नहीं बना हूँ कि अँग्रेजी साम्राज्य का अन्त मेरे प्रधानत्व में हो "

चौथा भाग

सन् बयालीस का अगस्त आन्दोलन

दूसरा अध्याय

———

बम्बई की गिरफ्तारियाँ और उसके बाद

नौ अगस्त सन् बयालीस की प्रातः, भारत आश्चर्य और विस्मय में जागृत हुआ। अँग्रेजी के प्रसिद्ध कवि वर्ड्सवर्थ ने जो कुछ फ्राँस की राज्य क्रान्ति के सम्बन्ध में कहा था, वह इस समय सर्वथा उपयुक्त है:——

"युवकों में थी स्वर्ग-कल्पना, जीवन में आनन्द भरा"

आठ अगस्त को बम्बई में अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी ने गान्धी जी का भारत छोड़ो प्रस्ताव स्वीकार किया। रात के दस बजे मौलाना आजाद द्वारा कहे हुए इन शब्दों के साथ अधिवेशन समाप्त हुआ "भारतीयों को इस समय निश्चय ही क़दम उठाना है, बिना यह चिन्ता किए हुए कि भविष्य में क्या होगा? चाहे जीतें चाहें हारें"।

जो मन्त्रिमण्डल सात सूबों का शासन संचालित कर रहा था, उसे जेल के सीखचों में बन्द कर दिया गया। पुलिस बड़ी सरगर्मी के साथ ९ अगस्त के प्रातः से ही काँग्रेस जनों को उनके घरों से ले जाकर जेलों में बन्द करने लगी। वास्तव में पुलिस का यह काम चोरों और

सरकार की यह आशा व्यर्थ रही। मौजूदा चुनौती का केवल एक ही उत्तर हो सकता है।"

और वह उत्तर निर्दोष, अहिन्सक और निरस्त्र भारतीय जनता पर दमन-दलन तथा पाशविकता पूर्ण व्यवहार करके दिया गया। सत्ताईस अप्रैल से पहली मई सन् १९४२ तक इलाहाबाद में जो अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी का अधिवेशन हुआ था, उस समय से सरकार ने जो प्रतीक्षा की, काँग्रेस को समय देने के लिये नहीं, परन्तु अपनी दमन योजना की तय्यारी के लिये। अगस्त प्रस्ताव पास होते ही उनको अपनी दमन-योजना आरम्भ करने का बहाना मिल गया।

काँग्रेस आन्दोलन चलाने की कोई भी तय्यारी नहीं कर रही थी, काँग्रेस के किसी कार्यकर्त्ता को भी ऐसी योजना का पता नहीं था, जिससे आन्दोलन संचालित किया जाता, वास्तविक योजना तो गान्धी जी के अन्तर में निहित थी। गान्धी जी को उनकी योजनाएँ सदा आन्तरिक प्रेरणा से प्राप्त होती हैं, और वह कभी भी तर्क और गणित से व्याख्या करके योजना नहीं बनाते। आन्तरिक प्रेरणा ही उनकी प्रणेता, मित्र और पथ-प्रदर्शक है। इसलिये गान्धी जी के नेतृत्व में काग्रेस पर पहले से और वह भी भयङ्कर तैयारी करने का आरोप मिथ्या ही नहीं अपितु सरासर शैतानियत है। सत्य तो यह है कि गान्धी जी के निकटस्थ मित्र भी कोई योजना या कार्यक्रम नहीं जानते थे। हरेक व्यक्ति कार्यक्रम और उसकी व्याख्या के लिये उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहा था जो किसी को भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अन्तिम समय तक ज्ञात नहीं हुई।

नेताओं ने जनता को केवल महान त्याग के लिए ही प्रोत्साहित

किया था, इस कारण गान्धी जी तथा अन्य नेताओं की गिरफ्तारी ने फिर देश को एक भयङ्कर आश्चर्य के सागर में डुबा दिया, इसके विपरीत सरकार ने बड़ी चतुराई से तय्यारियाँ की थीं। देश के इस कोने से उस कोने तक काँग्रेस के सब नेता और कार्य्यकर्ता ९ अगस्त के प्रभात में ही गिरफ्तार कर लिए गए, वास्तव में सरकार पूरी शक्ति और क्षोभ के साथ निरीह जनता पर टूट पड़ी, गिरफ्तारी के वारण्ट ९ अगस्त से पहले निकल चुके थे, तीन लिस्टों में सब कार्यकर्ताओं की नामावली पहले से तय्यार थी। भारत व्यापी पुलिस को स्वेच्छाचारिता का पूर्ण अधिकार दिया गया था, वह जिसे चाहे गिरफ्तार करे और नजरबन्द कर दे। काँग्रेस-प्रस्ताव का उत्तर देशव्यापी नेताओं की गिरफ्तारी के रूप में दिया गया। सरकार इस प्रकार बहक कर उत्तेजित हो जायगी, इसकी गान्धी जी को भी आशा न थी। गान्धी जी मुस्कुराते हुए पुलिस गाड़ी पर चढ़ गए, और इसी प्रकार समस्त नेता जेल में ठूँस दिए गए।

देश की सारी जनता ने स्तम्भित और आतङ्कित होकर नेताओं की गिरफ्तारी का समाचार सुना, उनके पास कोई कार्य्यक्रम न था: उन्होंने केवल समवेदना प्रकटार्थ आम हड़ताल की, शान्त जलूस निकाले, और सार्वजनिक सभाओं की घोषणा की। लेकिन सरकार की तो कुछ और ही योजना थी, उसने अपने अन्याय का राज्य प्रारम्भ कर साधारण नागरिक अधिकारों को भी कुचल दिया। समाचार पत्रों पर ताले डाल दिए गए, सभाबन्दी वरन् सभा मञ्च भी छीन लिए गए। जलूसों पर पाबन्दी लगा दी गई, काँग्रेस को गैर कानूनी घोषित कर दिया गया, काँग्रेस-दफ्तरों पर छापा मार कर कब्जा कर लिया गया, जायदादें जब्त की गईं, काँग्रेस से

सम्बन्धित संस्थाएँ भी जब्त करली गईं। अहिन्सा को परीक्षा की कठिन कसौटी पर चढ़ा दिया गया। नेताओं की गिरफ्तारी के बाद पुलिस ने फौजी ताक़त के सहयोग से जनता को कुचलना प्रारम्भ कर दिया, मानव-जीवन का कुछ मूल्य न रहा। पुलिस की गुण्डागर्दी और अत्याचारों का खुल कर नङ्गा नाच होने लगा, जिसका संचालन अंग्रेज नौकर शाही कर रही थी।

जनता असंगठित, अनियन्त्रित और बिना नेतृत्व के थी, वास्तव में वह एक लक्ष्यहीन निर्दोष जन समूह था, जो अपने प्रिय नेताओं की गिरफ्तारी के बाद जगह-जगह एकत्रित होने लगा था, उनकी मनोवृत्ति वास्तव में उनके स्वभावानुकूल थी, वह असंगठित भीड़ थी, असीम उत्तेजित, क्षोभ पूर्ण, अनिश्चत, अस्थिर और अव्यवस्थित। जनता भावावेश में तर्क और न्याय को भूल चुकी थी, वह आत्म-विश्वास और अन्तश्चेतना को खोकर किसी भी नेतृत्व को स्वीकार करने के लिए उद्यत थी। इन जन समूहों ने आरम्भ में तो खूब आत्म संयम और अहिन्सा का परिचय दिया, जो गान्धी जी के अद्वितीय प्रभाव का परिणाम था, लेकिन बाद में उत्तेजित होकर जनता ने जो कुछ भी किया वह भयङ्कर राक्षस के पंजे में फंसे, जीवन और मरण के संगम पर खड़े हुए मनुष्य की सुई या नाखून चुभोने जैसी चेष्टा थी। परन्तु इससे सरकार को जनता पर अन्धाधुन्ध गोली चलाने का अवसर मिल ही गया। इस प्रकार सरकार की संगठित हिन्सा-योजना अशक्त जनता पर इस परिमाण में गाज बनकर गिरी, जिसका उदाहरण विश्व-इतिहास के पन्नों में मिलना कठिन है। इस सम्बन्ध में सरकार का यह दावा कि जो हम कर रहे हैं वह रक्षात्मक है, बिल्कुल झूँठा है। यहाँ तक पता

चला है कि सरकार ने जिलाधीशों के पास दो-दो लिफाफों में बन्द करके गुप्त हुक्म नामे भेजे, ":—कि जो कोई भी काँग्रेस कार्य में लगे हुए व्यक्ति के सर या शव को लाएगा उसको प्रति अदद अस्सी रुपया पुरस्कार दिया जायगा। इस प्रकार के आज्ञा पत्रों के कारण भारतीय जन, सड़कों पर कुत्तों से भी बदतर तरीकों पर मारे गए। सरकार ने इक्के दुक्के अत्याचार नहीं किए बल्कि उनका नियमित रूप से ताँता बाँध दिया। इन सब बातों से सरकार ने सिद्ध कर दिया कि उसने पहले से ही योजना बनाली थी कि वह भारतीय जनता पर इस प्रकार टूट पड़े जैसे चील और गृद्ध, शव पर।

इस शिकार की भयङ्कर कहानी इतनी करुणा जनक और वेदना-पूर्ण है कि पाठक अपने हृदयों को दोनों हाथों से पकड़ कर भी थाम न सकेंगे। जब बेचारे भारतीयों की इस दयनीय दशा का चित्र उनके सामने आवेगा, तब उनके नेत्रों से केवल अश्रुधारा ही न बह निकलेगी. वास्तव में वह रुधिर-धारा होगी, यदि उनके रक्त में तनिक भी गरमी अवशेष है।

दूसरा अध्याय

——

बम्बई की गिरफ्तारियाँ और उसके बाद

नौ अगस्त सन् बयालीस की प्रातः, भारत आश्चर्य और विस्मय में जागृत हुआ। अँग्रेजी के प्रसिद्ध कवि वर्ड्सवर्थ ने जो कुछ फ्राँस की राज्य क्रान्ति के सम्बन्ध में कहा था, वह इस समय सर्वथा उपयुक्त है :——

"युवकों में थी स्वर्ग-कल्पना, जीवन में आनन्द भरा"

आठ अगस्त को बम्बई में अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी ने गान्धी जी का भारत छोड़ो प्रस्ताव स्वीकार किया। रात के दस बजे मौलाना आजाद द्वारा कहे हुए इन शब्दों के साथ अधिवेशन समाप्त हुआ "भारतीयों को इस समय निश्चय ही क़दम उठाना है, बिना यह चिन्ता किए हुए कि भविष्य में क्या होगा ? चाहे जीतें चाहें हारें"।

जो मन्त्रिमंडल सात सूबों का शासन संचालित कर रहा था, उसे जेल के सीखचों में बन्द कर दिया गया। पुलिस बड़ी सरगर्मी के साथ ९ अगस्त के प्रातः से ही काँग्रेस जनों को उनके घरों से ले जाकर जेलों में बन्द करने लगी। वास्तव में पुलिस का यह काम चोरों और

उचक्कों जैसा था। ब्रिटिश सरकार की छत्रछाया में पनपने वाली पुलिस से आशा भी यही थी। ब्रिटिश सरकार भारत में धोखे की अँधियारी में आई, और छल से व्यापार किया।

बहुत पहले से इस दुखान्त नाटक की तैयारियाँ की गई थीं, जिसमें निर्दोष और निरीह भारतीयों को रक्त स्नान कराया गया। सरकार की तैयारियाँ सब प्रकार से पूर्ण और अवसर की खोज में थीं। बार-बार हारी हुई सरकार भारत के सन्त गाँधी जी से जली बैठी थी, वह हर तरीके से बदला लेने को व्याकुल थी।

काँग्रेस के भावी आन्दोलन को रोकने के लिए सरकार ने पूर्ण शक्ति से छापामार आक्रमण किया, सरकार भारतीयों को इतना कुचल देना चाहती थी जिससे वे भविस्य में सर न उठा सकें। सरकार ने बहुत पहले से इस सम्बन्ध में गुप्त नीति तय्यार कर रक्खी थी। सरकार के एक पोषक का कहना है:—

"सरकार ने कांग्रेस विरोधी कदम उठाने में जल्दबाजी की और उसका कारण यह बतलाया कि सरकार को प्रान्तीय सरकारों से कांग्रेस द्वारा सरकारी युद्ध प्रयत्नों में बाधा डालने का समाचार मिला था।"

गाँधी जी व अन्य नेताओं की गिरफ्तारी के बाद देश भर के कांग्रेस कार्यकर्त्ता गिरफ्तार कर लिए गए, हजारों गिरफ्तारियों को सरकार ने कुछ सैकड़ा बतलाया, यह है सरकार की आँकड़े प्रकाशन की शैली। इस प्रचार-योजना से हिटलर का प्रचार मंत्री गोयबिल्स भी पीछे रह जाता है।

गिरफ्तारी का समाचार सारे देश में जंगली आग की भांति फैल गया, सब जगह गिरफ्तारियाँ हुई, अतः सर्वत्र उत्तेजना ही उत्तेजना दिखाई पड़ती थी। चारों ओर चर्चा चल रही थी। सारा देश हड़तालें, जलूसों और सार्वजनिक

प्रदर्शनों में लग गया। गाँधी जी सहित भारत के सब नेताओं का एक साथ गिरफ्तार होने का वज्राघात सदृश यह पहला मौका था।

सरकार ने भी माना है कि गिरफ्तारी के बाद जनता की पहली प्रतिक्रिया बहुत शान्त थी, ६ अगस्त को बम्बई, अहमदाबाद और पूना में ही थोड़ी गड़बड़ हुई, बाकी सारा देश शान्त रहा। १० अगस्त में देहली तथा संयुक्त प्रान्त के कुछ भागों में गड़बड़ हुई, ११ अगस्त से सारे देश में आग लग गई, इसके बाद हड़ताल और जलसों से आगे बढ़कर सार्वजनिक हिंसा, लूटमार, तोड़-फोड़ और हत्याएँ होने लगीं; मुख्यतः पुलिस और सरकारी यातायात के साधनों पर हमले हुए। यह कार्यवाही बम्बई, मद्रास, बिहार, मध्य-प्रदेश और संयुक्त प्रान्त में एक साथ ही हुईं। एक समय कुछ दक्षिणी जिलों को छोड़कर सारे बिहार और पूर्वीय संयुक्त प्रान्त में स्थिति बहुत गम्भीर हो गई, इन प्रदेशों में नगरों से गाँवों तक अग्नि फैल गई, इन कार्यवाहियों में पहले पहले विद्यार्थियों का प्रमुख भाग रहा, सरकार इस सब के लिए तय्यार नहीं अपितु जिम्मेदार भी थी। उसने बहुत जल्दबाजी और पाशविकता के साथ बम्बई, अहमदाबाद और पूना में दमन किया। स्त्रियों के शान्त जलसों को तितर बितर करने के लिये अश्रु गैस छोड़ी गई। शान्त जन-समूहों पर लाठी प्रहार और गोली की बौछार की गई, इस दमन की प्रतिक्रिया यह हुई कि जनता शान्त न रह सकी उसने आवेश में आकर तार काटे, खम्मे उखाड़े, लैटर-बक्स जलाये, रेल की पटरियाँ उखाड़ीं, रेलवे स्टेशनों और माल गोदामों को फूँका, कहीं दूसरी सरकारी इमारतें भी जला दी, यह सब किसी योजना के अंतर्गत नियम बद्ध नहीं था। ६ अगस्त को इतवार की छुट्टी होने के कारण विद्यार्थी वर्ग मिलकर कोई कार्यक्रम न बना सके, इसके बाद उन्होंने शान्त जलूसों में भाग

लिया, लेकिन जब शान्त जलूसों पर भी सरकार के अमानुषिक हमले हुये तो उनका खून खौल गया। वे युवक थे, युवक में उबाल शीघ्र आ जाता है। बस—वे सरकार को समाप्त करने के लिये अनियंत्रित उपायों को काम में लाने लगे, फिर भी उनमें हत्या का संपुट नहीं था।

सरकार के अत्याचार ने बूढ़े-बच्चे, स्त्री-पुरुष सभी को अपना शिकार बनाया। विद्यार्थियों ने छाती खोलकर गोलियों का स्वागत किया, मृत्यु का नग्न नृत्य उन्हें एक कदम भी पीछे नहीं हटा सका। जनता ने स्वप्रेरणा से यह सब वीरता के कार्य किए, गिरफ्तारी हो जाने के कारण काँग्रेस-कार्यकर्ता इन कार्यों में सम्मिलित नहीं थे।

सरकार ने पहले झपट्टे में ही गिरफ्तारियाँ, लाठी चार्ज और गोलियाँ चलाकर न्याय-विहीन राज्य प्रारम्भ कर दिया। पुलिस, मिलिटरी और सिविक गार्ड्स ने मनमाने रूप पर गुण्डाशाही शुरू कर दी। नागरिक अधिकार कुचल दिए गए, काँग्रेस और उनकी सहयोगी संस्थाएँ गैर कानूनी करार दे दी गईं, उनके दफ्तर और जायदादें जब्त करली गईं। सार्वजनिक जलसे और जलूस रोके गए, अखबारों का दमन कर दिया गया और शहरों में करफ्यू आर्डर लगाकर आतङ्क फैला दिया गया।

नगरों से हटकर, ग्रामीण जनता पर सरकार का वार हुआ, जिसमें सरकार ने सामुहिक जुर्माने करके, उनकी वसूलयाबी में सर्वतन्त्र आतङ्कवाद का साम्राज्य फैला दिया, गाओं में आग लगादी गई, और देवियों के सतीत्व पर हमले करके घोर अपमान किया गया। वास्तव में पुलिस, मिलिटरी और किराए के पिट्ठुओं ने जनता पर लूट, मारकाट, निर्मम हत्या और भयङ्कर यातनाओं की भरमार कर दी। ये ज्यादतियाँ और अत्याचार सन सत्तावन और सन् १९१९ के भयङ्कर अत्याचारों से होड़ लगा रहे थे। होड़ ही नहीं

सचमुच ये अत्याचार उनसे भी आगे बढ़ गए !

जनता को जेल, हवालात, और नजरबन्दी कैम्पों में बड़ी दर्दनाक यातनाएँ दी गईं। बम्बई की गिरफ्तारियों से लेकर सरकार का पाशविक अत्याचार इस सीमा तक बढ़ चला कि उसने मनुष्य को पशु से भी बदतर बना दिया। सरकार ने जो कुछ भी किया वह उसकी लौह और रक्त (*Iron and blood*) की नीति थी, यह नाज़ी अत्याचारों का ब्रिटिश-संस्करण था जिसमें भारतीय राष्ट्रीयता को पीस डालने का प्रयत्न किया गया।

मजा तो यह है कि यह सब भारत-रक्षा के नाम पर किया गया। लेकिन बर्मा के क्रान्तिकारी नेता श्री थीन-पी ने भारत मन्त्री श्री एमरी को इस प्रकार उपयुक्त चेतावनी दी:—

"श्री एमरी को यह समझ लेना चाहिये कि जिनकी स्वतन्त्रता छीन ली गई हो, जिन्हें स्वतन्त्रता के आनन्द भोग से वञ्चित कर दिया गया हो, उनका असंतोष वास्तविक होता है, काल्पनिक नहीं। श्री एमरी और उनकी तरह सोचने वाले लोग यह समझते हैं कि जनता का असंतोष उनके असन्तुष्ट नेताओं द्वारा उत्पन्न किया गया है। वह जनता का अस्तित्व नहीं मानते, वह अब भी जन-युद्ध में विश्वास नहीं करते, उनका फासिस्ट तरीकों पर लड़ाई लड़ने में विश्वास है। दमन द्वारा शान्ति स्थापित की जा सकती है, लेकिन वह शव की शान्ति होगी। अपना असंतोष प्रकट करने के लिये जनता के पास बड़े घोर और कठोर साधन भी हैं।
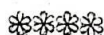
तीसरा अध्याय

आन्दोलन

जनता की प्रतिक्रिया और कार्य

— —::::::::— —
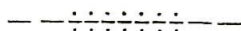
पहला वार भारत सरकार ने किया, नौ अगस्त को ही कम से कम पाँच हजार कांग्रेस जन गिरफ्तार कर लिये गये, और सितम्बर तक यह संख्या एक लाख तक जा पहुँची। नब्बे से अधिक राष्ट्रीय समाचार पत्रों का प्रकाशन बन्द कर दिया गया, शेष पत्रों ने सरकार अधिकृत समाचार मात्र छापे। इस सबका सारांश एस० ए० ब्रेलवी ने अखिल भारतीय सम्पादक सम्मेलन में इस प्रकार बताया:—

"भारत में समाचार पत्रों को उस परिस्थिति का सामना करना पड़ा जो केवल नाज़ी और फासिस्ट देशों में सुनी गई थी, अर्थात पत्रों पर नियन्त्रण, रोक और अपमान सभी कुछ हुआ। सरकारी नियन्त्रण के कारण असंख्य समाचार पत्रों का प्रकाशन बन्द हो गया। सब से कठोर नियन्त्रण यह था कि पत्रों को भारतीय राजनीतिक मांग और कार्यों की रिपोर्ट छापने से रोक दिया। सरकार ने प्रो० भन्साली और गान्धी जी के व्रत सम्बन्धी समाचारों तक को रोक दिया। प्रो० भन्साली नज़रबन्द या कैदी नहीं थे, अतः एक नागरिक के नाते उन्हें उपवास का पूर्ण अधिकार था।

पत्रों के सम्बन्ध में सब से घृणास्पद बात तो यह थी कि पत्रों को बन्द करने की आज्ञा के बाद तत्सम्बन्धी सूचना तक जनता को देने की मनाही कर दी।"

सरकार की सब करतूतों ने जनता पर बहुत गहरा प्रभाव डाला, जब जनता को साधारण अहिंसात्मक प्रदर्शन करने मात्र से भी रोका गया, तब जनता हिंसात्मक कार्य करने पर भी विवश हो गई। इसके बाद जो कुछ भी घटनाएँ घटीं वह जनता के दलित भावों का प्रतिकार मात्र था, विवश हुए बिना जनता ऐसा नहीं कर सकती थी। शहरों से आरम्भ होकर संघर्ष की आग कस्बों और गांवों में फैल गई, जनता ने सर्वत्र एक समान ही कार्य किये, यह सत्य है कि छात्र वर्ग सब से अधिक कार्यशील और उत्तेजित हो गया था।

इस सम्बन्ध में जनता की प्रतिक्रिया के सरकारी आँकड़े स्वयं अपनी कहानी कह रहे हैं।

सरकारी हानि

सम्पत्ति——(रेलें)

चलने फिरने का सामान	१८ लाख
रेल की पटरी	६ लाख
स्टेशन आदि	८॥ लाख
फुटकर सामान	६॥ लाख
	४२ लाख

सबसे अधिक हानि ई० आई० आर० और बी० एन० डब्ल्यू० आर० में हुई, इनकी मरम्मत में क्रमशः बारह और चौदह लाख खर्च हुआ। दिसम्बर सन् ४२ तक ३१८ स्टेशनों पर हमले हुए, जिनमें से अधिकांश फूँक दिए गए या अन्य प्रकार से नष्ट कर दिये गये। ५९ स्थानों पर गाड़ियाँ पटरी से उतरीं, जिनमें से बहुत सी सवारी गाड़ियाँ थीं, तीन में दुर्घटनाएँ हुईं, जिनसे २७ मरे और ११२ घायल हुए, पर ये सब भारतीय ही थे। नवम्बर तक गाड़ियाँ देर से आईं, या बन्द हो गईं।

डाकखाने—८९५ डाकखानों पर हमले हुए, सत्तावन बिल्कुल नष्ट कर दिए और २५२ को भारी क्षति उठानी पड़ी।

नक़द नुकसान	२ लाख
फर्नीचर आदि	१ लाख
	योग ३ लाख

खज़ाने—संयुक्त प्रदेश में रामतेल स्थान का खजाना लूटा गया जिसमें ३॥ लाख रुपये की हानि हुई। कुल मिलाकर सरकार को अधिक से अधिक पचास लाख रुपये की हानि हुई।

जन--हानि

कुल ५३ सरकारी नौकर जान से मारे गए, कितने सरकारी नौकरों को चोटें लगीं, इसके निश्चित आँकड़े नहीं मिलते।

इसके अतिरिक्त सन् ४२ के आन्दोलन में जनता ने जो कुछ किया उसकी सरकारी रिपोर्ट निम्न प्रकार है।

पाँच सौ से लेकर दस हजार तक की भीड़ों ने पुलिस थाने, डाकखाने और स्टेशनों पर धावे बोले, अफसरों पर हमले किये, रिकार्ड बरबाद कर दिये, और इमारतें फूँकी। ईंट, पत्थर और बोतलों की चोट से सैकड़ों पुलिस वालों को चोटें आईं।

बिहार

फतुहा में एक सवारी गाड़ी रोक कर, हवाई फ़ौज के दो अधिकारी पकड़ लिये गये, भीड़ ने उनसे कहा कि यदि वे अपने हथियार दे दें तो उनकी जान बख्श दो जाय, अधिकारी शस्त्र देने पर राजी हो गये, फिर भी उन्हें अपने जीवन से हाथ धोने पड़े। उनके शवों को शहर में घुमाकर नदी में फैंक दिया गया।

मुंगेर जिले के भान्दर गाँव वालों ने एक गिरे हुये हवाई जहाज़ को घेर कर उसमें बचे हुये यात्रियों को हथियार सौंप कर जान बचा लेने की सलाह दी, उन्होंने जनता का विश्वास करके हथियार दे दिये, फिर भी भीड़ ने उनको निस्सहाय पाकर लाठी से मार गिराया। कटरा मीनापुर, सिन्हाई, रूपाली और सारथ में पुलिस के अधिकारी मारे गये। इसी प्रकार सीतामढ़ी में सब-डिवीजनल अफ़सर अपने दल सहित मारा गया।

१६ अगस्त को चार हजार की सशस्त्र भीड़ ने, जिनमें से एक हजार सैनिक ढङ्ग पर मार्च कर कर रहे थे, मीनापुर पुलिस थाने पर हमला किया जिसमें एक पुलिस थानेदार को सख्त चोट आई और कई पुलिस के सिपाही घायल हुये। सब-इन्सपैक्टर को मार पीट कर लाठी से बाँध दिया, और इस प्रकार उसे जलते हुये स्टेशन की अग्नि में फैंक दिया, वह पीड़ित अफ़सर

रेंग-रेंग कर आग से बाहर निकल आया, उसे फिर लाठी से मार कर अग्नि में झोंक दिया गया।

इसी प्रकार की भयङ्कर घटना रूपाली पुलिस स्टेशन पर हुई, दस बारह हजार की भीड़ ने पुलिस थाने पर हमला किया, अधिकारियों पर पत्थर बरसाये, जिनमें एक सब-इन्सपैक्टर और कुछ सिपाही थे। बाद में मिट्टी का तेल छिड़क कर थाने में आग लगादी, और पुलिस के आदमियों को आग में फेंक दिया।

एक सशस्त्र भीड़ ने एक रेशम के कारखाने को लूट लिया। मुङ्गेर जिले के अन्दर चोरी के अभियोग में कुछ सरकारी आदमियों पर पंचायत द्वारा मुकदमा चलाया गया, और तुरन्त ही फैसला सुनाकर उनके दाएँ हाथों की उंगलियाँ काट दी गईं, तीन आदमियों की एक-एक आँख निकाल ली गई और कुछ को लाल लोहे से दाग दिया गया।

गया जिले में दो उठाईगीरों का तुरन्त फैसला सुना, प्राणदण्ड दे यमालय भेज दिया गया।

भागलपुर जिले में बीहपुर के एक मन्दिर के पुजारी को पुलिस-दूत समझ कर जान से मार डाला गया। चार सितम्बर को भागलपुर में ६०० बन्दियों ने विद्रोह किया, जिसमें एक डिप्टी सुपरिण्टेंडेण्ट, एक कार्डिंग मास्टर और एक वार्डर को जान से मार कर, शवों को जला दिया गया। जेल के कारखाने को भी आग लगाकर हानि पहुँचाई गई।

सन् ३७ से ३९ तक काँग्रेस मन्त्रिमण्डल के मंत्री और गान्धी जी के विश्वसनीय व्यक्ति श्री जगलाल चौधरी ने सारन जिले में इसवां पुलिस थाने को फुंकवाया, और जनता द्वारा सब-इन्सपैक्टर पुलिस को एक बोरी में भरवा कर

नदी में फिकवा दिया।

इन्हीं महाशय ने भालों, जलती हुई मशालों और उबलते हुये तैल द्वारा फ़ौज से मुकाबिला करने की योजना बनाई, जिसके कारण इनके ऊपर मुकदमा चला और दस साल की सजा हो गई। हाईकोर्ट से भी यह सजा कम नहीं हुई। चार पाँच हजार आदमियों की सशस्त्र भीड़ ने मुजफ्फरपुर जिले के मीनापुर थाने पर धावा मारा, थाने को लूट कर जला दिया, अफसरों और सिपाहियों पर हमला करके एक सब-इन्सपैक्टर को जलाकर जान से मार डाला। यह सब तिरङ्गे झण्डे के नीचे, काँग्रेस के नाम पर किया गया। इस घटना के प्रमुख अभियुक्त को, जिसने थाने पर काँग्रेस का झँडा फहराया था फाँसी की सजा मिली। मुकदमे का फैसला सुनाते हुये जज ने लिखा था "कि देश में इन सब घटनाओं का लक्ष्य सरकारी शासन तन्त्र को बेकार कर काँग्रेस की माँग को सरकार से पूरा कराना है, यह सभी जानते हैं।

उड़ीसा

बालासोर जिले में चार पाँच हजार की भीड़ ने एक सशस्त्र पुलिस के दस्ते का मुकाबिला किया। भीड़ अपना शंख ध्वनि का सङ्केत सुनते ही गाँव-गाँव इकट्ठी हो जाती थी। भीड़ ने पुलिस की तितर बितर होने की आज्ञा को नहीं माना, विवश होकर पुलिस ने गोली चलाई, जिसके फलस्वरूप पचीस छब्बीस जान से मारे गए और पचास घायल हुए।

उड़ीसा की जयपुर रियासत में एक हजार की भीड़ ने एक फौरेस्ट गार्ड

को जान से मार दिया, और पन्द्रह दूसरे नौकर तथा एक मजिस्ट्रेट को घायल कर दिया।

मध्य–प्रदेश

१६ अगस्त को एक भीड़ ने आष्टी में पुलिस थाने पर हमला किया, पुलिस ने आत्म रक्षणार्थ गोली चलाई, लेकिन गोलियाँ खत्म हो जाने के कारण उन्हें जनता द्वारा घिर जाना पड़ा, एक सब इन्स्पैक्टर पत्थरों से मार दिया गया, साथ ही एक दीवान और तीन सिपाहियों की भी हत्या की गई, अवसरे सिपाहियों को मिट्टी का तेल छिड़क कर जला डाला।

उसी दिन चिमूर में हजारों की भीड़ ने रेस्ट हाउस पर हमला किया, एक एस० डी० ओ० जान से मार डाला, और एक नायब तहसीलदार को अधमरा करके छोड़ा। रेस्ट हाउस और फर्नीचर को आग लगाकर फूंक दिया, बाद में पुलिस तथा जनता के बीच भिड़न्त होने के कारण एक सब-इन्स्पैक्टर और एक सिपाही जख्मी हुआ तथा एक इन्सपैक्टर और एक सिपाही जान से मारे गए। भीड़ ने फिर रेस्ट हाउस की ओर आकर अधमरे नायब तहसीलदार को किरचों द्वारा जान से मार दिया। सब डिवीजनल मजिस्ट्रेट के शव को जलते हुए रेस्ट हाउस की लपटों में भस्मी भूत कर दिया।

नागपुर में सी० आइ० डी० के बंगले को जनता ने लूट लिया। नागपुर से पन्द्रह मील दूर भादरा सड़क के एक पुलिस थाने पर भीड़ ने हमला किया, आक्रमकों में कुछ के पास बन्दूकें थीं। गोलियों की मार से एक सिपाही और एक दीवान जख्मी हो गए। भीड़ ने थाने से तमाम शस्त्र लूट लिए। बाद

में जब पुलिस ने कथित नेता के घर की तलाशी ली तो वहां बिजली से समाचार भेजे जाने वाला यंत्र मिला।

११ अगस्त को वर्धा के एक प्रमुख कॉंग्रेस कार्यकर्त्ता के लड़के ने जो अखिल भारतवर्षीय कॉंग्रेस कमेटी की बम्बई मीटिंग में सम्मिलित होकर लौटा था, आम पब्लिक जल्से में कॉंग्रेस कार्यक्रम पढ़ कर सुनाया जिसमें स्कूलों और रेलों की हड़ताल तथा तार और टेलीफोन के तारों का काटना भी शामिल था जिला पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट उस कार्यक्रम की प्रतिलिपि पकड़ने में सफल हुआ। उसी दिन वर्धा कामर्स कालेज के एक प्रोफेसर ने जिन्होंने गाँधी जी की गिरफ्तारी पर अपने पद से त्याग-पत्र दे दिया था, एक भीड़ के सामने जोरदार भाषण देकर पुलिस का बायकाट करने की प्रेरणा की तथा व्यापारियों को धमकी दी कि अगर उन्होंने पुलिस को कोई सामान बेचा तो उनकी दुकानें लूट ली जायेंगी। वर्धा में पुलिस की गोलियों से शिकार हुए दोनों आदमियों का बदला अवश्य लिया जायगा। उन दो आदमियों के बदले दो सौ कान्स्टेबिलों की जान ली जायगी। इन भाषणों के फलस्वरूप एक डाकखाने और पुलिस चौकी के कागजात जला दिए गए, तार काटे गये तथा खम्भे उखाड़ दिए। १४ अगस्त को मध्य प्रान्त के भूतपूर्व कॉंग्रेसी प्रधान मंत्री श्री प० रविशंकर शुक्ल ने अपनी निगरानी करने वाले पुलिस अफसरों से कहा, कि अगर दस दिन का वक्त मिला होता तो जिले का हर एक पुलिस स्टेशन जला दिया जाता। १५ अगस्त को मंडला जिला कॉंग्रेस कमेटी के उपप्रधान ने पन्द्रह सौ आदमियों की एक भीड़ से सरकारी कागजात, रेलों की पटरियाँ और पुलों को समाप्त कर देने को कहा था, उसी जिले में इससे पहले दिन कांग्रेस दल के चार मेम्बरों ने गाँव वालों को एक पुल उड़ा देने

के लिये उत्तेजित किया था। जब वे इसमें सफल नहीं हुये तो कुछ पास से गुजरती हुई सरकारी अनाज की गाड़ियों को लूट लिया। अकोला में काँग्रेस के दो प्रमुख कार्यकर्ताओं ने (जिनमें से एक महिला थी) विद्युत गति से दौरा करके सभाओं में भाषण दिये और यातायात के साधनों को नष्ट करने, बैंकों को लूटने और रेलों की तोड़ फोड़ तथा डाकखानों को जलाने के लिये मिल-मजदूरों को उत्तेजित किया। इसके परिणाम स्वरूप मजदूर कुछ टेलीफोन के खम्भे उखाड़ने और तार काटने में सफल हुये, बाद में पुलिस ने उन्हें तितर बितर कर दिया। चौदह अगस्त को दो तीन हजार आदमियों की एक भीड़ ने रामटेक की सारी पब्लिक बिल्डिंगों, यहां तक कि तहसील, सिविल कोर्ट, पुलिस स्टेशन, डाकखाना और रेलवे स्टेशन को भी जला दिया। स्टेशन पर खड़ी एक ट्रेन में आग लगा दी गई और खजाने से तीन लाख रुपया लूट लिया गया। बहुत से ख्याति प्राप्त काँग्रेस जनों ने इस काण्ड में हिस्सा लिया।

युक्त प्रान्त

——

बासिमाबाद के थाने पर आक्रमण करके जनता ने एक सब इन्सपेक्टर और एक सिपाही को मार डाला तथा हथियार छीन लिए।

बलिया में कुछ सरकारी अफसरों के बंगले लूट लिए गए, उनचास थानों में से ४२ थाने बिल्कुल जला दिए।

अलीगढ़ रेलवे स्टेशन के मुसाफिर खाने में सूटकेस के भीतर रक्खा

हुआ एक बम फट गया, जिससे दो सिपाही और एक कुली मर गए।

युक्त-प्रान्त में कुल २१ बीज गोदाम लूटे गए, और ४२० गाओं में पटवारियों के कागजात नष्ट कर दिए।

सय्यदराजा स्टेशन पर जनता की सशस्त्र भीड़ ने आक्रमण किया और पुलिस मे काफी मुठभेड़ हुई, बहुत से आदमी मरे और घायल हुए जिन्हें बैलगाड़ियों में उठा कर ले जाया गया।

बलिया जिले का एक तहसील में सरकारी इमारतों पर काँग्रेस जनों द्वारा एक नमूने का सामुहिक आक्रमण किया गया, इस तहसील पर एक स्थानीय काँग्रेसकार्यकर्ता ने जो अपने को स्वराज तहसीलदार कहता था, एक भीड़ के साथ आक्रमण किया, बाहरी दीवार को तोड़कर अन्दर प्रविष्ट हो आफिस के कागजात को जला दिया, और खजाने से पन्द्रह हजार रुपया लूट लिया। खास बलिया शहर में प्रमुख कांग्रेस कार्यकर्ताओं द्वारा उत्तेजित की गई एक भीड़ ने चार सरकारी अफसरों तथा दो सरकारी पिठ्ठुओं के घरों को लूट लिया, पड़ौस के आजमगढ़ जिले में जिलाधीश को पाँच हजार की एक भीड़ ने मधुवन थाने में घेर लिया और दो घन्टे तक जमकर मोर्चा लेने के बाद भीड़ तितर बितर हुई।

पीलीभीत जिले में ऐक उत्तेजित भीड़ ने एक सिपाही को इसलिये मार डाला कि वह एक सिपाही था। बिजनौर जिले में एक थाने पर भीड़ ने आक्रमण किया, इस भीड़ का नेतृत्व एक चार आना काँग्रेस सदस्य घोड़े पर सवार हुआ कर रहा था। इसी जिले के एक दूसरे हिस्से में स्थानीय तहसील काँग्रेस कमेटी के सैक्रेटरी ने एक रेलवे स्टेशन पर संगठित भीड़ के साथ सामुहिक आक्रमण किया। बाराबङ्की जिले में

एक रेलवे स्टेशन पर जो सामुहिक आक्रमण हुआ उसमें स्थानीय काँग्रेस डिक्टेटर और जिला काँग्रेस कमेटी के नौ मेम्बर भी सम्मिलित थे। मथुरा जिले में तेरह आदमियों ने जो सबके सब काँग्रेस के मेम्बर थे, एक मालगाड़ी गिराने का प्रयत्न किया। इलाहाबाद शहर में बारह अगस्त को एक वार्ड काँग्रेस कमेटी के सभापति ने भी एक पुलिस चौकी को लूटने और टेलीफोन के तारों को काटने में हिस्सा लिया था। उसी जिले में सत्रह आदमी जो काँग्रेस के चवन्नी-सदस्य थे, एक पोस्ट आफिस को लूटने तथा एक डाक बँगले को जलाने के लिये दण्डित हुए। मेरठ जिले में कूड़ी नहर के बंगले पर कुछ नवयुवकों ने जिलेदार की हत्या कर डाली, इसी प्रकार युवकों ने लनी स्टेशन पर सिपाहियों की बन्दूक छीन ली, मेरठ खास में कई जगह बम रक्खे गये, तमाम जिले में जगह-जगह तार काटे गये, खम्मे उखाड़े गये तथा पुल और सड़कें नष्ट करने का प्रयत्न किया गया।

बंगाल

कुछ जगहों में तोड़ फोड़ करने वाले धनुष-बाण से सुसज्जित थे, ढाका जिले में एक थाने पर एक असफल आक्रमण हुआ जिसमें एक पुलिस सिपाही बाण से मार दिया गया। पारिल गाँव में उपद्रवकारियों ने पुलिस से हुई मुठभेड़ में करीब सौ बाण चलाये, कई पुलिस अफसरों को उपद्रव दबाने में अपनी जान खोनी पड़ी। भङ्गा में एक पुलिस सब-इन्सपेक्टर को जमीन पर गिराकर डण्डों की मार से समाप्त कर दिया।

सरकारी अफसरों और सरकार-परस्तों को धमकियाँ दी गईं, छेड़खानी की गई और कहीं-कहीं उनका धान भी लूट लिया गया। स्यालदह स्टेशन

हुआ एक बम फट गया, जिससे दो सिपाही और एक कुली मर गए।

युक्त-प्रान्त में कुल २१ बीज गोदाम लूटे गए, और ४२० गाओं में पटवारियों के कागजात नष्ट कर दिए।

सय्यदराजा स्टेशन पर जनता की सशस्त्र भीड़ ने आक्रमण किया और पुलिस से काफ़ी मुठभेड़ हुई, बहुत से आदमी मरे और घायल हुए जिन्हें बैलगाड़ियों में उठा कर ले जाया गया।

बलिया जिले की एक तहसील में सरकारी इमारतों पर काँग्रेस जनों द्वारा एक नमूने का सामुहिक आक्रमण किया गया, इस तहसील पर एक स्थानीय काँग्रेसकार्यकर्ता ने जो अपने को स्वराज तहसीलदार कहता था, एक भीड़ के साथ आक्रमण किया, बाहरी दीवार को तोड़कर अन्दर प्रविष्ट हो आफिस के कागजात को जला दिया, और खजाने से पन्द्रह हजार रुपया लूट लिया। खास बलिया शहर में प्रमुख कांग्रेस कार्यकर्ताओं द्वारा उत्तेजित की गई एक भीड़ ने चार सरकारी अफसरों तथा दो सरकारी पिठ्ठुओं के घरों को लूट लिया, पड़ोस के आजमगढ़ जिले में जिलाधीश को पाँच हजार की एक भीड़ ने मधुबन थाने में घेर लिया और दो घन्टे तक जमकर मोर्चा लेने के बाद भीड़ तितर बितर हुई।

पीलीभीत जिले में ऐक उत्तेजित भीड़ ने एक सिपाही को इसलिये मार डाला कि वह एक सिपाही था। बिजनौर जिले में एक थाने पर भीड़ ने आक्रमण किया, इस भीड़ का नेतृत्व एक चार आना काँग्रेस सदस्य घोड़े पर सवार हुआ कर रहा था। इसी जिले के एक दूसरे हिस्से में स्थानीय तहसील काँग्रेस कमेटी के सैक्रेटरी ने एक रेलवे स्टेशन पर संगठित भीड़ के साथ सामुहिक आक्रमण किया। बाराबंकी जिले में

एक रेलवे स्टेशन पर जो सामुहिक आक्रमण हुआ उसमें स्थानीय काँग्रेस डिक्टेटर और जिला काँग्रेस कमेटी के नौ मेम्बर भी सम्मिलित थे। मथुरा जिले में तेरह आदमियों ने जो सबके सब काँग्रेस के मेम्बर थे, एक मालगाड़ी गिराने का प्रयत्न किया। इलाहाबाद शहर में बारह अगस्त को एक वार्ड काँग्रेस कमेटी के सभापति ने भी एक पुलिस चौकी को लूटने और टेलीफोन के तारों को काटने में हिस्सा लिया था। उसी जिले में सत्रह आदमी जो काँग्रेस के चवन्नी-सदस्य थे, एक पोस्ट आफिस को लूटने तथा एक डाक बँगले को जलाने के लिये दण्डित हुए। मेरठ जिले में कूड़ी नहर के बंगले पर कुछ नवयुवकों ने जिलेदार की हत्या कर डाली, इसी प्रकार युवकों ने लूनी स्टेशन पर सिपाहियों की बन्दूक छीन ली, मेरठ खास में कई जगह बम रक्खे गये, तमाम जिले में जगह-जगह तार काटे गये, खम्मे उखाड़े गये तथा पुल और सड़कें नष्ट करने का प्रयत्न किया गया।

बंगाल

कुछ जगहों में तोड़ फोड़ करने वाले धनुष-वाण से सुसज्जित थे, ढाका जिले में एक थाने पर एक असफल आक्रमण हुआ जिसमें एक पुलिस सिपाही वाण से मार दिया गया। पारिल गाँव में उपद्रवकारियों ने पुलिस से हुई मुठभेड़ में करीब सौ वाण चलाये, कई पुलिस अफसरों को उपद्रव दवाने में अपनी जान खोनी पड़ी। भङ्गा में एक पुलिस सब-इन्सपेक्टर को जमीन पर गिराकर डण्डों की मार से समाप्त कर दिया।

सरकारी अफसरों और सरकार-परस्तों को धमकियाँ दी गईं, छेड़खानी की गई और कहीं-कहीं उनका धान भी लूट लिया गया। स्यालदह स्टेशन

पर एक कैन्टीन में बम फेंका गया जिसके परिणाम स्वरूप दो महिला स्वयं सेवक और एक ब्रिटिश सैनिक घायल हुआ। बंगाल के कुछ गाँवों में सरकारी-सम्पति को लूटने और बरबाद करने के लिये घर-घर से एक-एक स्वयं सेवक की माँग की गई थी, और यह कहा गया कि जो घर इस माँग को पूरी नहीं करेगा उसे बरबाद कर दिया जायगा।

बंगाल के कुछ हिस्सों में उन नागरिकों को जिनके ऊपर सरकार परस्त होने का सन्देह था उड़ा दिया गया, पीटा गया, या क़ैद कर लिया गया, और कभी-कभी रुपया लेकर छोड़ दिया गया। शान्तिप्रिय नागरिकों पर जुर्माने के रूप में अत्याचार किये गये। पुलिस ने अपने एक धावे में सात नागरिकों को जिसमें ऐक कलक्टरी का क्लर्क भी था, छुड़ा लिया। मिदनापुर में एक हेडमास्टर और उसके चार भाई तथा अन्य कई सरकारी पिट्ठू गायब कर दिये गये थे। एक नागरिक जो कदमतल्ला से तामलुक को आ रहा था, रास्ते ही में गिरा दिया गया और आँखों पर पट्टी बांधकर उसे ऐक टूटी फूटी झोंपड़ी में बन्द कर दिया गया। गायब करने वाले बात की बात में उसे एक गाँव से दूसरे गाँव में ले जाते थे. अन्ततोगत्वा एक नियामित फौजदारी अदालत में उस पर मुकदमा चलाना निश्चित हुआ। एक दूसरे गायब किये हुये आदमी को पन्द्रह दिन तक कैद में रक्खा गया, और उसकी आखों पर रव की पट्टी बाँध कर नियमित पूर्वक पीटा गया क्यों कि उसपर पुलिस का गुप्तचर होने का सन्देह था।

मिदनापुर में बागियों के कारनामों से स्पष्ट था कि उन्होंने पहले से ही अपनी योजना बनाली थी, उन्होंने एक प्रभावशाली चेतावनी प्रणाली आविष्कृत की थी और अपने आक्रमणों में मौलिक तरीकों का प्रयोग करते थे। जैसे कि पूर्व

निर्धारित इङ्गितों पर घेरा डालना, या धावा बोलना इत्यादि। इन आक्रमणकारी दलों के साथ डाक्टर भी रहते थे और घायलों की परिचर्या के लिए परिचारक भी। गुप्त सन्देश लाने और ले जाने का भी बहुत अच्छा प्रबन्ध था।

देहली

एक पुलिस सब इन्सपैक्टर जिसने रेलवे क्लीअरिंग एकाउन्ट आफिस को बचाने की कोशिश की, मार डाला गया।

दिल्ली के एक प्रमुख काँग्रेस कार्य्य कर्ता है कृष्णा नय्यर जो अगस्त की गिरफ्तारियों के समय गुप्त कार्य्य करने लग गए थे, बारह नवम्बर को रेलवे स्टेशन को जलाने के अभियोग में दो साल के लिए दण्डित हुए।

मद्रास

टिनेवली जिले में एक भीड़ एक नमक की फैक्टरी में घुस गई और एक छोटे अफसर तथा चार दूसरे अफसरों को जो ड्यूटी पर थे कब्जे में करके तौलघर में आग लगादी। असिस्टेण्ट इन्सपैक्टर जो पास ही रहता था मौके पर पहुँचा और निर्दयता पूर्वक मार दिया गया।

उपद्रवियों ने सात्तर की कृषि संस्था से लगे हुए अफसरों के क्वार्टर, एक माल के महकमे के इन्सपैक्टर का बंगला और एक ग्रामीण मुन्सिफ के मकान को लूट लिया। चार अजनबियों ने बिलारी में एक डाक मोटर में घुस कर ड्राइवर की आँखों में मिर्च डाल कर उसे लारी रोकने पर विवश कर दिया

फौरन अपने चहरों पर नकाब लगाये हुए और डण्डों तथा कृपाणों से सुसज्जित बीस आदमी मोटर में घुसे और डाक लेकर चम्पत हो गये ।

सिलना में रैडक्रास सोसाइटी की सहायता के लिए हो रहे ड्रामा के दर्शकों पर एक देशी बम फेंका गया, बम के फटने से पाँच आदमी घायल हुए, लेकिन जिलाधीश, जिसको लक्ष्य करके बम फेंका गया, बच गया। आक्रमणकारियों ने फौजों को भी नहीं बख्शा, एक बम एक काफी हाउस में जिसमें प्रायः अँग्रेजी सैनिक जाया करते थे, फटा। बम से दस आदमी घायल हुए और एक जहाजी अफसर मर भी गया।

एक दूसरा बम सिनेमा के कम्पाउण्ड में ठीक उस समय फटा जब खेल की समाप्ति पर सैनिक बाहर निकल रहे थे। अठारह अँग्रेजी सिपाही और दो हिन्दुस्तानी घायल हुए, एक पन्द्रह साल का लड़का जो एक टी स्टाल पर काम करता था, मारा गया।

दक्षिणी भारत में एक लारी शैड पर आक्रमण करके उसे जला दिया, उसके साथ ही दो ड्राइवर और एक कुली भी जल गए। तूती कोरन में एक ताड़ी की दूकान में आग लगा दी गई, और उसमें एक चौकीदार अपनी पत्नी सहित जल मरा।

मद्रास में यातायात के साधनों को नष्ट करने के आन्दोलन का श्री गणेश गण्टूर जिले के टिनाली रेलवे स्टेशन पर जबरदस्त आक्रमण के साथ बारह अगस्त को हुआ। इससे दो दिन पूर्व दो आदमियों ने जो अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बम्बई मीटिंग से लौटे थे, टिनाली की एक सार्वजनिक सभा में बड़ा उत्तेजना पूर्ण भाषण दिया।

बम्बई

सूरत में पुलिस पटेलों की फसलें बरबाद करदी गईं। बम्बई के एक दूसरे काण्ड में तीन ब्रिटिश सैनिक घायल होगये तथा सात अन्य पास से गुजरने वाले व्यक्ति भी। जिनमें से बाद में एक मर भी गया।

पूना के एक सिनेमा में बम फट जाने से सात ब्रिटिश सैनिक घायल हुये जिनमें से तीन तो मर भी गये।

ऊपर करीब-करीब सरकार की ओर से कांग्रेस के विरुद्ध लगाये गये वे समस्त आरोप दे दिये गये हैं कि जिनके आधार पर हिन्दुस्तान में जनता तथा सरकार की ओर से की गई सभी ज्यादतियों की जिम्मेदारी कांग्रेस के सर थोपी जा सकती है।

नीचे हम कुछ अन्य घटनाएं और आँकड़े देते हैं जिनको सरकार ने स्वीकार करके प्रकाशित किया है।

सामूहिक जुर्माने

भारत मंत्री मि० एमरी ने हाउस आफ कामंस में एक प्रश्न का उत्तर देते हुये कहा "मेरी ताजी जानकारी के अनुसार ३१ अगस्त तक कुल पन्द्रह सौ छप्पन मामलों में सामूहिक जुर्माने किये गये जिनका कुल योग लगभग ९० लाख था। इसमें से केवल ७८ लाख वसूल किया गया।"

बारह फरवरी सन् ४३ ई० को केन्द्रीय धारा सभा के अधिवेशन में गृह सदस्य सर रेजीनेल्ड मैक्सवैल ने सरदार-सन्तसिंह के प्रश्न का उत्तर देते हुये कहा —

"१९४२ के अन्त तक काँग्रेस की गिरफ्तारियों के बाद हुए उपद्रवों के सिलसिले में कुल ५३८ बार गोलियाँ चलानी पड़ीं। पुलिस या फौज की गोलियों से मरने या घायल होने वालों की संख्या क्रमशः ९४० और १६३० थी। कुल साठ हजार दो सौ उन्नीस आदमी गिरफ्तार किये गये उनमें से लगभग छब्बीस हजार आदमी दण्डित हुए, उन्हें इस बात की कोई सूचना नहीं कि कितने आदमियों पर मुकदमा चला था कितने आदमियों को फाँसी की सजा दी गई। करीब-करीब अठारह हजार आदमी भारत रक्षा कानून की १२६ और १२९ दफा के अनुसार नजरबन्द किये गए।"

यहाँ बहुत विस्तार में न जाकर सरकार द्वारा दिये गए आँकड़ों के अनुसार भी हम देख सकते हैं कि जहाँ सरकार की ओर से सिर्फ ५३ आदमियों की जान गई, वहाँ उन्होंने जनता के ९४० आदमियों की जान ली और १६३० आदमियों को घायल किया। और जहाँ सरकार का आर्थिक दृष्टि से पचास लाख रुपए का नुकसान हुआ वहाँ उसने जनता पर नब्बे लाख सामूहिक जुर्माना करके ७८ लाख वसूल कर लिया। उपरोक्त आँकड़ों पर हमें उतना ही विश्वास करना चाहिये जितना कि हम अन्य सरकारी आँकड़ों पर करते हैं। पाठक इन आँकड़ों से ही वास्तविकता की कल्पना कर सकते हैं।

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि जनता ब्रिटिश शासन के विरुद्ध एक प्रकार का युद्ध करने के लिए इस कारण से उत्तेजित हो गई कि दासता की दारुण यातनाओं से ऊब गई थी और उससे मुक्ति पाने के लिए प्रबल इच्छा पैदा हो गई थी। इसमें कोई शक नहीं कि उचित नेतृत्व के अभाव में जनता ने कुछ अनुत्तरदायित्व पूर्ण तरीकों का आश्रय लिया, लेकिन उनके

तमाम कारनामों में ब्रिटिश शासन से भारत को मुक्त करने की इच्छा ही प्रधान थी। जनता ने जो कुछ किया, वह सरकार के ही शब्दों में ऊपर बताया जा चुका है। लेकिन गवर्नमेन्ट ने क्या किया वह अभी आगे के अध्यायों में बताया जायगा। सरकार की काली करतूतों का पता उन्हीं अध्यायों से चलेगा।

यहाँ हम डाक्टर श्यामा प्रसाद मुकर्जी के एक पत्र से कुछ उद्धरण देकर समाप्त करते हैं, यह पत्र उन्होंने (१२ अगस्त सन् ४२) वायसराय को लिखा था। पत्र इस प्रकार है। "इस नाजुक घड़ी में दमन ठीक उपाय नहीं है, निस्सन्देह उन तमाम मुल्कों का इतिहास जो अपनी स्वतंत्रता के लिये लड़ते आये हैं भली प्रकार प्रदर्शित करता है कि शासक वर्ग की ओर से जितना ही अधिक दमन किया जाता है शासितों में उतनी ही विरोध की भावना उग्र हो जाती है। आप उग्र दमन से असन्तोष के बाहरी प्रदर्शनों को दबा सकते हैं, वह भी असाधारण शक्ति का उपयोग किये बिना कठिन है, मगर देश की जनता पर उसका बड़ा अनिष्टकारी प्रभाव पड़ेगा। यदि आप सफल भी हो जाँय तो असन्तोष की आग अन्दर-अन्दर बहुत तेज होती जायगी, और सरकार तथा ब्रिटिश विरोधी भावनायें सारे भारत वर्ष में बहुत ही तीव्रतर हो जायगी। शत्रु अपने ध्येय में सफल हो जायगा। क्योंकि उसे भारत की स्वतंत्रता की परवाह नहीं बल्कि वह भारत में एक ऐसी अव्यवस्था फैलाना चाहता है कि जिसके द्वारा समय पर वह अधिक से अधिक लाभ उठाने की चेष्टा में सफल हो सके। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि दमन नीति का अन्धानुकरण और भारतवासियों की उचित आकाँक्षाओं की पूर्ति में आनाकानी करने से भारतवर्ष में ऐसा वातावरण पैदा हो जायगा जिससे लोग शत्रु को ब्रिटिश जालिमों से

मुक्ति दिलाने वाला समझा जायेंगे। यानी एक तरह से लोगों के अन्दर उसी तरह की भावना पैदा हो जायगी और लोग दुश्मन का उसी तरह स्वागत करेंगे जैसा दो सौ वर्ष पहले इसी देश में भिन्न परिस्थितियों के कारण आपके पूर्वजों का किया गया था।

इसलिए मैं आपसे अपील करता हूँ कि आप भारतीय स्थिति की वास्तविकता पर ध्यान दें, उसकी परीक्षा संसार में होने वाले द्रुतगामी परिवर्तनों के प्रकाश में करें। आज कोई भी भारत की वर्तमान शासन प्रणाली से सन्तुष्ट नहीं है। हिन्दुस्तानी गतिरोध को समाप्त करने के लिए शक्ति को जनता के प्रतिनिधियों के हाथ में दे देना परमावश्यक है। काँग्रेस की माँग का सारांश भी यही है। अगर काँग्रेसी नेताओं के दिमाग में कोई और छिपी हुई भावना है (जिस पर कम से कम मुझे तो विश्वास नहीं है) तो वह भी अपने सही रङ्ग में प्रकट हो जायगी, जब जनता के हाथ में अधिकार सौंपने के आपके क्रियात्मक प्रस्ताव सर्व साधारण के सामने आएँगे।

महात्मा गांधी ने ब्रिटिश गवर्नमेण्ट को बलपूर्वक विश्वास दिलाया कि जब तक सम्मान पूर्ण समझौते का हर एक मार्ग बन्द नहीं हो जायगा तब तक आन्दोलन आरम्भ नहीं किया जायगा, फिर भी गान्धी जी को बात चीत तक की सुविधा न देना गवर्नमेण्ट का सबसे दुर्भाग्य पूर्ण निर्णय ख्याल किया जाता है। इसमें तो तनिक भी सन्देह नहीं कि आंदोलन काँग्रेस द्वारा आरम्भ नहीं किया गया है बल्कि ब्रिटिश नीति ने यह नाजुक स्थिति पैदा करने में चिनगारी का काम किया। वर्तमान स्थिति का यह एक प्रधान पहलू है जिसकी प्रत्येक व्यक्ति निन्दा करेगा।

मैं आप से प्रार्थना करूँगा कि आप तुरन्त इस गतिरोध की समाप्ति के लिए अपने मस्तिष्क को प्रयत्न शील करें। वर्तमान स्थिति भारत और ब्रिटेन दोनों के लिए समान रूप से अनिष्टकारी है।
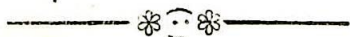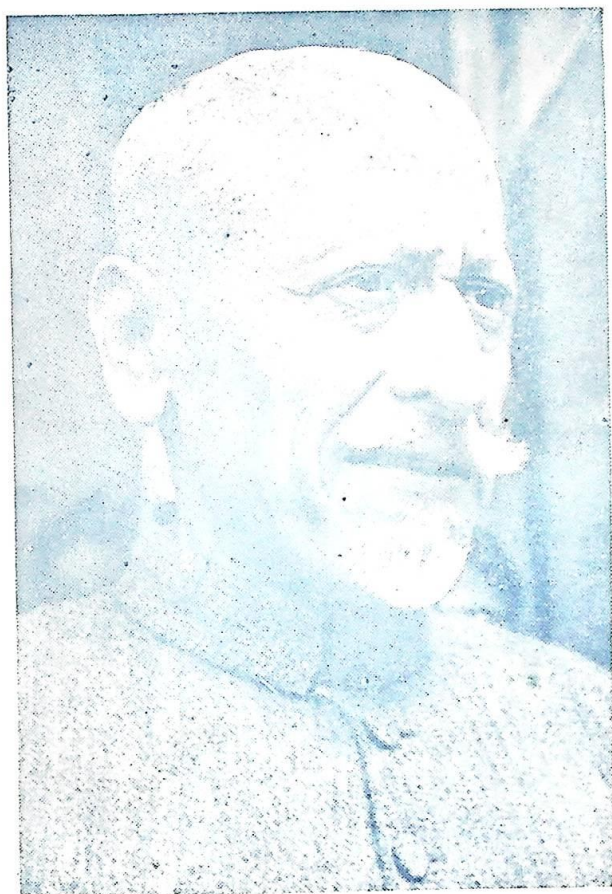
मौलाना अबुल कलाम आज़ाद

चतुर्थ अध्याय

आन्दोलन की रूपरेखा और आरम्भ

गान्धी जी और दूसरे नेताओं को गिरफ्तार करके सरकार ने स्वयं ही आन्दोलन का आरम्भ किया। नेताओं की गिरफ्तारी से हर वर्ग के लोग उत्तेजित हो गये, लेकिन वे लोग स्वयं किसी खास कार्यक्रम के अनुसार आन्दोलन को नहीं चला सके। आन्दोलन के प्रारम्भ में ही काँग्रेस के सभी प्रभावशाली कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर जेल में बन्द करके सरकार ने काँग्रेस सङ्गठन को अस्त-व्यस्त कर दिया, इसके अतिरिक्त आपस में मिलने जुलने, भाषण करने तथा लिखने की स्वतन्त्रता से भी जनता को वञ्चित कर दिया गया। इस प्रकार विरोध प्रदर्शन के सभी उचित और वैधानिक तरीकों को रोक कर सरकार ने जनता की इच्छाओं और उचित प्रयत्नों को भी अपनी सारी शक्ति से दबाने का अवैधानिक ढङ्ग अपनाया। सरकार ने आन्दोलन को कुचलने के लिए बिना किसी संयम और अनुशासन के शक्ति का प्रयोग किया। एक तरह से सरकार ने स्वयं ही क़ानून को बालाये ताक़ रखकर अफसरों को स्वेच्छा चारिता और अन्याय की खुली आजादी दे दी। जनता गुण्डाशाही की शिकार बन गई। उस समय यदि कोई कानून था तो वह जङ्गल का कानून था।

मगर सरकार का यह क्रूर दमन चक्र जनता को डराने और शान्त करने में असफल रहा. जनता ने बड़ी बहादुरी के साथ उसका प्रतिरोध आरम्भ कर दिया। समाज के हर व्यक्ति ने राष्ट्रीय सम्मान की रक्षा तथा विदेशी शैतानी शासन को देश से उखाड़ फेंकने के लिये शक्ति भर प्रयत्न किया। सर्व साधारण में सरकार के विरुद्ध तीव्रतर असन्तोष और घृणा की भावना पैदा हो गई. और हरेक आदमी विदेशी शासन से मुक्ति पाने के लिये अपना सर्वस्व न्यौछावर करने को उद्यत हो गया। बड़े सम्पति शाली लोग दान से उदारता पूर्वक सहायता करने लग गये. मध्यम वर्ग के लोगों ने सब काम छोड़कर हड़ताल आरम्भ कर दी। नगरों में सब से अधिक विद्यार्थी समुदाय ने साहस और क्रिया-शीलता का परिचय दिया, हड़तालें की, जलूस निकाले, सभायें कीं, और सरकार की सभी आज्ञाओं की अवलेहना की। लाठी और गोलियों की बौछार उन्हें नहीं डरा सकी। दमन से प्रोत्तेजित होकर उन्होंने डाकखानों, पुलिस स्टेशनों, रेलवे स्टेशन और सरकारी दफ्तरों को बरबाद किया, तार काट डाले, खम्भे उखाड़ दिये, दूसरे लोगों ने भी उनका साथ दिया। शहरों में उनका यह सब काम सामूहिक रूप से थोड़े ही दिन चला। क्योंकि बाद में प्रायः संस्थाओं को बन्द कर दिया गया। इसके बाद विद्यार्थी गावों में जाकर क्रान्तिकारी कार्य करने लगे—गाँव की जनता तय्यार बैठी थी, अतः वहाँ विद्यार्थियों के कार्यक्रम का स्वागत हुआ, लेकिन क्रान्ति के साधन उनके पास नहीं थे, उन्होंने भी वही तरीके अख्तियार किये। मगर अधिकतर उनकी कोशिशें असङ्गठित, तथा इक्के दुक्के हुईं। निस्सन्देह जनता के रोष की इस लहर ने यह प्रकट कर दिया, कि अब अँग्रेजी राज्य की भारत में कोई आवश्यकता नहीं रह गई, और जनता विदेशी शासन के जुए

को उतार फेंकने के लिये समुत्सुक है। सारे देश में जहाँ-जहाँ सरकार ने जिस कोटि का अत्याचार किया वहीं वहीं आन्दोलन की गति भी तदनुकूल ही रही। दमन चक्र अन्धाधुन्ध और सामूहिक था इसलिए आन्दोलन भी सामूहिक और अन्धाधुन्ध चला। जब सरकार ने बदला लेने के तीव्रतर उपायों का सहारा लेकर, व्यक्ति-गत रूप से कार्यकर्ताओं का पीछा करना आरम्भ किया तो आन्दोलन गुप्त रूप से चलने लगा, और कार्यकर्ताओं ने आतङ्कवादी नीति ग्रहण कर ली। परिणाम स्वरूप जगह-जगह बम फटे। मगर बढ़ते हुये दमन और शक्ति के अधिकाधिक प्रयोग ने जनता को बिल्कुल आतङ्कित करके चिनगारी पर राख डालने जैसे ढङ्ग से शान्त कर दिया। लेकिन यह शान्ति क़ब्र की शान्ति हुई, जीवन की शान्ति नहीं।

सरकार की ओर से न्याय का ढोंग रच कर निरपराध जनता पर दोष सिद्ध किये गये और जालिम पुलिस तथा फौज साफ़-साफ़ ही नहीं बच गये, बल्कि उन्हें दण्ड के स्थान पर इनाम मिले और प्रशंसा पत्र मिला और यह स्वभाविक भी है। क्योंकि १९४२ की घटनाओं की जिम्मेदारी जिन लोगों पर है, उन्हीं का शासन अब तक हिन्दुस्तान पर बना हुआ है। १९४३ के केन्द्रीय एसेम्बली के फरवरी सेशन में जब मिस्टर के० सी० नियोगी ने यह प्रस्ताव रक्खा कि केन्द्रीय धारा सभा के सदस्यों की एक जाँच कमेटी द्वारा सन् १९४२ के आन्दोलन के सिलसिले में पुलिस और फ़ौजी ज्यादतियों की जाँच कराई जाय, उस समय गृह सदस्य सर रेजीनेल्ड मैक्सवैल ने बहस का उत्तर देते हुये यह कहने का दुस्साहस किया :—

"सरकार अपने अफसरों को मुलजिम बना कर कठघरे में खड़ा करने की हर एक तजवीज का विरोध करेगी। सरकारी नौकरों को उनकी सब उचित

कार्यवाहियों में सरकार का समर्थन प्राप्त होना चाहिये। सभा इस बात से सहमत होगी कि उपद्रवों के दबाने के लिये हर तरह के सुलभ साधन प्रयोग करने चाहिये। अगर सरकारी नौकरों को अपनी कार्यवाहियों के लिये जाँच का सामना करना पड़े तो क़ानून और व्यवस्था असम्भव हो जाएँगे, जैसा कि इस प्रस्ताव का आशय है। सुदृढ़ और आज्ञाकारी पुलिस तथा सरकारी नौकरों के बिना सभा के आदेश, और दूसरी आज्ञाएँ नहीं चल सकतीं।"

जब पिछले सेशन में इस प्रस्ताव पर बहस हुई तब से सरकार चुप नहीं बैठी रही, सरकार ने प्रान्तीय सरकारों को बहस की प्रतिलिपि भेजकर आदेश दे दिया कि इस मामले में जो उचित समझें करें। अनिश्चित और ढीले ढाले आरोपों के सम्बन्ध में कोई जाँच सम्भव नहीं, बहस में जितने भी आरोप लगाये गये वे सभी इसी क़िस्म के हैं और चित्र के एक ही पहलू पर प्रकाश डालते हैं।

"उदाहरणार्थ मिस्टर जमनादास की नन्दराबरा कहानी में इस वास्तविकता का कोई भी उल्लेख नहीं किया गया कि पुलिस को १००० से ऊपर की ऐसी भीड़ का सामना करना पड़ा जो उस पर पत्थर और ईंट आदि फेंक रही थी। पुलिस ने १६ बार गोली चलाई, १४ आदमी घायल हुये और ५ मरे। मगर उन घायल और मृतकों में से तीन सोलह वर्ष से कम की आयु के थे। सभा को यह भी स्मरण रखना चाहिये कि मिस्टर जमनादास मेहता स्वयं घटना स्थल पर उपस्थित न थे, और उनका वक्तव्य सुनी सुनाई बातों पर आधारित है।"

मिस्टर नियोगी:—"क्या माननीय महोदय वहाँ पर मौजूद थे?

सर रेजीनेल्ड—नहीं,

मिस्टर नियोगी—तब तो आपका वक्तव्य भी सुनी सुनाई बातों के आधार पर ही हैं।

"सरकार को यह बात बिल्कुल स्वीकार नहीं कि जनता को डराने की कोई नीति अख्तियार की, जैसा कि जमनादास जी का कथन है। अगस्त सन् ४२ के उपद्रवों को दबाने के लिये कोई ज्यादती नहीं की गई, और न कहीं शक्ति का आवश्यकता से अधिक प्रयोग किया गया। अगर कहीं कोई ज्यादती हो गई तो वह सरकार की किसी साधारण नीति का परिणाम नहीं बल्कि व्यक्तिगत थी। ज्यादती के ऐसे मामलों में सरकार ने उसके लिये जिम्मेदार व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही भी की। सी० पी० यू० पी० और देहली में पुलिस के खिलाफ चल रहे मुकदमे इस बात का प्रमाण हैं। चूंकि ये ज्यादतियाँ सरकार की किसी साधारण नीति का अंग नहीं थीं इसलिए सारे भारत वर्ष में जाँच कराने के लिए किसी कमेटी की आवश्यकता नहीं :

"सभा को स्मरण रहे कि पहले भीड़ ही हिन्सा पर उतारू हुई, इसके बाद पुलिस को कानून और अव्यवस्था बनाए रखने तथा सरकारी सम्पत्ति की रक्षा के लिए यह कठिन दायित्व अपने सर लेना पड़ा। गत नवम्बर के मध्य तक भीड़ के हिन्सात्मक आक्रमणों से पुलिस के ४९ आदमी मरे और १३६३ घायल हुए। भीड़ के ऐसे आक्रमणों से १९२ थाने और चौकियाँ नष्ट भ्रष्ट कर दिए गए। तथा ३९४ सरकारी भवनों, ३१८ रेलवे स्टेशनों और ३०९ डाकखानों और तार घरों को क्षति पहुँची।

१०३ रेलवे लाइनों को सख्त क्षति पहुँची, और तार तथा टेलीफोन की ११२८५ लाइनों का नुकसान हुआ, सैनिक सम्पत्ति नष्ट करने के लिए तीन

बेकार हुए। भीड़ के आक्रमण से फौज के १४ आदमी मरे तथा ७० घायल हुए। यह आँकड़े स्वयं बतला रहे हैं कि सरकार को इस देश में कितनी जबरदस्त बगावत का सामना करना पड़ा।"

जहाँ तक बेगुनाह स्त्री और बच्चों के मारे जाने का प्रश्न है वहाँ तक इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि भीड़ की हिन्सात्मक कार्यवाहियों को दबाने के सिलसिले में कहीं-कहीं ऐसी बेगुनाह जानें भी गईं। लेकिन यह सब जान बूझ कर नहीं किया गया। सभी को यह भी ध्यान रखना चाहिये कि भीड़ के हिन्सात्मक आक्रमणों और उपद्रवों से भारत वर्ष के विभिन्न भागों में किस प्रकार कितने ही बेगुनाह लोगों को कष्ट पहुँचा। सरकार किसी प्रकार की भी जाँच के विरुद्ध है और इस प्रकार के किसी भी प्रस्ताव का विरोध करेगी।"

गृह सदस्य का उपरोक्त वक्तव्य सरकार की आन्दोलन सम्बन्धी नीति पर प्रकाश डालता है, और इस विवाद का समर्थन करता है कि आन्दोलन को दबाने के लिये ऐसे पशुता पूर्ण दमन का आश्रय लिया गया जिसमें कितने ही बेगुनाह स्त्री और बच्चों की भी जानें गईं। यू० पी०, सी० पी० और देहली में पुलिस वालों पर मुकदमा चलाकर उनकी पशुता के लिये जो दण्ड दिये गये वह इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं कि पुलिस ने अन्य जगह भी कितने अत्याचार किये होंगे। न्याय के नाम पर ऐसी सब ज्यादतियों की पूरी-पूरी जाँच आवश्यक है। लेकिन अफसोस! उन लोगों से न्याय की माँग करना जिनकी सत्ता ही अन्याय पर अवलम्बित है, सरासर मूर्खता होगी कही जा सकती है। इसीलिये इस अन्याय की जाँच नहीं की गई और आज भी ब्रिटिश गवर्नमेंट हिन्दुस्तान में उसी तरह अकड़ती हुई

खड़ी है। यद्यपि न्याय, मनुष्यता, ईमानदारी और स्वतंत्रता की दृष्टि से आज उसकी दमड़ी भर भी वकत नहीं रह गई है।

आन्दोलन जनता की स्वतंत्रता प्राप्ति की अमर भावनाओं का सच्चा और सबल प्रतीक तथा अत्याचार, अन्याय, अमानुषिकता और गुलामी के विरुद्ध खुला विद्रोह था। लेकिन वह केवल इस कारण से सरलता पूर्वक दबा दिया गया कि उसके पीछे कोई निश्चित कार्यक्रम, संगठन और नेतृत्व नहीं था।

यहाँ हमें गान्धी जी के वह शब्द याद आते हैं जो उन्होंने मार्च सन् १९२२ में अहमदाबाद अदालत के सामने लिखित वक्तव्य के रूप में दिये थे। "एक तरफ एक सूक्ष्म परन्तु प्रभावशाली आतङ्कवाद की प्रणाली और एक संगठित शक्ति का प्रदर्शन तथा दूसरी तरफ प्रतिकार तथा आत्म रक्षा के अधिकारों का हर प्रकार से हनन, इन दोनों बातों ने जनता को बिल्कुल नपुन्सक बना दिया है।"

निस्सन्देह भारत की जनता इतनी नपुंसक बना दी गई है कि वह हिन्सा-अहिन्सा अथवा किसी अन्य मार्ग से भी कोई सफलता पूर्ण प्रतिरोध नहीं कर सकती। उनकी तो ऐसी बुरी दुखजनक अवस्था हो गई है कि उसे बदलने के लिये उन्हें सिर्फ धैर्य पूर्वक कष्ट ही नहीं सहना पड़ेगा बल्कि उन्हें अपने को तिल-तिल कर बरदान कर देने के लिये भी सन्नद्ध होना पड़ेगा।

श्रीमती सरोजनी देवी ने स्वतंत्रता दिवस (२६ जनवरी १९४४) पर काँग्रेस के अनुगामियों के लिये एक सन्देश में कहा था "हमें एक स्वर से बोलना होगा, एक इच्छा से काम करना होगा जिससे

काँग्रेस जिन मूल सिद्धान्तों पर खड़ी है उनमें किसी प्रकार के फेर फार और व्यक्तिगत टीका-टिप्पणी की कोई गुञ्जाइश न रह जाय।

हम लोगों के लिये या तो सिर्फ शान्ति का सम्मान पूर्ण खुला हुआ रास्ता हो सकता है या कुरबानी का संकटापन्न दुर्गम चट्टानी मार्ग जो निश्चित रूप से हमें स्वतंत्रता के पथ पर अग्रसर कर सकेगा।

इसलिये हमें अपराजित श्रद्धा और अजेय साहस के साथ अपने पवित्र और शानदार ध्येय की पूर्ति में लग जाना चाहिये। और आधुनिक इतिहास में हमें अपना नाम उन बहादुर से बहादुर लोगों में लिखना चाहिये, जिन्होंने इस भूमण्डल को सुशोभित किया और जिनका यशगान आज भी गाया जाता है।

———

पांचवां भाग

सरकारी ज्यादतियाँ

पांचवाँ भाग

सरकारी ज्यादतियाँ

प्रथम अध्याय

सामूहिक दमन के लिये सरकारी जिम्मेदारी

आठ अगस्त सन् ४२ को अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी के बम्बई अधिवेशन में गान्धी जी ने जो भाषण दिया था उसमें उन्होंने ब्रिटिश गवर्नमेंट से भारतवर्ष की स्वतंत्रता के लिये विश्वशान्ति के नाम पर मार्मिक अपील करते हुए स्पष्ट घोषणा की थी कि किसी प्रकार का भी आन्दोलन छेड़ने के पूर्व, वे वायसराय से बातचीत करके शान्तिपूर्ण समझौते का कोई रास्ता निकालेंगे, उन्होंने उक्त भाषण में बराबर अहिन्सा और शान्ति पर जोर दिया था, लेकिन उसकी रिपोर्ट सम्भवतः सरकार के कानों तक पहुँच भी न पाई थी कि सरकार ने अपने दमन का प्रोग्राम देश भर में भेज दिया और जिसके अनुसार अगले दिन प्रातः ही सब नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। अपने उक्त भाषण में गान्धी जी ने सयुक्त राष्ट्र और ब्रिटेन को सम्बोधित करते हुए कहा था:– "उनके लिये जीवन में यह दुर्लभ अवसर प्राप्त हुआ है जबकि वे भारतीय स्वतंत्रता की घोषणा करके अपने बार-बार किये हुये वादों को

सचाई सिद्ध कर दें। अगर वे इस अवसर को खो देते हैं तो इस जीवन में उन्हें दुबारा ऐसा अवसर नहीं मिलेगा, क्योंकि ऐसे अवसर जीवन में बार-बार नहीं आया करते और इतिहास कहेगा कि हिन्दुस्तान के प्रति उन्होंने अपना कर्त्तव्य पालन करके उससे उऋण होने का स्वयं अवसर खो दिया।"

मगर भारत सरकार दिल्ली में बिलकुल तुली हुई बैठी थी कि ज्यों हीं 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पास किया जाय त्यों ही चूहे पर बिल्ली की भाँति दौड़ पड़े। उसके बाद सरकार किसी बात पर भी ध्यान देना नहीं चाहती थी, और न वह कांग्रेस के दृष्टिकोण को समझने के लिये ही तय्यार थी। गान्धी जी ने अपने भाषण में जो कहा, न उसे सुना गया और न उस पर विचार किया गया। समझौते का द्वार बन्द कर दिया गया, तथा कांग्रेस को गैर कानूनी संस्था घोषित करके उसके नेताओं के साथ चोर उचक्कों जैसा व्यवहार किया गया। दमन आरम्भ हो गया, और सभी जगह कांग्रेस नेता और उनके अनुगामी गिरफ्तार किये गये, लाठी के प्रहारों, गोली की बोछारों और अश्रुगैस द्वारा उनका स्वागत किया गया। यह दमन चक्र सुचारु रूप से भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक सरकार की निर्धारित नीति के अनुसार चलाया गया।

बम्बई अधिवेशन में निश्चित हुआ था कि यदि आवश्यकता हुई तो आन्दोलन की रूप रेखा गान्धी जी द्वारा निश्चित की जायगी, पर सरकार वास्तविकता को क्यों देखने लगी, उसने तो गिरफ्तारी और दमन के लिये पहले ही से अपना कार्यक्रम बना रक्खा था, उसको फौरन कार्यान्वित करते हुये काँग्रेस को बरबाद करने के लिये उस पर जबरदस्त आक्रमण कर

दिया गया।

यहाँ पर हम नीचे के० सी० नियोगी के एक भाषण से कुछ उद्धरण देते हैं। (यह भाषण उन्होंने सितम्बर सन् १६४२ में केन्द्रीय धारासभा में पुलिस और फौज द्वारा की गई ज्यादतियों के सम्बन्ध में जाँच की माँग करते हुये दिया था।)

"मैंने जाँच के लिये एक कमेटी की माँग की है और मैं समझता हूँ कि सरकार इस माँग की पूर्ति के लिये बिलकुल तय्यार नहीं है। यहाँ मैं अवश्य कहूँगा कि मैं सरकार के इस रवैये के लिये पहले से ही तैयार हूँ, क्योंकि मध्य-प्रान्त और युक्त-प्रान्त की सरकारों के ऐसे गुप्त सरकारी सन्देश हमें देखने को मिले हैं जिनसे जाँच के प्रति उनकी जबरदस्त विरोधी भावना प्रकट होती है, मध्य-प्रान्त की सरकार ने तो यहां तक व्यक्त किया है कि आन्दोलन को दबाने के लिये की गई कार्रवाहियों के सम्बन्ध में किसी प्रकार की जाँच के लिये भी वह तैयार नहीं। क्योंकि उससे उपद्रव-शान्ति के लिये प्रयोग की गई शक्तियों से पुलिस और सेना का मोरेल (*Moral*) बिगड़ जायगा। मैंने पहले ही, सभा के सामने उपद्रव को दबाने के लिये सरकार द्वारा नियुक्त विशेष योजना का खाका खींचा था। मध्यप्रान्त की सरकार तो उस योजना से भी एक कदम आगे बढ़ गई है। उसने हाईकोर्ट बार एसोशियेशन को पुलिस की ज्यादतियों के सम्बंध में गैर सरकारी जांच तक की इजाजत देने से भी इन्कार कर दिया।

जहाँ तक युक्त-प्रान्त की सरकार का सम्बन्ध है, वह चाहती है कि "पुलिस का मोरेल (*Moral*) बहुत ऊँचा है" —बेशक, उनका मोरेल

जितना ऊँचा है, वह मेरे दिये गए उदाहरणों से सभा को पहले ही स्पष्ट हो चुका है। इन्सपैक्टर जनरल आफ़ पुलिस ने उनको जो सूत्रवाक्य दिया है वह यह है "जनता की रक्षा करो"। हम अच्छी तरह से जानते हैं कि वह किस तरह से जनता को लूटकर अपने को धनी बनाते और उनकी सम्पत्ति को जलाकर उनकी रक्षा करते आए हैं। संयुक्त प्रान्तीय सरकार ने तो अपने सरकारी सन्देश द्वारा निर्मम रूप से कह दिया है कि उपद्रवों के सम्बन्ध में हुई घटनाओं की वह कोई जाँच कराना नहीं चाहती है। इन सरकारी सन्देशों से एक ही परिणाम निकलता है, वह यह कि जिन कार्यवाहियों की ओर मैंने सभा का ध्यान आकर्षित किया है, जान-बूझ कर की गई हैं, और सर्वत्र ही इन प्रान्तीय शासकों की जानकारी में और उनकी सहमति से एक सी नीति का अनुसरण किया गया है। इन दोनों प्रान्तीय-सरकारों की घोषणाओं से पुलिस और फ़ौज को अपनी अनुचित और अत्याचार-पूर्ण कार्यवाहियों को जारी रखने के लिये प्रोत्साहन मिले बिना नहीं रहेगा, और बेगुनाह जनता को तबाह करने वाली उनकी बर्बरता और नृशंसता-पूर्ण कार्यवाहियों के लिए खुला लाइसेन्स मिल जायगा। इससे स्थिति और भी भयावह हो जायगी। मुझे कोई ऐसी चीज कहने की इच्छा नहीं और न मैं गवर्नमेण्ट से कोई ऐसी चीज करने के लिए कहूँगा जिससे स्थिति को काबू में करने के लिए शक्ति का उचित प्रयोग करने में किसी प्रकार से भी उसके हाथ कमजोर हों। किन्तु यहाँ सरकार को मैं यह चेतावनी दिए बिना नहीं रहूँगा कि उसने पहिले ही स्थिति को अपने काबू से बाहर कर दिया है और यह उपयुक्त अवसर है जब उसे अपनी स्वेच्छाचारी शक्तियों को नियन्त्रण में रखने के लिए प्रयत्न करना चाहिए, जिन्हें उसने

बेगुनाह लोगों पर जुल्म करने के लिए अब तक छोड़ रक्खा था।"

यहाँ हम मिस्टर नियोगी के समर्थन में दिए गए मिस्टर एन० एम० जोशी के भाषण से भी कुछ अंश उद्धृत करते हैं:—"मैं भारत सरकार को इस जिम्मेदारी से बरी नहीं कर सकता जिससे काँग्रेस नेताओं की गिरफ्तारी की दुर्नीति के कारण मुल्क में खून खराबी और हिन्सा के कारनामे हुए हैं। सरकारी प्रतिनिधियों के भाषणों से यह स्पष्ट है कि अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी के बम्बई वाले प्रस्ताव के पास होने और मुल्क में जो हिन्सा के कारनामे हुए उसके बीच में काँग्रेस की ओर से कोई कार्यवाही नहीं की गई। गवर्नमेण्ट को इतना समझना चाहिए था कि उक्त प्रस्ताव और हिन्सात्मक कार्यवाहियों के बीच में केवल एक ही घटना घटी और वह थी सरकार द्वारा काँग्रेस नेताओं की गिरफ्तारी। मेरा खयाल था कि सरकारी सदस्य ईमानदार हैं, वे स्वयं इस बात को स्वीकार कर लेंगे कि काँग्रेस नेताओं की गिरफ्तारी ही ने कुछ हद तक जनता को हिन्सात्मक-विरोधी कार्यवाहियों के लिये उत्तेजित किया।

यहाँ यह बात विशेष रूप से विचारणीय है कि हम इन ज्यादतियों की जाँच चाहते हैं। भारत सरकार यह तो नहीं कहेगी कि ज्यादतियों की कोई सम्भावना ही नहीं। माननीय गृह सदस्य ने पिछले दिन अपने भाषण में कहा था कि अगर अन्याय और ज्यादती के कोई मामले हों तो उन्हें प्रान्तीय सरकारों या फौजी अधिकारियों के नोटिस में लाना चाहिए, वे अवश्य ही न्याय करेंगे। हमारा खयाल है कि इन मामलात में न तो प्रान्तीय सरकार ही, न फौजी अधिकारी ही, और न सर्वोपरि भारत सरकार ही न्याय करेगी। प्रान्तीय सरकारों ने तो पहले ही एलान कर दिया है कि वे किसी तरह की सार्वजनिक

जाँच के लिये तैयार नहीं और इस तरह की घोषणा करके उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से पुलिस और फौज द्वारा की गई कुछ ज्यादतियों को प्रोत्साहन ही दिया है। यहाँ मैं यह भी कहूँगा कि स्थानीय अधिकारियों तथा प्रान्तीय सरकारों को इन मामलों में पूर्ण स्वतंत्रता देकर स्वयं भारत सरकार ने भी देश के विभिन्न भागों में बहुत से अवसरों पर होने वाली ज्यादतियों को बढ़ावा दिया है।

इसलिए मैं महसूस करता हूँ कि भारत सरकार को धारा सभा की यह चुनौती स्वीकार करते हुए सत्यासत्य का निर्णय करने का प्रयत्न करना चाहिए। अगर भारतीय सरकार के अफसरों ने कोई गलती नहीं की है, तो कमेटी उन्हें निर्दोष घोषित कर देगी, किन्तु उन्होंने गलती की है तो कमेटी उन्हें अवश्य ही दोषी घोषित करेगी। मैं नहीं जानता हूँ कि पुलिस या फौजी अफसरों को कोई दण्ड दिया जायगा या नहीं लेकिन मुझे भय है कि इन ज्यादतियों के लिए जिम्मेदार उच्चतम अधिकारी (प्रान्तीय सरकारें) जाँच कमेटी के अपने विरुद्ध—निर्णय के परिणामों से भी साफ-साफ बच जाँयगी। इन शब्दों के साथ, मैं मिस्टर नियोगी के प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ"

पुलिस और फौज द्वारा की गई ज्यादतियों की जाँच से भी सरकार का साफ इन्कार कर देना इस बात का प्रत्यक्ष और प्रबल प्रमाण है कि भारत सरकार ही देश में हुए क्रूर दमन के लिए जिम्मेवार है।

रायबहादुर श्रीनारायण मेहता ने तेईस सितम्बर को काउन्सिल आफ स्टेट के अपने भाषण में कहा था "यह न तो विद्यार्थियों का आन्दोलन है, न ही कांग्रेस का और न युद्धोद्योग को समाप्त करने के लिए [illegible]

प्रयत्न। यह तो एक समूचे राष्ट्र का हताश होकर अपनी जान पर खेल जाना जैसा है। जिसके सामने आपने बार-बार राजनीतिक स्वतन्त्रता के झूँठे वादे किए हैं, जो राष्ट्र मानवीय धैर्य की सीमा को लाँघकर असाधारण रूप से उत्तेजित हो गया है, जिस राष्ट्र से उस आजादी की रक्षा के लिए लड़ने को कहा जाता है, जिसका वह स्वयं उपभोग नहीं कर पाता।"

मिस्टर नियोगी ने अपने केन्द्रीय धारा सभा वाले भाषण में सत्रह सितम्बर को कहा था :—

"हाल के हुए उपद्रवों के कई संयुक्त कारण हैं, जिनमें से सीधे तौर पर सभी राजनीतिक नहीं हैं। मुल्क में बहुत समय से फैले हुए असन्तोष की उपेक्षा करके सरकार ने स्वयं ही अनजान में उस जबरदस्त खलबली की भूमिका तय्यार करने में सहायता की है, जिसे हम आज देख रहे हैं। साधारण आर्थिक कठिनाई जिसका ब्रिटिश राज्य के साथ सम्बन्ध है, इधर कुछ दिनों से प्रगति के साथ बढ़ती चली जा रही है। वैसे भारतवर्ष की जनता अधिकतर अधपेट रहती ही थी पर लड़ाई ने तो उन्हें सचमुच उपवास-मरण के समीप पहुँचा दिया है। उनकी छोटी मोटी आवश्यकताओं की दूसरी चीजें भी दिन-दिन दुर्लभ होती जा रही हैं और उन वस्तुओं का मूल्य असाधारण रूप से बढ़ गया है। अच्छे से अच्छे समय में भी डाक्टरी सहायता का उनके लिये कोई प्रबन्ध नहीं रहता अब तो अधिसंख्यक लोगों के लिये वह नितान्त अप्राप्य वस्तु हो गई है। जब इस तरह से जनता की शारिरिक स्थिति ही खतरे में पड़ गई थी तब क्रूर सरकार की विचार रहित और हृदयहीन उन कार्यवाहियों से जिनके द्वारा सरकार ने हवाई अड्डों आदि के निर्माणार्थ हजारों गरीब और अशिक्षित लोगों को

विकास स्थान तथा खेतों आदि से बेदखल कर दिया, उससे अवश्य ही उनके हृदय से राज्य भक्ति की बची खुची भावनाएँ भी खो गईं। पिछले कई महीने से इस तरह की शिकायतें सुनने में आती रही हैं।

जबकि जनता में इस तरह से तीव्र कटुता की भावनाएँ पैदा हो गई, थीं, उसी समय बर्मा से भागे हुए हिन्दुस्तानी, अँग्रेजों द्वारा अपने ऊपर किए गये अभूतपूर्व अत्याचार और अपमान के समाचार भारत में लाये। इससे वर्तमान सरकार के प्रति सारे देश में असंतोष और घृणाभावना भनभना उठीं, अभी मुझे एक मित्र शेख रफीउद्दीन अहमद सद्दीकी का चटगाँव से छपा सन्देश मिला है, स्वास्थ्य खराब होने से वे स्वयं इस समय सभा में उपस्थित नहीं हैं, सन्देश इस प्रकार है—"सरकार हिन्दुस्तानी भागे हुये लोगों के लिये कुछ भी नहीं कर रही है, उन बेचारों के पास न घर है न चूल्हा चक्की और न खाना तथा कपड़ा। ये बेचारे गरीब लोग चटगाँव में अपने बाल बच्चों के साथ खानाबदोशों की तरह दर-दर भीख माँगते फिर रहे हैं, बहुतेरे अब भी रोजाना बर्मा से पैदल चटगाँव आ रहे हैं, अगर आप उनकी करुणा जनक अवस्था को देखें तो आपकी आँखों में आँसू आ जायँ। इन अभागों के साथ सरकार के अत्यन्त विषम और असहानुभूति पूर्ण बर्ताव की जितनी भी निन्दा की जाय, थोड़ी है।"

सामूहिक असंतोष और विद्वेष की इस भावना के प्रकाश में ही हमें अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी के निराशा प्रेरित निर्णय को तोलना चाहिये। ऐसा करते समय काँग्रेस लीडरों की गिरफ्तारी से हुई दूषित प्रतिक्रिया को भी ध्यान में रखना चाहिये।

उन चिन्ताजनक दिनों में जबकि राजधानी में भी गुण्डाशाही जोरों पर थी, सेन्सर के बावजूद बड़े भयङ्कर विवरण सुनने को मिले हैं, जिनसे केवल देहली की स्थिति का ही नहीं बल्कि सूबों की स्थिति का भी पता चला है, और किसी भी निष्पक्ष निरीक्षक के मन को तनिक भी सन्देह नहीं रह जायगा कि डायर और ओडायर के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी, जिनका आज नई दिल्ली में आधिपत्य है उन्होंने सारे देश में आतङ्क-राज्य आरम्भ कर दिया है।

आतङ्क-राज्य हमारे दूसरे अध्याय का विषय है। यह अध्याय तो उसकी भूमिका मात्र है।

———

द्वितयी अध्याय

आतङ्क का राज्य

❀❀❀❀❀

१९४२ के आठ अगस्त वाले ऐतिहासिक प्रस्ताव के दिन से ही भारत सरकार के अच्छे-अच्छे दिमाग सिर्फ गाँधी और काँग्रेस का भारतीय भूमि से नामोनिशान मिटा देने में ही व्यस्त हैं। इस व्यर्थ योजना को कार्यान्वित करने की पागलों जैसी धुन में उन्होंने तुच्छ से तुच्छ और बहुत सी नीचता पूर्ण कार्रवाहियाँ कर डाली हैं। जहाँ तक जुल्म और अत्याचार का सम्बन्ध है, उन्होंने बड़े से बड़े जालिम को भी मात कर दिया है।

सरकार की मानसिक स्थिति का बहुत ही सुन्दर और पूर्ण आभास बम्बई के फिल्म सेन्सर बोर्ड के उस कृत्य से मिलता है जिसके अनुसार उसने महात्मा गाँधी तथा दूसरे कारागार वासी नेताओं के चित्र प्रदर्शन पर भी रोक लगादी। सरकार की इस कार्रवाही का इसके अतिरिक्त उद्देश नहीं कि भारत अपने उन नेताओं को भूल जाय, जिन्होंने अपना सारा जीवन देश तथा मनुष्यता की सेवा में अर्पित कर दिया है, और जो आज जगह-जगह भारतीय जेलों और नजर बंद कैम्पों में बन्द पड़े हैं।

भारतीय सरकार के इस कुकृत्य की समालोचना करते हुए बम्बई के साउण्ड (Sounc) नामक समाचार पत्र ने अपने दिसम्बर सन् १९४५ के अङ्क में बड़े सही और समयोचित शब्दों में सरकार को इस प्रकार चेतावनी दी।:—

"उनके लिए यह काम बहुत कठिन है कि महात्मा गाँधी जैसे महान व्यक्तित्व को राष्ट्र के हृदय से विस्मृत करा दें। महात्मा गान्धी वह व्यक्ति हैं जिन्होंने भारतीय इतिहास में एक पवित्र और सर्वोत्तम स्थान प्राप्त कर लिया है, जिनको लोग उनके जीवन काल में ही ईसा मसीह से सन्तुलित कर रहे हैं।

बड़े-बड़े नगरों को ध्वस्त करने के लिए सफलता पूर्वक शक्ति का उपयोग किया जा सकता है, उसके द्वारा बड़े-बड़े महाद्वीपों को भी जलाया जा सकता है, बड़ी से बड़ी आबादी का भी कत्ले-आम किया जा सकता है। लेकिन बर्बर युग से लेकर आज तक के खूँख्वार युग तक कोई भी ऐसा शक्तिशाली भयङ्कर अस्त्र आविष्कृत नहीं हुआ है, जो मनुष्यों के हृदयों से किसी देशभक्त की स्मृति को बिलकुल मिटादे या उन बहादुर लोगों के प्रति, भावी पीढ़ियों की सम्मान भावना समाप्त कर सके, जिन्होंने अपना सर्वस्व देशोत्थान के लिए बलिदान कर दिया हो। बदूकें, हवाई जहाज और लाठियाँ कुछ हद तक किसी मूर्ति या पूजनीय पदार्थ को उसके स्थान से हटा देने में समर्थ हो सकती हैं, लेकिन पृथ्वी पर ऐसी कोई शक्ति और सत्ता नहीं जो इतनी महान हो, कि किसी के हृदय से किसी की स्मृति को, जिसे वह बनाए रखना चाहता है मिटादे। नाज़ियों ने अधिकृत योरोप के प्रान्तों में यह अच्छी तरह जान लिया है और जापानियों ने अधिकृत चीन में भली प्रकार यह अनुभव कर लिया है। तथा वह समय दूर नहीं जब अँग्रेज भी भारत में इसे महसूस किए बिना न रह सकेंगे।

निरंकुश सरकार के अधिकारियों पर उनके इस अन्तिम कदम की व्यर्थता सिद्ध करने का प्रयत्न करना व्यर्थ है, जो उन्होंने भारत के वास्तविक नेताओं

को नीचा दिखाने के लिए उठाया है। सारी दुनिया इस सचाई को जानती है, सच वह चीज है जिसको दबाया नहीं जा सकता। नए-नए काले कानून जारी किए जा सकते हैं जिनके द्वारा काँग्रेस नेताओं की मूर्तियाँ और चित्रों को बनाना, सजाना और मढ़ाना मना किया जा सकता है। घर-घर तलाशियाँ करके सरकार इन नेताओं की उसे अप्रिय लगने वाली तसवीरों को हिन्दुस्तान के करोड़ों घरों में जहाँ वे बहुत ही सुन्दर तरीकों पर उच्च स्थान प्राप्त कर रही हैं, छीन सकती है, फिर भी वह अपने ध्येय में तब तक सफल नहीं हो सकती जब तक उसे कोई इतनी बड़ी मजबूत और तेज कैंची न मिल जाय जो चालीस करोड़ हिन्दुस्तानियों के हृदयों तक पहुँच उन्हें कुतर-कुतर कर टुकड़े-टुकड़े न कर डाले। भारत और संसार उस नंगे फकीर को कभी भी नहीं भूल सकेगा जिसने हिन्दुस्तान के इतिहास का एक शानदार पन्ना लिखा है और एक-एक शब्द, एक-एक कार्य तथा एक-एक घटना की छाप इस विस्तृत प्रायद्वीप के धधकते हुए हृदयों पर लगादी है। जब तक उक्त प्रकार की कैंची सरकार को नहीं मिल पाती तब तक तो भारत इन सैन्सर की कैंचियों का मखौल उड़ाता रहेगा, और उन्हें अधिक से अधिक अपनी काट छाँट का करिश्मा दिखाने की चुनौती देता रहेगा!"

श्रीमती सरोजनी देवी के स्मरणीय शब्दों में उस अर्धनाटकीय और सार्वजनिक गिरफ्तारी के अभिनय को सरकार की राक्षसीय हिन्सा कहा जा सकता है।

इन गिरफ्तारियों के बाद सारे भारत में भयङ्कर आतङ्क-राज्य का सूत्र-पात किया गया, कुछ प्रदेश तो इस तरह से अलग कर दिये गये कि जहाँ पहुंचना

ही असम्भव होगया, लोगों को उनके घरों से निकालकर पुलिस ने अंधाधुन्ध मारा, सार्वजनिक मार्गों पर तो कोई भी सुरक्षित न रहा।

१६ नवम्बर सन् ४२ के डाक्टर श्यामा प्रसाद मुकर्जी द्वारा बंगाल गर्वनर को लिखे पत्र का उद्धरण:—"यदि अपने देश को स्वतंत्र करने की इच्छा करना, और विदेशी नियंत्रण को नष्ट करना। अपराध है तो हर एक आत्म सम्मानीय भारतीय अपराधी है। आज भारत के शासन कर्त्ता देश के नगरों और गाँवों की सड़कों तथा गलियों में पाँचवे दस्ते का ही स्वप्न देखते हैं। यदि पाँचवे दस्ते का अभिप्राय भारत—हित विरोध है, तो यही महानुभाव इस श्रेणी में आते हैं। असंख्य भारतीय जापान और दूसरे धुरी राष्ट्रों के साथ कोई सहानुभूति नहीं रख सकते। हम भारतीय, जापान को अपने देश में आमन्त्रित करने के लिये क्यों इच्छुक हों? जब तुमको ही अपने घर वापिस भेजने के लिये आतुर हैं तो क्या कारण हो सकता हैं कि हम अपने देश में नए विदेशी शासकों का स्वागत करें। हम तो विदेशी राज्य का तुरन्त अन्त चाहते हैं। हम इस देश के अन्दर अपना शासन स्वयं करना चाहते हैं। साम्राज्यवाद की पिपासा पर भारत का बहुत बलिदान हो चुका। उदार संरक्षण का सिद्धात आज स्पष्ट हो गया, अब आप हमारी आँखों में और अधिक धूल नहीं झोंक सकते। इसलिए भारतीय प्रतिनिधि आज स्वशासन की माँग करते हैं, जिस शासन में वह निरंकुश नौकरशाही और गपलेबाज गर्वनरों का हस्तक्षेप सहन नहीं कर सकते। भारत और अङ्गरेजों में पारस्परिक सहयोग के लिये बहुत स्थान था, विशेषकर जब दोनों के लिये समान भय सामने खड़ा है। हम यह महसूस करते हैं कि आज हमारा ध्यान पूर्ण रूप से लड़ाई पर केन्द्रित होना चाहिए, परन्तु यह भारत और इङ्गलैण्ड की पारस्परिक तथा स्वतंत्र सदेच्छा पर ही

अवलम्बित होने चाहिए। भारत सरकार यह जानने में असमर्थ रही कि भारत को उस उग्र कार्य क्षेत्र में नहीं लाया जा सकता, जिसमें कि रूस और चीन संलग्न हैं। यह तब तक नहीं हो सकता जब तक भारतीय, स्वतंत्रता-रूप आजादी प्राप्त कर सर्वस्व बलिदान करने के लिये उतारू न हो जाँय। यदि आपका यह कथन सत्य है, कि आप नई दुनियाँ का संगठन चाहते हैं तो आप भारतीय स्वतंत्रता स्वीकार करने में क्यों हिचकते हैं? क्या यह आपका दम्भ नहीं है, यह सब न करके तीन महीने से सरकार ने ऐसा आतंक राज्य फैला रक्खा है, क्या यह सब निरंकुश राज्य नहीं है? इन महीनों में भारतीय जनता ने गोली का भय भगा दिया। अब भारत को बन्धन में रखने के लिए आपके पास क्या शक्ति हो सकती है। आज भारत में असन्तोष और कटुता फैली हुई है, संसार में असहाय और निशस्त्र लोगों से लड़ना बहुत सरल है। कुछ अंग्रेजों का कथन है कि भारत ने लड़ाई से अलग रहना घोषित कर दिया है। यदि उनका यह विश्वास है तो वह हमें आज्ञा दें, लड़कर दिखा देंगे। आज सबसे भयङ्कर चिन्ह तो यह है कि वे इतने हताश हो गये हैं कि वर्तमान अत्याचार का अन्त करके वह किसी भी परिवर्तन का स्वागत करने को तय्यार हैं। अंग्रेज यह भूल जाते हैं कि वे भारत और धुरी राष्ट्रों से एक साथ नहीं लड़ सकते। वास्तव में यह दुख की बात है कि राजनीतिक दिवालियेपन के कारण भारतीयों की सदेच्छा और सहयोग की भावना अविश्वास और विरोध में परिणत हो गई है। बहुत से शासकों ने अपने मस्तिष्क का सन्तुलन भङ्ग कर दिया है और आज वह भारतीयों के प्रति अपनी शत्रुता को छिपा नहीं सकते। मैं यह नहीं कहना चाहता कि पिछले तीन महीनों में जो दुर्घटनाएँ हुई हैं उनसे देश स्वतंत्र हो जायगा। देश

की तत्कालीन अव्यवस्था तो समाप्त होनी ही चाहिए। हिंसा और प्रतिहिंसा आज दूषित चक्र में चल रही हैं, जिसने सारे देश के बर्ताव को विक्षुब्ध कर दिया हैं। तुम भारत की अशान्ति के मूल कारण को खोजने में असफल रहे, यदि भारत में पुनः शान्ति का साम्राज्य स्थापित करना है तो भारत की स्वातंत्र क्षुधा को तृप्त करना होगा। केवल बाह्य लक्षणों के दमन से शक्ति स्थापित नहीं हो सकती, इससे तो भारत और इङ्गलैण्ड के बीच से लड़ाई और चली जायगी। केवल बन्दूकों के बल भारत पर शासन नहीं किया जा सकेगा। स्वयं समझदार अंग्रेज और प्रभावशाली अमेरिकन तथा चीनी जनमत के नेता भी सामयिक चेतावनी दे रहे हैं, लेकिन, शान और अधिकार की झूँठी चाह तर्क और न्याय का गला घोंट रही है।

श्री के० सी० नियोगी ने सत्रह सितम्बर सन् ४२ को केन्द्रीय धारा सभा में अपना भाषण देते हुए कहा, "हिन्सा और उखाड़ पछाड़ के कामों को दबाने के नाम पर अंग्रेजों ने जो पाशविक अत्याचार किये वह धुरी राष्ट्रों के कृत्यों की याद दिलाते हैं। गुण्डों की हुल्लड़ शाही का जवाब अमन और कानून के नाम पर उसी घृणित आतङ्कवाद से दिया गया। जसका समर्थन किसी भारतीय रियासत का दीवान तक नहीं कर सकता। थोड़े से व्यक्तियों के अपराध के लिये समाज को दण्डित किया गया जिसका कि तरह से सामूहिक या जुरमाने करके निर्दोष जनता के साथ नाजी ढंग से बुरा बर्ताव किया गया। दोषी और निर्दोषी में बिना भेद किये सबके ऊपर अपमान, दुर्व्यवहार, हमले और मौत के वार किए गए। समाज में स्थान का ध्यान किए बिना निर्दोष भारतीयों (जैसे नागपुर के सर माधव राव देश पाण्डे) से सड़कों

का कूड़ा उठवाया गया। इसका अभिप्राय यह था कि भारतीय जनता पर अंग्रेजी शक्ति का प्रदर्शन किया जाय। सर कावस जी जहाँगीर को यह समझ कर प्रसन्न नहीं होना चाहिए कि वे इस दुर्व्यवहार से वञ्चित रह सकते हैं। जख्मियों को सरकारी अस्पतालों में आवश्यक दवा-दारू तक नहीं दी गई क्योंकि वे विद्रोही थे।

आज आतङ्क ही भारत में अंग्रेजी राज्य की शक्ति का द्योतक है। परन्तु सच्चे समाचारों का दमन करने में नैतिक भीरुता स्पष्ट है। इसके साथ ही मित्र देशों में जन मत पर नियन्त्रण करने के लिए सरकारी ढङ्ग से समाचार प्रकाशित किए जा रहे हैं। समाचार पत्रों पर इस प्रकार नियन्त्रण कर लिया गया है कि सरकार से स्वीकृत हुये बिना कोई भी समाचार प्रकाशित नहीं हो सकता। सरकार के मतानुसार भारत के पत्र या तो उसके आधीन रहें या समाप्त कर दिये जाँय। हमारे मित्र श्री आर्थर मूर को स्टेटमैन के सम्पादकत्व से इसीलिये अलग कर दिया कि उन्होंने भारतीयों के पक्ष में मत प्रकाश किया था। गृह सचिव तो इसी सिद्धान्त में विश्वास करते हैं कि भारत तलवार से जीता गया और तलवार से ही इस पर शासन करना चाहिये, समझौता करना उनके मार्ग में नहीं।"

श्री नियोगी ने सरकार के खिलाफ आरोपों को छै श्रेणियों में विभक्त किया, जिनके ऊपर हम भी विषद प्रकाश डालेंगे।

१—पहला और प्रमुख काम पुलिस और फौज के द्वारा लूट तथा सम्पत्ति को आग आदि लगाकर हानि पहुँचाना था, यह घटनाएँ विशेषतः बिहार और संयुक्त-प्रान्त के ग्रामों में हुईं।

२—केवल लोगों को आतङ्कित करने के लिए अन्धाधुन्ध गोलियों

का चलाना।

३—जहाँ-जहाँ कोई गड़बड़ी हुई वहाँ उपद्रवकारियों के बाद निर्दोष जनता पर अन्धाधुन्ध गोलियाँ बरसाई गईं। जिस का अभिप्राय अपराधियों को दण्डित करना नहीं अपितु जनता को आतङ्कित करना था।

४—बिना चेतावनी दिए हुए अहिंसक जनता पर गोली और लाठियाँ बरसाई गईं। करफ्यू आर्डर की तनिक भी अवहेलना करने पर निर्दोष और अनभिज्ञ लोगों के ऊपर गोली चलाई गई, जिसके परिणामस्वरूप बहुत से आदमी तुरन्त मर गये।

५—अहिंसक भीड़ को तितर बितर करने में अत्याधिक बल का प्रयोग किया गया।

६— जिस सिद्धान्त से सामूहिक जुरमाने किये थे, उसी प्रकार व्यक्तियों पर निर्दयता पूर्ण हमले, खास तौर से कोड़े, और अनेक तरह से अपमानित किया गया। इन घटनाओं से कुछ स्थानों पर मृत्यु तक हो गई।

भारत से बरतने के आपके तरीके उतने ही पुराने हैं, जैसे कि आपने कभी अमेरिका के साथ बरते थे। आपने अंग्रेजी फौजें भा[illegible]नयों के विरुद्ध लड़ने को भेजी हैं या भारत पर अत्याचार ढाने को ? आज भारत में भोले से भोला ग्रामीण भी अँग्रेजों के शान्ति और व्यवस्था स्थापित करने के साधनों की धुरी राष्ट्रों के तरीकों से तुलना करने लगा है। राजनीतिकता की माँग है कि असंतोष के कारणों को जड़ से उखाड़ कर जनता से समझौता किया जाय, जिससे भारत स्वतन्त्र राष्ट्रों में स्वतन्त्र और समान भागीदार गिना जा सके। आप बल प्रयोग से सार्वजनिक आन्दोलन को दबा तो सकते हैं, लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से सङ्कटाकीर्ण अवसर आपकी प्रतीक्षा करता

रहेगा। समझौता आपका आदर्श होना चाहिए, और यदि आप अपने सत्ता-बल को छोड़ सकें तो समझौता तुरन्त सम्भव है।"

(श्री नारायण मेहता के २३ सितम्बर ४२ के कौंसिल में दिये गये भाषण से उद्धृत)

भारत के राज भक्त और नरमदल के राजनीतिज्ञों की चेतावनी भी ठुकरा कर पागलपन जैसी बौखलाहट से दमन नीति को चलाया गया। अब हम प्रान्त वार अँग्रेज सरकार का विचारहीन, पाशविक और निर्मम अत्याचार-चित्र सामने रखना चाहते हैं। यह विवरण भी केवल उदाहरण के लिये हैं, सम्पूर्ण नहीं।

मध्य-प्रदेश

चेमूर की घटनाएँ—

चाँदा जिला में चेमूर छै हजार जन संख्या का एक गाँव है. यह सड़क के द्वारा बरोरा से जुड़ा है, और गाँव के चारों ओर जङ्गल हैं।

प्राचीन काल से घने जङ्गलों के कारण यह एक मुख्य स्थान प्रसिद्ध रहा है। पहले इसका भोंसिला राज्य की राजधानी नागपुर से सीधा सम्बन्ध था, तुलनात्मक दृष्टि से यह एक सम्पन्न गाँव है, यहाँ पर प्राचीन सरदारों की भाँति बड़े-बड़े परिवार हैं, इस गाँव का राजनीतिक मापदण्ड भी काफी ऊँचा है।

१६ अगस्त सन् १९४२ ई० नागपञ्चमी को जो घटनाएँ हुईं, उनका विशिष्ट ब्यौरा नहीं दिया जा सकता, क्योंकि वहाँ का पुरुष वर्ग या तो गिरफ्तार

हो चुका था, या भाग गया था। गहरी छानबीन के पश्चात जो सच्चा वृतान्त मिला है, उसे नीचे दिया जाता है:—चेमूर में १६ अगस्त को कुछ काँग्रेस जन गिरफ्तार किये गये, इसके बाद एक जलूस पर लाठी प्रहार और गोली-वर्षा की गई। हताहतों की कोई विशेष संख्या नहीं दी जा सकती, लेकिन यह कहा जा सकता है कि भयङ्कर गोली वर्षा हुई और यह तब तक हुआ जब तक समस्त गोली बारूद समाप्त न हो गया। इस पर रोष-पूर्ण भीड़ जिसे गोलियाँ तितर बितर नहीं कर सकी थी, पुलिस पार्टी के ऊपर टूट पड़ी जिसमें एक सब-डिवीजनल अफसर, एक सर्किल इन्सपैक्टर, एक नायब तहसीलदार तथा एक पुलिस के सिपाही को मार कर इनके शरीरों को जला दिया गया। फिर यह भीड़ बरोरा से सम्बन्धित यातायात के साधनों को नष्ट करने के लिये चली। इन्होंने दो मील तक वृक्षों के मोटे तने द्वारा सड़क को बिल्कुल रोक दिया, और एक नदी के पुल को भी नष्ट कर दिया। चाँदा में डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट यह अद्भुत घटनाएँ सुन कर १७ अगस्त को एक सशस्त्र पुलिस की टुकड़ी लेकर चला, लेकिन जब उसने सड़क को रुका देखा और घटनाओं को सुना तो, उसे अपनी पचास आदमियों की टुकड़ी थोड़ी जान पड़ी और वापिस चला आया। वह लोकल गवर्नमेण्ट के पास आया और कहा कि चेमूर के जङ्गलों में एक बहुत बड़ा उपद्रवकारियों का समूह है, जो किसी सङ्गठित शस्त्र सज्जित सेना की सहायता के बिना नहीं दबाया जा सकता। १६ तारीख को बरोरा स्टेशन पर दो सौ गोरों और पचास हिन्दुस्तानी सिपाहियों की स्पेशल ट्रेन पहुँची। जिसके साथ मिलिटरी की ऐसी गाड़ियाँ थी, जिनके द्वारा वहाँ से तैंतीस मील दूर चेमूर जाया जा सकता। जिला मजिस्ट्रेट तुरन्त सशस्त्र पुलिस के पचास आदमियों की एक टुकड़ी को लेकर रास्ता साफ करता हुआ चेमूर

को ओर बढ़ा, डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट जो कि दुर्भाग्य से एक हिंन्दुस्तानी था, वह क्रोध से पागल होकर बदला लेने पर उतारू हो रहा था। छोटे बड़े सब भयभीत लोग अपने घर, झोंपड़ी आदि में छुप गये। गलियों में कोई दिखाई तक न देता था, गाँव वीरान-सा पड़ा हुआ था, तब जिला मजिस्ट्रेट कुछ सशस्त्र सैनिकों को लेकर पहले बड़े-बड़े फिर अन्य लोगों के घरों में गया। घरों को तुड़वा कर बालक और बच्चों को छोड़ सब पुरुषों को गिरफ्तार किया और मारा पीटा। एक ही दिन में १२० गिरफ्तारियाँ हुईं, क्योंकि गांव वालों ने अप्रत्यक्ष रूप से अपनी रक्षा के लिये पुलिस को बुलाया था, अब उन्हें अपने जालिम अथितियों का स्वागत करना चाहिये था, उनके ऐसा न करने पर जिला मजिस्ट्रेट ने पूर्ण-शक्तिशाली पुलिस को गाँव से भोजन वसूल करने का पूर्ण अधिकार दे दिया। गिरफ्तार आदमियों के सब अन्नगृह तुड़वा डाले और फिर पुलिस ने उनके पीतल ताँबे आदि के पात्र, चीनी की बोरियाँ, गेंहू, चावल, लकड़ी, मिट्टी के तेल के कनस्तर, घी और तेल आदि सामिग्री मिलिटरी के कैम्प में भर दीं। तत्पश्चात गाँव बड़े क्रम के साथ लूटा गया, अमीर घरों की तिजोरियों में रक्खा हुआ सोना-चाँदी लूट लिया गया, रेशमी साड़ियाँ फाड़ दी गईं, फेंक दी गईं या हिन्दुस्तानी सिपाहियों को बांट दी गईं। हारमोनियम से खूब मनोविनोद किया, भोजनालय को टट्टी घर की जगह प्रयोग किया, स्त्रियों की लाज उतारी गई, लेकिन कई जगह स्त्रियों ने सङ्गठित होकर कड़ा मोर्चा लिया।

परन्तु जिस किसी घर में अकेली स्त्री मिल गई उसके साथ बड़ी निर्लज्जता का व्यवहार किया गया। ऐसे भी बहुत से समाचार मिले कि जिनमें गर्भिणी, सद्य प्रसूता, और अल्प वयस्क बालिकाओं को कठिन यातना दी गई।

इस प्रकार की पर्याप्त घटनाएँ हुईं।

दो दिन तक यही दशा रही, आखिर एक दादी बाई बिडे नामक वृद्धा बन्दूक और किरचों के बीच होती हुई जिलाधीश के पास पहुंची, और उसे सब करुण-कथा सुनाते हुए कहा कि क्या उसके घर में स्त्रियाँ नहीं हैं? जिलाधीश ने कहा कि उनके घर वालों ने ही सेना को बुलाया, जिसका यह स्वाभाविक परिणाम होना ही था, फिर भी उसने जाँच करके रक्षा करने का वचन दिया। इसके बाद उसने पुलिस और फौज को स्त्रियों को पीड़ित न करने का आदेश दिया।

इसी बीच में सरकार ने उक्त गाँव तथा पास-पास के स्थानों पर १ लाख सामूहिक जुर्माना किया। २६ तारीख को फौज चली गई। अब जुर्माने की वसूलयाबी आरम्भ की गई, जिसमें कोई कठिनाई नहीं पड़ी।

उपरोक्त घटनाओं के बाद कथित अपराधों की जाँच आरम्भ की गई, यद्यपि बाहर के आदमियों के प्रवेश पर प्रतिबन्ध नहीं था फिर भी किसी को नहीं घुसने दिया गया। इस प्रकार चेमूर गाँव सात सप्ताह तक संसार से बिलकुल अलग कर दिया गया, जिसमें केवल स्त्रियां या असंख्य पुलिस-समुदाय ही रह गया था। इसके बाद नागपुर की कुछ शिक्षित स्त्रियां वहाँ गईं, उन्हें रोकने और परेशान करने का प्रयत्न किया गया, फिर भी वे वहाँ पहुँचीं।

इस भयङ्कर नाटक का अन्तिम दृश्य वह था जिसमें गिरफ्तार हुए व्यक्तियों पर मुकदमे चलाए गए। जिलाधीश ने यह भी कहा कि उनमें बहुत से फाँसी पर लटका दिए जाएँगे। चार सौ व्यक्ति गिरफ्तार किए गए थे।

सेठ मोतीचन्द नानकचन्द के ऊपर दस हजार जुरमाना किया गया,

इस पर उन्होंने गवर्नर और जिलाधीश को तार दिया कि उसकी दूकान पहले ही लूट ली गई, जिसमें दस हजार के लगभग हानि हुई। तार का उत्तर मिला कि कल दोपहर से और भी अधिक सख्तियाँ की जाँयगी। इसी प्रकार एक आदमी की पचास हजार की तथा एक दूसरे की सारी सम्पति (१८०० अठारह सौ रुपया) ले ली गई। नूरी मोरा पर दो हजार और दूसरे एक मुसलमान पर १००० जुरमाना किया गया। तीन सितम्बर तक ८५ हजार रुपया जुर्माने के रूप में वसूल किया गया, बाद में मुसलमानों को जुर्माना वापिस कर दिया गया।

डाक्टर मुंजे और श्री एम० एन० घाटक ने स्वयं जाकर इन घटनाओं का अन्वेषण करने के बाद निम्न वक्तव्य दिया। "शनिवार १६ तारीख को हम रा टेक स्टेशन पहुँचे, इस समय स्टेशन की मरम्मत हो चुकी थी, फिर भी वह जला हुआ जान पड़ता था, वहाँ के स्टेशन मास्टरों ने बतलाया कि गाँव के हिन्दू मुसलमानों ने जिनमें विशेषतः कानों के कुली थे, हमला किया था, उन्होंने सबसे पहले तार काटे फिर टिकट घर में घुसकर नकदी पर कब्जा कर लिया। भीड़ की एक टुकड़ी ने मिट्टी का तेल छिड़क कर स्टेशन में आग लगादी, दूसरी टुकड़ी ने रेल की पटरियाँ उखाड़ दीं, इसी समय एक सवारी गाड़ी आई और मुसाफिरों से खाली हो जाने पर उसे फूंक दिया।

स्टेशन पर एक थानेदार पहले दिन के गिरफ्तार आदमियों के साथ देख पड़ा, भीड़ ने थानेदार को गिरफ्तार करके बन्दियों को छुड़ा दिया। उपरोक्त आने वाली गाड़ी में एक सब-इन्स्पेक्टर आया था उसे भी बन्दी बना लिया गया। इन दोनों थानेदारों की वर्दियाँ उतार, उन्हें

गान्धी-टोपी पहिना कर एक जलूस में थाने पर ले जाया गया। लेकिन इन थानेदारों को या स्टेशन-अधिकारियों को कोई यातना नहीं दी गई।

हम स्टेशन से थाने और तहसील पर गए, तहसील की इमारत बिलकुल जलादी गई थी, ताले तोड़कर खजाना लूटा गया था। उसके बाद हम अस्पताल गए जहां पर कि पुलिस के सब-इन्स्पैक्टर अपना काम करते थे। एक हैड कान्सटेबुल ने हमें बताया कि उसने जब भीड़ को आते हुए देखा तो तहसीलदार से गोली चलाने की आज्ञा चाही परन्तु तहसीलदार ने भीड़ शान्त है और केवल झण्डा लगाने आई है, यह कह कर आज्ञा देने से इन्कार कर दिया।

उसके बाद हमने एक घर देखा जो जल चुका था। अम्बाला गाँव में पहुँचने पर हमें वहाँ के प्रमुख पण्डों और पुजारियों ने बताया कि लगातार दो दिन तक रामटेक में ठहरी हुई एक सेना के सिपाहियों ने नायब तहसीलदार के साथ इस गांव में जबरदस्ती घरों के ताले तोड़ डाले और रुपया पैसा लूट लिया। जहाँ पर इन सिपाहियों को रोका गया वहाँ उन्होंने देवमूर्तियों को खण्डित किया, खाने पीने के बर्तन फेंके और पण्डों को ठोकरों से मारा। हम को दो देवियों के सतीत्व भ्रष्ट करने की बात भी बताई गई।

२२ सितम्बर को नागपुर के कमिश्नर के साथ हम आष्टी गये, मार्ग में पुल तोड़ कर सड़कें बबूल के पेड़ों से पाट दी गई थीं जिससे लोग आष्टी न जा सकें। आष्टी में हमने पुलिस थाने की जली हुई इमारत को देखा, वहाँ पर हमने वह स्थान भी देखा जहाँ पर सरकारी अफसर मारे

गए थे , तथा एक सिपाही द्वारा एक मुसलमान का वध किया गया था। ए० वी० स्कूल की जली हुई इमारत और हिन्दू गर्ल्स स्कूल का जला हुआ फर्नीचर देखा, हमला करने वाली भीड़ में आस-पास के ग्रामीण हिन्दू मुसलमान सभी ने भाग लिया था।

हमारे ठहरने की जगह वापिस आने पर अली अख्तर साहब ने निम्न-लिखित बयान दिया:—"उन्होंने हमें बताया कि जो थानेदार मारा गया वह सर्वप्रिय था। और इसलिए जब उन्होंने उसकी मृत्यु की बात सुनी तो उन्हें बड़ा दुख हुआ, यही नहीं बल्कि उन्होंने मरे हुये पुलिस कर्मचारियों के खानदानियों को अपने मकानों में आश्रय दिया, उन्होंने यह भी बताया कि आस-पास के गावों की उस भीड़ पर जिसमें हिन्दू मुसलमान सभी सम्मिलित थे, गोली चलाये जाने से एक मुसलमान मारा गया। पुलिस कर्मचारियों के मारे जाने और इमारतें जलाये जाने के बाद गाँव में तमाम दिन बड़ी अशान्ति रही और कई जगह पर अनाज लूटा गया। उन्होंने यह भी बताया कि दूसरे दिन से जब कि मिस्टर महता सब-डिवीजनल आफीसर वहाँ आ गये, गाँव में पूर्ण रूप से शान्ति स्थापित हो गई। हिन्दुस्तानी फौजियों के खिलाफ़ उन्होंने कुछ भी नहीं कहा।

पचीस सितम्बर को हम ग्राण्ड ट्रङ्क एक्सप्रेस से वरोरा पहुँचे, नागपुर के कमिश्नर भी उसी गाड़ी में हमारे साथ थे। वरोरा डाक बँगले पर रात बिताने के बाद हम चिमूर पहुँचे। चाँदा के डिप्टी कमिश्नर ने हमें वह पुल दिखाया जिसे भीड़ ने तोड़ दिया था, वह जगह भी दिखाई गई, जहां पर सर्किल इन्सपैक्टर और एक कान्स्टेबिल मार कर जला दिए गए थे। हमने उन वृक्षों को भी देखा जो सड़क को रोकने के लिये डाले गये थे। इसके बाद वह

डाक बँगला देखा गया जो पूर्ण रूप से जला दिया गया था, वहाँ पर एक चौकीदार ने हमें बताया कि सब-डिवीजनल अफसर और नायब तहसीलदार की वहाँ किस प्रकार हत्या की गई। अब हम चिमूर पहुँचे, वहाँ पुलिस स्टेशन और स्कूल की अधजली इमारत देखने पर हमें बताया गया कि गाँव से पकड़े हुए डेढ़ सौ आदमियों को थाने की दो या चार छोटी कोठरियों में ठूँस-ठूँस कर बन्द कर दिया गया और कुछों को छोटे से छत विहीन काँजी हाउस में बन्द किया गया था। यह बात उल्लेखनीय है कि उस समय वर्षा का बहुत जोर था। डिप्टी कमिश्नर ने यह बात मानली है कि स्थानाभाव के कारण लोगों को इन छोटे-छोटे कमरों में बन्द किया गया। अब हम गाँव में साठसाल के एक प्रतिष्ठित व्यक्ति मिस्टर बागडे के मकान पर पहुँचे। यहाँ पर श्रीमती बागडे ने स्त्रियों पर बलात्कार की विस्तार पूर्वक पूरी कथा सुनाई। उसने गाँव की बहुत सी स्त्रियों को बारी-बारी से बुलाया, जिन्होंने बड़े दुख और खेद के साथ अपने साथ हुये दुर्व्यवहार का वर्णन किया। इन तेरह स्त्रियों में से चौदह के साथ एक से अधिक गोरे सिपाहियों द्वारा बलात्कार किया गया। श्रीमती बागडे बड़ी साहसी स्त्री हैं, उन्होंने डिप्टी कमिश्नर के सामने ही बताया कि किस प्रकार प्रातः से रात्रि तक गोरे सिपाही बार-बार उसके घर आते थे, और जब उसने डिप्टी कमिश्नर से उनकी शिकायत की तो उसने निर्दयता से उत्तर दिया था कि इस मुसीबत को किसने निमन्त्रित किया है? सिवाय तुम्हारे आदमियों के। इन बलात्कार की हुई स्त्रियों में एक नायक वंश की स्त्री थी, जिसके साथ एक गोरे और एक कान्स्टेबिल ने बलात्कार किया। उससे और उसकी माता से सोने की अगूँठिया और रुपये छीनने के बाद किस तरह से जबरदस्ती मा

के सामने पुत्री की लाज उतारी गई। जहाँ पर लूट और बरबादी का सम्बन्ध है, फर्नीचर, तिजोरी, सन्दूक, अलमारियाँ, पहनने के कपड़े और अनाज सब बेतादाद लूटा गया। डा० मुन्जे ने उन्हीं के सामने यह बात कही, कि हम ब्रिटिश राज्य में हैं या मुगल राज्य में? इसके बाद हमें पुलिस सब-इन्सपैक्टर ने बताया कि "भीड़ में हिन्दू मुसलमान सब थे, जलसों में भाषण देने वाले अधिकाँशतः अध्यापक, काँग्रेस कार्यकर्ता थे। सन्त तुकदो से हुई बात-चीत बताते हुये कहा कि सन्त तुकदो जी ने मुझसे यह कहा कि तुम थानेदार हो, तुम अपना कर्त्तव्य पालन करो। यह लोग अहिन्सा वादी हैं, और अहिन्सक ही रहेंगे।" बरोरा वापिस आते हुए मार्ग में हमें एक गर्भवती स्त्री मिली, उसने कहा "कि गर्भवती होते हए भी एक पुलिस सिपाही ने किस प्रकार उसके साथ बलात्कार किया। यह रात वहीं पर एक बँगले में बिताकर हम सताईस तारीख को नागपुर चले आये। इसके बाद उस गाँव वालों ने हमारे पास जुर्माने सम्बन्धी दरख्वास्तें भेजीं। जिनसे वहाँ की दुरवस्था पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

हमें विश्वस्त सूत्र से पता चला कि वहाँ के एक मुसलमान सौदागर ने हिन्दुओं पर होने वाले जुर्मानों के लिये चाँदी-सोने के बदले रुपये दिए। चार सौ तोले सोना बीस से चालीस रुपये तोले के भाव में और ४५०० तोले चाँदी चार आने से छै आने तोला के भाव में ली। इस कहानी से पता चलता है कि लोगों को जुर्माना देने के लिये किस प्रकार बाध्य किया गया।

अपनी रिपोर्ट में हम बता चुके हैं कि उपद्रव में हिन्दू और मुसलमानों ने समान भाग लिया, लेकिन हम कह सकते हैं कि सरकार ने अपनी

भेद नीति के अनुसार पक्षपात से काम लिया, मुसलमानों को छोड़कर उन्होंने हिन्दुओं पर ही अत्याचार किए।

आष्टी, चिमूर और टेक गाँव की घटनाओं का अध्ययन करने के बाद हम सरकार से कह सकते हैं कि इसकी जाँच के लिये एक जाँच कमेटी बैठाई जाय। हम यह जानते हैं कि गवर्नमेण्ट ऐसा करने को तय्यार नहीं है। यदि हम यह भी मानलें कि सरकार ने उपद्रवों को दबाने के लिए यह सब उचित ही किया इसलिये कि यह आन्दोलन कांग्रेस की खुली बगावत थी, तो भी सभ्यता और किसी भी सभ्य गवर्नमेन्ट का यह चारित्रिक कर्तव्य है कि जनता की माँगों पर विशेष ध्यान दे। हमने जर्मनी और जापान के असभ्यतापूर्ण कारनामों पर भी हाउस आफ लार्ड्स की ओर से जाँच कमेटी बैठाने की व्यवस्था सुनी है। अतः भारत में जाँच क्यों नहीं होनी चाहिये?

अब तीन बातें मुख्य रूप से विचारणीय हैं,

१—पुलिस गवर्नमेन्ट के सामान और अपनी रक्षा में क्यों असमर्थ रही।

२—आष्टी में अधिक खतरनाक घटनाएँ क्यों नहीं हुई। जब कि वहाँ पर पाँच अफसर मारे गये, और चिमूर में जहाँ पर केवल चार अफसर मरे ऐसी भयानक बातें क्यों हुई? तथा रामटेक में कोई क्यों नहीं मारा गया।

३—सरकारी कर्मचारियों का बर्ताव कैसा रहा।

यह बात उल्लेखनीय है कि इन तीनों स्थानों पर पर्याप्त राइफलें और कारतूस थे। रामटेक में १० सिपाही, दो थानेदार, दस राइफलें और २५०

कारतूस, आष्टी में चार सिपाही, एक थानेदार, चार रायफलें और सौ कारतूस और चिमूर में तीन सिपाही, एक थानेदार, तीन रायफलें और पिचहत्तर कारतूस थे।

इतने शस्त्र पास होते हुए भी पुलिस ने भीड़ पर आक्रमण क्यों नहीं किया इसका एक मात्र उत्तर यही है कि कॉंग्रेस की अहिंसात्मक नीति को ध्यान में रखते हुए कोई यह नहीं सोचता था कि यह भीड़ वास्तव में हिंसात्मक आक्रमण पर भी उतारू हो जायगी' पुलिस के अधिकारियों ने भीड़ के नेता द्वारा कहे उन शब्दों पर भी विश्वास कर लिया था कि उनका अभिप्राय केवल सरकारी इमारतों पर राष्ट्रीय झण्डा फहराना है।

चिमूर और आष्टी का मुकाबिला करते हुए हम निस्सङ्कोच कह सकते हैं कि यदि चिमूर के अफसर भी आष्टी के अफसरों की भाँति चतुर और सहानुभूति पूर्ण होते तो चिमूर में ऐसा वीभत्स काण्ड न होता। चिमूर में सेना को भी आफीसर नियन्त्रण में नहीं रक्खा गया।

इस भयङ्कर-काण्ड की पूरी जानकारी प्राप्त करने के लिए एक भद्र महिलाओं का समूह, अनेक कठिनाइयों में चिमूर पहुँचा. वहाँ पर पहुंचते ही इस समूह के चारों ओर सी० आई० डी० का जाल-सा बिछ गया, इन महिलाओं ने बलात्कार की गई चिमूर की स्त्रियों को दूध बेचने के बहाने अपने पास बुलाया और उनकी आप बीती घटनाएँ उनके ही मुँह से सुनी।

व्यभिचार से पीड़ित देवियों के बयान

१—एक देवी ने बताया, "मैं अपनी नानी के घर जा रही थी, एक

हिन्दुस्तानी सिपाही ने मुझे रोका, मैं भाग कर एक घर में घुस गई, जिसमें एक बूढ़े आदमी के सामने सिपाही ने मेरे साथ बलात्कार किया।

मैं इस समय ६ मास की गर्भिणी हूँ।

२—दूसरी महिला ने बताया—दो हिन्दुस्तानी सिपाही २० अगस्त (४२) की शाम को मेरे घर में आए, उनमें से एक मेरे कमरे में घुस गया और मेरे चिल्लाने पर मृत्यु का भय दिखाकर मेरे साथ बलात्कार किया, मैं गर्भिणी थी, और उसी रात को मेरे एक लड़की उत्पन्न हुई।

३—तीसरी महिला का बयान है— २० अगस्त (४२) को दो सिपाही मेरे घर में आए, मैं मासिक धर्म से थी। उन्होंने मुझे खींचकर अलग ले जाना चाहा, पर मैं अपने स्थान से हिली नहीं, तब वे चले गए, थोड़ी देर बाद मेरी खोज में तीन अन्य सिपाही आए, मैं अगले दिन की शाम तक बिना खाए पिए एक पड़ौसी के घर में छिपी थी, परन्तु फिर भी वे मुझे वहाँ से खोजकर खींच लाए। मेरे हाथ में चोट लगी। फिर देवी ने यह भी स्वीकार किया कि मेरे साथ इन सिपाहियों ने बलात्कार किया।

४—चौथी महिला ने इस प्रकार बयान दिया, कि बीस अगस्त को चार गोरे सिपाही और प्रेमा भाटिया मेरे घर में घुस आए, वे सारे घर में घूमे, शीशे तोड़ दिए, तथा अन्य सब सामग्री भी नष्ट कर दी। घर की अन्य स्त्रियों के सामने वह मुझे अलग खींच कर ले जाना चाहते थे, मना करने पर बन्दूक का भय दिखाया। मैं गर्भिणी थी, खैर मुझे छोड़कर ये तो चले गए, लेकिन उसके बाद सादी वर्दी में एक पुलिस का सिपाही आया और उसने भी उसी प्रकार की इच्छा की। मेरे मना करने पर उसने मुझे धमका कर कहा कि वह मुझपर २१ दर्जन सिपाहियों के साथ हमला करेगा। थोड़ी देर बाद प्रेमा भाटिया

चार पाँच गोरे और कुछ हिन्दुस्तानी सिपाहियों के साथ मेरे घर में आया, मैं उन्हें दूर से आता देख, मकान के पीछे जा छिपी, वे घर के कपड़े उठाकर चल दिए, रात को मैं एक चमार के घर में रही, लेकिन आधी रात होते ही दो सिपाही वहाँ भी आ घुसे, जिनमें एक का नाम बाबूलाल था। वे लालटेन से सब स्त्रियों के चेहरे देखने लगे, मैं उसी समय पीछे के दरवाजे से अपनी चार वर्षीय लड़की और दो पड़ोसियों के साथ चिमूर छोड़ कर चल दी। शाम को हम बेलूर गाँव पहुँच गए।

५—एक बारह तेरह वर्ष की लड़की अपने पिता के घर से फुसलाकर एक निर्जन स्थान में ले जाई गई, और उसके साथ बलात्कार किया गया। उसके बाद वह भाग कर अनेक सिपाहियों के अत्याचार से बची।

६— एक पच्चीस वर्ष की स्त्री के साथ दो सिपाहियों ने व्यभिचार किया, जबकि उसने कुछ ही दिन पहले एक बच्चे को जन्म दिया था, वह भयन्त्रित होकर गूँगी होगई।

७— पहाड़पुरा में ठहरी हुई एक पच्चीस वर्षीया स्त्री के साथ व्यभिचार किया गया।

८— वाडोपुरा में ठहरी हुई एक पचीस वर्षीया नारी के साथ व्यभिचार किया गया।

९— चन्दरपुरा में एक पन्द्रह वर्षीय कन्या सिपाहियों द्वारा पकड़ी गई, पर जैसे तैसे वह अपना पिण्ड छुड़ा कर भाग गई।

१०— बहराई पुरा में ठहरी हुई आठ मास की गर्भिणी स्त्री का पेट फाड़ दिया गया।

११--एक पन्द्रह वर्षीय कन्या के साथ गली में व्यभिचार किया गया ।,,

सरकार ने इन सब घटनाओं की सफाई में एक वक्तव्य निकाल कर बतलाया कि "चाँदा जिले के चिमूर स्थान में पुलिस और फौज द्वारा किये व्यभिचार और लूट की शिकायतें हमारे पास आई हैं, जहाँ पर पन्द्रह अगस्त (४२) को दो मजिस्ट्रेट, एक इन्सपैक्टर पुलिस और एक सिपाही जनता द्वारा जान से मार डाले गये थे। अब से पहले लिखित रूप में ये शिकायतें हमारे पास नहीं भेजी गई । अब भी शपथ पूर्वक नहीं भेजी गई हैं ।"

जो भी हो प्रान्तीय सरकार ने तो निस्सङ्कोच यह कहा कि" ब्रिटिश फौजों द्वारा चिमूर में ऐसे कोई कृत्य नहीं किये गए, इसलिये सरकार इनकी जाँच करने के लिये कोई जाँच कमेटी नियुक्त करने को तय्यार नहीं है। शेष साधारण आरोप पुलिस और मजिस्ट्रेट द्वारा जांचे जा सकते हैं। इसके विपरीत कोई भी जाँच करना पुलिस और फौज को बदनाम करना होगा, केवल एक व्यक्ति के अतिरिक्त किसी अत्याचारी का नाम नहीं बतलाया गया है ।"

डाक्टर मुञ्जे ने इस सरकारी वक्तव्य का मुंह तोड़ उत्तर देते हुये जाँच कमेटी की जोरदार माँग की ।

४८ वर्षीय, सेवाग्राम आश्रम निवासी और गान्धी जी के निकट साथी प्रोफेसर भन्साली ने १ नवम्बर सन् १९४२ को देहली पहुँच कर श्री अणे से कहा कि" वे चिमूर में स्त्रियों के साथ किये गये अत्याचार की जाँच करावें ।" श्री अणे द्वारा इस प्रार्थना के स्वीकार न करने पर निम्न लिखित शर्तें

रखकर उपवास आरम्भ कर दिया।

१— फ़ौज और पुलिस को भविष्य में अत्याचार न करने दिया जाय।

२—जेल में जो अत्याचार किये जा रहे हैं, उन्हें रोका जाय और भूतकालीन अत्याचारों की जाँच की जाय।

३—गाँवों में किये गये पुलिस और फौज के अत्याचारों की पूरी-पूरी जाँच की जाय।

४—यदि श्री अणे जनता को सन्तुष्ट न कर सकें तो उन्हें तुरन्त त्याग पत्र दे देना चाहिये।

श्री भन्साली ने अपना उपवास जारी रक्खा, शाम को चीफ कमिश्नर की ओर से उन्हें तीन घण्टे के अन्दर दिल्ली छोड़ देने के आशय का एक नोटिस मिला। आज्ञा न मानने पर उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। जेल में भी उनका अनशन चलता रहा, अनशन से तंग आकर ६ नवम्बर को उन्हें छोड़ दिया गया।

जेल से छूटकर प्रो० भन्साली एक साथी को लेकर चिमूर पहुँचे, वहाँ पहुँचने पर उनके साथ बहुत अशिष्टता का व्यवहार किया गया। फल स्वरूप उन्होंने बारह तारीख को इस विचार से फिर अनशन कर दिया, कि वे अनशन की कठोरता में चिमूर के पीड़ितों का सच्चा दर्शन कर सकेंगे। जिलाधीश की ओर से उनको एक नोटिस मिला कि वे तीन घण्टे के अन्दर चिमूर छोड़ दें, और ऐसा न करने पर उन्हें साथी सहित गिरफ्तार करके वर्धा लाकर छोड़ दिया गया। प्रोफेसर भन्साली पुनः पैदल यात्रा करके चिमूर पहुंचे। उन्हें फिर गिरफ्तार करके वर्धा भेज दिया गया। प्रोफेसर भंसाली फिर पैदल चिमूर की ओर चले और उन्होंने चिमूर की करुणाजनक स्थिति का वर्णन करते हुए कहा कि अगर शीघ्र ही इन कष्टों के निवारणार्थ कोई प्रबन्ध न किया गया तो मैं

अपना जीवित रहना व्यर्थ समझूँगा। उन्होंने आगे कहा:—मेरे कर्त्तव्य का मार्ग स्पष्ट है। वह अंग्रेज जो जापान और जर्मन की बर्बरता का ढिंढोरा पीटते हैं, मेरे विचार में प्राचीन युग के जंगली लोगों से भी अधिक पशु हैं। इस समय देश की मान मर्य्यादा जुए पर है और मैंने अपने जीवन का बलिदान करके इसको बचाने की ठानी है, मैं अपने इस भौतिक शरीर को देश पर की गई बर्बरता के विरोध में समाप्त कर देना चाहता हूँ।

तीसरी बार चिमूर जाने पर उनको एक स्ट्रेचर के ऊपर सेवाग्राम ले आया गया, जहां वर्धा के डिप्टी कमिश्नर ने उन्हें सेवाग्राम न छोड़ने का आदेश दिया। वहां से प्रो० भन्साली ने श्री अणे से प्रार्थना की कि वे स्वयं जाकर चिमूर की दशा देखें।

प्रो० भन्साली के अनशन का अंग्रेजी हुकूमत पर कोई प्रभाव नहीं हुआ, सरकार ने चिमूर या प्रोफेसर भन्साली सम्बन्धी कोई भी समाचार छापने पर पाबन्दी लगा दी, अन्त में डा० खरे के जोर देने पर प्रो० भन्साली ने अपना व्रत तोड़ दिया। प्रो० भन्साली को ६४ दिन अनशन रखना पड़ा।

अष्टी और चिमूर के मामले में जनता के १०७ आदमियों पर ९ विभिन्न अदालतों में हत्या डकैती अपराधों के कारण मुकदमे चलाये गए। अष्टी पुलिस हत्या काण्ड में दस आदमियों को मृत्यु दण्ड, पचपन को आजन्म काला पानी और अन्य नौ आदमियों को २ से ५ साल तक की सजाएँ दीं, ३५ आदमी छोड़ दिये गये।

छोड़े गए आदमियों में से अठारह आदमी जेल में ही दूसरे अपराध लगाकर रोक लिये गए। किसी प्रकार भन्साली का जीवन बच गया, अणे साहब

ने भी जौलाई सन् ४३ में चिमूर की यात्रा की।

हमारी असहाय और लज्जा की दुखद कहानी प्रोफेसर भन्साली के निम्न शब्दों में सदा गूंजती रहेगी। "ऐसा कोई भी राष्ट्र स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं कर सकता जो अपनी स्त्रियों का अपमान चुप चाप सहन कर सकता है, हमें सत्ता मद भरी सरकार के विरुद्ध, युद्ध करने के लिये कटिबद्ध हो जाना चाहिये। जो अपने सम्मान के लिये लड़ते हैं, ईश्वर उनको सब कुछ देता है।"

निर्दोष हत्याएँ

मध्यप्रदेश में किस प्रकार निर्दोष हत्याएँ की गईं। इनका संक्षिप्त विवरण श्री देशमुख द्वारा केन्द्रीय एसेम्बली में दिये गए भाषण से उद्धृत करते हैं "शक्ति का उपयोग उसी समय न्याय-सङ्गत कहा जा सकता है जब भीड़ झगड़े पर उतारू हो, और गोली चलाना तभी न्याय-सङ्गत हो सकता है जब कि शान्ति संस्थापकों के जीवन खतरे में हों। ऐसा न होने पर शस्त्रों का प्रयोग अनुचित है। मैं ऐसे उदाहरण देने जा रहा हूं जिनको हत्या कहा जा सकता है। उदाहरणार्थ नागपुर में प्रातःकाल जो लोग दूध बेचने वाले आरहे थे, उन पर फौज वालों ने गोलियाँ चलाईं। करफ्यू आज्ञा का इन गाँव वालों को ही नहीं अपितु सरकारी नौकरों को भी पता नहीं था। ये दूध वाले साइकिलों पर बड़े-बड़े दूध के बर्तन बाँधकर लाते हैं, इन निर्दोषों पर गोली चलाने का कोई भी कारण नहीं हो सकता। अंग्रेज और हिन्दुस्तानी सिपाहियों ने मानव जीवन की तनिक भी परवाह नहीं की। एक समय गड़बड़ होने पर

फौज ने शहर में अन्धाधुन्ध गोलियाँ चला दीं। मैंने लोगों को डाक्टर परांजपे के अस्पताल में आते हुए देखा कि वे किस बुरी प्रकार घायल किए गए थे। शान्ति स्थापित होने के बाद भी नगर के लब्ध प्रतिष्ठित सज्जनों से सड़कें साफ कराई गईं। सचमुच ब्रिटिश राज्य, गुण्डा राज्य प्रतीत होने लगा"

ब्रिटिश सिंह की रक्त पिपासा इतने से ही शान्त न हुई अपितु इसके बाद मुकदमे चलाये गये, सजाएँ दी गईं और बड़ी निर्दयता के साथ जेलों में अत्याचार किये गये। पुलिस के अत्याचार और अमानुषिक कृत्य केवल सन बयालीस के दिनों में ही नहीं हुयें अपितु अक्तूबर सन् १९४३ में भी पुलिस ने जबलपुर के खादी भण्डार पर धावा मारा और वहाँ के कागजात आदि ही नहीं उठाये बल्कि नकदी और अन्न के बोरे भी उठा ले गई।

गान्धी जी के दत्तक गृह मध्य-प्रदेश को भी ऐसी ही घोर यातनाएँ सहन करनी पड़ीं। पुरुषों पर ही नहीं स्त्रियों पर भी भयङ्कर से भयङ्कर अत्याचार किये गये। गोरे सिपाहियों द्वारा देवियों का सतीत्व नष्ट किया गया, जो कि ब्रिटिश राज्य पर एक कलङ्क का टीका रहेगा।

बङ्गाल
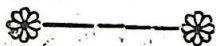
बङ्गाल की घटनाओं पर प्रकाश डालने के लिये डाक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी द्वारा गवर्नर बङ्गाल को लिखे पत्र का उद्धरण देते हैं।

"यद्यपि इस समय हमारे प्रान्त में संयुक्त-सरकार है, परन्तु आपने जनता के हृदय को जीतने का कोई प्रयत्न नहीं किया, आप अपने खुशामदी अधिकारियों के कहे अनुकूल ही आचरण करते जा रहे हैं, जिससे प्रान्त को भयङ्कर हानि हुई है। आपने मन्त्रिमण्डल के शासन को हास्यास्पद बना दिया है।

आपने निरन्तर राजनीतिक आन्दोलन का अविचार पूर्ण दमन किया है, आपने जाँच और सत्य समाचार प्रकाशन का सदैव विरोध किया है। मिदनापुर में काँग्रेस आन्दोलन दमन करने के लिये जो कुछ किया गया वह न्याय और सभ्यता के नितान्त विरुद्ध है। चाहे कानून के भङ्ग करने वालों ने कुछ भी किया पर उसके कारण शासकों को कभी भी निर्दोष जनता पर अत्याचार करने का अधिकार प्राप्त नहीं हो सकता। मिदनापुर के तूफान के बाद अधिकारियों ने जो अमानुषिक व्यवहार किया वह सभ्य शासन के इतिहास में कलङ्कित रहेगा। तूफान से भयङ्कर हानि के समाचारों का दमन तथा सहायता की अपीलों तक का रोकना, चरित्र दोष था। लोगों की जीवन-रक्षा के लिये किश्तियाँ तक नहीं दी गईं। लोग मकानों की छत पर खड़े हुए बह गये। तूफान के बाद हर स्थान पर करफ्यू आर्डर लगा दिया जिससे हम लोग भी कुछ सहायता न कर सके। यातायात के सब साधनों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया, सब नौकें माँग ली गईं। तूफान और बाढ़ के कारण ७५ से ८५ प्रतिशत पशु जान से मारे गये। तूफान और बाढ़ के जमाने में लोगों पर जो-जो बीती वह बहुत ही अत्याचार पूर्ण और घातक घटनाएँ हैं, तूफान और बाढ़ के परिणाम स्वरूप तीस हजार जीवन नष्ट हो गए।

सामूहिक-जुर्माने, इतनी सख्ती से वसूल किए गए जैसे औरङ्गजेब द्वारा जज़िया वसूल किया जाता था, सामूहिक जुर्माने प्रायः हिन्दुओं पर ही किये गये। आपने जनता के हितों की पूरी-पूरी अवहेलना की है। जिस प्रकार आपके समान अधिकारियों ने बर्मा को छोड़ा उसी प्रकार आप भी प्रान्त को छोड़ते नजर आवेंगे, और हम निशस्त्र तथा त्रस्त जन, आपके जाते समय की गोलियों के शिकार बनेंगे, साथ ही आक्रमकों के अत्याचार भी सहेंगे।"

अगस्त सन् ४२ में सिंगापुर ने सब से भयङ्कर यातना सही, अधिकारियों के क्रूर कृत्यों का विवरण एक प्रत्यक्ष द्रष्टा के बयान के आधार पर देते हैं, "१४ अगस्त सन् ४२ से लेकर १५० गिरफ्तार हो गए, ३२ जान से मारे गये और १४० घायल हुए। ७०० मकान लूट कर जला दिये गए, जिससे दो लाख से अधिक रुपये की हानि हुई, जिले के अधिकारियों ने सब-डिवीजन के दमन में अपूर्व साधनों का उपयोग किया। सब-डिवीजन भर में सैनिक राज स्थापित कर दिया गया, पर फौज की अपेक्षा सिविल अधिकारियों ने अधिक ज्यादतियाँ की। सब-डिवीजन का दूसरे इलाकों से एक सड़क द्वारा सम्पर्क था, उसके ऊपर फौज तैनात करके सरकारी अधिकारियों के अतिरिक्त प्रत्येक का आना जाना बन्द कर दिया। डिवीजन भर के अन्दर करफ्यू आर्डर लगा दिया गया। समस्त यातायात के साधन; बस, मोटर, डाक, तार, आदि सब पर प्रतिबन्ध लगा दिए गए। सब संस्थाएँ गैर कानूनी घोषित कर दी गईं। सब-डिवीजन भर की हवाई जहाजों से रखवाली की गई, एक हवाई जहाज़ गिर गया, जिसकी रक्षा के लिये गोरे सिपाही तैनात किये गये, वे नङ्गे होकर स्नान करते और पैसे दिखा कर स्त्रियों

को बुलाने की दुश्चेष्टा करते थे।

पुलिस और फौज ने गोलियाँ चलाईं

बाईस सितम्बर सन् १९४२ को एस० डी० ओ० ने सशस्त्र पुलिस द्वारा निकटवर्ती गाँव घेर लिये। गाँव के सब लोगों को बाहर निकाल कर उन स्थानों पर ले जाया गया जहाँ सरकारी इमारतों को नुकसान पहुँचाया गया था, उन्हें बलात् मरम्मत के काम पर लगाने का प्रयत्न किया, लेकिन लोगों ने इन्कार कर दिया तब तो उन पर भयङ्कर लाठी-प्रहार किया, भीड़ वापिस जाने लगी तो उसके ऊपर ईंट पत्थर और गोलियों की वर्षा की गई। परिणाम स्वरूप चौबीस आदमी घायल हो गये। तीन घायलों को खींचकर कोंटाई कस्बे में लाया गया, जिनमें से दो तो मार्ग में और एक अस्पताल में जाकर मर गया। अन्य घायलों में से एक और मर गया।

सशस्त्र पुलिस ने बेलबानी में स्वयं सेवक कैम्प पर हमला किया, सब स्वयं सेवक सोए पड़े थे, कैम्प का सब सामान फेंक दिया गया। और पुलिस का दल गाँव में घुसने लगा, और सामने खड़ी भीड़ पर गोली चलादी, परिणाम स्वरूप तीन आदमी तुरन्त मर गए और १४ घायल हुए। बाद में स्वयं सेवक कैम्प के पास पुलिस की पुनः एक भीड़ से मुठभेड़ हो गई, जिसे तितर बितर करने के लिये पुलिस ने फिर गोलियाँ चलाईं, जिससे दो मरे और सात घायल हुए। पुलिस पहले तीन मृतकों को और तीन घायलों को लेकर चली, लेकिन अस्पताल में पहुँच कर एक घायल और मर गया। इस प्रकार छै मृत्यु हुईं।

२९ सितम्बर को ५००० के जन समूह ने भवानीपुर थाने पर आक्रमण किया। थाना चारों ओर से सुरक्षित था, अतः जन समूह ज्यों ही थाने पर पहुँचा, उस पर गोलियों की बौछार की गई, फलस्वरूप १३ आदमी मरे और ९९ घायल हो गये। श्री विभूति भूषण दास गोली लगने के बाद तीन घन्टे जीवित रहे, पर उन्हें थाने में बिना भोजन पानी और दवा के रखा गया। श्री कृष्णकुमार चक्रवर्ती एम० ए० एक घायल को पानी पिला रहे थे, उन्हें गोली से मार दिया गया, उनका शव देखते-देखते तालाब में तैरने लगा। इस घटना में कुल १९ आदमी जान से मारे गये।

तीन सितम्बर को अधिकारी वर्ग शस्त्र बल के साथ गाँव में पहुँचा, और विद्यार्थियों, वकीलों, तथा पथिकों से मोटर पर ईंटें लदवाकर मरम्मत के लिये मस्जिदा में चला गया। मार्ग में बल पूर्वक पथिकों को पकड़ कर ट्रक पर रख लिया और मारा। मस्जिदा की मरम्मत करते-करते जब रात्रि में अन्धकार आ गया तो प्रकाश करने के लिये पास के हाई स्कूल की इमारत में आग लगादी। दूसरे दिन सिपाहियों ने मस्जिदा के २५ निर्दोष ग्रामीणों के घर फूंक दिए। लोगों को बड़ी निर्दयता से मारा। इसके बाद वे भन्तघर को चल दिए, और मार्ग में मचिन्दा बाजार की बहुत सी दूकानों आदि का सामान नष्ट कर दिया।

भन्तघर मोटर-अड्डे पर सिपाहियों ने भीड़ को तितर बितर करने के लिये गोली चलाई, दो आदमी तुरन्त मर गये, और एक तड़पते हुए आदमी की गर्दन पर ठोकरें लगा कर मारा गया। कोन्टाई जाते समय सिपाहियों ने पन्द्रह ग्रामीण और रुक्षन्द बाजार के कई दूकानदार गिरफ्तार कर लिये।

पतासपुर थाने में खार स्थान पर तीन अक्तूबर को आठ हजार की भीड़ से फौज और सशत्र पुलिस का सामना हुआ, पुलिस ने भीड़ को तितर बितर करने के लिये गोलियाँ चलाईं, जिससे १ आदमी मरा और १ घायल हुआ। आठ अक्तूबर को पुलिस और फ़ौज तपार पारा में पहुँची, वहाँ बाँध पर एक भीड़ से मुठभेड़ हुई और गोली चलाई गई, जिससे १ मरा और ६ घायल हो गये।

१३ अक्तूबर ४२ को पुलिस और फौज ने अलिनगिरी गांव में जाकर गाँव वालों के घर फूँक दिये। कुछ आदमी थोड़ी दूर एक तालाब के पास खड़े थे, उन पर गोली चलाई गई, जिससे दो आदमी मरे और एक घायल हो गया।

अन्य अत्याचार

---*---
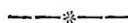
२६ सितम्बर सन् १९४२ को बर नाल गरिया के समीप कोन्टाई बेलडा-सड़क कटने के सिलसिले मे पुलिस और फौज ताजपुर गाँव में गई, और ६०-६० वर्ष के वृद्ध और सम्मानित व्यक्ति बुरी तरह से मारे पीटे गए। इसी प्रकार रसूलपुर और बरनाल गरिया के लोग भी मारे पीटे गए। फिर इन मारे पीटे लोगों से कुलियों की भाँति सड़कों की मरम्मत कराई गई। १३ आदमियों को गिरफ्तार करके पुलिस ने जेल भेज दिया।

जिला अधिकारियों ने इस इलाके को आतङ्कित करने के लिए काँग्रेस स्वयंसेवकों के ही नहीं बल्कि निर्दोष ग्रामीणों के घर और शिक्षा संस्थाओं तक को लूटा तथा जलाया, इस प्रकार कोन्टाई इलाके से स्वतंत्रता की

राष्ट्रभावनाओं से प्रेरित लोगों को दबाने के लिए घृणित से घृणित व्यवहार किए गए। फौज के कैम्प से तीन चार टुकड़ियाँ गाँव में घुस कर मकानों को फूंकती थी, गाँव के आतङ्कित लोग अपने घर छोड़, चावलों के खेतों में जा छिपते थे। यदि पुलिस कहीं आदमियों को देख पाती तो उन्हें मारपीट कर स्वयं-सेवकों के नाम और पते पूछती थी। स्थानीय अधिकारियों ने मुसलमानों को अपने साथ रखने के लिये भड़काया जिससे वे हिन्दुओं को लूट सकें। मुसलमानों को यह भी विश्वास दिला दिया गया कि उनपर किसी प्रकार का दमनकारी वार नहीं किया जायगा। उनसे यह भी कहा कि वे अपने घरों पर चाँद तारे वाला झंडा टाँग दें, जिससे उसे पहिचानकर उनके मकान न फूंके जाव। परन्तु मुसलमानों ने यह सब करने से इंकार कर दिया।

खेजूरी और पटासपुर थाने में मुसलमानों ने हिन्दुओं के घर लूटने और जलाने में भाग लिया, लेकिन यह सब जिला अधिकारियों के भड़काने से ही हुआ। ऐसे भी अवसर आए कि जब छोटे बच्चों को फेंका गया, दूध वाली गौवें जलादी गईं। इस समस्त चक्र में निर्दोष ग्रामीणों के सात . . ों मकान जलाए गए, जिनकी हानि का अनुमान दो लाख के लगभग है। इस प्रकार के अग्नि-काण्ड में लूटमार और और अनेक प्रकार से स्त्री बच्चों तथा वृद्धों को उत्पीड़ित किया गया।

अलग-अलग घरों के लूटने और जलाने में सैकड़ों से हजारों रुपयों की हानि हुई। डांडा पुरलिया गाँव में श्री राधा रंजन दास का एक हजार मन चावल जला दिया गया।

सरकार ने बारह कॉंग्रेस कमेटी और स्वयं-सेवक कैम्प अवैधानिक घोषित किये, कन्टाई थाने में २५०, रामनगर में २००, एगरा में १३०, पटासपुर में

१७०, भगवानपुर में ३०, और खेजूरी में २०, इस प्रकार ७०० मकान जलाए गए। इनके अतिरिक्त बहुत से मकान लूट लिए गए।

भयङ्कर आँधी और तूफ़ान

१६ अक्टूबर सन् ४२ को खाड़ी बंगाल से प्रलयङ्कारी आँधी उठी, और जिले में फैल गई। यह प्रातः सात या आठ बजे आरम्भ होकर अगले दिन प्रातः तीन बजे समाप्त हुई। कहा जाता है कि हवा की गति प्रति मिनट ४६० मील थी। आँधी के बाद ही तुरन्त भारी जल वर्षा हुई जिसमें कई स्थानों पर २४ घण्टे में १२ इंच पानी पड़ा। भयङ्कर जल वर्षा के कारण बाढ़ आई जिसके फलस्वरूप बहुत से हिस्सों में पाँच फिट पानी चढ़ गया, खेती पानी में डूब गई, बहुत से हिस्से बीस-बीस दिन तक पानी में डूबे रहे। समुद्र के किनारों पर बहुत नुकसान हुआ। बहुत जगह आदमी भी नहीं देख पड़ते थे, पशु बरबाद होगए, और ६०--७० प्रतिशत मनुष्य नष्ट होगए, जो बचे उनमें से ७५ प्रतिशत घायल हो गए। कोई वृक्ष और पशुपक्षी दिखलाई नहीं पड़ता था, सर्वत्र नमक का पानी-ही पानी होगया। बहुत से स्थानों पर मनुष्य और पशुओं के शव पानी पर तैर रहे थे, शवों की दुर्गन्धि के कारण मनुष्यों का इधर उधर जाना दुर्लभ हो गया था। मिट्टी की एक भी दीवार खड़ी न रही, मनुष्य और पालतू पशु मलबे के नीचे दबकर समाप्त हो गए। सब खाद्य सामग्री लापता हो चुकी थी।

कोन्टाइ में दस हजार से कम मनुष्य न मरे होंगे, पशुओं की संख्या तो तीन हजार तक पहुँच गई, सारे जिले की संख्या इससे द्विगुण हो गई।

कोन्टाई जिले की जन संख्या लगभग दस लाख थी जिसमें से बहुतों ने भूख से तड़प-तड़पकर प्राण दे दिए। आँधी से हानि होने की अपेक्षा पानी की अधिकता से बीस गुनी हानि हुई। इस महान आपत्ति से हजारों आदमी मरे। तमाम इलाका तबाह हो गया। यह केवल एक तूफान न था, वास्तव में प्रलय थी। कोन्टाई इलाके में गवर्नमेन्ट द्वारा प्रतिबन्ध लगे थे इसलिए वहाँ पर किश्ती या अन्य कोई सवारी मिलनी भी दुर्लभ होगई, अगस्त आन्दोलन में मिदनापुर जिले ने पूर्ण सहयोग दिया। लाठी प्रहार, गोलियों की वर्षा, लूट और सैकड़ों मकानों का जलाना भी जनता में आन्दोलन को न रोक सका, इस प्रकार खिसियाए हुए जिला अधिकारियों ने प्राकृतिक आपत्ति के अवसर पर खूब बदला चुकाया। आन्दोलन और तूफानादि के समाचारों पर रोक लगादी गई, इस सम्बन्ध में सरकारी विज्ञप्ति भी १८ दिन बाद प्रकाशित हुई। जो डाक कोन्टाई से कलकत्ता दो दिन में पहुँचती थी, अब उसे छै दिन लगने लगे। नगर के प्रतिष्ठित सज्जनों के द्वारा सरकारी अधिकारियों के मकान साफ कराए गए, इन लोगों को प्रातः सात से शाम के चार बजे तक परिश्रम करना पड़ता था। सार्वजनिक संस्थाओं को भी जनता की सहायता करने से रोक दिया गया।

महिषादल बाजार में एक रात को फौज द्वारा दो स्त्रियों का और २६ अक्तूबर को चार स्त्रियों का सतीत्व भङ्ग किया गया, पुयादा में दो स्त्रियों का सतीत्व नष्ट किया गया, तालक थाने के अधिकारी चेतनदास के मकान से ३० गिन्नी और ग्यारह हजार रुपए के नोट उठा ले गए।

महिषादल थाने के एक गाँव में जीवनकृष्ण का घर लूट लिया गया, फर्नीचर जला दिया गया और स्त्रियों को दस बजे प्रातः से चार बजे तक धूप में खड़े रक्खा गया। सुतानगर थाने में जयनगर गाँव से अपूर्वघोरा के मकान को पुलिस ने लूट लिया, जिसमें १५ हजार की हानि हुई। तीस अक्तूबर को महिषादल थाने के लख्या गाँव में एक मकान को जला दिया गया। इसी थाने के कालिकाकुण्डू गाँव मे चार मकान जला दिए गए। और तमलुकबोर्ड के उपप्रधान श्री हंसध्वज महतो के मकान में आग लगादी गई, इसके अतिरिक्त अन्य ६६ मकानों के जलाए जाने के समाचार मिले। बङ्गाल की इस अवस्था के विषय में बोलते हुए श्री नियोगी ने केन्द्रीय एसेम्बली में कहा, कि जो दशा कलकत्ता में हुई यदि लन्दन में ऐसी हुई होती तो वहाँ के सर्वोच्च अधिकारी बाजार के बीच जान से मार दिये जाते। इसके बाद उन्होंने कुछ उदाहरणों के आँकड़े सामने रक्खे, उन्होंने बताया कि एक सात वर्ष का बच्चा गोली से उड़ा दिया गया, जो कि एक गली में अपने मकान के सामने खड़ा था, इस बच्चे का हत्यारा एक अंग्रेज सार्जेण्ट था। बङ्गाल के इस असाधारण कष्ट सहन की गाथा श्री फजलुलहक ने निम्न प्रकार कही, १६ फरवरी सन् ४३ तक १०१६ आदमी १२६ में और १२१० आदमी १२८ धारा में गिरफ्तार किए गए, अगस्त से लेकर दिसम्बर सन् १९४२ तक १६५६ आदमियों को दण्ड दिया गया।

सर निजामुद्दीन प्रधान मन्त्री बङ्गाल ने २८ सितम्बर सन् १६४३ को बताया कि सात अगस्त से ३० नवम्बर सन् ४२ तक २८ आदमी जान से

मारे गए, और ४५३ पुलिस की गोलियों से घायल हुए, गणनामें फौज द्वारा मारे गये आदमी सम्मिलत नहीं हैं।

निर्दोष व्यक्तियो पर झूंठे मुकदमे चलाए गए, यह इसी से सिद्ध होता है, कि सरकारी अदालत के द्वारा भी २५ प्रतिशत से अधिक सजा न पा सके। पुरलिया का ६ सितम्बर सन् ४३ का समाचार हैं कि बड़ा बाजार थाना जलाने के अपराध में ६८ आदमियों पर मुकदमे चले लेकिन सजा १७ को ही हो सकी, शेष सबको छोड़ देना पड़ा। यह केवल उदाहरण मात्र है।

बङ्गाल प्रान्तीय कॉंग्रेस कमेटी के अनुसार तमलूक के इलाके में अगस्त सन् ४४ तक पुलिस और फौज ने बाईस जगह गोलियाँ चलाई जिसमें ४४ आदमी मरे, १९९ सख्त घायल हुए और १४२ को साधारण चोटें आईं। ६३ स्त्रियों का सतीत्व भङ्ग किया गया, और ३१ के सतीत्व भ्रष्ट करने का असफल प्रयत्न किया गया, १५० स्त्रियों के ऊपर हमले करके अपमानित किया गया, ४२२६ आदमियों पर हमले किए और १२६८ गिरफ्तार किए गए, १२४ मकान जलाए गए, ५९ कुटुम्बों से २५३६५ की सम्पत्ति कुर्क की गई। १ लाख ९० हजार सामूहिक जुर्माना लगाया गया। एक तिहत्तर वर्ष के बूढ़े को जो शान्त जलूस का नेतृत्व कर रहा था, तीन गोलियों से धराशायी किया गया।

बम्बई

भारत के महर्षि श्री दादा भाई नौरोजी की पौत्री कुमारी खुरशीद नौरोजी

के निम्न वक्तव्य से बम्बई का वृतान्त प्रारम्भ करते हैं, "हमारी वाणी का अपहरण कर लिया गया परन्तु गाँधी जी और अन्य नेताओं की गिरफ्तारी के बाद के कार्यों से भारत की आवाज संसार में गूँज उठी है। मैं तो आज रात्रि में भय से गला घुटने जैसा प्रतीत करती हूं, चाहे मेरी आवाज किसी के पास भी न पहुंचे लेकिन मैं यह सब बिना कहे नहीं रह सकती।

"क्या किसी के मन में यह संशय रह सकता है कि सरकार ने पूर्ण रूप से अनियंत्रित और अनावश्यक हिंसा की है। जनता के एकत्र होकर स्वतंत्रता की घोषणा करने मात्र पर भीड़ पर गोलियाँ बरसाई गईं। जलियान-वाला बाग के हत्याकाण्ड की, डायर-मनोवृत्ति आज भी जीवित है। बम्बई के ५० प्रतिष्ठित सज्जनों के वक्तव्य से मैं उद्धृत करती हूँ "हमने फौज को आने जाने वाली भीड़ पर अंधाधुन्ध गोलियां चलाते देखा ऐसी घटनाएं गोखले रोड और लेडी जमशेद रोड पर हुईं। लोगों को नग्न करके उनपर कोड़े बरसाए गए, फौज के आदमी घरों में घुस गए, लोगों को पीटा तथा अपमानित किया, सरकार ने अपनी पाशविक शक्तियों का पूरा प्रदर्शन किया, अश्रु-गैस के बम तक बरसाए गए। सरकार ने भारत के शहरों में जंगल राज्य स्थापित कर दिया बम्बई में के० ई० एम० होस्पीटल के सामने वीर देवू का गोली से मारा जाना अत्यधिक दयनीय दृश्य था, वहाँ कोई भी नही था वह केवल अकेला था और उसका अपराध केवल महात्मा गाँधी की जय बोलना था।

डाक्टर जिवराज मेहता ने अपने एक पत्र में इस सम्बन्ध में लिखा है, "—भीड़ के ऊपर दस दस मिनट के अन्तर से गोलियाँ चलाई गईं भीड़ अपने मृतक और घायलों को यथा स्थान पहुंचाकर पुनः गोली खाने के लिए आई। ऐसा एक स्थान पर नहीं वरन् नगर के अनेक स्थानों पर हुआ, देवू जैसे वीरों

ने अनुपम वीरता का उदाहरण दिया, भारतीय हथियारों से भयभीत न हुए, भयङ्कर रूप से भड़काए जाने पर भी जनता के समूह हिंसा पर उतारू नहीं हुए। उन्होंने किसी अंग्रेज या हिन्दुस्तानी को मारने का प्रयत्न नहीं किया। "मैं तो भारत के नागरिकों को उनके असीम साहस के लिए हार्दिक बधाई देता हूँ।

* * * * *

बम्बई में लोगों को अपमानित और पीड़ित किए जाने का विवरण हम श्री नियोगी के केन्द्रीय एसेम्बली में दिए गए भाषण से उद्धृत करते हैं, "बम्बई के चौंतीस व्यापारी संघों ने सरकारी दमन कृत्यों की घोर निन्दा की।

बौम्बे क्रानीकल पत्र ने लिखा :—पुलिस और फौज ने निर्दोष राहगीरों से सड़कें साफ कराईं बम्बई के प्रतिष्ठित सज्जनों को अपमानित किया, बन्दूकें दिखा-दिखा कर देवियों को झाड़ू देने के लिये विवश किया गया।

ए० एम० जोशी ने केन्द्रीय एसेम्बली में कहा कि बम्बई शहर में जो लोग अपने घरों से बाहर तक न निकले थे उन्हें बल पूर्वक बाहर निकाल कर उनके ऊपर लाठी प्रहार तक किया गया। बम्बई नगर के अतिरिक्त मुझे और स्थानों का भी पता है। कैरा जिले में कुछ विद्यार्थी गाँव-गाँव घूमकर प्रचार करते फिर रहे थे, जिसे वे सत्याग्रह कहते थे, प्रचार समाप्त करके वे स्टेशन पर आये, पुलिस का एक दल जो उनका पीछा करता फिरता था, रेल से उतर कर इनकी ओर बढ़ा, विद्यार्थियों के नेता ने कहा कि हम सत्याग्रही

हैं और गिरफ्तारी के लिये तैयार हैं, इस पर भी पुलिस ने उन विद्यार्थियों पर गोली चलादी, तीस मर गये और बहुत से घायल हुये, पुलिस ने घायलों को पानी तक न पिलाने दिया। श्री जोशी ने एक अन्य घटना का वर्णन करते हुये कहा कि—"बम्बई प्रान्त के धुलप जिले में नन्दुरबार एक छोटा सा कस्बा है, स्कूल के छोटे-छोटे विद्यार्थियों ने वहाँ पर ६ अगस्त को एक जलूस निकाला, उसी समय पुलिस सब इन्सपेक्टर के ऊपर उसके किसी शत्रु ने पत्थर फेंक दिया, सब-इन्सपैक्टर ने उसे गिरफ्तार करके बच्चों पर गोली चलवादी। परिणाम स्वरूप तीन चार निरीह बच्चे जान से मारे गये।"

श्री जमुनादास मेहता ने १२ फरवरी सन् ४३ को केन्द्रीय एसेम्बली में बोलते हुये कहा—'कि मैं केवल बम्बई शहर और जिला थाने के विषय में कहूँगा मैं दो उदाहरण दूँगा जिसमें स्त्रियों पर गोली बरसाई गई, जापानी और जर्मनियों पर नहीं बल्कि ऐसी स्त्रियों पर जो अपने घर जारही थीं, या घर में थीं। सरकार ने भी अपने इन कुकृत्यों को मानते हुये अपराधियों को दण्ड देने की जगह पीड़िताओं को थोड़ा हर्जाना दिया। बन्दूकों का प्रयोग लड़ाई मे न करके पूना में किया गया और नागरिकों के ऊपर घातक हमले हुये, सिपाहियों ने निर्दोष स्त्रियों पर गोलियाँ बरसाई।" नन्दुरबार की पूर्वकालीन घटना को दोहराते हुये श्री मेहता ने बताया:—एक चौदह वर्ष का बच्चा जहाँ राष्ट्रीय झण्डा लहराता था, वहाँ गया। पुलिस ने उस पर गोली चलादी, लड़के के पैर में गोली लगी, पुलिस उस समय तक गोली चलाती रही जबतक कि वह मर न गया। यह भारत

के इतिहास में अमर शहीद रहेगा। इस घटना की जाँच करने के लिये मैंने बम्बई के गवर्नर को भी कहा, लेकिन पुलिस ने मेरी सहायता करने के बजाय इतना विरोध किया कि मुझे नन्दुरबार जाने के लिये किसी को कार तक न देने दी।

—मद्रास—

अपनी साधारण दमन नीति पर चलते हुए सरकार ने मद्रास में काँग्रेस के विरुद्ध बड़ी तत्परता और तेजी से लड़ाई छेड़ दी। तमाम काँग्रेस संस्थाएँ गैर कानूनी क़रार दे दीं, मद्रास सरकार ने मद्रास शहर और सारे प्रान्त में जलसे जलूस आदि पर प्रतिबन्ध लगा दिए। सारे प्रमुख काँग्रेस कार्यकर्त्ता एक ही समय में गिरफ्तार कर लिये गये, इस सबके परिणाम स्वरूप प्रान्त भर में सार्वजनिक प्रदर्शन और अन्य घटनाएँ घटीं। इस सम्बन्ध में सरकारी वक्तव्य निम्न लिखित है।

"सारे प्रान्त भर की स्थिति अस्त व्यस्त हो गई है, अनेक स्थानों से जन समूह द्वारा सरकारी दफ्तरों पर हमले किए जाने के समाचार मिले हैं। एक जन समूह ने रामनद मिल में देवकोटा स्थान पर पुलिस को घेर कर उस पर हमला किया, क्योंकि पुलिस ने भीड़ को अदालत में आग लगाने से रोका था, बार-बार गोलियाँ चलाने से भी भीड़ तितर बितर नहीं हुई। इस पर जिलाधीश और सुपरिन्टेण्डेण्ट पुलिस सशस्त्र पुलिस के साथ आए और गोलियाँ चलाईं। यद्यपि गोली से पीड़ितों की निश्चित संख्या मालूम नहीं, पर छै मृतक शरीर और तीन घायल मिले। ४१ आदमी गिरफ्तार

किए, तब जाकर स्थिति काबू में आई-लेकिन कचहरियाँ जलाकर भस्म कर दी गईं।

मदुरा में अब भी लोग विद्रोह कर रहे हैं, सोमवार के दिन उन्होंने मोटर गाड़ी पर पत्थर फेंके। दो ताड़ी की दूकानें जलादीं, और एक डाकखाना लूट लिया।

भीमावरम में थाने और पुलिस लाइन पर जनता ने वार किया, इस पर पुलिस ने गोली चलाई, पाँच आदमी जान से मारे गए। अन्य स्थानों में विद्यार्थियों के प्रदर्शन हुए और गन्तूर जिले के गाँवों में कुछ घटनाएँ हुईं। अम्बर में पाँच काँग्रेस जन गिरफ्तार किए गए, सरकारी इमारतों तार घरों को टेलीफून और कुछ व्यक्तियों की सम्पत्ति को भी बड़ी हानि हुई। सरकार ने जिले के अधिकारियों को विशेषाधिकार देकर दमन के लिये सर्वत्र नियुक्त कर दिया।

उपरोक्त घटनाओं पर मद्रास सरकार ने सभी कानूनी और गैरकानूनी दमन के साधन ग्रहण किए,

देवकोटा अग्निकाण्ड के सम्बन्ध में ९४ आदमियों पर मुकदमे चलाए गए, जिसमें ८ निर्दोषी पाकर छोड़ दिए गए और शेष ८६ को १ साल से लेकर १० वर्ष तक की सजाएँ हुईं।

फरवरी सन् ४३ को तन्जौर में त्रिवेदी स्थान की गड़बड़ी के सम्बन्ध में ४१ आदमियों को ६ महीने से लेकर तीन साल तक की सजाएँ हुईं, और २५ आदमियों को १-१ दर्जन बैतों की सजा दी गई। एक सत्रह साल के अन्धे और बहरे को १ साल की सख्त सजा हुई।

मदुरा का समाचार है कि श्र्बन्न मलाल का खजाना लटने के अपराध में १२० आदमियों पर मुकदमे चलाये गए, चौंसठ को सजाएँ हुईं, ५६ आदमी छोड़ दिये गए।

११ मई सन् ४३ को चंगलीपुट में स्याली उपद्रव के मुकदमे में आठ मुलजिमों में से पाँच को सजा हो गई, इनके ऊपर रेल की पटरी आदि उखाड़ने और स्याली रेल पुल के नीचे विस्फोटक द्रव्य रखने के अपराध में मुकदमा चला था।

१२ मई सन् ४३-कोयम्बटूर में सलूर लूटमार केस में चालीस आदमियों को ७ साल की सख्त सजा २ को २ वर्ष की शेष ४६ को छोड़ दिया गया।

मैसूर—रियासत ने भी मद्रास सरकार का अनुसरण करके सब काँग्रेस संस्थाएँ गैर कानूनी घोषित करदी, समस्त काँग्रेस जन गिरफ्तार कर लिए, जलसे, जलूस, हड़ताल और समाचारों के प्रकाशन आदि पर रोक लगादी। इसके पश्चात जनता की प्रतिक्रिया को दमन करने के लिए १८ अगस्त को बंगलोर शहर में गोली चलाई गई, जिसके परिणाम स्वरूप ५ आदमी मर गए, ३ को गहरी चोटें आईं, उनमें से एक अस्पताल में मर गया और चार की स्थिति खतरनाक हो गई। जब शहर के अन्दर जन समूह थाने और डाकखाने आदि पर हमला करने चला तो उन पर छै बार गोलियाँ चलाई गईं।

२८ सितम्बर सन् ४२ को बंगलौर से लगभग २०० मील दूर ईसर गाँव में जनता द्वारा शिकारपुर के हवलदार और एक थानेदार की मृत्यु के सम्बन्ध में मुकदमा चलाया गया, जिसमें ११ को फाँसी और १३ को आजन्म कारावास दण्ड दिया गया। श्रवण बेलगोला जो बंगलौर से ११० मील

दूर है। वहाँ अक्तूबर सन् ४२ की घटनाओं पर एक मुकदमा चलाया गया। जिसमें चार को आजन्म कारावास और १८ अभियुक्तों को दो मास से दो वर्ष तक की सजाएँ दी गईं।

इन कानूनी सजाओं के अतिरिक्त सरकार ने जो अन्य अमानुषिक अत्याचार किये वह अनगिनत हैं। उदाहरणार्थ कुछ अङ्कित किये जाते हैं—मद्रास में देवकोट नामक एक स्थान है, जहाँ पर सन् ४२ के अगस्त और सितम्बर मास में पुलिस और अंग्रेजी फौज ने मार पीट लूट, खसोट और स्त्रियों पर हमले करना अपनी दिनचर्य्या बनाली। आस पास के गाँवों में भी यही कृत्य किये गए। पुलिस और गोरी फ़ौज ने जो अत्याचार देवकोट और रामनद जिले के अन्य स्थानों में किए वह बड़े हृदय-द्रावक हैं, एक मास तक जनता को वहाँ रहना असम्भव कर दिया। जिन्हें खद्दर पहने देखा उन्हें बुरी तरह से पीटा गया, बहुत से सम्मानित व्यापारी लोगों को गाली से अपमानित करके लाठी द्वारा पीटा गया। पुलिस ने जांच के दौरान में बहुत से नायुकों का इस बुरी तरह से पीड़ित किया कि कुछ की अंगुलियों के नाखून तक कट गये। ग्रामीण अपने-अपने घरों को छोड़ जंगलों में भाग गये। पुलिस ने प्रसिद्ध सरस्वती पुस्तकालय की पुस्तकों को लूट लिया वे एक ऐसे घर में घुस गये जहाँ विवाह हो रहा था वर तथा बरातियों पर लाठी बरसा उन्हें मार दिया, हलवाई आदि भी मार पीटकर भगा दिये गये, पुलिस और फौज ने वहाँ के स्थानीय गुन्डों की सहायता से जुल्म किया, २५ अगस्त को अन्ध विमाल नामक ग्राम में एक स्त्री के साथ बहुत निर्दयता पूर्ण व्यवहार किया, २६ अगस्त को पुलिस ने गोपाल केशवन की तलाश में उसकी स्त्री पर पाशविक अत्याचार किये। पुलिस वालों ने उसे नंगा करके आम सड़क पर अपमानित किया। १३

सितम्बर को चार महिलाओं को विलगन्न कूटर ग्राम से बस में बैठाकर थुरू वडनाय जेल में ले जाकर अपमानित किया । उनको नंगी करके पेड़ से बाँध दिया और कुत्ते श्रों से दूध खींचकर दूध निकाला, चार गोरे सार्जेण्टों ने उनके गुप्त अंगों में लाठियां चढ़ा दीं, खून की धारा बह निकली और वे निर्दोष स्त्रियां जब यह पीड़ा सहन न कर सकीं तो दीवार से सर फोड़ कर मर गईं । प्रथ्वी १४ सितम्बर को एक ५५ वर्षीय महिला गोली से मार दी गई। उसी दिन बहुत से आदमियों के घर फूँक कर खाक कर दिये गये, १५ सितम्बर को नगर्दी नगाश्रन को पीड़ित और अंग भंग कर जान से मार दिया गया २६ अगस्त को रामा स्वामी हरनाय का घर फूँक कर खाक कर दिया गया उसके न मिलने के कारण उसके दो लड़कों को गिरफ्तार कर लिया। इसी प्रकार और भी कई आदमियों के मकान जला दिये गये, बन्दूर गाँव के बहुत से मकान जला दिये गये, २०० चावलों के गोदाम फूँक दिये गये, करमें ग्राम नामक व्यक्ति जो वरमा में था उसके खेत लूट कर पशु फूँक दिये गये" इस गांव की ५ स्त्रियों को अपमानित किया गया । अद्रानगुडी गाँव में ३ आदमियों को पुलिस ने हाथ पाँव बाँधकर जूतों से पीटा और उनके मुख में जबरदस्ती पेशाब डाला। कत्थु, मनायूर रसाल कुडी और दूसरे गावों के बहुत से मकानों में आग लगा दी और अन्न लूट लिया, नित्य प्रति सैकड़ों निर्दोष गाँव वालों को सराय कुडी में लाकर सताया जाता था। देवकोटा नगर की एक गली के रहने वाले सभी आदमियों को निकाल घर से बाहर किया गया, उन्होंने अपने दिन बड़े दुख से काटे ।

श्री के० पी० नियोगी ने केन्द्रीय एसेम्बली में भाषण देते हुये

बताया कि मद्रास में पुलिस ने निर्दोष व्यक्तियों को करफ्यू आर्डर के बहाने से बिना चेतावनी दिये गोली का शिकार बनाया। इसके ऊपर १६ अगस्त को मदुरा म्युनिसिपल कौंसिल ने एक प्रस्ताव भी पास किया था।

१२ फरवरी सन् १६४३ ई० को श्री टी० टी० कृष्णाचार्य ने भाषण देते हुये बतलाया कि "मिलिटरी तथा पुलिस ने लोगों को इतना भयभीत बना दिया कि उन्होंने बिना चूँ चरा किये घोरतम अत्याचार सहे। पुलिस ने दो प्रकार से अत्याचार किये, एक तो गड़बड़ को दबाने के लिये तथा दूसरे लोगों को आतङ्कित करने के लिये। हमारे यहाँ मालाबार स्पेशल पुलिस और एक अर्द्ध सैनिक दल है, दोनों ही निर्दयता में अपना कोई प्रतिद्वन्दी नहीं रखते। तजोर में अन्धाधुन्ध गोलियाँ चलाई गई। इसी प्रकार रामनद जिले में पुलिस ने बहुत घृणित तथा भयङ्कर अत्याचार किये। गाँव के गाँव जला दिये। झोंपड़ियाँ फूँक दी और स्त्रियों के साथ दुर्व्यवहार किया। मदुरा में दो स्त्रियों के साथ अत्याचार किया गया। दो स्त्रियों को पुलिस ने नग्न करके एक चीथड़े में लपेट शहर से बाहर छोड़ दिया। इसी प्रकार की घटनाएँ तिनावली में भी हुई, गाँव के गाँव लूट लिए गये, झोंपड़े जला दिये गये। आँध्र के अन्य जिलों में भी इन घटनाओं को दुहराया गया। गन्टूर और कोयम्बटूर जिले के लोगों को आँतकित किया गया।

विद्यार्थियों ने सार्वजनिक प्रदर्शनों में विशेष भाग लिया। साधारणतया उनको गोली का शिकार बनाया गया और उन्हें जेलों में ठूँस दिया। इसके अतिरिक्त कालेज के अधिकारियों ने अलग से उन पर सख्तियाँ कीं। लोयला कालेज मद्रास के प्रिन्सीपल ने राजनैतिक मनोवृत्ति के विद्यार्थियों को कालेज से निकाल दिया, बहुत से उन विद्यार्थियों को जो परीक्षा में उत्तीर्ण हो गये थे

कालेज में दाखिला नहीं किया। वे आज भी अपना दाखिला कराने को इधर-उधर मारे फिर रहे हैं। इस प्रकार मद्रास में लोगों के साथ दुर्व्यवहार किया गया। अंग्रेजों के अत्याचार जो मद्रास में किये गये वे बुरे से बुरे अत्याचारी को भी मात करते हैं।

"बिहार"

बिहार भारत के उन प्रान्तों में से एक है जो सन् १९४२ ई० के आन्दोलन में गम्भीरता और वीरता के साथ प्रचण्ड अग्नि में कूदा। वहाँ की दशा का अनुमान २१ अगस्त सन् ४२ ई० को प्रकाशित निम्न लिखित सरकारी वक्तव्य से प्रकट होता है। "१६ अगस्त को जब कि पुलिस और फौज का एक दल डुमराव से बक्सर को जा रहा था तो उसने ऐसी भीड़ों के ऊपर जो विभिन्न स्थानों पर सड़कें खोद रही थीं, गोलियाँ चलाईं। जिसके परिणाम स्वरूप १७ आदमी मारे गये। जब फौज रेल के द्वारा आसनसोल से पटना की ओर आ रही थीं उसने ऐसे दलों पर जो रेल की पटरी उखाड़ने का प्रयत्न कर रहे थे, गोलियाँ चलाईं, जिससे १८ आदमी मारे गये। मुजफ्फरपुर जिले में कटनी और मिदनापुर स्थानों में भयङ्कर झगड़े हुये, दोनों स्थानों पर पुलिस थाने नष्ट कर दिये गये। कटनी में एक पुलिस का सिपाही मारा गया तथा एक सब इन्सपैक्टर जख्मी हुआ। मिदनापुर में एक सब इन्सपैक्टर जान से मारा गया। सासाराम में १४ अगस्त को दो बार गोली चली जिसमें १६ आदमी घायल हुए।

१६ अगस्त को पटना जिले के १२ स्थानों में भीड़ पर गोली चलाई गई परिणाम स्वरूप २ आदमी जख्मी, तथा दो मारे गये। १६ अगस्त को बख्तियार

इलाके में कई पुलिस अफसर घायल हुये। उसके बाद गोली चलाकर भीड़ को तितर बितर किया गया। पटना जिले में १७ अगस्त को विजयपुर में गोली चलाई गई। २० अगस्त को पटना जिले में ऐसे लोगों के समूहों पर जो पेड़ काटकर और तार लगा कर सड़कें रोक रहे थे, गोली चलाई गई। पटना तथा गया के बीच गाड़ियों का आना जाना रोक दिया गया। उत्तरी बिहार में डाक का आना जाना बन्द हो गया। बिहार में एक जिले से दूसरे जिले को जाने वाली आम सड़कें रात के ७ बजे से प्रातः के ७ बजे तक जनता के लिये रोक दी गईं।

इन तमाम घटनाओं के बाद सरकार ने लोगों पर कानूनी तथा गैर कानूनी सख्तियाँ करके अत्याचार की सीमा को लाँघ दिया।

पटना में २ कनाडी अफसरों के फतवा में मारे जाने, जबकि वे १० अगस्त सन् ४२ ई० को मारे गये मुकदमे में आठ आदमियों को फाँसी की सजा दो को आजन्म काला पानी और ५ को सख्त कैद की सजा दी गई। एक योरोपीयन हवाबाज की हत्या के अपराध में १० निर्दोष व्यक्तियों पर महीनों अभियोग चलाया गया। सबूर रिसर्च कालेज को जलाने, लूटने तथा हानि पहुँचाने के अपराध में भागलपुर के जज ने दो व्यक्तियों को आजन्म कारावास का दण्ड दिया। बाकी ५ आदमियों पर बहुत दिन तक अभियोग चलाया।"

बिहार में उपरोक्त कानूनी मुकदमों के अतिरिक्त जिस निर्दयता तथा पाशविकता के साथ सरकार ने व्यवहार किया उसका अनुमान इन घटनाओं से लगाया जा सकता है, जिनकी रायबहादुर राय बहादुर श्री नारायण मेहता ने

निम्नाङ्कित अपने कौंसिल आफ स्टेट में २५ अगस्त सन् ४२ ई० के भाषण में की है। बिहार में ११ अगस्त तक कोई भी गम्भीर घटना नहीं हुई परन्तु उस दिन दोपहर को पटना सेक्रेटेरियट के सामने एक तितर बितर होती हुई भीड़ पर गोली चलाई गई। यह आन्दोलन को चलाने के लिये प्रथम चिनगारी थी। इसके बाद घटना चक्र अति वेग से चलने लगा। उखाड़ पछाड़ और हिन्सा कार्यों की चरम अवस्था कुछ पुलिस वालों और एक सब डिवीजन के मजिस्ट्रेट को जिन्दा फूँक देने में हुई। परन्तु इन सब को दबाने के लिये जो साधन प्रयोग में लाए गये उसमें एक साधारण नागरिक जनता की उद्दण्डता एक ओर तथा सरकार की असीम संगठित हिन्सा शक्ति दूसरी ओर, एक साधारण नागरिक को बीच में खड़ा कर कुचलने लगी। जनता से कहीं अधिक कानून रक्षक सरकार की हिन्सा शक्ति थी। फौजों और पुलिस को गाँव वालों पर बेधड़क छोड़ दिया गया। मैंने अपने जिले में गाँव के दौरे किए। मुझे मालूम हुआ है कि पुलिस तथा फौज ने ग्रामीणों पर धींगा दस्ती का साम्राज्य छा दिया। उनकी निजी सम्पत्ति को लूटा और बरबाद किया। गांव के गाँव जला दिए, लोगों को गिरफ्तारी की धमकी दे उनसे रुपये छीने और कुछ आदमियों को तो वास्तव में शारीरिक कष्ट भी दिये। इन सब घटनाओं का लिखित व्यक्तव्य मैंने अपने जिले के कलक्टर और सूबे के चीफ सेक्रेटरी को दिया। जो मैंने अपनी आँखों से गाँवों में देखा कि सब धनियों की दूकानें लूट ली गईं, गाँव के गाँव जला दिये गए। यह सब पुलिस तथा फौज के द्वारा हुआ। यह सब दृश्य मरते समय तक मेरी आँखों के सामने नाचते रहेंगे। बिहार के अत्याचार ने भारतीयों को सिखा दिया कि एक कुत्ते और मनुष्य को गोली मार देने में सरकार कोई अन्तर नहीं करती।" इसी सम्बन्ध में

श्री के०सी० नियोगी ने २४ सितम्बर को अपने भाषण में कहा, पटना में मनुष्यों को सड़क साफ करने के लिए विवश किया गया। प्रतिष्ठित मनुष्यों को घर से निकाल सफाई पर लगाया गया। जिन लोगों ने ऐसा करने से किंचित भी आनाकानी की तो उन्हें निर्दयता से पीटा गया। इस दुर्व्यवहार से डाक्टर गुप्ता तथा बड़े-बड़े वकील भी न बच सके।"

भारत सरकार के गृह सदस्य सर मैक्सवेल ने भी पुलिस के अत्याचारों का अपने १२ अगस्त सन् ४३ को केन्द्रीय असेम्बली के सामने दिये गये भाषण में समर्थन किया है। "जहाँ तक मुझे मालूम है पुलिस के कई मामलों की जाँच की जा रही है और कई प्रान्तों में उनके ऊपर कार्यवाही भी की गई है। बिहार में १३ मामलों में ३५ पुलिस अफसरों के विरुद्ध, या तो जाँच हो रही है अथवा अभियोग चल रहे हैं।" एक प्रत्यक्ष दर्शी का बताया हुआ वक्तव्य नीचे दिया जाता है।

"बिहार प्रान्त के लोकप्रिय मन्त्री श्री जगलाल चौधरी को भी सरकार ने अछूता नहीं छोड़ा। ६ अगस्त को अपने ग्राम में न होने के कारण उन्हें गिरफ्तार न किया जा सका। जब कुछ दिन पश्चात वे घर आये तथा कुछ लोगों से आन्दोलन सम्बन्धी बातचीत अपने घर से बाहर कर रहे थे तो प्रान्त के जिला मजिस्ट्रेट ने पुलिस तथा फौज की सहायता से उनके घर में घुसने का प्रयत्न किया, चौधरी साहब के १८ वर्षीय लड़के ने जो बी० ए० क्लास का विद्यार्थी था, जिला मजिस्ट्रेट को दरवाजे पर रोक दिया क्यों कि घर में चौधरी साहब नहीं थे और घर में पर्दा करने वाली देवियाँ थीं। उसको अपनी माता और बहन के अपमान और दुर्व्यवहार की आशङ्का थी, जो निराधार नहीं थी। क्यों कि उन दिनों पुलिस तथा फौज की टुकड़ियाँ बराबर

इस प्रकार का व्यवहार कर रही थीं। उसने बड़ी चतुराई के साथ घर के अन्दर, माँ तथा बहन को बाहर निकल जाने की सूचना भेज दी, और वे बाहर चली गईं। परन्तु इसका युवक को निश्चय न होने के कारण उसने पुलिस और फौज को घर के अन्दर जाने से रोका। निर्दयी जिला मजिस्ट्रेट ने गोली चलाने की आज्ञा दी और यह युवक गोली लगते ही प्राण विहीन हो गया। घर में कोई न था अतएव लाचार पुलिस तथा फौज का दल वहाँ पहुँचा जहाँ चौधरी साहब भाषण दे रहे थे। चौधरी साहब को जिला मजिस्ट्रेट से मिलने बुलाया गया, और उन्हें उनके इकलौते पुत्र की मृत्यु घटना सुनाई। उन्होंने उसे बड़ी गम्भीरता तथा शान्ति से सुना। अपने को पुलिस के हवाले करते हुए जन समुदाय को शान्ति पूर्वक चले जाने का आदेश दिया। पुलिस शान्ति पूर्वक बिना किसी भी प्रकार जनता से मुठभेड़ किये चली आई। यह सब चौधरी साहब के व्यक्तिगत प्रभाव का कारण था। परन्तु जैसे ही जनता को चौधरी साहब के पुत्र का मृत्यु समाचार मिला तो वह स्वभावतः उत्तेजित हो गई। उसके बाद जो भी जनता ने किया उसके लिये चौधरी साहब को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। परन्तु कृतघ्नी पुलिस और जिले के अधिकारियों ने निर्दोष चौधरी साहब को झूठी और घड़ी हुई गवाहियों के आधार पर १० वर्ष की सजा करा दी। यह उदाहरण अँग्रेजी न्याय या अँग्रेजी पाशविकता का है। निर्दोष इकलौता बेटा जान से मार दिया गया, पिता को गिरफ्तार कर लिया गया, घर की स्त्रियों को असहाय छोड़ कर निर्दोष चौधरी को १० वर्ष के लिये जेल में ठूँस दिया गया इस पर भी सरकार ने चौधरी साहब को हिंसा का अपराधी ठहराया।

११ अगस्त को पटना में बिहार के विद्यार्थियों पर जिला मजिस्ट्रेट मिस्टर

मर्चर ने गोली चलवाई उनकी बड़ी भयङ्कर गाथा है। बिहार प्रान्त के विद्यार्थी शान्ति पूर्वक जलूस निकाल रहे थे। उनका लक्ष सेक्रेटेरियेट भवन पर राष्ट्रीय झन्डा फहराना था परन्तु जिला मजिस्टेट की आज्ञा से जो उस समय स्वयं उपस्थित था, फौज ने विद्यार्थियों के जलूस को रोक दिया। विद्यार्थियों कि संख्या अधिक थी और वह इस कार्य पर तुली थी। जब दोनों ओर से दृढ़ता दिखाई गई तो जिला मजिस्टेट ने विद्यार्थियों को झन्डा फहराने की अनुमति देदी। विद्यार्थियों के नेता अलग बुला लिये गये। इसी समय कुछ विद्यार्थी चतुराई से सेक्रेटेरियेट भवन पर चढ़ गये और यूनियन जैक को गिराकर राष्ट्रीय झन्डा फहरा दिया, उसी समय विद्यार्थी प्रसन्नता से वापिस लौटने लगे परन्तु पीछे से उन पर गोली की वर्षा प्रारम्भ कर दी गई। विद्यार्थी वास्तव में भागे परन्तु फिर भी ८ युवक गोलियों से मारे गये और बहुत से जख्मी हुये। एक आठ वर्षीय मुसलमान बालक फौज के घोड़ों की टापों से कुचल दिया गया, इसके बाद अस्पताल में किस निर्दयता से व्यवहार किया गया यह भी हृदय विदारक घटना है। जेल के दुर्व्यवहार का वर्णन भागलपुर के बाबू कैलाश बिहारीलाल ने अपने निम्न केन्द्रीय असेम्बली के २३ जौलाई सन् ४३ ई० के भाषण में किया है। "—मैं अभी बिहार सूबे की जेल से छूट कर आया हूँ, सरकार ने किस प्रकार अन्धाधुन्ध गिरफ्तारी की पहले इसका ही वर्णन करता हूँ। यह सब को पता है कि मैंने कुछ मत भेद होने के कारण पिछला आन्दोलन चलने से बहुत पहले कांग्रेस को छोड़ दिया था, मेरी गिरफ्तारी का कोई भी कारण नहीं था फिर भी मुझे गिरफ्तार कर जेल में ठूँस दिया गया, और उस का कोई भी कारण नहीं बताया गया बाद को जब मैं नौ मास जेल में रहा तब मुझे छोड़ा गया परन्तु

फिर भी सरकार ने अपनी सफाई के लिये मुझसे एक लिखित प्रतिज्ञा माँगी। मैंने कोई भी प्रतिज्ञा देने से साफ़ इन्कार कर दिया, मेरे ऊपर लगाए गए प्रतिबन्धों में से एक यह था कि मैं अपने भाई रासबिहारीलाल से कोई सम्पर्क न रक्खूँ। यह शर्त कितनी बेहूदा थी इसका पता केवल इसी बात से लग जाता है कि मेरा भाई उसी जेल की और मेरी ही कोठरी में तीन मास से बन्द था। यह सब होते हुये भी गवर्नर महोदय ने २३ अप्रैल के पत्रों में अपना एक वक्तव्य प्रकाशित कराया, "कि मैंने उनको यह आश्वासन दे दिया है कि मैं किसी भी काँग्रेस-आन्दोलन और अपने भाई से किसी प्रकार का सम्पर्क नहीं रक्खूँगा।"

इसके बाद मुझे जेल से छोड़ दिया गया। मैं ६ सितम्बर को जेल भेजा गया था, जेल में भोजन, वस्त्र आदि के अनेक कष्ट थे। मुझे दो मास तक चिट्ठी और मिलाई की आज्ञा नहीं दी गई, और चार मास तक कोई अधिकारी भी जेल में नहीं आया, छूटते समय मुझे पता लगा कि जेल में राजबन्दियों को पीटा गया। एक बार मैंने अपनी आँखों लाठी-प्रहार होते भी देखा। एक बार कुछ राजबन्दियों को बेंत लगाई गईं, इस पर अन्य राजबन्दियों ने वन्देमातरम् के नारे लगाए, इस अपराध के लिए अन्धाधुन्ध लाठी वर्षा करके सैकड़ों राजबन्दियों को घायल कर दिया।

संयुक्त प्रान्त

❀————❀

बिहार के बाद संयुक्त प्रान्त को अत्यन्त कष्ट उठाना पड़ा, विशेषकर

प्रान्त के पूर्वीय भागों को। संयुक्त प्रान्त में विद्यार्थियों ने मुख्य भाग लिया, और उनका कार्यक्रम अधिकतर शहरों तक ही सीमित रहा। तत्कालीन सरकारी विज्ञप्तियों तथा पत्रों में प्रकाशित समाचारों के आधार पर निम्न घटनाओं का पता चलता है। सरकारी विज्ञप्ति में कहा गया है "कि लखनऊ में बन्दरिया पुल के पास विद्यार्थियों के एक समूह ने नेताओं की गिरफ्तारी के ऊपर एक प्रदर्शन किया, जिस पर पुलिस ने लाठी चार्ज किया।"

इससे पहले पुलिस ने विद्यार्थियों को लाठी प्रहार से तितर बितर करने का प्रयत्न किया, इसमें सफलता न देख पुलिस ने जिलाधीश की आज्ञा से गोली चलाई। पुलिस का कहना है कि गोली से किसी को चोट नहीं आई, परन्तु इसमें पूर्व कुछ को चोट आगई थी। कहा जाता है कि कुछ पुलिस वालों को चोटें आईं, इस पर वहाँ फौज बुलाली गई।

अमीनुद्दौला पार्क में लोगों की भीड़ एकत्र हुई, परन्तु पुलिस ने तितर बितर कर दिया, विद्यार्थियों का एक समूह जलूस बनाकर विश्वविद्यालय की ओर जा रहा था, तब पुलिस ने हजरतगंज में समूह को रोक लिया।

शहर में धारा १४४ लगादी गई थी, उसे तोड़ने पर उस दिन कुछ विद्यार्थी गिरफ्तार कर दिए गए, बन्दरिया पुल-काण्ड के बाद तेरह विद्यार्थी गिरफ्तार कर लिए गए जिनमें आठ लड़कियाँ भी सम्मिलित थीं, बाद में लड़कियों को छोड़ दिया गया।

विश्व विद्यालय के निकट पुलिस और फौज का पहरा लगा दिया गया था, अमीनुद्दौला पार्क में २६ व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया गया था। विद्यार्थियों का एक दूसरा जत्था जलूस बनाकर हजरतगंज से सैक्रेटेरियेट

की ओर जा रहा था. पुलिस द्वारा उनको रोकने पर वे पीछे की सड़क पर एकत्र होकर नारे लगाने लगे, पुलिस ने वहाँ भी उन्हें तितर बितर कर दिया।

कानपुर का समाचार है कि सोमवार की शाम को एक भीड़ ने शहर कोतवाली की ओर आते हुये नारे लगाए, कुछ व्यक्तियों ने पत्थर फेंके। झगड़ा बढ़ने से पूर्व ही पुलिस ने मुकाबिला करके भीड़ को तितर बितर कर दिया।

एक जलसे के बाद विद्यार्थियों ने शहर के मुख्य मार्ग मालरोड पर जलूस निकालकर अपने भावों का प्रदर्शन किया, प्रदर्शनकारियों के एक जत्थे ने स्टेशन के टिकट घर में घुसने की चेष्टा की जोर से नारे लगाए गए और रेलवे दफ्तर के कुछ शीशे भी तोड़ दिये गए, पुलिस ने दो मुख्य व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया, जिसके बाद धीरे से भीड़ तितर बितर हो गई, संध्या होते-होते परिस्थिति अत्यन्त बिगड़ गई। शाम को तिलक हाल, कोतवाली और चौक सर्राफे मेंलोगों की भीड़ ने एकत्रित होकर एक भयानक परिस्थिति उत्पन्न करदी। कोतवाली के निकट पुलिस ने लाठी द्वारा भीड़ को चौक सर्राफे की ओर हटाया, वहाँ भीड़ अधिक होने से स्थिति नाजुक हो गई। लोगों ने पुलिस की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया, बल्कि पत्थर फेंक कर पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट को चोट पहुंचाई, इस पर पुलिस ने गोली चलादी, जिसमें कुछ लोग घायल होगये। तत्पश्चात भीड़ तितर बितर हो गई। जब एक भीड़ ने सिरकी मुहाल चौकी पर हमला करके आग लगाने का प्रयत्न किया तब परिस्थिति अत्यन्त बिगड़ गई। पुलिस और भीड़ ने परस्पर पत्थरों से हमले किये, पुलिस ने स्थिति पर काबू पाने के लिये दो बार गोली चलाई। गोली द्वारा आहत आठ व्यक्ति अस्पताल में भरती हुए जिनमें दो की बुरी दशा थी।

हरवंश महाल में झगडे का समाचार पाकर शहर कोतवाली से एक पुलिस का जत्था भेजा गया। कानपुर के जिलाधीश ने दो मास के लिए पाँच से अधिक आदमी एकत्रित होने, जलसा करने, जलूस और हथियार लेकर निकलने पर पाबन्दी लगादी, शहर के मुख्य-मुख्य स्थानों पर पुलिस का पहरा बैठा दिया।

इलाहाबाद सत्रह अगस्त का समाचार है कि चार दिनों से दुकानें नहीं खुलीं। कहा जा सकता है कि किदगंज में पुलिस ने दो बार गोली चलाई, जिससे दो व्यक्ति मारे गये और एक बुरी तरह घायल हुआ। आज रात के आठ बजे से प्रातः ५ बजे तक करफ्यू आर्डर रहा।

इलाहाबाद भी इन अत्याचारों से नहीं बच पाया। विद्यार्थियों के एक जलूस पर गोली चलने से लाल पदम धर नामक विद्यार्थी की मृत्यु हुई। इस पर लड़के और लड़कियों ने शहीद के खून से रंगे हाथों, जलूस निकाला। उन्होंने गोली का भय नहीं किया। इस पर शहर मार्शल ला आरम्भ हो गया, जिसके बल पर निर्दोष लोगों की हत्याएँ की जाने लगीं। राष्ट्रीय झण्डे की रक्षा करते हुए रमेश मालवीय विद्यार्थी ने बड़ी वीरता से प्राण दिए, उसने मरते समय ललकार कर भीड़ को आगे बढ़ने का महामन्त्र दिया। मुरारी मोहन भट्टाचार्य को जान्स्टन गंज में रास्ता पार करते हुए रोका, उसने आज्ञा मानी और लौटने लगा परन्तु इससे गोरे को सन्तोष नहीं हुआ अतः उसने उसकी पीठ में गोली मार कर उसके प्राण लिये। शहर का पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट नादिर शाह की भाँति एक वर्ष तक खुला अत्याचार करता रहा।

देहात के समाचार से पता लगता है कि दो सरकारी इमारतों पर हमले किये गए। जिले भर में पहरे बैठाये गए और रेलवे पर भी फौज का पहरा बिठाया

गया। एक सरकारी विज्ञप्ति का कहना है कि बहुत से जिलों में यत्र तत्र सर्वत्र झगड़े हुए, जिनका सर्व साधारण को कुछ पता नहीं है। इसलिए सरकार उनके विषय में कुछ बात बता देना ठीक समझती है। काँग्रेस लीडरों द्वारा एकत्रित की गई भीड़ ने भारी नुकसान पहुंचाया है, विशेषकर पूर्वीय जिलों में जो हानि पहुंची, सामूहिक जुर्मानों से भी उसकी पूर्ति न हो सकेगी, इसका नुकसान जिले के उन निर्दोष लोगों को भी उठाना पड़ेगा, जिनका इन झगड़ों से कोई सम्बन्ध नहीं था। प्रान्त के गवर्नर ने गाजीपुर और बलिया जिले का दौरा किया था, उन्होंने दो दिनों में जो नुकसान देखा उसका कुछ विवरण दिया जाता है,:—"अब इन दोनों जिलों में शान्ति स्थापित कर दी गई है, वे तहसील और थाने जो नष्ट कर दिए गए थे, या उजाड़ दिए गए थे, उन्हें फिर से खोल दिया गया है। स्थिति सुधरती जा रही है, और लोग अपने-अपने कामों पर लौट रहे हैं।"

गाजीपुर जिले में बहुत से थानों और एक तहसील पर कब्जा कर लिया था। सदिया में एक पुलिस इन्सपैक्टर और एक सिपाही को थाने के सामने जला दिया गया। गवर्नर साहब महमूदाबाद तहसील में गए, तहसील के अहलकार अपने बचाव के लिए, एक सुरक्षित थाने में छिप गए थे, तहसील लूट कर उसमें आग लगादी गई। मुन्सिफ के मकान पर भी हमला किया।

बलिया जिले में इससे भी अधिक नुकसान हुआ, एक तहसील, कई एक थाने और बीजों के गोदाम जला दिये गए, तीन डिप्टी कलक्टर, और एक मुन्सिफ का मकान लूट कर उनके तमाम सामान में आग लगा दी।

एक प्रसिद्ध डाक्टर का अस्पताल लूट लिया गया, डाक्टर घायल हुआ और बेचारे की स्थिति ऐसी हो गई कि उसे अपनी चोटों पर लगाने के लिए टिन्चर आयोडीन भी नहीं मिला, जो उसके पास बहुत बड़े परिमाण में मौजूद था।

बैरिया में पुलिस रातों-रात थाना खाली करके भग ली। सिकन्दरपुर के थाने की केवल बाहरी चार दीवारी ही दिखाई देती है, डाकबंगले को भी नुकसान पहुँचाया गया। बाँसडीह में तहसील पर हमला करके खजाना लूट लिया, आग लगादी, जिसके खण्डहरों को गवर्नर ने देखा। तहसील अत्यन्त सुन्दर और दृढ़ दुमंजिली बनी हुई थी, आग लगने के उपरान्त सीमेण्ट की छतों और फर्शों को बुरी तरह नष्ट किया गया था. पत्थरों के टाँड तोड़ दिए गए थे, और लोहे के गाटरों को घास फूस की तरह तोड़ मरोड़ दिया गया था।

गवर्नर साहब ने रसड़ा का थाना भी देखा जो कि हाल में ही पक्का बनाया गया था, कोई उसको पहचान नहीं सकता था, कि यह भी थाना रहा होगा। क्योंकि वह बिल्कुल नष्ट कर दिया था। गाटर ला पता थे। ऐसा प्रतीत होता था कि किसी भारी भूकम्प और आँधी ने उसे नष्ट किया है।

सरकारी विज्ञप्ति का कहना है, कि २८ और २९ अगस्त के बीच की रात को लगभग २०० आदमियों के एक जत्थे ने हाथरस और टूँडला के बीच वाले एक स्टेशन पर हमला किया था, पुलिस ने गोली चलाकर नौ आदमियों को जान से मार डाला, इस पर आक्रमणकारी चले गए।

बस्ती और आगरा जिले के कुछ गाँवों में सामूहिक जुर्माने किए गये, परिस्थिति पर सरकार ने काबू पा लिया है।

नौ अगस्त की क्रान्ति में और उसके बाद पुलिस के लाठी प्रहार और गोलियों से लोगों को बहुत यातनाएँ झेलनी पड़ी। इतना ही नहीं बल्कि उसके बाद भी वैध और अवैध तरीकों से लोगों को नाना यातनाएँ दी गईं। किस प्रकार निर्दोष लोगों को गिरफ्तार किया गया और सजाएँ दी गईं, यह निम्नलिखित अदालती फैसलों से पता चलता है। मुरादाबाद के लाला रामोहनलाल अग्रवाल की ओर से इलाहाबाद हाइकोर्ट में एक हेबियस कार्पस की दरख्वास्त दी गई थी, उन्हें धारा २६ भारत रक्षा विधान के अनुसार जेल में बन्द किया गया था। श्री अग्रवालजी ने प्रार्थना की थी कि उन्हें हाईकोर्ट में हाजिर होने की आज्ञा मिल जाय। उनका कहना था कि उन्होंने कभी किसी आन्दोलन में भाग नहीं लिया, और सरकार के पास इस सम्बन्ध में कोई प्रमाण भी नहीं था।

"अगस्त सन् १९४१ में जिलाधीश मिस्टर डी० ए० हेग ने उनके एक मुवक्किल मुसम्मात राधारानी से लड़ाई के चन्दे में बीस हजार रुपया माँगे, इतनी बड़ी रकम देने से इन्कार करने पर जिलाधीश ने पुलिस अफसरों और डिप्टी कलक्टरों सहित उसके मकान पर हमला करके सोने चाँदी के आभूषणों और सैंतीस हजार पाँच सौ तिरेपन रुपये पाँच आने तीन पाई नक़दी पर सील लगादी। श्रीमती राधारानी के कहने पर अर्जीदार (राममोहन अग्रवाल) ने गवर्नर, वायसराय और अन्य अधिकारियों के पास इस सम्बन्ध में तार भेजे। इससे जिलाधीश ने अपने अधापो

फँसा हुआ देखकर उनके जेवरात और बारह हजार रुपया लौटा दिए और बाईस हजार के लगभग रकम अपने पास रोकली। इसके बाद जिलाधीश को मुझसे चिढ़ हो गई, फलस्वरूप उसने कुछ प्रतिष्ठित हिन्दू सज्जनों से कहा कि वह मुझे समझेगा, और जल्द ही जेल की हवा खिलावेगा। जिलाधीश ने बाद में अपने आपको बचाने के लिए केदारनाथ और महालाल ने मिलकर उस रकम का ट्रस्ट बनाने की कोशिश की। श्रीमती राधारानी और उसके भाई की ओर से जिलाधीश तथा ट्रस्टियों पर उस रकम तथा पचास हजार के नुकसान का दावा किया गया। और जब मैं श्री हाफिज मोहम्मद इब्राहीम के सामने जिलाधीश और ट्रस्टियों से निबटारे की बात कर रहा था, तभी मुझे गिरफ्तार कर लिया गया।

मई मास में अपने मुवक्किल श्रीमती राधारानी के भाई पर पुलिस द्वारा किए गए हमले के सम्बन्ध में मैंने गवर्नर, गो० ओ० क०, और मिस्टर बर्न के पास तार भेजे। लेकिन राधारानी का भाई भी अगस्त में मामला दबाने के लिये गिरफ्तार कर लिया गया।

ग्यारह अगस्त को गोलियाँ चलने पर जो लोग मर गए थे उनकी सहानुभूति में लोगों ने बारह अगस्त को जलूस निकलने का इरादा किया। जिलाधीश और सिटी-मजिस्ट्रेट से मिलकर मैंने कहा कि यदि पुलिस हट जाय तो जलूस नहीं निकाला जायगा, लेकिन उन्होंने बिना हटे शाम को जलूस निकलने की आज्ञा दे दी। जलूस तो शान्ति से निकल गया लेकिन कुछ लोगों ने स्टेशन को नुकसान पहुँचाया, जिसका मैंने जिलाधीश को पत्र लिखकर और जनता में बोलकर विरोध किया। इस पर मुझे गिरफ्तार कर लिया गया। सितम्बर में कुछ शर्तों पर मुझे छोड़ना स्वीकार किया, परन्तु मैंने उन अपमान-

जनक शर्तों को मानने से मना कर दिया ।

१० मार्च सन् १९४३ इलाहाबाद का समाचार है, जिसमें धारा ३९६, ४३६ और भारत रक्षा ३५ के अनुसार गाजीपुर के जज ने ६१ आदमियों पर मुकदमा चलाया, जिनमें से चवालीस को रिहा कर दिया और १७ को सजाएँ दीं। जिनमें से एक जीतन पाण्डेय को फाँसी की, नन्कू चमार को १० वर्ष और अब्दुलबार को ७ वर्ष की सजाएँ दीं। फैसला देते समय जज ने कहा कि मुन्शी हमीदुल्लाखाँ पुलिस इन्सपैक्टर और वलीमुहम्मद सिपाही का पीछा करके जान से मारकर जलाने के अपराध में फाँसी दी जाती है परन्तु हाईकोर्ट के जस्टिस स्माइल ने अपील का निर्णय देते समय कहा कि इन मामले की जाँच नाम मात्र के लिए की गई है। उन दिनों में न तो यातायात के साधन ही थे और न पुलिस आसानी से देहात में घूम सकती थी, इसलिए मामले में जाँच की जो त्रुटियाँ रह गई हैं, उनके लिए अधिकारियों को दोष नहीं दिया जा सकता ।

पन्द्रह अगस्त (सन् ४२) को सैदपुर थाने में रिपोर्ट की गई कि चार पाँच हजार आदमियों ने मिलकर सादत थाने पर हमला किया और किवाड़ तोड़ दिए। थाने वालों ने जब बचने का कोई उपाय नहीं देखा तब वे गोली चलाते हुए भाग निकले, सवासौ आदमियों ने उनका पीछा किया, और मुन्शीहमीदुल्लाखाँ, और वलीमुहम्मद ाँ को पकड़ लाए, फिर मारा और थाने के सामने आग में जला दिया। उपरोक्त दोनों व्यक्तियों को जीतनपाण्डे द्वारा मारे जाने का कोई सबूत नहीं पेश किया गया। लेकिन उसके घटना स्थान पर उपस्थित रहने का पुष्ट प्रमाण मिलता है। केवल एक ही गवाह इज्जत हुसेन ने बहुत से लोगों के खिलाफ़ गवाही दी, परन्तु उसकी बात पर भरोसा नहीं किया जा

सकता क्योंकि उसने कई ऐसे के नाम दिए थे जिन्हों ने वहाँ उपस्थित न होने के काफी सबूत पेश किए हैं। परन्तु यह ऐसा अपराध है जिसके लिये सजा देना आवश्यक है। गाजीपुर के जज ने ६१ व्यक्तियों में से ४८ को छोड़ दिया है इसलिये जोतनपाण्डे को फाँसी के बजाय आजन्म कारावास पर्याप्त होगा। और सब सजाएँ जज ने ठीक ही दी हैं यह समझकर उन सजाओं में हस्तक्षेप ठीक न होगा।

इलाहाबाद १० मार्च सन् ४३ का समाचार है, जिसमें धारा १४७, ४३६, ४३५ और १४९ *i. p. c.* और धारा ३५ भारत रक्षा विधान के अनुसार बुलन्दशहर के मजिस्ट्रेट द्वारा पन्ना और खचेड़ू तथा अन्य १४ आदमियों पर मुकदमा चलाया गया था, उसकी अपील का फैसला हाईकोर्ट द्वारा दिया गया. इस मुकदमे में छतारा स्थान पर नहर का बँगला, पतरौल का मकान आदि लूटने, सामान जलाने और तार की लाइन काटने के अपराध में पन्ना को दस साल और खचेड़ू को ४ साल की सजा दी गई थी, खचेड़ू केवल चौदह वर्ष का लड़का था, पन्ना ने स्वीकार किया है कि उसने जो कुछ किया वह दूसरों के कहने से किया इसलिए उसकी सजा घटाकर ५ साल और ५ बेंत की सजा यदि वह सहन कर सके तो दी जायगी।

इलाहाबाद ५ अप्रैल सन् ४३ का समाचार है, "बनारस विश्वविद्यालय के आयुर्वेद विभाग के विद्यार्थी हरिश्चन्द्र को कायमगंज के पुलिस अधिकारियों तथा फर्रुखाबाद के जिलाधीश ने किस प्रकार अनेक कानूनों के आधीन कई बार गिरफ्तार किया और छोड़ा और किस प्रकार उसको मुकदमे के फैसले की नकल देने से इन्कार किया; इस सम्बन्ध में इलाहाबाद

हाईकोर्ट में धारा ४९१ C. P. C. के अन्तर्गत हैवियसकार्पस की अर्जी दी गई। इस मुकदमे में सरतेज बहादुर सप्रू ने पैरवी की, उन्होंने जब मुकदमे का असली रूप अदालत के सामने रक्खा तो सरकारी वकील ने जमानत पर छोड़ देने का विरोध किया, परन्तु अदालत ने पुलिस के हथकण्डों को देखकर कहा कि एक सप्ताह के अन्दर इस मुकदमे के तमाम कागजात मेरे सामने पेश किया जाये। मैं ऐसी बातें सहन नहीं कर सकता कि एक निर्दोष आदमी को इस तरह तंग किया जाय। जिलाधीश और पुलिस को इस बात का जवाब देने को कहा कि उन्होंने फैसले की नकल देने से क्यों इन्कार किया।

बनारस १९ मई सन् १९४३ का समाचार है कि एक स्पेशल मजिस्ट्रेट ने १७ आदमियों को सात सात साल की सख्त सजा और १५-१५ बेंत की सजा अगस्त आन्दोलन में भाग लेने के अपराध पर दी थी। परन्तु अपील में बनारस के स्पेशल जज ने इन सबको मुक्त कर दिया, अपने फैसले में उसने बताया कि सजा देने वाले मजिस्ट्रेट की नियुक्ति प्रान्तीय-मन्त्री द्वारा की गई थी, न कि प्रान्तीय सरकार द्वारा इसलिये उसको सजा देने का कोई अधिकार न था।

इलाहाबाद २१ जौलाई सन् १९४३ का समाचार है कि मथुरा के मजिस्ट्रेट ने वहाँ के एक दूकानदार श्री हरीनाथ के ऊपर इसलिये ५००) जुर्माना किया कि उसने ९ सितम्बर सन् १९४२ को अपनी दूकान बन्द रक्खी थी। उस दिन सुबह जिलाधीश ने हुक्म निकाला था कि दूकानदारों को अपनी दूकानें खुली रखनी चाहिए। श्री हरीनाथ ने अपने बचाव में कहा कि प्रथम तो उसे ऐसे किसी हुक्म का कोई पता नहीं था, दूसरे उस दिन अमावस्या थी, जिस दिन

सदैव छुट्टी मनाई जाती थी। इस मुकदमे की अपील का फैसला देते समय जस्टिस दर ने कहा कि जिलाधीश का हुक्म दूकानें खुली रखने के लिए था, न कि बन्द दूकानों को खोलने के लिये। दूसरे यदि यह भी मान लिया जाय कि जिलाधीश का हुक्म नहीं माना गया तब भी सजा बहुत सख्त है, इसलिये उसको घटाकर ५०) जुर्माना किया जाता है।

इलाहाबाद २२ जौलाई सन् १९४३ का समाचार है कि सात सितम्बर सन् ४२ को श्री राधाकिशन तिवारी को अप्रैल सन् बयालीस के अखिल भारतीय कॉंग्रेस कमेटी के एक प्रस्ताव का मसविदा अपने पास रखने के अपराध में सिटी मजिस्ट्रेट ने १८ माह की सख्त सजा दी थी, इसकी अपील का फैसला सुनाते हुए सैशन जज ने कहा कि भारत रक्षा कानून की धारा ४० में इसको अपराध नहीं कहा जायगा, लेकिन सरकार ने धारा ४१ (१) के अनुसार इसे छापने पर प्रतिबन्ध लगाया था, इसलिए अभियुक्त को मुक्त कर दिया गया।

तेईस जनवरी में नेपालसिंह को आपत्ति जनक कागजात रखने के अपराध में एक साल की कड़ी सजा दी गई थी, परन्तु जज ने अपने फैसले में मुक्त करते समय कहा कि कागजात दस बारह साल पुराने थे, जिनका किसी विरोधी समाचार से कोई सम्बन्ध नहीं है।

सैनिकों को भाषण द्वारा भड़काने के अपराध में ब्रजमोहन गोयल को सिटी मजिस्ट्रेट ने अठारह मास की सख्त सजा दी थी, उससे रिहा करते समय जज ने कहा कि ऐसी सजा देने का पर्याप्त प्रमाण नहीं था। इसी समय जेल कानून की धारा ५२ के अनुसार गोयल को एक वर्ष की सजा दी गई थी, उससे भी उसको रिहा कर दिया गया। लेकिन उनको जेल में भूख हड़ताल

करने के अपराध में जो तीन मास की तीसरी सज़ा दी गई थी उसे घटाकर एक मास की कर दिया।

जेल कानून धारा ५२ के अनुसार श्याम उपाध्याय को एक साल की सज़ा दी गई थी, परन्तु जज ने अपील सुन कर उसे मुक्त कर दिया।

फैदाबाद के एस० डी० ओ० ने ग्यारह आदमियों को स्थानीय कांजी-हाउस, डाकखाना और डाक बँगले पर हमला करने के अपराध में १६–१६ मास की सख्त सजाएँ दीं; उनकी अपील में जज ने उनमें से ६ व्यक्तियों को मुक्त कर दिया, क्योंकि उनके विरुद्ध जो आरोप थे उनका कोई प्रमाण नहीं था। बाकी दो व्यक्तियों की सज़ा ज्यों की त्यों रहने दी, परन्तु जुर्माना २००) से घटा कर ५०) कर दिया।

मेरठ के स्पेशल जज श्री एल० डी० जोशी ने केदारनाथ और लछमनदास को विस्फोटक वस्तु विधान की धारा ३–४ के अनुसार दस और सात साल की साथ–साथ चलने वाली सजाएँ दीं। बात यह थी कि १० अक्तूबर सन् बयालीस की शाम को ६ बजे एक भीड़ ने हापुड़ में लाला प्यारेलाल की कोठी पर हमला किया था। हमला करने का कारण यह बताया जाता है कि ग्यारह अगस्त को पुलिस ने गोली चलाई थी, उस समय लाला प्यारेलाल पुलिस के साथ थे उनकी कोठी के हमले में दरवाजे पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगादी गई थी, इसके बाद १६ अक्तूबर को उनके बरामदे में बम फटा। जज ने अपील का फैसला देते समय कहा कि प्यारेलाल की कोठी में जो बम फटा था, उसे अभियुक्तों ने रक्खा, इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता; इसलिए धारा तीन की सजा से इन्हें मुक्त किया जाता है, लेकिन धारा ४ के

की सज़ा चालू रक्खी जाती है।

संयुक्त प्रान्त में सरकार द्वारा अनेक निर्दोषों पर मुकदमे चलाए गए, और बनावटी आधारों पर लम्बी चौड़ी सजाएँ दी गईं। कानपुर स्टेशन बम केस भी उनमें से एक है। ६ फरवरी १९४३ को जब दिल्ली मेल, स्टेशन पर पहुँचा तब पुल की सीढ़ियों के नीचे रक्खा हुआ एक 'समय-बम' फटा, फलस्वरूप तीन व्यक्ति मरे, १६ घायल हुए और लगभग तीन हजार का नुकसान हुआ। इसके बाद पुलिस ने बहुत से नवयुवकों को पकड़ कर नाना यन्त्रणाएँ दीं अन्त में १३ व्यक्तियों पर मुकदमा कायम किया। एक वर्ष मुकदमा चलाने के बाद जज ने १० नवम्बर सन् ४४ को निर्णय सुनाया जिसमें स्टेशन बम केस के साथ निशात सिनेमा हाल में फटने वाला बम केस भी शामिल कर लिया। ७ व्यक्तियों को मुक्त कर दिया और शेष ६ में से बाबूराम और बजरङ्गसिंह को फाँसी की सज़ा दी। निरञ्जनसिंह को आजन्म कारावास और जगदीश दुबे व रामगुलाम को १४ वर्ष की, तथा देवव्रत को सात साल की सज़ा दी। परन्तु फैसले पर अपील की गई, जिसमें मुक्त होने वालों को सज़ा और दण्डित व्यक्तियों की सज़ा बढ़ाने की प्रार्थना की थी। इस पर हाईकोर्ट ने सात में से छै को सात-सात साल की सज़ा कर दी, और जगदीश दुबे की १४ वर्ष सजा को बढ़ाकर आजन्म सज़ा कर दिया। यह निर्णय १५ मार्च सन् १९४६ को सुना दिया गया। इसके दो सप्ताह बाद कॉंग्रेस मन्त्रि मण्डल ने प्रान्तीय शासन सँभाल लिया। तब मन्त्रि मण्डल ने सब अभियुक्तों को छोड़ दिया। इस मुकदमे के मूल में कोई प्रमाण या गवाह तक न था। सारा मुकदमा पुलिस की मनगढ़न्त बातों के आधार पर चलाया गया था। इस प्रकार के अनेक मुकदमों में अनेक निर्दोष नवयुवक फांसी पर

लटका दिए थे, परन्तु सदभाग्य से उपरोक्त अभियुक्तों की जान बच गई। मुकदमे से साफ प्रकट होता हैं कि न्यायालय पर भी पुलिस का कितना प्रभाव रहता है। इसी कारण अँग्रेजी अदालतें न्यायालय के स्थान पर अत्याचार पूर्ण फाँसी गृह बन गए हैं।

उपरोक्त कानूनी अत्याचारों के अतिरिक्त जनता के साथ क्रूर और अमानुषिक व्यवहार किए गए जिनके विषय में निम्न उद्धरणों से स्पष्ट हो जायगा।

माननीय श्री पं० हृदयनाथ कुंजरू ने २४ सितम्बर सन् ४२ को कौंसिल आफ स्टेट में भारतीय राजनीतिक परिस्थित पर भाषण देते हुए कहा:—

"मैं यहाँ पर संयुक्त-प्रान्त में हुई उन एक दो घटनाओं के उदाहरण देता हूँ जिनकी सच्चाई में कोई सन्देह नहीं है। इलाहाबाद में एक भारतीय सैनिक ने एक आदमी को पकड़ लिया, जो गाँधी टोपी पहिने हुए था। उसने कहा कि गान्धी टोपी उतार दो, उसके इन्कार करने पर दो तीन राहगीर उसका पक्ष लेकर बोलने लगे. और उसे छुड़ाने की चेष्टा करने लगे। इतने में दो तीन सैनिक आये और उन्होंने गान्धी टोपी धारी को बहुत मारा, जब दूसरा उपाय न देखा तो उन्होंने सैनिकों का मुकबला किया और गान्धी टोपी वाला व्यक्ति सैनिक से अपने आपको छुड़ाकर साथियों सहित भाग निकला। इस पर सैनिकों ने उन पर गोली चलाई, वह तो भाग कर बच गया परन्तु एक राहगीर गोली द्वारा तुरन्त मर गया।

दूसरा उदाहरण गाजीपुर जिले का है। तीन चार हजार रुपये वार्षिक

लगान देने वाले एक प्रतिष्ठित जमींदार ने स्थानीय तथा केन्द्रीय सरकारों को अपने गाँव में फौज द्वारा की गई ज्यादतियों की शिकायतें की हैं। सैदपुर तहसील के मांभा गाँव में चार गोरे अफसर सौ डेढ़ सौ सैनिक लेकर पहुँचे और गाँव के पुरुषों को घरों से बाहर निकाल कर सड़क पर पंक्ति बद्ध खड़ा होने का आदेश दिया, फिर वह सैनिक घरों में घुसे, स्त्रियों के शरीर से बगान आभूषण उतारे, नकदी और जो भी कीमती सामान मिला उसे लेकर बहुत से घरों में आग लगा दी। फिर पुरुषों की ओर लौटे और वहाँ से बच्चों को भगा दिया, दो-दो सिपाहियों ने एक-एक पुरुष को पकड़ कर बेंत लगाईं। जिन मकानों को लूटा गया था उनमें से एक शिकायत करने वाले इस जमीदार का भी था। यह वह जमींदार था जिसने सन् २१ में असहयोग आन्दोलन को दबाने में सरकार की सहायता की थी, इस लड़ाई में सैनिकों की भरती कराने में भी उसने पर्याप्त सहायता की थी। उसने युद्ध कोष में सहायता दी थी, और वह अवैतनिक मजिस्ट्रेट भी था, परन्तु उसको भी नहीं छोड़ा गया। यदि सरकार के नमक हलाल व्यक्तियों की ऐसी दशा की गई तो दूसरों की क्या दशा हुई होगी यह सोचकर रोमाञ्च होता है। मुझे यह कहना तो नहीं चाहिये कि ऐसी बातें प्रत्येक गाँव में हुई हों, परन्तु मेरे पास युक्त-प्रान्त के पूर्वीय जिलों से जो शिकायतें आई हैं वह इतनी हैं जिनसे मैं महसूस करता हूं कि सरकार को इस सम्बन्ध में निष्पक्ष जाँच करनी चाहिये।"

२४ सितम्बर सन् ४२ को केन्द्रीय धारा सभा में ज्यादतियों की जाँच के विषय में प्रस्ताव रखते हुये श्री के० सी० नियोगी ने कहाः—मैं जिस मामले पर आपसे कहूँगा वह धारा २० C.P.C के अन्तर्गत है। गाजीपुर के जमींदार से

अपने गाँव में फौज और पुलिस द्वारा की गई हानि की अदायगी के लिये केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकार पर दावा किया है। मेरे हाथ में उस नोटिस की पूरी नकल है। पहले तो जमींदार अपनी नमक हलाली की वंशावली देते हुए यह बतलाता है कि उसके दादा को सरकार की सेवाओं का क्या बदला मिला था, वह कितना इनकमटैक्स देता है, और अन्त में यह देख हँसी आए बिना नहीं रहती जबकि वह १९३३ के राष्ट्रीय आन्दोलन को दबाने में मदद देने के उपलक्ष में मिले प्रमाण पत्र को पेश करता है। यह सभा अनुभव करेगी कि उनकी नमक हलाली और सरकारी सेवाओं के रहते हुए भी उनकी क्या दशा हुई। वह यह भी बतलाता है कि वह एक अवैतनिक मजिस्ट्रेट है। अब उस नोटिस का महत्वपूर्ण भाग आता है, जिसमें वह कहता है कि २६ अगस्त सन् १९४२ ई० को शाम के तीन बजे मेरे मैनेजर ने मेरे पास एक आदमी द्वारा यह सन्देश भेजा कि २२ अगस्त को तीसरे पहर मेरे गाँव में नन्दगंज थाने का सब-इन्सपैक्टर, चार गोरे अफसर और १५० सशस्त्र सैनिक लेकर आया। उन्होंने गाँव के तमाम पुरुषों को जिनमें मेरा मैनेजर और नौकर भी सम्मिलित थे, गाँव के बाहर कच्चे रास्ते पर पंक्तिबद्ध खड़े रहने का हुक्म देते हुए कहा कि जो आज्ञा पालन नहीं करेगा उसको गोली मार दी जायगी। गाँव के समस्त पुरुष और बच्चे गाँव से बाहर चले गये, उसके बाद उन पर कुछ सैनिकों का पहरा बैठाकर शेष सैनिक तथा चार गोरे गाँव में आए, और तमाम स्त्रियों को घरों से बाहर निकलने की आज्ञा दी। इन्कार करने पर गोली से मार देने की धमकी दी। जब स्त्रियाँ बाहर आईं, तो सैनिकों ने उनके शरीर से तमाम आभूषण उतार लिए। फिर वह घरों के भीतर घुसे और जो नकदी तथा कीमती सामान मिला उसको लूट लिया। उन्होंने मेरे मकान पर भी हमला

किया, थानेदार ने गोरे सिपाहियों को चेतावनी दी कि यह मकान अवैतनिक मजिस्ट्रेट का है जो कि नमक हलाल ब्रिटिश प्रजा है। परन्तु गोरों ने थानेदार को चुप रहने के लिये कहकर मेरे घर पर हमला किया। सब कीमती चीज तोड़ डालीं मुझे लगभग तीन हजार चार सौ पाँच रुपया सात आने तीन पाई का नुकसान पहुँचाया जिसका विवरण देता हूँ। श्री नियोगी ने आगे बोलते हुए कहा:—कि ब्यौरे को छोड़कर मैं ऐसी बात कहूँगा जिससे आपको हँसी आएगी। सिपाहियों ने गाँव के घरों में से कपड़े निकालकर बाहर ढेर लगाया और फिर उसमें आग लगादी। उन्होंने बहुत से छप्परों में आग लगाने के उपरान्त बीस घर भी जला दिए। इनके बाद वे सैनिक गाँव से बाहर आए और बारह वर्ष से कम उम्र के बच्चों को भगा दिया फिर उन सबको नंगा करके मुर्गा बनाया और बाँस की खपच्चियों से उन्हें पीटा। इनमें जमींदार का मैनेजर भी था जो बार-बार चिल्लाकर अपने को नमक हलाल जमींदार का आदमी बताता रहा। उन सब गाँव वालों की दशा सोचनीय है। एक चपरासी पेड़ से बाँधकर बड़ी निर्दयता से पीटा गया, उसको तीस कोड़े मारे गये, और अन्य ग्राम वासियों के साथ गिरफ्तार किया गया। इस गाँव के पास कोई सरकारी इमारत आदि नहीं थी, जिसे गाँव वालों ने नुकसान पहुँचाया हो।

मेरे पास ऐसे अनेकों कागजात मौजूद हैं, जिनमें पुलिस और फौज द्वारा स्त्रियों के सतीत्व पर हमले की बात कही गई है। ये घटनाएँ बलिया आजमगढ़ गोरखपुर और जौनपुर की हैं। इन कागजों में संक्षिप्त रूप से अनेकों अत्याचार और उत्पीड़न की कहानी हैं।

कानपुर में पूर्वी जिलों के समान गड़बड़ी नहीं हुई, फिर भी व्यापारी संघ ने १७ अगस्त को जिलाधीश के नाम एक पत्र में लिखा

कि व्यापारियों को बुरी तरह से पीटा गया, हमले किए गए, गिरफ्तार किया गया, यह सब नारायणगंज में हुआ। चौबीस अगस्त को व्यापारी संघ ने दूसरे पत्र में लिखा कि सम्मान्य व्यक्तियों को बिना उनके सम्मान का ध्यान किए अपमानित करके पीटा और गिरफ्तार किया गया। पुरुषों की अनुपस्थिति में स्त्रियों को अपमानित किया गया।

कानपुर हिन्दू संघ ने अपने १४ अगस्त के पत्र में लिखा कि पुलिस ने अन्धाधुन्ध गिरफ्तारियों के अतिरिक्त घरों के ताले तोड़ दिए, और स्त्रियों को आतङ्कित कर घरके कीमती सामान को उठा लिया।

श्री ओंकार प्रसाद सक्सेना जो एक सरकारी नौकर थे, कहते हैं कि "पुलिस ने मेरे सारे घर के सामान को तितर बितर कर दिया, ग्रामोफोन और रेडियो को तोड़ फोड़ दिया, खाने के बरतनों को सड़क पर फेंक दिया। अन्य सामान को भी खराब कर दिया, फिर भी सन्तुष्ट न हो उन्होंने स्त्रियों को अपमानित किया, गालियाँ दीं, ठोकरें मारीं। हमारे २२०) नकद और १८००)के आभूषण उठा लिए। कुल हानि ५ हजार रुपया की हुई। पुलिस ने इस घटना की रिपोर्ट लिखने से भी इन्कार कर दिया।

श्री एन० एम० जोशी ने केन्द्रीय एसेम्बली में भाषण देते हुए कहा कि मुझे जिला मेरठ की एक घटना का पता लगा है, कि गाँधी आश्रम के मैनेजर भाँभोरी गाँव गये, वहाँ उनके चारों ओर पचास साठ आदमी एकत्र हो गए, पुलिस ने इस भीड़ को जो बिलकुल शान्त थी बन्दूकों के कुन्दे मार-मार कर तितर बितर करना चाहा। भीड़ के चूँ चरा करने पर पुलिस ने गोली चलादी। तीन चार आदमी जान से मारे गये, पुलिस ने जब यह देखा कि मृतकों में गाँधी

आश्रम के मैनेजर श्री रामस्वरूप शर्मा नहीं है, तो एक पुलिस वाले ने कहा कि मुख्य अपराधी तो बच ही गया, हमें उसे गोली मारनी चाहिए। फलस्वरूप तीन गोलियाँ मार कर उसकी जान लेली गई !"

१२ फरवरी को सरदार सन्तसिंह ने केन्द्रीय एसेम्बली में भाषण देते हुए कहा कि "एक पेन्शन प्राप्त सब इन्सपेक्टर पुलिस ने वायसराय को आवेदन पत्र में लिखा था कि मैं और मेरा समस्त परिवार सरकार भक्त रहा है, जिस पर भी शेरपुर कलां गाँव थाना महमूदाबाद जिला गाजीपुर में मेरा मकान अन्य मकानों के साथ जलाकर राख कर दिया गया। अन्य मूल्यवान सम्पत्ति, जिसमें २५ हजार नकद, १० हजार के सोना चाँदी के आभूषण, १० हजार के वस्त्र और फर्नीचर और दो हजार रुपए के भवन को फौज ने जिला अधिकारियों की आज्ञा से लूट लिया या जला दिया। मेरा समस्त परिवार नष्ट हो गया, बहादुर सिपाहियों ने केवल लूटमार ही नहीं की बल्कि मेरे मूल्यवान कागजात और दस्तावेज भी जला दिए। तिजोरियों की तालियां छीनकर गहरे तालावों में फेंक दीं। यह आवेदन पत्र श्री सूरजनारायण ने संयुक्त-प्रान्त के गवर्नर को भेजा था।

एक दूसरा पत्र इसी गाँव के श्री जगन्नाथराय ने लिखा, जिसमें उन्होंने कहा है "कि पुलिस के इन्सपेक्टर साहब मेरे गाँव में आए और लूटमार मचाई। लोगों ने इसके विरोध में एक शब्द भी न कहा, क्यों कि उन पर हमले किए गये, हाथों में हथकड़ियाँ डालदी गईं और बन्दूक के कुन्दों से पीटा गया, जिनके परिणाम स्वरूप अनेकों व्यक्ति बेहोश हो गए। आगे उसने बताया कि लोग गोलियों से मारे गये और उनके शवों को पानी में फेंक दिया गया। कुछ अधमरे भी फेंक दिए गये, सम्भव है जो बच जाते। एक स्त्री को अप-

मानित करके उसका मकान लूटा गया फिर मकान को फूँक दिया गया, सारा गाँव की दो दिन तक यही अवस्था रही। गांव वालों की सारी सम्पति छीन ली गई, यहाँ तक कि घोड़े और हाथी भी नही बचे।

अलमोड़े का आन्दोलन कुछ विशेष प्रकार का नहीं था। और न उसमें कोई विशेष संगठन था, वह कुछ स्थानों में सीमित था। जाग्रति के कुछ ही दिन बाद सल्ट, चौकोट, मासी, रानीखेत, बैजनाथ, सोमेश्वर और सालम ही क्रान्ति के मुख्य स्थान थे। आरम्भ में आन्दोलन अहिंसात्मक रहा, किन्तु सरकारी दमन वृद्धि के साथ उसका रूप भी बदल गया।

५०० व्यक्तियों को सजा की गई, और लगभग २०० को बिना मुकदमे ही जेल में बन्द कर दिया गया। लम्बी-लम्बी सजाएँ हुई, जिनमे सब से अधिक कौशलसिंह को २७ वर्ष का कारावास दण्ड दिया गया। सामुहिक जुर्माने के २० हजार रुपए वसूल किये। सालम, चौकोट और सल्ट में फौज ने गोलियाँ चलाईं, जिनमें चार मरे और चालीस घायल हुए।

आठ अगस्त को रात को स्थानीय नेता श्री मदन मोहन उपाध्याय रानी-खेत से द्वाराहाट जाकर गिरफ्तारी से बचे। इसके बाद गाँवों में जगह-जगह बड़े ओजस्वी भाषण दिये। विद्यार्थियों ने लोगों को साथ लेकर, गाँव-गाँव में जलूस निकाले, उनके पीछे-पीछे उपाध्याय जी की गिरफ्तारी के लिये पुलिस घूमती रही। तेरह अगस्त को एक मीटिङ्ग के बाद पुलिस ने उपाध्याय जी को पकड़ने की चेष्टा की, परन्तु जनता उत्तेजित हो कर पुलिस को मारने पर उतारू हो गई। इस अनर्थ को रोकने की इच्छा से उपाध्याय जी स्वयं गिरफ्तार हो गये, लेकिन उसी रात को गाँव वालों की सहायता से सफलता पूर्वक पुलिस की हिरासत से निकल भगे, पुलिस वालों के मुंह तारकोल से काले कर दिए,

और उनके हाथ पीछे की ओर बाँधकर उन्हें थाने भेज दिया गया। उपाध्याय जी की गिरफ्तारी के लिये सब डिवीजनल मजिस्ट्रेट ने पुलिस और फौज की सहायता से गाँवों को दबाना आरम्भ कर दिया, जिससे उपाध्याय जी को फरार हो जाना पड़ा। सट्ट में गोली चलने से चार व्यक्ति मारे गये और ११ आहत हुये। एक जगह एक व्यक्ति ने मजिस्ट्रेट के ऊपर लाठी का वार किया लेकिन एक व्यक्ति ने वार को अपने हाथ पर लेकर मजिस्ट्रेट को बचा लिया। उन दिनों पुलिस से बचने के लिये शङ्खध्वनि द्वारा लोगों को सूचना दी जाया करती थी। कोई भी पुलिस की सहायता नहीं करता था, लेकिन एक दुकानदार देवीदत्त द्वारा पुलिस को चने देने के अपराध में जनता ने उसका काला मुँह करके पेड़ से बाँध दिया।

फ़रार अवस्था में उपाध्याय जी को जमीन में गढ़ा खोदकर या जङ्गलों में छिपकर रहना पड़ता, परन्तु पुलिस की बढ़ती हुई कोशिशों ने वहाँ उनका रहना दूभर कर दिया, जिसके कारण उनको बम्बई चले जाना पड़ा। वहाँ उन्होंने श्री अच्युत पटवर्धन की सहायता से ९ अगस्त नामक पत्र और डाक्टर लोहिया की मदद से क्रान्तिकारी हिन्दी पत्र निकाला। श्रीमती उषा मेहता की सहायता से आजाद रेडियो का सञ्चालन किया। इस समय प्रायः सभी जगह के फ़रार आदमी बम्बई में बैठकर काम करते रहे।

कानपुर शहर में ९ अगस्त के बाद १ मास तक पूरी हड़ताल रही जिसके कारण कालिज, स्कूल और बाजार बन्द रहे। ९ अगस्त से अक्तूबर के अन्त तक जलूस तो निकलते रहे, पर जलसा केवल एक ही हुआ। लेकिन कानपुर जिले में २३ अगस्त तक छियालीस मीटिङ्ग हुईं। शहर में कई बार लाठी चलाई गई जिनसे बहुत से आदमियों को सख्त चोटें आईं, पन्द्रह बार गोलियाँ चलीं

जिनमे आदमी मारे गये । रेलवे लाइन की रक्षक पुलिस ने तीन स्थानों पर गोलियाँ चलाई, जिनमें तीन आदमी मारे गये और दो घायल हुये। महीने भर नक पुलिस के द्वारा निर्दोष राहगीरों पर मन माने अत्याचार किये गये।

दूकानदारों को अनेक प्रकार के कष्ट दिये गए, और उनकी नकदी तथा सामान लूट लिया गया। साधारण जनों की भी यही अवस्था की गई। स्त्रियाँ और बच्चे भी उन अत्याचारों के शिकार हुए। जिले की प्रमुख तहसील बिल्लौर में पुलिस अत्याचारों ने खुल कर खेल खेला, पुलिस ने पाँच-पाँच सौ गुण्डों के दलों को साथ लेकर एक-एक गांव पर हमला किया। घरों में से हर प्रकार का सामान लूट कर उन्हें उजाड़ दिया।

काकुवान थाने के अन्तर्गत बिसधर गांव के लाला रामस्वरूप का पचास हजार का सामान लूट कर उसे बुरी तरह पीटा और उसकी स्त्री को वृक्ष से बांधकर यह क्रूर दृश्य दिखलाया। इसके बाद लाला रामस्वरूप को जेल में बन्द कर दिया।

नदिहा गांव के १५० आदमियों को गिरफ्तार करके उनके घरों को लूट लिया। इस गांव के कांग्रेस कार्य कर्ता पण्डित रामगुलाम शुक्ला के ऊपर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगादी फिर पानी की बाल्टी उसके मुंह पर उलट दी। फलस्वरूप वह चार दिन तक बेहोश पड़ा रहा, तदन्तर उसको गिरफ्तार करके जेल भेज दिया गया।

शिवराजपुर थाने के अन्तर्गत मकान गाँव के एक घर से १२०० रुपया लूटने के बाद सबके साथ बालिकाओं को भी पीटा।

बल्लौर की पुलिस ने बैदी गाँव की कुछ स्त्रियों को तीन दिन बिना अन्नजल के थाने में बन्द रक्खा। उनके दुधमुंहे बच्चों को भी भूखा प्यासा रहना पड़ा। स्त्रियों को तब तक नहीं छोड़ा गया जब तक उनकी जगह उनके पुरुषों को जेल में बन्द नहीं कर दिया गया। यही दशा गुरधारा, हसनापुर बैदी, औलियू और बखौटो गाँवों में भी हुई। थानों में बन्द स्त्रियों के ऊपर अनेक अत्याचारों के साथ सतीत्व तक पर आक्रमण किया गया। इन दुरवस्थाओं से वही दो चार गाँव बच सके जिन्होंने स्वेच्छा से बड़ी-बड़ी रकमें इकट्ठी करके पुलिस अधिकारियों की जेबों में भरदीं।

लगभग अस्सी मुकदमे चलाए गये, जिनमें पैंतीस मुकदमे खारिज होगए, और शेष में अभियुक्तों को फाँसी तक की सजाएँ दी गई।

मेरठ—नेताओं की गिरफ्तारी पर शहर भर में पूरी हड़ताल रही। स्कूल और कालेज बन्द होगए, और कचहरी वीरान दिखाई देने लगी। जगह जगह विरोधी प्रदर्शन हुए और शाम को टाउन हाल में एक महती सभा हुई। चौदह अगस्त तक जिले के प्रमुख काँग्रेस कार्यकर्त्ताओं को जेल में बन्द कर दिया गया। शहर में विरोधी प्रदर्शन और लाठी चार्ज साधारण सी बात हो गई थी। पुलिस दुकानदारों को तंग करती थी, इसलिये उन्होंने हड़ताल आरम्भ करदी, इस पर सिटी मजिस्ट्रेट ने शहर में घूमकर बलपूर्वक दूकानें खुलवाने की चेष्टा की। कुछ दुकानदारों को जेल भेजा और कुछ पर जुर्माने किए, जिले में सबसे महत्वपूर्ण घटना सरधना तहसील के भाँभोरी गाँव में हुई।

तहसील मवाने में मवाने कस्बे के अन्दर एक भीड़ ने पुलिस के सब-इन्सपैक्टर पर आक्रमण करके पिस्तौल छीन ली, इस सम्बन्ध में कोई हत्या नहीं हुई। मवाने के पास नहर की चौकी पर कुछ [illegible]

करके जिलेदार को मार दिया, और कागजात तथा नोटों में आग लगा दी। ९ अगस्त से १७ अगस्त तक मेरठ तहसील के बहुत से गाँवों में पटवारी तथा स्कूलों के कागजात फूँक दिये गए। चौकीदारों की चपरास आदि छीन ली गई। इसके पश्चात इन सब गाँवों के ऊपर सामूहिक जुर्माने हुए, बहुत से गाँवों में सरकारी नुकसान नाममात्र ही हुआ था, लेकिन जुर्माने की रकम बहुत भारी रक्खी गई। उदाहरणार्थ एक गाँव में केवल एक लोहे की कील निकाली गई थी, जिससे सरकार की हानि कुछ आनों की हुई थी, लेकिन जुर्माना ३ हजार दो सौ रुपए किया गया। जुर्मानों में यह विशेषता थी कि मुसलमानों को इनसे मुक्त रक्खा गया।

तहसील बागपत में अगस्त मास में भीड़ ने रेलवे स्टेशनों पर हमले करके दो तीन स्टेशन जला दिये, तार के खम्भे गिरा दिये, रेल की पटरियाँ उखाड़ दीं, बिजली के तार काट दिये इस सबके परिणाम स्वरूप S. S. R. रेलवे लगभग १ मास बन्द पड़ी रही।

अगस्त आन्दोलन के परिणाम स्वरूप पुलिस ने चार बड़े मुकदमे चलाये, हापुड़ केस में ५९ आदमियों पर मुकदमा चलाया गया, जिनमें तेरह को विभिन्न सजाएँ दी गईं, और शेष सब रिहा हो गये। सरधना के मामले में तीस आदमियों पर मुकदमे चलाए गए जिनमें १४ को दो-दो वर्ष की सजा हुई, और शेष छोड़ दिए गए।

मवाना गोलीकाण्ड का मुकदमा चला।

जिलेदार की हत्या के सम्बन्ध में भी मुकदमा चलाने का प्रयत्न किया।

हापुड़—अगस्त सन् ४२ और उसके बाद के महीनों में भयङ्कर

अत्याचार किए गए, वहाँ पुलिस का राज्य रहा और लोगों को आतङ्कित और अपमानित करके लटने में कोई भी प्रयत्न उठा नहीं रक्खा गया, यह अनाज की बड़ी मन्डी और गेहूँ के व्यापार का प्रमुख केन्द्र होने के कारण शान्ति प्रिय रहा है। अगस्त के पूर्वार्ध में हापुड़ में गेहूँ का अभाव हो गया, जो कुछ भी गेहूँ इकट्ठा था उसके ऊपर सरकार ने अधिकार करके कस्बे से बाहर ले जाने का प्रयत्न किया। जनता ने इसका विरोध किया, अधिकारियों द्वारा ध्यान न देने पर सार्वजनिक सभा की गई, जिसमें ९ अगस्त को हड़ताल करने का निश्चय किया, ९ अगस्त के प्रातः ही गाँधी जी आदि नेताओं की गिरफ्तारी का समाचार कस्बे में फैल गया, बस—हड़ताल की जबरदस्त घोषणा की गई इसी समय स्थानीय कांग्रेस कार्यकर्ता गिरफ्तार कर लिये गये, नगर में बड़ी सफल हड़ताल हुई। सायङ्काल को सार्वजनिक सभा में हड़ताल का लक्ष्य समझाकर सरकार की अन्धदमन नीति की निन्दा, और गिरफ्तार किए हुए कार्यकर्त्ताओं को बधाई दी गई। ११ ता० को इस सभा में बोलने वाले सभी लोग गिरफ्तार कर लिये गए, इससे नगर में उत्तेजना फैल गई, और स्कूल के लड़कों ने हड़ताल घोषित कर दी। इस हड़ताल से अधिकारी चिढ़ गये, उन्होंने जबरदस्ती नगर से बाहर गेहूँ भेज दिया। दोपहर को लड़कों का एक जलूस नगर में घूमकर टाउन हाल पहुँचा, वहाँ पर उनमें से दो दर्जन छोटी उम्र के बालक पकड़ लिए गए, घटना-स्थल पर पुलिस के अतिरिक्त शहर के रईस अपनी बन्दूक और गुन्डों सहित पुलिस की सहायतार्थ उपस्थित थे। गिरफ्तारी का समाचार पाते ही नागरिकों का एक शान्त जलूस वहाँ पहुँचा, ज्यों ही जलूस टाउन हाल के द्वार पर पहुँचा पुलिस ने लाठी वर्षा कर दी। भागते हुए

लोगों पर पत्थर बरसाए, इतने मे भी सन्तुष्ट न होकर शान्त जलूस पर गोलियाँ दागी गईं। उसी समय पाँच आदमी मर गए, और बारह आदमी गोलियों से घायल हो गए, एक बहुत बड़ी संख्या को लाठी की चोट आई। वहाँ पर केवल दो आदमी गिरफ्तार हुए, इस घटना को पाँच मास तक जाँच करने के बाद पुलिस ने ५९ आदमियों पर मुकदमा चलाया।

एक हाइड्रो एलेक्ट्रिक विश्वम्भरदत्त नामक मिस्त्री को तार काटने के अपराध में गिरफ्तार किया, और सात साल की सख्त सजा दी गई। इसके बाद दो तीन स्थानों पर देशी बम फटे, जिसके कारण पुलिस के अत्याचार फिर आरम्भ होगए। बहुत से निरपराध व्यक्तियों को गिरफ्तार करके भारी-भारी रिश्वतें एँठी।

प्यारेलाल के मकान पर फटे बम के सम्बन्ध में केदारनाथ और लछमन दास दो व्यापारी बन्धुओं को गिरफ्तार करके मुकदमा चलाया गया, जिसमें दोनों को सत्रह-सत्रह वर्ष की सजाएँ दी गईं। लेकिन हाईकोर्ट में अपील करने पर सजा को घटाकर सात वर्ष कर दिया गया। पुलिस अधिकारी इस सम्बन्ध में अकारण ही निर्दोष लोगों को गिरफतार करके मनमाना रुपया एँठते और छोड़ देते।

आज़मगढ़ जिले की काशा स्टेट के एक मेले में एकत्रित हुए निर्दोष व्यक्तियों पर फौज ने गोली चलाई, जिससे एक मारा गया।

मधुबन तहसील में सूरजपुर गाँव के शिवबहादुरसिंह का ३२०००, का माल फौज ने लूट लिया और उसके मकान को आग लगा दी। इसी प्रकार लटकर एक खादी उत्पत्ति केन्द्र जला दिया, मऊ गाँव में श्रीराधारमण अग्रवाल को कई लाख रुपए का नुकसान पहुँचाया। २३ अगस्त को पटवाढ़ गाँव में

फौज ने गोली चलाकर तीन व्यक्तियों की जान ली। फौज ने गोली चलाकर सौ से अधिक व्यक्तियों को घायल किया, और कई एक की जानें लीं, उनमें से एक खोड़ी गाँव के देवदत्त शर्मा मारे गये। मधुवन तहसील में डेढ़ सौ से अधिक मकानों को लूटकर जला दिया, एकसौ सात आदमी मारे गये, सैकड़ों घायल हो गये, और तीन लाख बावन हजार रुपया लूटा तथा १ लाख बासठ हजार रुपया सामूहिक जुर्माना किया गया। तीन सौ अस्सी आदमियों पर मुकदमे चलाये गये, जिनमें से दो सौ तीन को ६ मास से आजन्म कारावास तक की सजाएँ दी गईं।

आजमगढ़ जिले में हार्डी और जोनसन के नेतृत्व में स्त्रियों पर भारी अत्याचार किये गये, इनमें रामपुर गाँव के चेतू हरिजन के मकान में घुसकर बीस गोरे सिपाहियों ने उसकी स्त्री के साथ एक-एक करके व्यभिचार किया जिससे उसी समय उसकी मृत्यु हो गई, इसी प्रकार काजा गाँव में गोरे सिपाहियों ने एक निर्दोष स्त्री पर अत्याचार किया, ऐसे अत्याचार जौनपुर गोरखपुर आदि जिलों में भी किये गये। स्त्रियों को जबरदस्ती बाल पकड़ कर घरों से बाहर घसीटा गया, खुले बजार उन्हें नङ्गा करके बलात व्यभिचार किया गया। इसके उपरान्त जगह-जगह गोलियाँ चलाकर निर्दोष बच्चों को भी जान से मार दिया गया। रामचन्द्र नामक एक बालक राष्ट्रीय झण्डा लेकर जा रहा था, तब लोगों ने उसे पुलिस और फौज का भय बताकर झण्डा फैंक कर भाग जाने को कहा, परन्तु उसने आजादी के लिये गोली का सामना करना भी श्रेष्ठ समझा। पुलिस ने लड़के पर गोली चलाई, जो उसकी छाती को बींधकर पार निकल गई। असह्य पीड़ा पाकर बच्चे ने हँसते-हँसते अपने प्राणों का बलिदान कर दिया।

बलिया—बलिया में जनता द्वारा आज़ाद सरकार बना ली गई थी, इस कारण सरकार द्वारा वहाँ घोर अमानुषिक अत्याचार किये गए, जिनके वर्णन में लेखनी असमर्थ है। नेदर सोल और मार्स स्मिथ इन दो क्रूर अधिकारियों द्वारा अन्धे हो कर जनता पर अत्याचार किए गए, जिनमें लोगों को रस्सी से जकड़ कर हाथी के पावों में बाँध कर घसीटा गया, उनके शरीर में सङ्गीनों द्वारा छेद किये गये, गान्धी टोपी पहिनना भारी जुर्म गिना जाने लगा। जिले पर १२ लाख रुपये सामूहिक जुर्माना करके २९ लाख से अधिक वसूल किया गया। इसके उपरान्त १०५ मकान जलाकर लगभग ३८ लाख रुपये का नुकसान पहुँचाया। पुलिस और फौज की गोलियों से ४०६ आदमी जान से मारे गये। धनीमाऊ गाँव के जमींदार के अल्पवयस्क पुत्र और उसके कई साथियों को फौज ने गोली से मार दिया। बख्शी थाने में दो जनों को पैर बाँध कर पेड़ पर सारे दिन उल्टा लटकाये रक्खा और शाम को गोली से उड़ा दिया। कुछ लोग अपनी जान बचाने के लिये तालाब के पानी में छिप गये, लेकिन ज्योंही साँस लेने के लिए उन्होंने अपना सर बाहर निकाला त्योंही फौज की गोलियों ने उन्हें अपना शिकार बनाया। बहुत से लोगों के घरों में आग लगादी, और जब वे प्राण रक्षार्थ निकल कर भागे तो उन्हें पकड़ कर आग की लपटों में झोंक दिया। स्कूलों को भी नहीं छोड़ा गया। पाली गाँव में फरार श्री केदार और उनके साथी को गोली द्वारा जान से मार दिया, इस जिले में अत्याचार का एक नया प्रयोग आविष्कृत किया गया, जिसके द्वारा एक अमानुषिक तरीके पर उसको नपुन्सक बना दिया जाता था।

गोरखपुर—इस जिले के उर्वी कस्बे की दूकानें लूट कर दूकानदारों

को पीटा गया। पर्सा गाँव में लूट मचाई गई सात मकान जला दिये और दस आदमियों को बुरी तरह पीटा गया, इस प्रकार की लूट खसोट से लाखों रुपये का नुकसान हुआ।

तहसील बाँस गाँव में पहली सितम्बर से भारी अत्याचार आरम्भ हुये। ककराही गांव में पुलिस अधिकारी पचास गुण्डे और बहुत सी सशस्त्र पुलिस लेकर आ पहुँचे, सब से पहिले उन्होंने पं० रामलखन के मकान पर हमला किया, उनके घर वालों को पीटा, और मकान पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगा दी। इस से समस्त गाँव फुँक जाने की आशङ्का थी, इसलिये लोग आग बुझाने आये परन्तु उन्हें गोली का भय दिखाकर आग बुझाने से रोक दिया गया। गोपालपुरा के लाल नारायण चन्द के मकान पर हमला करके पैंतीस हजार का माल लूट लिया। उनके घर की स्त्रियों ने एक ग्यारह मास के बच्चे सहित भाग कर एक गन्ने के खेत में छुपकर रक्षा की, क्योंकि रातभर वर्षा होती रही, इसलिये बच्चा दो दिन बाद काल का ग्रास बन गया, उनके भाई लाल राजबहादुर चन्द को पहिले ही गिरफ्तार कर लिया था, जिन्हें दो वर्ष जेल में रक्खा गया। इसी गाँव के केशवर्द्धन राय को गिरफ्तार करके उसका मकान लूटा और जलाया गया।

खोना पापड़ गाँव के काँग्रेस कार्यकर्त्ता पं० रामबल मिश्रा की स्त्री कैलाशवती से तहसीलदार ने कुछ लड़कों के विषय में प्रश्न पूछे, उसके उत्तर न देने पर गुण्डों ने उनकी साड़ी फाड़ डाली और बाल पकड़ कर पृथ्वी पर घसीटा। गाँव के स्कूल में भी आग लगा दी जहाँ पर कितने ही रजिस्टर और लगभग १ सहस्त्र पुस्तकें जलकर खाक हो गईं।

टराडी गाँव में पुलिस अफसर फौज और गुण्डों को लेकर आये और मकानों में लूट मचाकर आग लगा दी। स्त्रियों के मुँह में कपड़े ठूँसकर उनके साथ व्यभिचार किया। रामदेई नामक एक दस वर्षीय लड़की के गले से सोने की कण्ठी उतारी गई, उसके चुपचाप न दे देने पर भाले द्वारा उसकी दाहिनी आँख फोड़ दी गई।

उरवा बाजार गाँव के कुछ लोगों को रस्से से बाँधकर घसीटते हुए एक खेत में ले गए, और जब तक उनको बड़ी बड़ी रकमें न मिल गईं तब तक उन्हें नहीं छोड़ा। देवरिया तहसील के मझली बाड़ी गाँव में फौज ने लूट मचाई, गाँव वालों को रस्से से बाँधकर तालाब में फेंक दिया। जम्मा चमार गोलीं से, और शिवव्रतराय लाठी की मार से मर गए। भटनी के पास देव-घाट में गोली द्वारा भाजल मियाँ और रामलगन तेली को मार दिया और रामकान्त मिश्रा के घर से चालीस हजार रुपये लूट लिए। बाँसगाँव तहसील में कई लाख रुपये का नुकसान हुआ जिसमें ककरही, गोला गोपालपुर, जानीपुर, धमूना, मदरिया, कोनहरी, देईदिह, उरवा बजार आदि गाँवों में सब से अधिक नुकसान हुआ।

बस्ती जिले में गोरा स्टेशन के तार काटकर साढ़े दस रुपया और कुछ अनाज लूटने के अपराध में पुलिस ने आस पास के पाँच गाँवों में आग लगादी, और छै गाँवों को खूब लूटा। स्त्रियों के शरीर से आभूषण उतार लिये और कई मास तक ग्राम वासियों को तंग किया। दो सौ से अधिक आदमियों को गिरफ्तार करके, केवल आठ दस आदमियों पर मुकदमा चलाया। झिनकूसिंह के घर की स्त्रियों को दिन भर धूप में खड़ा रक्खा गया, उनके जेवर छीन लिये गये। इन घटनाओं से गाँवों में बड़ा भारी आतङ्क

फैल गया। पुलिस ने जनता से एक काँग्रेस कार्यकर्ता को लात मारने के लिए कहा, उनके मना करने पर उन्हें लाठी से पीटा। बहेरिया, भरौली, बिल्हारा गाँव के घरों को लूटा और आग लगादी, लोगों को पीटा, तथा चालीस आदमी गिरफ्तार कर लिये जिनमें से ग्यारह को सजा दी गई। बरहिन मण्डलान्तर्गत इमिला गाँव के पं० बेणीमाधव का घर लूटकर उसमें आग लगादी, उनके सारे परिवार और सत्तर वर्ष के वृद्ध पिता को अनेक प्रकार की दारुण यन्त्रणाएँ दीं। इसी गाँव में कोतवालसिंह के मकान को जला दिया और पशुओं को बेचकर पुलिस वाले हड़प गये। और भी इसी प्रकार की कई घटनाएँ हुईं।

कलवारी मण्डल में सात आठ आदमियों को पीटा गया, और एक आठ वर्ष का बच्चा गायब कर दिया गया, जिसका आज तक कोई पता नहीं लगा। सरदाहा गांव में आग लगादी, जब लोग आग बुझाने आए तो उनपर गोली चलाई गई, फलस्वरूप एक विद्यार्थी घायल हो गया। बस्ती शहर में विद्यार्थियों के जलूस पर लाठी प्रहार किया, और जिला काँग्रेस कमेटी का दफ्तर जला दिया गया।

यू० पी० के पूर्वी जिलों में जो अत्याचार किए गये, उनमे प्रान्त का अन्य भाग भी वन्चित नहीं रक्खा गया।

युक्त प्रान्त की जेलों में, अत्याचार की विभीषिका

❀———❀

जब जेल से बाहर लोगों पर अत्याचार किये जा रहे थे, तभी

उनका जेल में स्थानान्तरण भी किया जा रहा था। श्रीरामरतन गुप्त M.L.A. केन्द्रीय ने मई सन् ४३ में निम्न वक्तव्य दिया "जनता को प्रान्त की जेलों में नजरबन्दों के साथ किये व्यवहार के विषय में कुछ नहीं बताया जाता। हैलेट की सरकार हजारों पुरुष और सैकड़ों स्त्रियों को जेल के पीछे जीवित दफनाने में सफल हो गई है। सरकार ने उनके सम्बन्ध में कोई विज्ञप्ति तक नहीं निकाली। केवल छूटे हुये व्यक्तियों के द्वारा ही पता चलता है कि युक्त-प्रान्त में राजबन्दियों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया जा रहा। जेल के नियम और पाबन्दियों का उन्हें दबाने के लिये व्यवहार किया जा रहा है। सरकार ने अबसे एक वर्ष पहले नजरबन्दों की सब श्रेणियाँ तोड़कर एक करदी थीं, लेकिन अब पुनः श्रेणी विभाजन चालू कर दिया गया है। नजरबन्दों को तो केवल सन्देह पर ही गिरफ्तार कर जेलों में ठूँस दिया गया था, अतः इस नाते भी उनके साथ मानवीय व्यवहार होना चाहिये था। परन्तु सरकार के ढंग ही निराले हैं।

हमें पता चला है कि नजरबन्दों को अपने सगे सम्बन्धियों से पत्र व्यवहार तक की आज्ञा नहीं हैं, जबकि बङ्गाल और सिन्ध में इसकी आज्ञा है। इसी सरकार ने नजरबन्दों के लिए नियम बनाये थे कि उन्हें प्रति सप्ताह दो पत्र भेजने, चार पत्र पाने, एक मुलाकात करने, समाचार पत्र और लेखनोपकरण की सुविधा तथा गर्मियों में ४ मास बाहर सोने की अनुमति दी थी। यू० पी० सरकार ने नजरबन्दों के लिये यह आवश्यक समझा था, लेकिन अब इस प्रकार की सब सुविधाएँ नियम बनाकर छीन ली गई इन सब बातों से सरकार की बदला लेने की कुत्सित भावना का पता चलता है। पत्र व्यवहार पर रोक लगाने के कारण नजरबन्दों को अपने

से सम्बन्ध रखने वाली बाहरी दुर्घटनाओं तक का पता न चला।

मुलाकात बन्द करके नजरबन्दों को निम्नकोटि में ला रक्खा है। आठ महीने से यह मानव पतन की गति चल रही है। आरम्भ के दो तीन महीने यह नीति कुछ समझ में आ सकती थी, लेकिन अब तो यह इस नीति का सचालन समझ से बाहर हो गया है।"

बरेली सेन्ट्रल जेल में राजबन्दियों के साथ कैसा व्यवहार किया गया इस सम्बन्ध में एक प्रेस वक्तव्य दिया जाता है :—१९ जून सन् ४१ को लखनऊ से प्रकाशित एक समाचार का कहना है कि प्रान्त के ९ प्रमुख काँग्रेस जनों ने (जिनमें प्रान्त के भूतपूर्व मंत्री, स्पीकर और सदस्य भी थे) सरकार को एक पत्र लिखकर ऐसी घटनाओं की गणना की जिनमें राजबन्दियों को पीटा गया तथा अनेक अनियंत्रित दन्ड दिये गये।

हाल में ही छूटे व्यक्तियों से पता चला कि बारह नजरबन्दों को इतनी निर्दयता से पीटा गया कि वे कितने ही दिनों जमीन पर बैठ न सके। उन पर ठोकर, जूते, डण्डे, थप्पड़ और गालियों की बौछार की गई। बरेली के साठ वर्षीय प्रतिष्ठित नागरिक श्री दर्शनारायणसिंह भी इस दुर्व्यवहार के शिकार हुए। इसके बाद श्री जे० पी० मिश्रा जो एक सम्माननीय वंशावतंश थे को एक दर्जन नम्बरदारों ने इतनी निर्दयता से मारा कि उनके मुख और शरीर मे खून बह चला। इसके बाद सुपरिण्टेण्डेण्ट ने उन्हें १ मास की कोठरी भी दी, और उनकी मार पीट को सुना तक न गया।

जुनाइल जेल में बालकों के साथ भी बुरा व्यवहार किया, उन्हें किसी न किसी बहाने पर बड़ी निर्दयता से पीटा जाता था, अभी कुछ दिन हुये

उन्हें बुरी तरह से पीटा गया, आगरा जिले के श्री लीलाधर जी की अवस्था भूख हड़ताल में बड़ी शोचनीय हो गई। कानपुर के श्री शिवशङ्करसिंह ने १ महीने से अधिक भूख हड़ताल की। बदायूं के श्री जयदेव आजाद बुरी तरह पीटे गये, इसके बाद डण्डा बेड़ी डाल कर उन्हें तन्हाई में बन्द कर दिया गया।

पीलीभात के श्री कुँवर भगवानसिंह *M. L. A.* को *C* क्लास में रक्खा गया, और कम काम करने पर डण्डा बेड़ी डाली गई।

उपरोक्त श्री जयदेव आजाद पर भूख हड़ताल करने के अपराध में ५० धारा के अनुसार मुकदमा चलाया गया, श्री आजाद ने २० नवम्बर सन् ४३ से २८ जनवरी सन् ४४ तक भूख हड़ताल की। सरकारी गवाह श्री अब्दुल्ला जेलर ने अपने बयान में कहा कि भारतीय दण्ड विधान की धारा ४११ और आर्म्स एक्ट के मातहत इनको चार वर्ष की सजा मिली थी, इन्होंने भूख हड़ताल की, और इन्हें बलपूर्वक शक्तिदायक पदार्थों के बल पर जीवित रक्खा गया। जेल के डाक्टर ने बताया कि इनका वजन घटकर ८४ पौण्ड रह गया। इन्होंने बताया कि इनकी अपने साथ दुर्व्यवहार और पीटा जाने की शिकायत की थी डाक्टर फारुखी ने यह भी बताया कि अस्पताल में इनके पास प्रायः ऐसे आदमी आते थे जिन्हें स्वयं भी पीटा जाने की शिकायत थी।

दूसरे गवाह श्री सतीशचन्द्र *M. A.* ने बताया कि मुझे सुपरिन्टेडेण्ट की परेड में खड़ा न होने के कारण बहुत बार बलपूर्वक खड़ा किया और घसीटा गया। उनको खाना भी शिड्यूल के अनुसार नहीं दिया जाता था, जिसके कारण उन्हें प्रायः भूखा रहना पड़ता।

अगले गवाह श्री मुन्शीउद्धोनारायण सिंह जी ने कहा कि १६-१७ फरवरी

सन् ४३ को मुझे ११ वार्डरों ने जेल अधिकारियों के सामने थप्पड़ घूसों और डण्डों ने पीटा जिसके कारण मुझे बारह दिन की भूख हड़ताल करनी पड़ी ।

कुँवर भगवानसिंह *M. L. A.* पीलीभीत ने कहा कि मुझे सैन्ट्रल जेल बरेली में अप्रैल सन् ४३ तक सी क्लास में रक्खा गया । एक बार मुझे डिप्टी सुपरिन्टेडेन्ट ने थप्पड़ और घूसे मारे मैंने अपनी आँखों से जयदेव को भी पिटते हुए देखा।

हरदोई निवासी श्री जयदेव कपूर, जिन्हें सन् ३० के लाहौर षड़यन्त्र केस में आजन्म कारावास की सजा मिली थी ने कहा कि कुछ कैदियों को विभिन्न समय के ऊपर पीटा गया ।

श्री जयदेव आज़ाद ने अपने लिखित हिन्दी वक्तव्य में कहा कि काँग्रेस के बन्दियों को प्रायः पीटा जाता और अन्य दुर्व्यवहार किया जाता था, खाना भी कम दिया जाता था, मुझे तो प्रायः नित्य ही गालियाँ दी जाती तथा पीटा जाता था । जब ये यातनाएँ सहन करना मेरे लिए असम्भव हो गईं तब मैंने जीवन समाप्त करने के लिये भूख हड़ताल की ।

प्रान्तभर की जेलों में लगभग ऐसी ही अवस्था थी । सर्वत्र इसी प्रकार का व्यवहार किया जाता था ।

सीतापुर जेल में राजनीतिक बन्दियों के साथ जो दुर्व्यवहार किया गया । उसके सम्बन्ध में, जेल के अधिकृत निरीक्षक राजा महेश्वरदयाल सेठ ने कमिश्नर लखनऊ से पत्र व्यवहार किया, जिसका सारांश निम्न प्रकार है:—“मैं बल-पूर्वक कह सकता हूँ कि सीतापुर जेल के दुःशासन से सभी बन्दी पूर्ण असन्तुष्ट

है । बन्दियों के शरीर पर चोटों के निशान पाए गये हैं जिनका कोई भी लेख नहीं रक्खा जाता जेल अधिकारी जेल नियमों का पालन नहीं करते । बहुत से बन्दियों को एलएलएस्क विद्यार्थियों सहित सुपरिन्टेन्डेन्ट के कहने पर सरकार द्वारा बेतों की सजा दी गई । सुपरिन्टेन्डेन्ट के कहने पर इसके अतिरिक्त भी सजाएँ दी गईं जो जेल मेन्युअल की ८२१ वीं धारा के अनुसार जेल में केवल गदर मचाने के प्रयत्न या अन्य किसी भयङ्कर अपराध पर दी जा सकती है । मैंने २६ जून सन् ४३ को देखा कि बहुत से बन्दियों को कम काम करने पर जेल सजा के बतौर कोड़े लगाए गये । इस प्रकार कोड़े लगाना अवैधानिक था, और सरकार तथा जेल अधिकारियों के अत्याचार का प्रतीक था । निरीक्षकों से शिकायत करने के कारण भी बन्दियों को सजा दी गई ।

यह आम शिकायत थी कि जेल अधिकारी बन्दियों को पीटते थे । चोटें छिपाने के लिये बन्दियों के तलवों पर डण्डे मारे जाते थे । जब कभी भी बन्दी जेल निरीक्षकों से शिकायत करते थे तो उनको शिकायतों को झूँठी बताकर खूब मारा पीटा जाता था । इस बात को स्वयं सुपरिन्टेन्डेन्ट ने जिला जज के समने माना कि वे बन्दियों की शिकायतों पर कोई जाँच, या गवाही नहीं लेते थे । इससे यह स्पष्ट है कि जेल अधिकारी उनके खिलाफ शिकायत किए जाने पर बन्दियों को मारते पीटते थे ।"

अलीगढ़ जेल की एक-एक घटना के सम्बन्ध में दो समाचार दिये जाते हैं— अलीगढ़ १५ जून सन् ४३ का समाचार है कि हिन्दी के प्रसिद्ध पत्रकार श्री रमेशचन्द्र आर्य्य, जिनको १५ जून में गिरफ्तार किया गया था । वे १८ जून को सन्देह जनक परिस्थितियों में मर गये । उनका शरीर छिन्न भिन्न करके उनके सम्बन्धियों को दिया गया । उनके शरीर पर सूजन और चोटों के चिन्ह

थे। वे गिरफ्तारी के समय बहुत स्वस्थ थे, पता चला कि १८ जून की शाम को जेल में उनसे बहुत देर तक प्रश्नोत्तर किए गए, उसी तारीख की रात्रि में उनका शरीर जेल के कुएँ में पड़ा मिला। दूसरे दिन मृतक सम्बन्धियों को इसकी सूचना और छिन्न भिन्न शव दिया गया। कहा जाता है कि जेलर ने मृतक के सम्बन्धीयों से कहा कि इन्होंने कुएँ में कूदकर आत्म हत्या करली"

लखनऊ ८ जुलाई सन् १९४३ को उपरोक्त घटना के सम्बन्ध में गर्वनर महोदय ने निम्न विज्ञप्ति प्रकाशित की—रमेशचन्द्र को १७ जून को दफा ३९७ भारत दण्ड विधान के अन्तर्गत स्वस्थ दशा में गिरफ्तार किया गया था। दूसरे दिन सन्ध्या समय उन्हों ने अपनी तबियत खराब बताकर, दूसरे कांग्रेस बन्दियों के साथ रहने की अनुमति चाही। जेलर ने अनुमति देने में असमर्थता प्रकट की, और वे अपने बाड़े में वापिस चले गए शाम को खाना बँट गया, और उसकी थोड़ी देर बाद रमेशचन्द्र गायब हो गये। इसके बाद उन्हें ढूँढा गया तो उनका शरीर कुएँ में मिला। कृत्रिम साँस दिलाने की कोशिश करना व्यर्थ रहा, उनके शरीर पर किसी चोट के निशान नहीं थे, जिससे किसी दुर्व्यवहार का सन्देह नहीं किया जा सकता। बन्दी की मृत्यु के बाद इस घटना की मजिस्ट्रेट द्वारा जाँच की गई, जिससे मजिस्ट्रेट साहब इस परिणाम पर पहुँचे कि बन्दी ने आत्म हत्या की।

अगस्त सन् ४२ से निर्दोष राजबन्दियों की वास्तव में उत्पीड़न यातना, और हत्याओं का घर बना दिया। पुलिस और जेल अधिकारी जनता पर अत्याचार करमें में होड़ बद रहे थे। सार्वजनिक मुकदमों से पुलिस द्वारा निर्दोष व्यक्तियों की हत्याएँ सिद्ध हो गईं। इलाहाबाद से एक ऐसी घटना का समाचार प्रकाशित हुआ।

इलाहाबाद का ९ मार्च सन् ४३ का समाचार है, १७ दिसम्बर सन् ४२ को लुटार गाँव, भेजा इलाका जिला इलाहाबाद की घटना के सम्बन्ध में मजिस्ट्रेट ने जाँच की, इस मुकदमे में शमशुद्दीन नामक और मोहम्मद इदरिस, सफदर हुसैन, अहमदहुसैन और मोहम्मदरज़ा विशेष पुलिस के सिपाही इस मुकदमे मुलाजिम हैं, इनका चालान रामदुलार बनिया और उसकी स्त्री ठकुरी की हत्या के सम्बन्ध में हुआ है। सरकारी गवाहों के बयानों से पता चलता है कि पुलिस के सिपाही और दुलार में तौलने के बाटों पर झगड़ा हुआ, कुछ अन्य लोगों के बांट भी कम बताये गये इनको पुलिस ने रिश्वत लेकर छोड़ दिया। रामदुलारे ने कोई रिश्वत नहीं दी, इस पर झगड़ा और मारपीट हुई। दूसरे दिन गांव के चौकीदार ने रात के साढ़े ९ बजे बन्दूक की गोली की आवाज सुनी, बाद में वह गाँव में गया, जहां उसे पता चला कि ४-५ सिपाही दुलार को पकड़ कर ले गए जहां उसकी स्त्री भी पीछे भागी गई, दुलार की स्त्री उसको नेपेट से जख्मी एक आम के पेड़ से बधा देखा। स्त्री ने बताया कि सिपाही उसके पति को गिरफ्तार करके ले जारहे थे, जब वह पीछे चिल्लाती जा रही थी, तो सिपाहियों ने उस पर गोली मारी, और चार पाच सिपाही उसके पति को ले गये। इस सम्बन्ध की विशेष जानकारी हाईकोर्ट के फैसलों से मिलती है।

विशेष पुलिस के पाच सिपाहियों ने जिनमें से दो को फांसी और बाकी को आजन्म कारावास का दण्ड उपरोक्त अपराध पर इलाहाबाद के शेशन जज द्वारा दिया गया था, इलाहाबाद हाईकोर्ट में अपील की। अपील में चीफ जस्टिस ने अपील करने वालों को रिहा कर दिया और जस्टिस दर ने उनकी सजा बहाल रक्खी पर मौत की सजा को आजन्म काला पानी में परिवर्तित कर दिया। चीफ जज ने अपना

निर्णय हर पृष्ठों ने दिया, उपरोक्त घटना को बताने के बाद जज ने लिखा कि पुलिस के सिपाही विशेष पुलिस में थे, जिनके ऊपर इन्सपेक्टर जनरल पुलिस का अनुशासनात्मक नियन्त्रण था, परन्तु इनसे काम कराने का अधिकार फौज को था। अगस्त सन् ४२ की गड़बड़ी होने पर रेल की लाइन और तार की रक्षा करना विशेष आवश्यक हो गया, इसी को सामने रखते हुये उपरोक्त पुलिस वालों का एक दल नैनी से मिर्जापुर जाने वाली रेलवे लाइन की रक्षा कर रहा था, १६ नवम्बर सन् ४२ को एक रेल पटरी से हट गई थी, यह रेल की दुर्घटना उचाडो और मांडा के बीच में हुई। इसी कारण से नैनी और मिर्जापुर लाइन पर सख्त पहरा किया गया।

यह बात मान्य है कि सत्रह दिसम्बर सन् ४२ की रात को लुटार गाँव का दुलार नामक व्यक्ति मेजा रोड और उनचाडो स्टेशन के बीच रेलवे लाइन के नजदीक और तार के खम्भे के पास गोली से मार दिया गया। उसी रात को उसकी स्त्री ठकुरो को इन्हीं पुलिसवालों ने बाग में राइफल की गोली से आहत किया, इस मामले में अभियुक्तों का कहना है कि यह घटना काँग्रेस जनों द्वारा रेलवे लाइन और तार नष्ट करने के प्रयत्नों का परिणाम है। दूसरे पक्ष का कहना है कि लुटार गाँव का कोई भी व्यक्ति काँग्रेस से सहानुभूति नहीं रखता था, और इन पाँच व्यक्तियों ने दो निर्दोष और शान्त ग्रामीणों की हत्या की।

इन सब बातों के ऊपर चीफ जस्टिस साहब ने केवल सफाई पक्ष में ही विश्वास करके अभियुक्तों को निर्दोष घोषित किया।

इसके विपरीत जस्टिसदर साहब ने अपने ५४ पृष्ट के फैसले में लिखा कि उन्होंने बहुत गम्भीरता से अभियुक्तों के सुझाव पर विचार किया परन्तु वे यह मानने से असमर्थ हैं कि गाँव वाले पुलिस और रेल अधिकारियों ने मिलकर उखाड़ पछाड़ के कामों को छिपाने के लिए पांच निर्दोष विशेष पुलिस के सिपाहियों को हत्या के अपराध में फंसाने का प्रयत्न किया है। इस बात का कोई प्रमाण नहीं कि दुलार कांग्रेस जन था, या कांग्रेस से कोई सहानुभूति रखता था। इस मुकदमे की सब घटनाओं को देखते हुए यही पता चलता है कि उखाड़ पछाड़ के कामों का इसके साथ संयोजित करना मिथ्या है। सफाई पक्ष की यह बात भी बिल्कुल मिथ्या है, कि भीड़ का गाँव में पीछा किया, परन्तु भीड़ फिर भी हमला करने वापिस आई, उस समय गोली चलाई गई, जिससे अकस्मात् ठकुरी मारी गई। और इस बात को मानना भी कठिन कि तार के खम्भे के पास दुलार को मारा गया। समस्त बातों को ध्यान में रखते हुए जस्टिदर ने यह निर्णय किया कि अभियुक्तों ने जान बूझ कर दुलार को गोली से मारा है। और इसी प्रकार ठकुरी की हत्या बाग में हुई है। इस प्रकार जज महोदय ने इन पाँचों अभियुक्तों को दोषी करार दिया।

इससे भी बुरी दूसरी घटना गाजियाबाद और देहली की सीमा पर हुई। उसके सम्बन्ध में निम्न समाचार प्रकाशित हुआ:

देहली १० जौलाई सन् १६४३ का समाचार है कि यू० पी० की स्पेशल सशस्त्र पुलिस के चार सिपाहियों को जिनके प्लाटून कमाण्डर ने यह आज्ञा दी थी कि जो उखाड़ पछाड़ करने वालों के विरुद्ध कार्यवाही करने में विशेषता प्राप्त करेगा उसको इनाम दिया जायगा। इन सिपाहियों को सिलमपुर

रेलवे क्रासिंग के पास तीस अक्टूबर की रात्रि को तीन अल्प वयस्क बालकों को गोली से मारने के अपराध में देहली के सेशन जज मि० फालिशा ने मृत्यु दण्ड दिया। अपने फैसले में जज महोदय ने कहा कि नायक रामसिंह और भगवानसिंह, रामसिंह, शिवप्रसादसिंह, चारों अभियुक्त हत्या के अपराधी हैं इसलिये इन्हें मृत्यु-दण्ड दिया जाता हैं। अभियुक्तों के विरुद्ध प्रभियोग की बड़ी मार्मिक कहानी हैं, अभियुक्तों ने इन बच्चों को इसलिए मारा कि वे अपने ऊपर आए अप्राकृतिक व्यभिचार के कलंक से बचना चाहते थे, और साथ ही उखाड़ पछाड़ के कामों का विशेष विरोध करने के उपलक्ष में इनाम और तरक्की पाना चाहते थे, जज की राय में इनपर विशेषता दूसरी बात ही लागू थी। यह बात ठीक जान पड़ती थी कि सिपाहियों को इस बात का आश्वासन दिया गया कि उनको अपनी उपरोक्त विशेषता दिखाने पर इनाम और पदोन्नति दी जायगी। प्लाटून कमाण्डर ने स्वयं कहा कि ३१ अक्तूबर सन् ४२ में ५०) नायक रामसिंह को और शेष तीन को २०-२० रुपये देने की आज्ञा दे दी गई थी। इस बात से अभियुक्तों का अभिप्राय स्पष्ट हो जाता हैं।

अभियुक्त तीस, इकत्तीस अक्तूबर की रात्रि को रेलवे लाइन की रखवाली कर रहे थे, उन्होंने चार लड़कों को किशनगज रेलवे स्टेशन के पास गाजियाबाद की ओर रेलवे लाइन पर कोयले की चोरी करते हुए पकड़ा, सलमपुर रेलवे क्रासिङ्ग पर, और इन लड़कों को एक लाइन में खड़ा करके गोली से मार दिया गया। एक लड़का मुहम्मददीन जो किसी प्रकार भाग निकला था उसने न्यायालय में बयान देते हुए कहा कि उन्होंने सिपाहियों के पैरों में गिरकर दया याचना की थी, परन्तु उनमें से दो लड़के वहीं गोली से मार दिए गए, और मैं कँपकपाते हुए तीसरे साथी का सहारा लेकर गिर पड़ा,

मैंने साँस रोककर मरे जैसा बहाना किया । उसी समय मालगाड़ी आ गई, जो रेल की पटरी पर शव पड़े देखकर रुक गई, ड्राइवर अभियुक्तों से बात करने लगा, उस समय अवसर पाकर मैं एक गाँव की ओर भागा और लुकता छिपता जमुना पार करके देहली अपने घर पहुँच गया। अभियुक्तों ने अगले दिन गाजियाबाद में अपने अधिकारियों से तीन लड़के मारने की बात कही और उनपर यह आरोप लगाया कि लड़कों ने रोशनी और दरवाजे तोड़े थे। अभियुक्त किशनगंज और गाजियाबाद के बीच रेलवे लाइन की रखवाली कर रहे थे, रेलवे लाइन के रक्षकों को यह अधिकार था कि वे रेलवे लाइन को नुकसान पहुँचाने वालों को गोली से मार दें ।

इस प्रकार के मामलों से बचाने और पुलिस के गैर-कानूनी अत्याचारों को छिपाने के लिए यू० पी० के गर्वनर ने एक कानून बनाया, जिसके सम्बध में निम्न लिखित समाचार छपा ।

लखनऊ १४ अप्रैल सन् ४३—संयुक्तप्रान्त में सरकारी नौकरों और ऐसे व्यक्तियों, जिन्होंने आज्ञा देकर ऐसे काम करवाए जिन्हें उन्होंने शान्ति और व्यवस्था के लिए आवश्यक समझा, ऐसे लोगों की बचत के लिये कानून बना कर तुरन्त लागू कर दिया । इस कानून के कारण और उद्देश्य को बताते हुए कहा 'अगस्त सन् ४२ मे सरकार को नष्ट करने के लिये कांग्रेस ने एक तोड़फोड़ वाला आन्दोलन आरम्भ किया, विशेषरूप से हिन्सात्मक ढंग पर यातायात के साधनों को नष्ट किया गया जिससे शत्रु के विरुद्ध भारत रक्षा करने में भयङ्कर बाधा पड़ी । यद्यपि देश में सैनिक कानून लागू नहीं किया गया था, तो भी अवस्था ऐसी हो गई जिसके कारण फौजी कानून के सदृश नियम लागू किए गए । गर्वनर की सम्मति में सरकारी अधिकारियों की रक्षा

के लिये इस कानून का निर्माण अत्यन्त आवश्यक है।"

किसी भी प्रचलित कानून की धारा में भी हस्तक्षेप किए बिना सरकारी नौकरों ने आठ अगस्त से अबतक जो भी कार्य्य शान्ति और व्यवस्था के नाम पर किए हैं, उनके विरुद्ध उनपर दीवानी फौजदारी या अन्य किसी भी प्रकार की कार्य्यवाही प्रान्तीय सरकार की अनुमति बिना नहीं की जा सकगी। और यदि इस कानून के निर्माण से पूर्व कोई मुकदमे चल रहें हैं, उनसे सबको बरी किया जाता है।

पुलिस और सरकारी नौकर निर्दोष प्रान्तवासियो के इस प्रकार पीछे पड़े जिस प्रकार एक पागल शिकारी अपने शिकार के पीछे।

इस सम्बन्ध में अंग्रेजी अफसरों ने अपने पूर्वज और पूर्वाधिकारियों को भी मात कर दिया। निर्दोष व्यक्तियों पर आयु और स्त्री पुरुष का भेद किए बिना भयङ्कर दुर्व्यवहार किए। आज तक भी बलिया और आजमगढ़ की भूमि अपने ऊपर हुए अत्याचारों से कराह रहीं है। बलिया में हृदयनाथ कुंजक जैसे बाहरी आदमियों तक को जाने से रोका गया गाँधी टोपी पहनना भी जुर्म करार दे दिया।

संयुक्त प्रान्त और विशेषतः पूर्वी जिलों की करुण कहानी महा दारुण है, संयुक्त प्रान्त में अंग्रेजी अत्याचारों का भार बिहार, मध्यप्रदेश से अधिक नहीं तो बराबर अवश्य रहा।

अन्य प्रान्त

भारत में अंग्रेजो का अत्याचार सर्वत्र फूट पड़ा, यह ठीक है कि अत्याचार

कहीं अधिक और कहीं कम हुए, लेकिन सरकारी दमन नीति सर्वत्र एक ही सी थी, कहीं प्रान्तीय या स्थानीय सरकारों ने विवेक बुद्धि का उपयोग किया था, भारत के अन्य प्रान्तों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है।

उड़ीसा

इस छोटे से प्रान्त में भी सरकार के अत्याचार पूर्ण कार्यों की हद हो गई। सजाएँ, जुर्माने, लाठी प्रहार, और गोलियों का अन्य प्रान्तों की भाँति यहाँ भी प्रयोग किया गया। प्रान्त में ३९९ नजरबन्द किए गये, और १३३७ आदमियों को सजा दी गई। जेल में भी लाठी प्रहार और मारपीट की गई। उड़ीसा एसेम्बली में बताया गया कि पन्द्रह नवम्बर को बरहामपुर जिला जेल में राजबन्दियों पर लाठी वर्षा की गई।

आठ अगस्त सन ४२ के बाद जिला बालासोर में पुलिस का अत्याचार पूर्ण शासन प्रारम्भ हुआ। विभिन्न स्थानों पर गोलियाँ चलाई गईं। उन गोलियों के परिणाम स्वरूप ४२ आदमी मरे, और २७० आदमी आहत हुए। पुरुषों की अनुपस्थिति में स्त्रियों को पीड़ित किया गया। उनको नङ्गा करके पेड़ों पर उलटा लटका कर कोड़े और बेंतें मारी गईं। उन्हें इतनी यातनाएँ दी गईं कि वे अचेत हो गईं। निर्दोष स्त्रियों के आभूषण उतार लिए गये।

कोरापुर में काँग्रेस जनों के खेत, मकान, पशु और अन्य चीजें जब्त करली गईं। उन्हें नङ्गा करके उत्पीड़ित किया गया। इसी प्रकार स्त्रियों के साथ भी अमानुषिक व्यवहार किया गया। काँग्रेस की सम्पत्ति

जिसमें एक कार और दो सहस्त्र रुपया जब्त कर लिया गया। काँग्रेस नेता श्री लक्ष्मण नायक को एक सार्वजनिक सभा में भाषण देते गिरफ्तार करके वे पुलिस थाने में लेजाए गए। एक बड़ी भीड़ उनके साथ गई। जब भीड़ लौट रही थी, तब पुलिस ने भीड़ पर लाठी और गोलियों की बौछार की जिससे ६ आदमी जान से मर गये और १०० घायल हुए लक्ष्मण राव के ऊपर भाले और किरचों से हमला किया, ऐसे ही अमानुषिक व्यवहार से एक चार वर्षीय बालक भी जान से मारा गया। उस समय वहाँ जयपुर रियासत के कुछ अधिकारी थे, उन्होंने भी पुलिस को सहायता की, एक जङ्गल का चौकीदार जो शराब के नशे में धुत था, नहर में गिर कर मर गया। इस घटना के आठ दस दिन बाद कलक्टर और सुपरिएटेएडेएट पुलिस ने मैथली गाँव को जलाकर बिलकुल खाक कर दिया। लक्ष्मण नायक पर अन्य ५३ आदमियों के साथ जंगल के चौकीदार की हत्या का मुकदमा चलाया गया, लक्ष्मण नायक को फाँसी की सजा दी गई, शेष मेंसे चौबीस को रिहा कर सबको आजन्म कारावास का दण्ड दिया गया।

कोरापुर जेल में राक्षसी व्यवहार के कारण अल्प समय में ही ५० राजनैतिक बन्दी जान से मर गए। जेल में २५० बन्दी रखने का स्थान था, पर आन्दोलन के समय उसमें एक हजार आदमी ठूँस दिए गए,

इस आन्दोलन में १६१७ आदमी गिरफ्तार किए गए। ३२४ वार लाठी और दोवार गोली चल कर ४१ फायर किए, जिनसे २८ आदमी जान से मर गए। ग्यारह हजार दोसो रुपया सामूहिक जुर्माना किया गया। तीन आदमियों को पेड़ों पर उलटा लटकाकर पीटा गया, और बारह स्त्रीयों का सतीत्व भङ्ग

किया गया।

उड़ीसा की रियासतों में भी कम अत्याचार नहीं हुए, धनकानल नीलगिरी और तलचर रियासतों में गोली चलाई गई। नीलगिरी और तलचर में तो आकाश से भी गोली वर्षा की गई। १०० निर्दोष आदमी जेलों में ठूंस दिए गए, और बहुत से आदमी मारे गए और घायल हुए। दिन दहाड़े स्त्रियों और जनता की सम्पति को खूब लूटा गया। ७५ गाँवों के स्त्री पुरुष और बच्चों ने भागकर रियासत मयूरगंज की शरण ली। इन गाँवों पर ७५६०४ रुपया सामूहिक जुर्माना लगाया गया। धनकानल रियासत में दो आदमी जान से मारे गये, बहुत से घायल हुए और ३२ आदमियों को २० से ४० वर्ष तक का कारावास दण्ड दिया गया। ४३ गाँवों पर पचास हजार रुपया सामूहिक जुर्माना किया गया।

नयागढ़ रियासत में बहुत से निर्दोष आदमियों को सताकर जेल में ठूँस दिया गया। लूट और सम्पति को नष्ट करना साधारण बात थी १२ गाँवों पर आठ हजार सामूहिक जुर्माना किया गया।

तलचर रियासत में तीन आदमी जान से मारे गये, जेल में कालेज का एक विद्यार्थी अमानुषिक व्यवहार के कारण मर गया। सौ से अधिक घायल हुए अनेक मकान लूट कर जला दिये गए, ४० आदमियों को कारावास दन्ड मिला और ६५ हजार रुपया सामूहिक जुर्माना किया गया। इस प्रकार सन् ४२ के अन्दर उड़ीसा प्रान्त में किसी भी अन्य प्रान्त से कम अत्याचार नहीं हुए।

—सिन्ध—

सिन्ध में गिरफ्तारी, नजरबन्दी और अन्य अत्याचारों का ताँता बाँध दिया गया। सिन्ध की राजधानी कराँची में पुलिस के अत्याचारों का भयङ्कर दृश्य दस अगस्त को देख पड़ा। १४ अगस्त को स्थानीय व्यापारी संघ ने एक जाँच समिति नियुक्त की, जिसने बहुत सी गवाहियाँ लेकर उनके बयान लिखे, ये बयान पुलिस की लाठियों से घायल लोगों के पास जाकर भी लिए गए, उसके बाद बहुत विचार के साथ निम्नलिखित रिपोर्ट दी "पुलिस से पीड़ित लोगों के बयान सुनकर हम इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि बारह अगस्त सन् ४२ में पुलिस ने आवश्यकता से बहुत अधिक ज्यादती की" बहुत से ऐसे निर्दोष व्यक्तियों पर भी आक्रमण किए जो प्रदर्शनों में सम्मिलित भी नहीं थे। पुलिस ने भीड़ों को तितर बितर करने के लिए लाठी बरसाई। पुलिस वाचनालय जलपानगृह, घरों और में कोठियों में अंधाधुन्ध घुस गई और बहुत से निर्दोष व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया। पुलिस ने छोटे-छोटे बच्चों का पीछा करके, डन्डे मार कर उन्हें गिरा दिया विद्यार्थियों को अन्धाधुन्ध गिरफतार किया गया। उन्हें लड़कों पर निर्दयता से पीटा गया और जबरदस्ती पुलिस की लारियों में ठूँस दिया गया। उन पर पुलिस वाले चढ़ बैठे, और उन्हें ठोकरें मार-मार कर बुरी तरह गालियाँ दी। गिरफ्तार व्यक्तियों के साथ थाने में बहुत ही अत्याचार पूर्ण और अपमान जनक व्यवहार किया गया। कुछ पीड़ित नौजवान, विशेषतः विद्यार्थी और सम्भ्रान्त नागरिकों के लड़कों ने हमसे बयान देते

हुए कहा कि पुलिस थानों में थप्पड़ घूँसे और लात की मार के अतिरिक्त हमें अलग कमरे में ले जाकर पीठ के बल लिटाया जाता था, हमारी छाती के ऊपर एक आदमी चढ़ बैठता और एक आदमी पैर उठा लेता था, इसके बाद पैर के तलवों पर दस-दस या बीस-बीस बेतें मारी जाती थीं। हमसे पुलिस अधिकारियों के जूतों पर नाक रगड़वाई जाती थी और चूतड़ों के बल पृथ्वी पर इस तरह चलाया जाता था जिसको कि सिन्धी में "गिसी" कहते हैं।

हमारे सामने एक ऐसी घटना भी आई, कि जिसमें पुलिस अधिकारी ने भरती किए हुये एक रंगरूट से गिरफ्तार किए हुए लड़कों में से किसी एक को छाँटने को कहा जो पहले अच्छी तरह पीटा जा चुका हो। मकरानी ने एक लड़के को बलपूर्वक एक कमरे में ले जाकर उसका पाजामा और ‍‍ जांघिया निकलवा दिया, परन्तु जब लड़के ने शोरगुल मचाया तो उसे छोड़ देना पड़ा।

बहुत से निर्दोष व्यक्ति पुलिस की अन्धाधुन्ध मार के शिकार बने, लेकिन १२ अगस्त सन् ४७ को एक बड़ा दयनीय कृत्य हुआ, कि एक आदमी को अपने भाई की मृत्यु का तार मिला, वह दफ्तर से छुट्टी लेकर अपने घर जाने की तय्यारी कर रहा था, वह आदमी जब श्याम को रामबाग के पास कुछ सौदा खरीद रहा था तो आठ दस लठबन्द सिपाही उस पर टूट पड़े, उसके दो पुत्रों के अतिरिक्त उसके पास और कोई नहीं था। लड़के तो जैसे तैसे १-२ लाठी खाकर भाग गए, परन्तु पुलिस ने उनको खूब मारा, उसका सर फट गया, जिससे खून की धारा बह निकली, इसके बाद उनकी भुजाओं पर डण्डे बरसाए गए, उसने चिल्ला-चिल्लाकर कहा कि यह दूकान मेरे लड़के की है। तिस पर पुलिस सार्जेण्ट ने धक्के देकर उसे बाहर निकाल दिया, दूकान से निकलते ही वह सड़क के किनारे गिर पड़ा परन्तु अब भी पुलिस की मार जारी थी, अचेत

हो जाने पर उसे रामबाग अस्पताल में भेज दिया गया। इस घटना के पाँच दिन बाद हम उससे मिले, वह अपने घर में हक्का बक्का सा एक खाट पर पड़ा था।

अधिकारियों ने इन सब कार्यो में सहायता करने में ऐसे आदमियों की भरती की जो सदैव समाज को त्रस्त करते रहे हैं। इसका प्रमाण यही है कि पुलिस वालों ने सम्मानीय व्यक्तियों को साधारणतः ही गाली गलौज और दुर्व्यवहार किया। सेठ लालजी मलहोत्रा कराँची भारतीय व्यापारी संघ के प्रधान, और कराँची म्युनसिपेल्टी के भूतपूर्व मेयर को जब इन नये भरती किए पुलिस वालों ने डण्डे से पीटा, तो वहाँ पर कुछ पुलिस के सहायक सादे कपड़ों में भी खड़े थे, यह बड़े आश्चर्य की बात है कि लाठी चलाने के लिये सादे कपड़े वालों की भरती की गई थी।

ऐसा भी पता चला कि अधिकारियों ने पुलिस के नए रंगरूटों को दो गिरफ्तार लड़कों के साथ अप्राकृतिक व्यभिचार करने की अनुमति दी। एक ऐसे ही पीड़ित लड़के ने हमें बयान देते हुए बताया कि ऐसा करने के लिये लड़कों को अलग कमरे में ले जाया जाता था, और उनके साथ अश्लील से अश्लील व्यवहार किया जाता था, जिसे शब्दों में लिखना भी अश्लीलता है।

इस समिति ने अपना अन्तिम मत देते हुए बताया कि पुलिस के अत्याचारों की जो शिकायतें की गई हैं, उनसे इस बात की आवश्यकता सिद्ध होती है कि पुलिस के दुर्व्यवहार की जाँच करने के लिये एक निष्पक्ष जाँच कमेटी

बैठाई जाय।

करांची के १२ गण्य मान्य सज्जनों ने बीस अगस्त सन् ४२ को यह रिपोर्ट तय्यार की थी, १७ सितम्बर को केन्द्रीय एसेम्बली में श्री लालचन्द नवनराय ने उपरोक्त रिपोर्ट के उद्धरण दिए थे, परन्तु सरकार ने उनका कोई उत्तर नहीं दिया।

इन्हीं सदस्य महोदय ने बयालीस में राजनैतिक अपराध में कोड़ों की सजा देने पर भी प्रश्न पूछे। और उन प्रश्नों के उत्तर में सरकार की ओर से सी० एम त्रिवेदी ने निम्न लिखित उत्तर दिए—

कोड़े की सजा उन नवयुवकों को दी गई, जिन्होंने मार्शल लाग के समय में गड़बड़ी करने या कराने के प्रयत्न किए। जेल नियमों के अनुसार अठारह वर्ष से तेईस वर्ष तक के नवयुवकों को हलकी बैंतों से पीटने की सजा दी गई। जो नवयुवक पीटे गऐ, उनमें से अधिकांश विद्यार्थी थे, कोड़े या बैंतों से पिटने के परिणाम से कोई बेहोश नहीं हुआ।

आगे चलकर श्री त्रिवेदी ने बतलाया कि प्रारम्भ में हूरों के उपद्रवों को दबाने के लिए मार्शल ला लागू किया गया था। नियम ४१ में स्पष्ट रूपसे यह कहा गया है कि जहां मार्शल ला लागू हो उस हिस्से में गड़बड़ी करने वालों को फौजी सजा दी जायगी—और कॉंग्रेस आन्दोलन भी इस प्रकार के उपद्रव थे, जो नियम ४१ के अन्तर्गत आते हैं।

१६ सितम्बर सन ४२ को सरदार सन्तसिंह ने केन्द्रीय एसेम्बली में उपरोक्त रिपोर्ट का हवाला देकर भाषण देते हुए कहा है, कि "यदि सरकार आन्दोलन को दमन करने में सफल भी हो जाय तो भी वह अपने पीछे इतनी कटुता छोड़ जायगी कि इस देशमें किसी को भी अंग्रेजों से प्रेम न रहेगा। क्या वह यह चाहते हैं ? मैं तो यही कहूँगा कि समय रहते हुए ही सरकार को

सदबुद्धि आजाय और वह परिस्थिति को सभाँल ले। मुझे तो बहुत कुछ कहना था लेकिन उस सब को मैं कहा ही छोड़ देता हूं। लेकिन वर्तमान सरकारी सदस्यों के सम्बन्ध में यह तो नहीं कहना चाहिए कि इस देश में ब्रिटिश साम्राज्य का कफन ले जाने वाले थे।

देहली

❀❀——❀❀

इस अवसर पर भारत की राजधानी प्राचीन शहर देहली पर भी अंग्रेजी अत्याचार कम नहीं हुए। सब से पहले हम डिप्टी कमिश्नर का प्रेस वक्तव्य देते हैं, जिससे इस विषय पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

"दस अगस्त सन् ४२ का समाचार है कि सोमवार के प्रातःकाल एक सार्वजनिक सभा के बाद प्रदर्शन कारियों ने शहर में हड़ताल कराने का प्रयत्न किया। जब भीड़ अजमेरी दरवाजे पहुँची तो उसको पुलिस ने रोक लिया। परन्तु फिर भी उनकी एक संख्या जिनमें अधिकतर विद्यार्थी थे कनाट सर्कस पहुँची, जहाँ पर उन्होंने थोड़ा हुल्लड़ मचाया, कुछ खिड़कियाँ तोड़ दी, कुछ योरोपियनों को रोक दिया, परन्तु किसी को चोट नहीं आई। करनाट सर्कस से यह सब लोग शहर को वापिस भेज दिए गये, शहर में ट्रामों को कुछ हानि पहुँचाई गई, और आने जाने वाली कारों पर जहाँ तहाँ पत्थर फेंके गये। शहर में प्रातकाल कुछ योरोपियन से छेड़छाड़ की गई थी।

बिरला और देहली क्लौथ मिल के मजदूरों ने हड़ताल की, दोपहर बाद

अँग्रेजी फौज बुला ली गई,

बारह अगस्त सन ४२ का समाचार है कि ग्यारह अगस्त को देहली में पुलिस ने तीन बार गोलियाँ चलाई। दोपहर बाद एक भीड़ ने पहाड़गंज डाकखाने पर हमला किया, वहाँ का सब सामान इधर उधर फैंक कर आग लगाने को तय्यार भीड़ को पुलिस ने गोली चला कर तितर बितर किया, जिसके परिणामस्वरूप एक आदमी मरा और एक घायल हुआ।

चाँदनी चौक में भी पुलिस ने गोलियाँ चलाई, लेकिन कहा जाता है कि कोई घायल नहीं हुआ। तीसरी बार नई सड़क में काँग्रेस जलूस पर गोली चली। गोली चलाने वालों का कारण यह बताया जाता है कि जलूस वालों ने पुलिस की लारी पर पत्थर फैंके। गोली से एक आदमी घायल हुआ, जिसे अस्पताल भेज दिया गया। पुरानी दिल्ली में म्युनसपल्टी की पाँच चौकियों पर हमला करके उन्हें लूट लिया गया, या जला दिया गया। सब्जी मण्डी में भीड़ ने एक चक्की में घुसकर बहुत सा आटा उठा लिया, तीस हजारी में इनकमटैक्स आफिस, तथा सब्जी मण्डी में डाकखाना तथा ए० आर० पी० की० चौकी जला दी गई। करोल बाग में एक चीनी के मकान से बलपूर्व बाहर फैंक दिया, भीड़ आग लगाने वाली थी, पुलिस ने भीड़ को तितर बितर कर दिया।

चाँदनी चौक, जहाँ पर पहले दिन उपद्रव हुआ था, वहाँ सन्नाटा था। पुलिस फौज और कुछ हवाई उड़ाकुओं के अतिरिक्त कोई दिखलाई नहीं पड़ता था। एक तरफ एक मोटर साईकिल जली पड़ी थी, और जलती हुई म्युनिस्पल कमेटी के पास एक R. A. F. की लारी और दो फायर इंजन खड़े थे। संचालक आग बुझाने के लिए इधर उधर भागे फिर रहे थे। इस आध मील लम्बे बाजार में गलियों और छत्तों पर बैठे हुए आदमी पुलिस और फौज

को देख रहे थे। दूकाने सब बन्द थीं । कागज और रबर टायरों के जलने से बड़ी बदबू फैल रही थी,

सौ फुट ऊँचे घन्टाघर की घड़ी ने बारह बजे घण्टा नहीं बजाया, और लोग चाय की प्रतीक्षा करते रह गये, घण्टों पर घण्टे बीतने लगे। क्योंकि घण्टाघर की सीढ़ी जला दी गई थी, अतः ऊपर चढ़कर घड़ी को ठीक करने का कोई मार्ग नहीं रह गया था।

म्युनिस्पल आफिस के भवन को भारी क्षति पहुँची, उसका सभा-भवन फर्नीचर तथा अन्य सामान नष्ट भ्रष्ट कर दिया गया, लेकिन नकदी और बहुत से कागजात बचा लिये गए।

नया बाजार का रेलवे गोदाम जला दिया गया। कोतवाली के पास रक्षक तार लगा दिये गये, नई देहली जाने के सब मार्गों पर सशस्त्र पुलिस और फौज के पहरे लगा दिए गए। पुरानी और नई देहली की बहुत सी दूकाने तथा स्कूल और सब बैङ्क बन्द रहे।

पुलिस ने किशनगंज रेलवे स्टेशन के पास एक भीड़ पर गोली चलाई, जिससे छै आदमी घायल हुए। बारह तारीख बुधवार तक देहली में पुलिस की गोलियों से केवल तेरह आदमी मारे गये। बारह तारीख की शाम को डिप्टी कमिश्नर ने निम्नलिखित बयान दिया, कि ग्यारह अगस्त के बाद देहली की स्थिति कुछ सुधरी है; लेकिन करौल बाग और पहाड़गंज में बर्मा और चीन से आये हुए शरणार्थियों के मकानों को बहुत हानि पहुँचाई गई है। सर्वत्र पुलिस और फौज का पहरा लगा हुआ है, कहीं-कहीं एकाध दूकान खुली है, और नई दिल्ली में तो शान्ति सी जान पड़ती है।

उपरोक्त घटनाओं के अतिरिक्त लाठी प्रहार और गोली वर्षा बराबर चालू रही, इसके बाद लोगों पर मुकदमे चलाये गये, इस प्रकार भारत की राजधानी में भी लोगों को बुरी तरह उत्पीड़ित किया गया।

आसाम

—×❀❀+—

आसाम में समानान्तर सरकार स्थापित करने का प्रयत्न किया गया, इस प्रान्त में अंग्रेजी शासन को प्रायः स्तब्ध कर दिया। सरकार तो पागल हो गई, उसने शान्त समूह और सभाओं पर अन्धाधुन्ध गोलियाँ बरसाई और किरचों से हमले किए। आसाम की पुलिस को पूर्ण स्वच्छन्दता से मनमानी करने का अधिकार मिल गया। २५ अगस्त सन बयालीस में सादुल्ला मन्त्रि मण्डल स्थापित होने पर, पुलिस को एक प्रकार से दमन का लाइसेंस ही मिल गया था।

आसाम की दो वीरबाला कनकलता और तुलेश्वरी ने जिस बहादुरी और देशभक्ति की भावना से मृत्यु का सामना किया, वह आसाम के इतिहास में एक अमर कहानी रहेगी, आसाम इस बलिदान को कैसे सहन कर सकता था?

२४ फरवरी सन् ४३ का जोरहाट जेल में बन्दियों पर लाठी चार्ज करके १८० आदमियों के हाथ पैर तोड़ दिये।

२५ सितम्बर को पटाचर कुची थाने के पास जोला गाँव में एक सभा से

लौट रहे थे, कि पीछे से गोलियाँ चलाई गई, दो व्यक्ति मदनचन्द्र वर्मन और राबनराम वहीं पर गोलियों के शिकार हुए। पुलिस अधिकारियों ने कामरूप, दराँग, और नौगाँव में भी खून की होली खेल कर परतन्त्रता व नंगे जीवन का मूल्य बता दिया।

शासक सत्ता ने नौगाँव जिले में भयङ्कर अमानुषिक अत्याचार किए, रेलवे लाइनों पर फौजी पहरा लगा हुआ था, जो निरीह यात्रियों को पकड़ कर गोली से उड़ा देते थे।

१० अगस्त को एक फौजी दल ने, दो नौजवानों को गोली से मार दिया। दूसरे दिन रोहपुल के पास एक और नवयुवक को गोली से उड़ा दिया गया। बेबेजिया गाँव में असहाय स्त्री पुरुषों पर आधीरात के समय घोर अत्याचार किए, ४०० मर्द, स्त्री और बच्चों को गिरफ्तार करके सशस्त्र पुलिस की देख रेख में ६ मील दूर थाने तक लेजाया गया। इन स्त्रियों में एक स्त्री को अपने तीन दिन के नव जात शिशु के साथ चलना पड़ा, इस यन्त्रणा को सहन न कर सकने के कारण बेचारा सद्यजात बच्चा और उसकी माता अपने जीवन को खूनी सरकार के ऊपर बलि चढ़ा गए।

नौ गाँव जिले के बरापुजिया गाव का निवासी' तिलक डेका, गाँव की रक्षा के लिए पहरा दे रहा था, उसने फौज पुलिस को आता देखकर, लोगों को सचेत करने के लिए अपनी तुरही बजाई, लेकिन जैसे ही तुरही से शब्द निकला फौज की गोली उसकी छाती को छेदती हुई पार हो गई। वीर तिलक डेका मातृभूमि की जयबोलता हुआ, माँ के अंचल मे सो गया। इधर तुरही की आवाज सुनकर गाँव वाले इकट्ठे होने लगे, फौजियों ने इनपर भी गोलियाँ चलाई, पाँच छः आदमी मर गए, लेकिन गाँव वालों ने बल पूर्वक

फौजियों से डेका का शव छीन लिया। इस काण्ड के फलस्वरूप लगभग तीन सौ आदमी गिरफ्तार किए गए, मकानों में आग लगादी गई। स्कूल के शिक्षकों और विद्यार्थीयों तक को बुरी तरह पीटा गया।

१६ सितम्ब को नौगाँव से पाँच मील दूर बरहम पुर में कुछ लोग एक प्रीति-भोज में इकट्ठे हुए, फौजियों और पुलिस वालों ने उन पर गोली चलादी, फलवस्रूप कई आदमी गोली के शिकार हुए।

आन्दोलन इतना आगे बढ़ा कि हटीगढ़, टेओक, और चरी गाँव आदि कई स्थानों में पूर्ण सफलता के साथ समानान्तर सरकारें कायम हो गईं। यह सब देखकर शासन सत्ता अन्धी हो गई, और उसने अपने अत्याचारों का नृशंस अध्याय खोल दिया। टेओक थाने के पास एक भीड़, पर पुलिस और फौज ने अचानक हमला किया, पुरुष, स्त्री और बच्चे बुरी तरह से घायल कर दिए गए, लगभग सवा दो सौ आदमियों के गहरी चोट लगी। इसी प्रकार जय-सागर के पास १५००० की एक विशाल भीड़ पर भयङ्कर आक्रमण किया गया। सरकार के पिठ्ठुओं ने श्री कौशल कुँवर को एक ट्रेन दुर्घटना के आरोपों में फँसा लिया, फाँसी की सजा दी गई। विद्रोही कौशल कुँवर ने हँसते-हँसते फाँसी का फन्दा अपने गले में डाल लिया।

—वीर कमला मीरी को मजिस्ट्रेट ने कुछ शर्तों पर छोड़ देने के लिए कहा, परन्तु कमला मीरी ने यह स्वीकार नहीं किया। वह जेल की चहारदीवारी में ही सड़कर मर गया। पर अपने को कायर कहलाकर जीवित रहना ठीक नहीं समझा। आसाम में विद्रोह तथा दमन की इतनी भयङ्करता बढ़ गई जिसके सामने कोई व्यवस्था ठहर न सकी। आसाम में सरकार ने जो कुछ भी किया, उसके सम्बन्ध ने सर सादुल्ला

प्रधान मन्त्री आसाम एसेम्बली के प्रश्नों के जो उत्तर दिए, उन्हें उद्धृत करते हैं—

शिलाङ्ग १३ दिसम्बर सन् ४३:—"अगस्त सन् ४२ के आंदोलन से सम्बन्धित ३१४३ आदमी गिरफ्तार किए गये, जिनमें से १६१६ को सजाएँ हुईं, ४०५ आदमी नजरबन्द किए गए, चार लाख दस हजार चार सौ सतासी रुपया सामूहिक जुर्माना हुआ जिसमें २ लाख ४६ हजार ५७८ रुपया वसूल किया गया।

इसी समय में छै बार गोलियाँ चलाई गईं। जिसमें दोबार दारंग जिले में, दो बार कामरूप, ५ बार नौ गाँव, और १ बार नालपारा जिले में गोली चली। जिनसे १४ मरे और तैंतीस घायल हुए।

कानूनी और साधारण अत्याचारों के अतिरिक्त बड़े अमानुषिक ढंग से गोली और मारपीट की गई। इसके समर्थन में निम्न समाचार है।:—बीस सितम्बर सन् ४२ को ढकिया जुरी में पुलिस ने एक भागती हुई भीड़ पर अन्धाधुन्ध गोलियाँ चलाईं। पुलिस के सिपाही ने भागते हुए आदमियों का पीछा भी किया। दक्षिण हाठखोला के थाने में एक मँगते का शव मिला, थाने के दक्षिण की नाली में एक अन्य शव मिला, P.W.D. और सतीश विश्वास की दूकान के पास की नाली में एक युवती का शव मिला। पुलिस थाने से १ मील दूर गोधाजाली नदी के पास एक और शव मिला। उपरोक्त समाचारों से स्पष्ट है कि पुलिस ने अन्धाधुन्ध गोलियाँ चलाईं जो कि भीरुतापूर्ण कार्य्य था।

सरकार ने इन घटनाओं की जाँच कराने से भी इन्कार कर दिया। सरकार का कहना था कि पुलिस ने जो किया वह आत्म रक्षार्थ किया।

इस प्रकार आसाम के साथ बड़ी निर्दयता और पाशविक व्यवहार हुआ। सरकार के बहरे कानों ने निर्दोष पीड़ितों के क्रन्दन को सुना तक नहीं।

सतारा

प्रसिद्ध पेशवाओं की राजधानी, जिन्होंने भारत में हिन्दू साम्राज्य स्थापित करने के लिए विदेशियों से घोर युद्ध किया था, वह बयालीस की क्रान्ति में अपनी अमिट छाप लगाए बिना कैसे रह सकती था सन् बयालीस में सीधा सादा, नाना पाटिल, सतारा में स्वतन्त्र सरकार का संस्थायक बन गया, यह स्वतन्त्र राज्य पत्री सरकार" के नाम से जाना जाता था, इसने महीनों तक अपना शासन चलाया।

सरकार ने सार्वजनिक प्रदर्शनों के समय जो कुछ किया, वह भारत में ब्रिटिश राज्य का काला कारनामा है। एक पुलिस अफसर ने कॉंग्रेस नेता को गिरफ्तार किया और सशस्त्र पुलिस ने भीड़ को कुचल दिया। पन्द्रह सितम्बर को वाँके में श्री परशुराम धरने एक जलूस का नेतृत्व कर रहे थे, पुलिस ने उनके ऊपर तीन गोलियाँ चलाई, वे उसी समय मर गये। दूसरे दिन इसलामपुर में पुलिस अधिकारी के सामने पाण्डु मास्टर को पीटा गया, भीड़ को तितर बितर हो जाने के आध घन्टे बाद कचहरी के पास खड़े हुए आदमियों पर गोली चलादी गई। कन्दुवारा पाटे नामक एक किसान गोली का शिकार

हुआ । किर्लोस्कर कम्पनी का इन्जिनियर श्री पाण्डे गोली के घाव से अस्पताल जाकर मर गया । अन्य तीन आदमियों को गहरी चोटें आईं । सतारा में इस प्रकार की असंख्य घटनाएँ हुईं, स्थानाभाव से जिनकी गणना यहाँ सम्भव नहीं ।

सतारा में इतनी सख्ती से भारी-भारी सामूहिक जुर्माने किए कि एक-एक प्रत्येक गाँव पर बीस-बीस हजार रुपया तक जुर्माना पड़ा । जुर्माने की वसूली में गावों को घेर लिया, गाय भैंस तक भी पानी पीने तक के लिए बाहर न जा सकी, स्त्रियों के आभूषण जबरदस्ती उतार कर बाजारों में बेच दिए गए । इसके अतिरिक्त जिले भर में अन्य अनेक प्रकार के अत्याचार किये गये ।

जेलों के अन्दर विशेष कर करद और बहादुर तालुके में बन्दियों को सताया गया । सताने के लिये "सुन्दरी" नामक एक नए अस्त्र का आविष्कार किया गया, इसके लिये नमक मिले पानी में चमड़े को भिगोकर, प्रहार के योग्य बनाया जाता था, कहीं-कहीं धुएँ और गर्म पानी से लोगों को सताया गया ।

काटे वाड़ी नामक गाँव में चार वृद्धों के ऊपर एक पत्थर की शिला रख कर उसके ऊपर लड़कों को चढ़ा दिया । यहीं तक नहीं अस्सी-अस्सी वर्ष के वृद्धों और आठ-आठ साल के बच्चों की खाल खींच ली गई ।

श्री बाटलीवाला ने पुलिस के अत्याचारों का वर्णन करते हुए बॉम्बे क्रानिकल में लिखा कि "पुलिस आधीरात के समय गाँव में पहुँच कर फ़रार लोगों की स्त्रियों और बहनों को पकड़ कर गाँव के बाहर एकान्त में

ले जाती, और उनपर अनेक अत्याचार करके भाई या पति को बतलाने के लिये बाध्य करती थी। इतना ही नहीं नीच पुलिस ने उनके सतीत्व तक को भङ्ग कर डाला। वापिस लौटने पर बेचारी स्त्रियाँ अपनी बेबसी पर रोने सिसकने के अतिरिक्त और क्या कर सकती थीं।

एक स्वतन्त्र पत्रकारों के दल ने बयालीस में सतारा की यात्रा करके बताया कि पुलिस ने वहाँ पर आतङ्क और अत्याचार का राज्य स्थापित कर दिया। पुलिस ने बहुत से स्थलों पर गुण्डे और बदमाशों की सहायता ली। उन्होंने बहुत से पुलिस-पाशविकताके उदाहरण गिनाते हुए कहा कि गाँव वालों की जायदादें जब्त की गईं, दो हजार से अधिक आदमी गिरफ्तार किये गये, छै आदमी जेलों में मर गये, तेरह आदमी पुलिस की गोलियों के शिकार हुए।

सरकारी नौकर, मुसलमान, और दलित जाति पर सामूहिक जुर-माने नहीं लगाये गये। कावें नामक ३५ हजार की आबादी के गाँव पर तीस हजार जुर्माना किया गया। इस प्रकार सतारा ने अपने प्राचीन इतिहास और बलिदान के अनुसार ही ब्रिटिश अत्याचारों के भार को सहन किया।

विदर्भ

सी० पी० प्रान्त में काँग्रेस विदर्भ में जिसकी राजधानी अकोला

है। उसके सम्बन्ध में विदर्भ प्रान्तीय काँग्रेस कमेटी ने जो लेखा दिया है, उसके अनुसार, पुलिस अधिकारियों ने गाँवों के अन्दर असभ्य अमानुषिक और उत्पीड़िन का व्यवहार किया। आदमियों और लड़कों को आधी-आधी रात को पहाड़ी हिस्सों में खड़ा करके ऐसी बुरी तरह पीटा गया, कि या तो वह बेहोश हो गये या उनके अङ्ग भङ्ग हो गए। मिर्चें पीस पीसकर उनकी आँखों और गुप्तेन्द्रियों में भरदी गईं अकोला और अमरावती में भीड़ को तितर बितर करने के लिये लाठी वर्षा की गई। अमरावती जिले में यावली, बनौदा और खानपुर स्थानों पर गोली चलाई गई, जिससे ३० घायल हुए और पन्द्रह जान से मरे, गोली चलाने के बाद पुलिस वालों ने बाजारों को लूट कर बरबाद कर दिया। जेलों में बन्दियों पर लाठी चलाई गई, औषधि आदि का प्रबन्ध नहीं किया गया। इस प्रकार यह छोटा सा प्रान्त अंग्रेजी कुकृत्यों का स्वाद चखने से बञ्चित न रह सका।

विहङ्गम सिंहावलोकन

इस अध्याय में अब तक बयालीस के पाशविक अत्याचारों का वर्णन किया हैं, हमने जिन घटनाओं का उल्लेख किया हैं, वह विश्वस्त सूत्र के आधार पर लिखी गई हैं, यह गाथा कितनी मर्मान्तक, और भयानक है, लेखनी द्वारा यह प्रकट नहीं किया जा सकता।

सन् बयालीस की ये घटनाएँ केन्द्रीय एसेम्बली और काउन्सिल आफ़ स्टेट में भी विवाद का विषय रहीं। काउन्सिल के सदस्य, प्रायः सम्पत्ति शाली और सरकार पक्ष से लिये जाते हैं अतः वे शासन परिवर्तन या क्रान्ति में भी विश्वास नहीं रखते, फिर भी भारत में अंग्रेजी अत्याचारों ने इनके हृदयों में उथल पुथल मचादी। यहाँ पर ऐसे ही सदस्यों के भाषणों के कुछ उद्धरण देकर अध्याय को समाप्त करते हैं।

माननीय सरमुहम्मद उस्मानने कहा "देश में जो गड़बड़ हुई, उसको दमन करके व्यवस्था और शान्ति के लिये निम्न लिखित साधनों का उपयोग किया गया,

१—कांग्रेस कमेटियाँ अवैधानिक करार देदी गईं, और ऐसे प्रमुख व्यक्ति जो आन्दोलन चला सकते, उन्हें जेल में बन्द कर दिया गया।

२—इस आन्दोलन का लक्ष्य युद्धोद्योगों में बाधा डालना था, इसलिये भारत रक्षा विधान के भीतर सब कार्यवाही की गई।

३—अतिरिक्त फौजी अदालत के कानून, जैसे अनेक प्रकार के सजा देने वाले नए-नए कानून जारी कर दिए गए।

४—समाचारों के प्रकाशन पर नियन्त्रण लगा दिये गये,

५—जहाँ-जहाँ गड़बड़ी हुई, वहाँ पर पुलिस का पूर्ण उपयोग किया, जिसने खुले आम गोली चलाई। फलस्वरूप ३६० आदमी जान से मरे और १००० घायल हुए।

६—हिन्दुस्तानी और अँग्रेजी फ़ौजों का साठ जगह उपयोग किया गया,

जिन्होंने गोलियाँ भी चलाईं, जिससे ३९१ आदमी मारे गये और १५९ घायल हुए। फौज के केवल ११ आदमी मरे और सात घायल हुए।

७—देख भाल और जाँच के लिए हवाई जहाजों का प्रयोग किया गया,

सर ए० पी० पेट्रो साहब ने कहा:—"देश में इस समय जो घटनाएँ हुईं, जिनका कि मार्मिक वर्णन किया गया, उससे यह प्रश्न उठता है कि सरकार को यह बताना चाहिये था, कि ऐसी स्थिति क्यों हुई! तोड़ फोड़ और सम्पति का नाश किन कारणों से हुआ? गवर्नमेण्ट के द्वारा इन सब बातों का न बताया जाना बड़े दुख की बात है।

माननीय श्री पी० एम० सप्रू ने कहा :—कि जिसको जिले और सूबों की परिस्थिति का पूरा ज्ञान है, वह इस बात से इन्कार नहीं कर सकता कि ऊपर से लेकर नीचे तक तमाम अधिकारियों ने परिस्थिति के अनुसार आवश्यकता से अधिक बल प्रयोग नहीं किया। सार्वजनिक शान्ति-रक्षा के प्रयत्न में अपराधियों के साथ निर्दोष दण्डित न हों। लोगों को भड़काने और अपमानित करने वाले कार्य न किए जाँय, केवल कानूनों का ही प्रयोग किया जाय। आज हम ऐसे युग में रह रहे हैं, जहाँ गोलियाँ बरस रही हैं, लाठी कोड़ों की वर्षा हो रही है, सामूहिक जुर्माने वसूल किए जा रहे हैं।

राजनीतिज्ञता के सामने यह समस्या है, कि लोगों का कानून से विश्वास हट गया है, क्योंकि वे प्रतीत करते हैं कि सरकार उन्हें स्वतन्त्र रहने के लिये तय्यार न करके वर्तमान घृणित और अनिश्चित परिस्थिति में ही रखना चाहती है। सरकार का रूप असीम और असाधारणतः उत्तेजित

रहा है, समस्त परिस्थितियों का अध्ययन करके मेरी यह दृढ़ भावना हो गई है, कि देश की वर्तमान बेचैनी का प्रमुख उत्तर दायित्व सरकार पर है। धुरीराष्ट्रों के विरोधी भारतीय नेताओं को जेलों में ठूँस देना, वास्तव में एक दुखान्त घटना है। आप रायबहादुर और उसी श्रेणी के लोगों पर विश्वास करते हैं। साम्राज्य विरोधी सिद्धान्त को मानने वालों की अपेक्षा रायबहादुरों के लिए शक्ति परिवर्तन कर देना सरल है। सरकार के इस रवैये से युद्धोद्योगों में सहायता कर सकने वाले लोग भी अन्यमनस्क हो गये हैं। काँग्रेस को पाँचवा कालम या धुरीराष्ट्रों के पक्ष में बताना सर्वथा भूल है। चीन रूस और दूसरे देशों को स्वतन्त्र भारत अधिक से अधिक सहायता दे सकता था। आपने काँग्रेस के साथ समझौता न करके इन देशों को महत्वपूर्ण सहायता से वञ्चित किया है। यह भारत और ब्रिटेन का दुर्भाग्य है कि ब्रिटेन का प्रधान मंत्री चर्चिल ऐसा व्यक्ति नहीं है जो विचार पूर्ण बुद्धि विहीन, तथा जाति विद्वेष की भावना से भरपूर हैं। उसने इस देश वासियों के विरुद्ध विषसिक्त भाषण दिया है ब्रिटेन के टाइम्स जैसे पत्र ने भी चर्चिल को यह सुझाया कि काँग्रेस भारतीय राजनीति में उपेक्षणीय नहीं हैं परन्तु इन राजनीतिज्ञ ने घमण्ड के साथ कहा कि इस समय भारत में इतनी सफेद फौजें हैं जितनी भारत के इतिहास में कभी नहीं रही।" इसलिए गाँधी आदि भारतीय नेताओं की गिरफ्तारी की नीति का समर्थन करना किसी भी भारतीय के लिए सम्भव नहीं। सरकार ने पहला हमला करके भारत में दूसरा मोर्चा खोला है।

माननीय रायबहादुर श्री नारायण मेहता (बिहार) ने कहा "इस आन्दोलन की गहराई, सीमा और महत्ता को ठीक-ठीक नहीं समझा गया। यह न तो विद्यार्थियों का आन्दोलन है, न काँग्रेस का आन्दोलन हैं। और न यह

पांचवे कालम का युद्धोद्योगों में बधा पहुँचाने का प्रयत्न है। यह ऐसे राष्ट्र की हताश चेष्टा हैं, जिसकी स्वतंत्रता भावना को तुमने कुचल कर सहन शक्ति की सीमा को समाप्त कर दिया है। भारत से ऐसी स्वतंत्रता रक्षा के लिये कहा जाता है, जो उसे प्राप्त नहीं। वास्तव में यह गोरख धन्धा है।

मैं यह निश्चय पूर्वक कह सकता हूं कि जनता ने जो कुछ भी किया वह लक्ष्य पूर्ण था। लेकिन सरकार ने जो किया उसमें न योजना थी, न विधि। ग्रामीणों में भय उत्पन्न करने के लिये यह सब अंधाधुन्ध किया गया।

इन सबब से लोगों ने अनुमान किया कि सरकार भयाविन्त हो गई है। इसके परिणाम स्वरूप जनता के बीच यह भावना पैदा हो गई कि यदि अंग्रेजी राज्य में भारतीयों का यही भाग्य रहेगा कि उन्हें सन्देह पर गोला से उड़ा दिया जाय, बिना कानूनो गवाहियों के उनके गले में फाँसी का फन्दा लटका दिया जाय, पुलिस को इच्छा पर कोई भी गिरफ्तार कर लिया जाय, तब भारत का यह सोचना क्षम्य हैं कि वह भारत की, धुरी राष्ट्रों द्वारा विजित देशों से की दुर्दशा से तुलना करने लगे।

माननीय रायबहादुर लाला रामसरनदास (पंजाव) ने कहा—मेरी समझ में तो सरकार प्रचार-रोग-ग्रस्त है। उसने जब अपने हाथ से शक्ति न जाने देने का निश्चय कर लिया, तब यह भी समझ लिया कि काँग्रेस से संघर्ष की तय्यारी में लगे कि काँग्रेस को एक झटके में कुचल दें। निस्सन्देह ९ अगस्त को सरकार ने इसी विश्वास पर काम किया।

सरकार ने यह जानकर कि काँग्रेस आन्दोलन के साथ जनता नहीं है, संसार को यही समाचार दिया कि सब मोर्चों पर पूर्ण शान्ति है। काँग्रेस

नेताओं की गिरफ्तारी के कई सप्ताह बाद तक तो यही कहा गया कि कहीं कोई गड़बड़ी नहीं है, और आल इन्डिया रेडियो ने तो इसका जिक्र तक नहीं किया लेकिन अब जान पड़ता है कि सरकार ने अचानक ही अपना प्रचार का मोर्चा बदल दिया है। अब तो उसने लूटमार, हत्या और उखाड़ पछाड़ के समाचारों का ताँता बाँध दिया। जिसके द्वारा उसने यह प्रचार किया कि भारत में एक खुला विद्रोह मच गया, यदि फौज पुलिस और सरकारी नौकरों ने साथ न दिया होता तो इस विद्रोह से सरकार यन्त्र ही नष्ट हो जाता। और इनके साथ यह भी कहा जाता है कि सर्व साधारण बड़े गम्भीर रहे और उन्होंने विद्रोहियों का साथ नहीं दिया। इन हुल्लड़ शाही के खून खौला देने वाले वृतान्तों के छापने का क्या मकसद हो सकता है ?

मेरा तो यह सन्देह है कि सरकार काँग्रेस के नेताओं को लड़ाई भर जेल में बन्द रखकर वर्तमान नमूने का शासन चलाती रहे मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या काँग्रेसी नेताओं को जेल में ठूँस कर सरकार अपना काम पूरा कर चुकी ? और अब वह देश की स्थिति को सन्तोष की दृष्टि से देखती है। देश में मेरा भी कुछ हित है, और मैं अपने इस लम्बे सार्वजनिक जीवन में नियमित उन्नति का पक्षपाती रहा हूँ। आज मुझे यह देखकर दुख होता है कि सरकार का कोई मित्र नहीं रहा है। अवध के ताल्लुकेदार जैसे वर्ग के आदमी, जो सदैव सरकार के साथ रहे हैं, उनका भी सरकारी नीति से विश्वास हट गया।

माननीय हाजी सय्यद मुहम्मद हुसैन (संयुक्त प्रान्त) ने कहा—वायसराय की कौंसिल के हिन्दुस्तानी सदस्यों को सरकार संसार में 'हिन्दुस्तानी' कहकर घोषित करती है। क्या उन्होंने इस विवाद में भारत के प्रति अपना

कर्त्तव्य पालन किया है ? क्या उनके लिये इतना ही कर्त्तव्य है कि वे सरकार के दमन का समर्थन करें। यह करके तो उन्होंने सरकार के प्रति ही कर्त्तव्य पालन किया है। क्या उन्होंने कोई विधायक योजना पेश की ? क्या उन्होंने वर्तमान गत्यावरोध के अन्त, और भारतीय परिस्थिति को शान्त करने का उपाय बताया ? या उन्होंने केवल सरकार के दमन में ही हाथ बढ़ाने का ठेका लिया है। हमें तो उनसे कुछ और ही आशा थी वे तो ईमानदार और अनुभवी आदमी हैं, वे तो हर प्रकार के हैं, भारविहीन, हल्के भार, मध्यभार, और भारी भार के। उन्हें जीवन में अनुभव हुए हैं, परन्तु उन्होंने अपनी बुद्धि और अनुभव का उपयोग, सरकार के पक्ष में किया भारतीयों के पक्ष में नहीं। इस देश में गत तीस वर्षों से सरकार के विरुद्ध लोक प्रिय और सार्वजनिक आन्दोलन चल रहे हैं। यह आन्दोलन खुले रूप से सरकार विरोधी आन्दोलन था, क्यों ? क्योंकि अंग्रेजों ने भारतीयों में सद्भावना उत्पन्न करने का प्रयत्न नहीं किया उसने तो सदा यही चाहा कि जब तक बने तब तक राज्य करो। इसका यह परिणाम है कि आज भारत में एक भी ऐसा भारतीय नहीं ; कि जो इस शासन का भक्त बना रहे। कोई भी भारतीय जिसने दासता का अनुभव किया है, और स्वतंत्रता को जानता है, वह इस शासन प्रणाली का समर्थक नहीं रह सकता। आज सर्व साधारण में तीव्र अंग्रेज विरोधी भावना है। आन्दोलन का दमन करने में सरकार ने जिन साधनों का उपयोग किया है, वे तो आन्दोलन को आगे बढ़ाने में ही सहायक होंगे।

देश में आपकी दमन नीति न्याय सङ्गत हो या नहीं, लेकिन वह निश्चित रूप से ऐसी स्थिति पैदा कर रही है, जो भारत पर विदेशी हमले

के समय महा भयङ्कर सिद्ध होगी। हमको मलाया और बर्मा का अनुभव है। आज भारत के प्रत्येक आदमी की मनोवृति पाँचवे कालम की बन गई है। सरकार के कारनामे तो मित्रों को भी शत्रु बना रहे हैं। आज चाहे सार्वजनिक अशान्ति का दमन करने में तुम्हें सफलता मिले, आज तुम लोगों को कुत्ते के समान कर डालो, लेकिन इस सबका अन्तिम परिणाम बड़ा होगा। तुम्हें निकट भविष्य मे जिनकी सहायता अपेक्षित है, उनके हृदयों में गहरी घृणा और क्षोभ उत्पन्न कर रहे हो

भारतीयों को मित्र बनाकर उनकी सहायता से आप निश्चय युद्ध जीत सकते हैं। लेकिन लोगों पर आतङ्क जमाकर, मुझे भय है कि आप युद्ध नहीं जीत सकते।

माननीय हृदयनाथ कुँजरू ने कहा :—देश में जो असन्तोष का प्रकाश हो रहा है, उसे कॉंग्रेस द्वारा उत्पन्न बताना भूल है। यह देखते हुये कॉंग्रेस को तय्यारी करने और अपने कार्यक्रम को सफल बनाने का अवसर नहीं मिला, तब भी आन्दोलन का उत्तरदायित्व कॉंग्रेस के सर मढ़ना निरर्थक है। तथा समस्त परिस्थिति का अध्ययन करके मैं यह कह सकता हूँ, देश में जो कुछ भी हुआ वह ब्रिटिश सरकार के प्रति भारतीय जनता का भाव-प्रकाशन है। अंग्रेजी सरकार ने जिस नीति का पालन किया है, उससे भारत के सब लोग हिन्दू और मुसलमान 'इतने आकुल और व्याकुल हो उठे हैं। कि वह गैर कानूनी कार्य करने पर भी उतारू हो गए। परन्तु विरोधियों को लार्ड मोरले के ये शब्द याद रखने चाहिये "कि जब लोग विद्रोह करते हैं, तो वह उनका अपराध नहीं अपितु दुर्भाग्य है।

इलाहाबाद में कम्युनिस्टो ने एक सभा की जिसमें उन्होंने चीन में किए गए जापानी अत्याचारों की गथा गई। इस पर दर्शकों में एक आदमी भड़ककर उठा और बोला—"यह चीज तुमने पहले कही होती, आज तो ऐसा न कहो"। पहले दिन लड़कों के जलूस पर पुलिस ने गोली चलाई थी, जिसमें गोली से एक लड़का मर गया, मुझे मालूम हैं-लड़के हिन्सा के अपराधी नहीं थे। और जब गोली चलाने की घटना शहर में फैली तो प्रत्येक के दिल पर चोट लगी। इस छोटी सी घटना से ही सरकार को हवा का रुख जान लेना चाहिए। ओस्ट्रिच (*Ostrich*) (एक अफ्रीकी पक्षी) की तरह भूमि में अपना सर गाड़ने के बजाय उनको घटनाओं का अध्ययन करके भारत के प्रति अपने कर्तव्य और उत्तर दायित्व का अनुभव करना चाहिए जिसका संरक्षक होने का वह दावा करते हैं।

इलाहाबाद में कम्युनिस्टो ने एक सभा की जिसमें उन्होंने चीन में किए गए जापानी अत्याचारों की गथा गई। इस पर दर्शकों में एक आदमी भड़ककर उठा और बोला—"यह चीज तुमने पहले कही होती, आज तो ऐसा न कहो"। पहले दिन लड़कों के जलूस पर पुलिस ने गोली चलाई थी, जिसमें गोली से एक लड़का मर गया, मुझे मालूम हैं-लड़के हिन्सा के अपराधी नहीं थे। और जब गोली चलाने की घटना शहर में फैली तो प्रत्येक के दिल पर चोट लगी। इस छोटी सी घटना से ही सरकार को हवा का रुख जान लेना चाहिए। ओस्ट्रिच (*Ostrich*) (एक अफ्रीकी पक्षी) की तरह भूमि में अपना सर गाड़ने के बजाय उनको घटनाओं का अध्ययन करके भारत के प्रति अपने कर्तव्य और उत्तर दायित्व का अनुभव करना चाहिए जिसका संरक्षक होने का वह दावा करते हैं।

श्री जयप्रकाश नारायण

तीसरा अध्याय

अधिकारियों की रक्त पिपासा
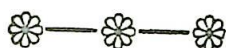
कांग्रेस नेताओं की ९ अगस्त की गिरफ्तारी के बाद, अंग्रेजों ने भारत में जो अत्याचार किये, पिछले अध्याय में वह सब दिया जा चुका है। उन अत्याचारों का अध्ययन करते हुये उस समय का नाम "आतङ्क राज्य" उपयुक्त ही रक्खा गया है। जनता का दमन और दलन, सरकार की साधारण और खुली नीति थी, सरकार के इस दमन का पूरा उत्तरदायित्व उन अधिकारियों पर था, जो इस नीति को कार्यान्वित करने के लिये नियुक्त किये गये थे।

अधिकारियों ने विशेषतः अंग्रेज अधिकारियों ने रक्त पिपासु सिंहों जैसा व्यवहार किया। उनकी क्रोध और आवेश से भरी हुई असीम बदले की भावना थी। वे घोर अमानुषिकता से भारतीय जनता का शिकार करते हुए इधर उधर फिर रहे थे। गत अध्याय में इन सब घटनाओं का वर्णन किया जा सकता है। यहाँ केवल उनका संकेत मात्र ही यह सिद्ध करने के लिये

पर्य्याप्त हैं, कि सरकारी अधिकारियों, विशेषकर अंग्रेज अधिकारियों को जनरल नील आदि सन् ५७ और जनरल डायर आदि सन् १६ के अपने पूर्वजों को मात कर दिया है। अन्धा धुन्ध मारपीट, कोड़े, और गोलियाँ साधारण बात थी, इनके अतिरिक्त, तरह-तरह की यन्त्रणाएँ, घोर अपमान, तथा माँ बहिनों की लज्जा हरण करते हुये तक नहीं हिचके। सरकारी अधिकारियों का मनुष्य दानव में परिणत हो गया था, उनके कार्य्यों से सारा मानव समाज लज्जित और कलंकित रहेगा।

भारत से अंग्रेजी राज्य का आज नहीं तो कल अन्त होकर रहेगा। इस समय के इतिहास का अपना एक स्थान होगा परन्तु बुरे से बुरा और काले से काला कारनामा अंग्रेजी अधिकारियों का होगा, जिन्हो ने निर्दोष और निशस्त्र भारतीय जनता पर घोर अत्याचार किए। "मिदनापुर, चिमूर, नन्दुरबार, और बिहार, संयुक्त प्रान्त तथा देश के अनेक भागों में जलियाँ वाले के हत्याकाण्ड से भी बढ़ चढ़कर अत्याचार थे। मानवता को पशुता में परिणत करने वाले, रक्त-पिपासु अधिकारियों ने जो कुकृत्य किए उनकी गणना करना उस मानवता की भावना के विपरीत है, जिससे उत्साहित और प्रेरित होकर मानव की धमनियों में खून दौड़ता हैं। अधिकारियों के ये कृत्य, घृणा ग्लानि, और अनन्त बदले की भावना पैदा करते हैं।

हमारा यह मन्तव्य भीरुता और असहायता पर नहीं, सच्ची वीरता और शक्ति पर निर्भर है। यह भावना, वह है जो मानव-हृदय पर अनन्त विजय प्राप्त करती हैं, इसे कभी भी पराजय का मुख नहीं देख पड़ता।
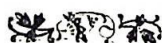
चतुर्थ अध्याय

स्त्री और बच्चों पर पाशविक अत्याचार

अत्याचार अन्धाधुन्ध और अमानुषिक ढंग से किए गये। हृदय को चीर देने वाली इस वृतान्त की दुखद कहानी पहले कही जा चुकी है। यहाँ पर हमारा लक्ष्य यह कहना नहीं है कि स्त्रियों और बच्चों को नहीं छोड़ा गया, बल्कि यह बताना है कि उनको जान बूझ कर और विशेष रूप से अमानुषिक व्यवहार का शिकार बनाया गया। पहले ऐसे सब अवसरों पर, चाहे वह सन् सत्तावन के हों, या सन् १९१९ या सन् १९३० या ३२ के हों, उनमें इस प्रकार के कृत्य जान बूझकर और इरादतन् नहीं किए। अब तक स्त्रियों के सम्मान की रक्षा की गई थी। उनके साथ इस बार जैसा निर्लज्जता पूर्ण व्यवहार कभी भी नहीं किया गया। इस बार तो अंग्रेज अधिकारियों ने खुले आम व्यभिचार करने में गर्व अनुभव किया। जो कि पहले लुके छिपे एकाधबार हुआ होगा। किसी भी शासन को इस प्रकार की नीति में अपने व्यवहार को सम्मिलित कर लेना, मानवता के पतन की पराकाष्ठा है। भारत

में अंग्रेजी शासन इस पराकाष्ठा को भी लाँघ चुका है, सन बयालीस की घटनाओं से यह स्पष्ट है। इन घृणित कृत्यों के कारण मानवता का मस्तक सदैव लज्जा और अपकीर्ति से झुका रहेगा।

गोलीमारना, शिकार खेलना, स्कूल के शिशुओं बालकों और युवकों को बर्बरता से पीटना, आदि घटनाएँ यदाकदा पहले भी हुईं, लेकिन सन् ४२ के युग में तो यह शासन की दिन चर्य्या सी बन गई थी। कहा जाता है दया और विनम्रताकी भावना, मनुष्य का जन्म सिद्ध स्वभाव है। क्रूरता और हृदय हीनता की भी सीमा है। एक बिन्दु है, जहाँ पहुँचकर मनुष्य काँप उठता है, और अपनी पाशविकता रोक देने के लिए बाध्य हो जाता है। निर्दोष शिशु-रोदन-स्वर में, बालक के सरल क्रीड़ामय जीवन में, और युवक के पवित्र भावावेश में, उस बिन्दु का निवास है।

लोह निर्मित अंग्रेजी शासन, या उसके अधिकारियों के लिए तो ऐसा कोई बिन्दु नहीं जो हृदय को करुणा से द्रवीभूत कर सके। उनकी बदला लेने, और अमानुषिक अत्याचार करने की पिपासा, उस समय तक शान्त न हुई, जब तक कि उन्होंने निर्दोष शिशुओं बालक और युवकों का खून नहीं बहाया, तथा भारतीय नारीत्व और सतीत्व भ्रष्ट नही किया। क्या इससे भी अधिक कोई घृणास्पद, लज्जास्पद क्रूर भावना हो सकती है। क्या मनुष्य की कल्पना इससे परे भी जा सकती है।

भयङ्कर से भयङ्कर अत्याचारों की कहानियाँ सुनी और देखी हैं, मनुष्य उनको देखने या सुनने मात्र से वास्तव में कम्पित हो अचेत हो जाते हैं। परन्तु वे सब घटनाएँ भी इस सीमा तक नहीं पहुँचती। बुरे

घुरी रक्खी हुई और प्रचारित, नाज़ी जर्मनी और फासिस्ट जापानी अत्याचर की कहानियाँ, इन अत्याचारों की कोर को भी नहीं छू पातीं। भारतीय जैसे निर्दोष और निशस्त्र आदमियों के ऊपर कहीं भी ऐसा व्यवहार नहीं किया गया। हिन्सात्मक युद्ध में संलग्न लोगों के स्त्री बच्चों के साथ भी ऐसा दुर्व्यवहार नहीं किया गया। सभ्यता और संस्कृति का गौरवशील संरक्षक होने की डींग हाँकने वाले अंग्रेजों ने भारत रक्षा और आन्तरिक गड़बड़ी को शान्त करने के नाम पर यह सब कुछ कर दिखलाया।

पाँचवा अध्याय

भारतीयों को किस प्रकार निर्जीव बनाया गया

अगस्त १६४२ के सिलसिले में केवल आतंकराज्य का ही सृजन नहीं किया गया, बल्कि भारतवर्ष में उसी समय से ब्रिटिश नीति का एक विशेष झुकाव प्रारम्भ हो गया। इस नीति के अनुसार भारतवासियों की समस्त नागरिक स्वतंत्रता का अपहरण कर के उन्हें स्पन्दनहीन निर्जीव पदार्थ में परिणत कर दिया गया। उन सभी क्रियाशील राजनीतिक संस्थाओं और समितियों को जिनका भारतवर्षीय राष्ट्रीय काँग्रेस से तनिक भी सम्पर्क था, अवैधानिक घोषित करके दबा दिया गया। मिलने जुलने और भाषण देने की स्वतन्त्रता का पूर्णतया अपहरण करके जनता को जीवनहीन बना दिया गया। सार्वजनिक सभा करने तथा जलूस निकालने पर भी कड़ा प्रतिबन्ध लगा दिया। जनाज़े और बारात के जलूसों को भी रोका गया। प्रेस का गला घोटकर लगभग सभी राष्ट्रीय समाचार पत्रों का प्रकाशन बन्द कर दिया गया। महीनों तक प्रकाशन बन्द रखने के बाद नए-नए प्रतिबन्ध लगाकर उन्हें पुनः प्रकाशन की आज्ञा मिली। इन गलघोटू प्रतिबन्धों के अतिरिक्त भारत रक्षा विधान के अन्तर्गत पुलिस को बिना किसी छानबीन लोगों को

गिरफ्तार करने का विशेष अधिकार दे दिया गया। इस प्रकार अगस्त सन् ४२ से ही गिरफ्तारी और नजरबन्दियों का एक नियमित ताँता सा बँध गया। कोई अपने को सुरक्षित नहीं समझता था। सरकार परस्त टोड़ी, और सरकारी उपाधिधारी भी पुलिस के क्रूर और सर्वग्राही पंजों से नहीं बच सके। अगस्त सन ४२ से ही पुलिस का राज्य आरम्भ हो गया, और बिना किसी नियंत्रण के अन्त तक चालू रहा। जनता पर बड़े सामूहिक जुरमाने किए गए और उनकी वसूली में असीम क्रूरता और धाँधली की गई। जनता को सार्वजनिक सड़कों सरकारी इमारतों, तथा रेलवे लाइनों की रखवाली को विवश किया गया। प्रत्येक काँग्रेसी, चोर और डाकू घोषित कर दिया गया। उजली खद्दर की गान्धी टोपी धारण करना, भयङ्कर अपराध समझा जाता था। इस प्रकार भारतवासी स्पंदनहीन निर्जीव पदार्थ मात्र रह गया। उनके जीवन, सम्पति, और, गतिविधि पर इतने कड़े प्रतिबन्ध लगाए गए कि साँस लेना भी दूभर हो गया। यह स्थिति एक दो दिन ही नहीं, बल्कि मार्च सन १९४४ तक क्रमबद्ध चलती रही।

९ अगस्त सन् १९४२ के प्रातः काल से ही काँग्रेस-जन चोर डाकू और गद्दार घोषित कर दिए गए थे, इसके बाद वर्षों तक जेल में या बाहर उनके साथ ऐसा ही व्यवहार किया गया। बन्दी वर्ग तो जेलों में यातनाएँ भोग ही रहा था, परन्तु जो बाहर थे वे भी गलघोटूँ प्रतिबन्धों में जकड़े हुए कराह रहे थे। उनकी प्रत्येक गतिविधि रहन सहन और मिलने जुलने पर सदैव पुलिस की क्रूर आँख घूरती रहती थी,। और ठीक कुत्ते की भाँति। पुलिस बराबर उनके पीछे पड़ी रहती थी। इस प्रकार काँग्रेस जन भयङ्कर से भयङ्कर जन्तु की श्रेणी में गिना जाता

रहा। और भारत में कुछ सरकारी पिट्ठुओं को छोड़कर कौन काँग्रेस जन नहीं है? अधिकांश भारतीय कर्म्मचारी तो निश्चित रूप से अत्याचार करने में हिचकिचाते हुए, कुछ कम सरगर्मी दिखाते थे, पर योरोपियन अफ़सर, तत्कालीन वायसराय, रक्त पिपासु गर्वनर और, यत्र तत्र, निर्मम जिला मजिस्ट्रेटों, तथा क्रूर और बर्बर पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्टों ने जी खोलकर अपने जौहर दिखाए।

भारत की वृहत् और शानदार जनता पर जिस प्रकार के अत्याचार किए गए, और ब्रिटिश राज्य में विशेषकर ९ अगस्त सन ४२ के पश्चात भारतीयों की जो दुर्दशा की गई, संसार के इतिहास में इतने बड़े जन समूह पर ऐसे दुर्व्यवहार का उदाहरण नहीं मिलता। यह घटना मनुष्य को चिरकाल तक लज्जित और कलङ्कित करती रहेगी। यह वास्तव में बड़ी रोमाञ्चकारी घटना है जो मनुष्य के हृदय को दहला कर, आँग्लभाषा के प्रसिद्ध कवि वर्डस वर्थ की निम्न उक्ति बरबस याद दिला देती हैं।

"मनुष्य ने ही मनुस्य को क्या बना दिया है।"

"*What man has made of man*"
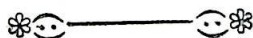
षष्ठम–भाग

क्या काँग्रेस पर आन्दोलन का उत्तरदायित्व है ?

प्रथम अध्याय

गान्धी जी का "महानतम युद्ध,,

गाँधी जी अपनी गिरफ्तारी के दिन तक अपने भावी आन्दोलन की आधार-शिला अहिन्सा को घोषित करते रहे। और उन्होंने जोरदार शब्दों में कहा था कि मैं सरकार के साथ संघर्ष बचाने के समस्त प्रयत्न करूँगा उन्होंने सार्वजनिक वक्तव्य देते हुए कहा कि कोई निश्चित कार्यवाही करने के पूर्व मैं वायसराय को पत्र लिखूँगा, भारत में ब्रिटिश शासन समाप्ति की माँग भी कोई अन्य उपाय न रहने पर की गई थी, तो भी जनता को आदेश दिया गया था, कि वह निश्चित कार्यक्रम के लिये गाँधी जी के निर्देशों की प्रतीक्षा करे। अखिल भारतवर्षीय काँग्रेस कमेटी के ७ अगस्त सन् ४२ को अपने पहले भाषण में कहा था "हमें अपने हृदयों में से अंग्रेजों के प्रति घृणा की भावना दूर कर देनी चाहिये, कम से कम मेरे हृदय में इस प्रकार की कोई घृणा नहीं है। वास्तव में मैं तो आज पहले की अपेक्षा अंग्रेजों का अधिक बड़ा मित्र हूँ"

दूसरी ओर सरकार जोरों की तैयारी में लगी हुई थी, इस खुले विद्रोह

था गाँधी जी के जीवन के इस महान युद्ध को प्रारम्भ से पूर्व ही समाप्त कर देने के लिये मशीन चालू करदी गई थी।

डाक्टर के० श्रीधरणी ने बड़े सुन्दर शब्दों में इसको चित्रित किया है, "इस बार अंग्रेज भारतवर्ष की पूज्यतम मूर्तियाँ तथा स्वतन्त्रता के आन्दोलन को बदनाम करके बुरी तरह से दबाने के लिये सीमा को लाँघ गये। यह स्वाभाविक भी था, क्यों कि यदि वह इतने बड़े मिथ्या प्रचार का सहारा न लेते तो अमेरिकावासी जो भारतीय आकाँक्षाओं के प्रति गहरी सहानुभूति रखते थे, उनकी कार्य कुशलता पर सन्देह करने लग जाते। सब से अच्छी चीज जो उन परिस्थियों में वह कर सकते थे, वह यह थी कि लोगों पर यह प्रभाव डाला जाय कि गाँधी जी की झुकाव नीति का अनुसरण कर, जापानियों के पक्ष में पचम श्री कार्य कर रहे हैं। क्यों कि इस प्रकार के वितरण गाँधी जी को बदनाम करके अमेरिकावासियों के हृदयों में उनके प्रति विद्वेष की भावना जाग्रत करने में सफल होंगे, अतः उनका प्रयोग क्यों न किया जाय। और नौकरशाही ने हाइटहाल के आदेशों का अनुशरण करते हुए ऐसा ही किया। चार अगस्त को सरकार ने गाँधी जी के मूल प्रस्ताव भारत छोड़ो के सम्बन्ध में हाथ आए एक मूल्यवान गुप्त पत्र का प्रकाशन किया। जो लोग भारत तथा गाँधी जी और काँग्रेस को जानते हैं उन्होंने अनुभव किया कि अमेरिका वासियों को भड़काने के लिये यह एक समयोचित परिहास पूर्ण षडयंत्र रचा गया था, जिसे उनमें अधिकतर ने बिल्कुल सत्य मान लिया। प्रथम तो काँग्रेस आफिस पर धावा बोलने की कोई आवश्यकता ही नहीं थी, क्योंकि गाँधी जी के आन्दोलन की एक यह भी आधार भूत नीति थी कि रहस्य गुप्त न रक्खा जाय।

ऐसी अवस्था में कोई भी सरकारी कर्मचारी फोन करके काँग्रेस मन्त्री को बुलाकर उनसे इच्छित कागज ले सकता था। दूसरे सरकार ने वे मूल्यवान पत्र पकड़े थे, परन्तु उन्हें तब तक रोक रक्खा जब तक कि अमेरिका को प्रभावित करने के लिए उनका भली भाँति उपयोग न किया किया जा सके। इस प्रकार ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका में गाँधी के विरुद्ध, भारत की लड़ाई लड़ रहा है न कि हिन्दुस्तान में जापानियों के विरुद्ध।

"उस प्रस्ताव का तथाकथित दूषित अंश, जो बाद में बिलकुल परिवर्तित कर दिया वह यह था" अगर हिन्दुस्तान स्वतंत्र कर दिया जाय, तो सम्भवतः उसका पहला कदम यह होगा कि जापान से सन्धि-वार्ता करे।" लेकिन जो अंश अधिक महत्वपूर्ण था उसे उद्धृत करने में वे असफल रहे। क्योंकि उसी प्रस्ताव में यह कहा गया था, "काँग्रेस की सम्मति है कि यदि अँग्रेज हिन्दुस्तान से चले गये, तो हिन्दुस्तान जापानी या किसी अन्य विदेशी आक्रमणकारी से अपनी रक्षा करने में समर्थ होगा।" इस प्रकार तनिक भी सन्देह नहीं किया जा सकता था, कि काँग्रेस जापानी या किसी अन्य आक्रमण का विरोध करने के लिये कटिबद्ध थी।

गाँधी जी दैवी पुरुष हैं, वह किसी भी मनुष्य को सुधार से परे नही समझते जब तक मनुष्य में मनुष्यता है वह सुधारणीय है, यह सुधार या तो समझाने बुझाने से हो जाया करता है, या शक्ति के प्रयोग से। गाँधी जी की यह विचारधारा मार्क्स सिद्धान्तों के विपरीत हैं, जिनके अनुसार मार्क्स धनिकवर्ग का सुधार अशक्य बतलाता है। गाँधी जी की विचारधारा फासिस्टवाद के भी विपरीत है, क्योंकि फासिस्टवाद पाशविक शक्ति का उपासक है, और संसार

की बहुत सी जातियों तथा राष्ट्रों को मानवता से गिरा हुआ मानता है। किन्तु गाँधी जी के सार्वजनिक व्यवहार के प्रधान नियमों में से एक यह भी है कि किसी से लोहा लेने के पहले सन्धि और समझौते की सब कोशिशें कर लेनी चाहिएँ। गाँधी जी ने अँग्रेजों के साथ भी ऐसा ही किया है, वही लोग जो आज गाँधी जी को बुरा भला कह रहे हैं, भूतकाल में गाँधी जी की इस कार्य-शैली की सराहना कर चुके हैं। इस बार भी गाँधी जी वायसराय से मिलना चाहते थे, और उनसे बातचीत करके किसी मित्रतापूर्ण समझौते पर पहुँचना चाहते थे, वाइसराय ने ही ऐसा करने से मनाकर दिया। गाँधी जी जापान के साथ भी इसी मार्ग का अनुसरण करना चाहते थे उन्हें आशा थी कि वह जापानियों को हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने से रोकने में समर्थ हो सकेंगे, और उन्हें चीन से भी हट जाने के लिये प्रभावित कर सकेंगे। और यदि जापानी उनकी विनम्र अपील की उपेक्षा करेंगे, तो उन्हें हमारी ओर से जबरदस्त मुक़ाबिले की खुली चुनोती होगी। हो सकता है वह आशा के विरुद्ध आशा कर रहे थे, लेकिन उनका अँग्रेजों के साथ सन्धि की बात चीत का विचार भी ठीक वैसा ही सिद्ध हुआ। जापान के सामने झुकने का तो कोई प्रश्न ही नहीं था, यह अभियोग तो चर्चिल की अध्यक्षता में टोरीदल की ओर से वास्तविकता को छिपाने के लिये, जानबूझकर किया हुआ एक दुस्साहस मात्र था।

उक्त प्रस्ताव पर टिप्पणी करते हुए नेहरू जी ने कहा है:—"गाँधी जी सदैव सघर्ष में आने से पहले अपने शत्रु को सूचना दे दिया करते हैं। इस पद्धति का अनुसरण करते हुए उन्होंने जापान को हिन्दुस्तान से दूर रहने का ही नहीं वरन् चीन से भी दूर हट जाने के लिये नोटिस दे दिया होता, यह कहना तो बिल्कुल व्यर्थ है कि हम में से किसी ने भी

जापान को आक्रमण के लिए रास्ता देने की कोई कल्पना की थी।"

गाँधी जी ने तो और भी जोरदार शब्दों में कहा है "मैंने कभी भूलकर भी असावधानी से ऐसी सम्मति नहीं प्रकट की, कि जापान और जर्मनी विजयी होंगे। इतना ही नहीं मैंने बहुधा यह मत प्रकट किया है कि वे लड़ाई में कदापि जीत नहीं सकते, अगर ब्रिटेन केवल इतना करे कि सदैव के लिये अपनी साम्रज्यवादी नीति को तिलाञ्जलि देदें।"

जब गांधी जी मनुष्य जाति के पञ्चमांश को ब्रिटिश साम्राज्यवाद की समाप्ति के लिये प्रत्यक्ष कार्यवाही करने के हेतु आवाहन कर रहे थे, इसी समय ७ अगस्त सन् १९४२ को संसार के इस सर्वश्रेष्ठ राजनीतिज्ञ और सन्त ने यह घोषित करने की भी दूरदर्शिता प्रकट की थी कि हमें अपने हृदयों से अँग्रेजों के विरुद्ध घृणा दूर कर देनी चाहिये, कम से कम मेरे हृदय में तो उनके प्रति कोई घृणा नहीं है। वस्तव में मैं आज उनका पहले की अपेक्षा अधिक बड़ा मित्र हूँ। मेरी इस उक्ति पर कुछ लोग हँसेंगे, पर उससे क्या, जो मैं कह रहा हूँ वह बिल्कुल सही है"

अगर कभी किसी आदमी ने अपने को भावी शान्ति सम्मेलन के अध्यक्ष पद के लिए सर्वोत्तम सिद्ध किया है, तो वह गाँधी है। कोई दूसरा व्यक्ति इस सम्मान और उत्तरदायित्व के लिए उपयुक्त सिद्ध नहीं हो सकता चाहे वह किसी राष्ट्र का राष्ट्रपति प्रधानमन्त्री या नेता ही क्यों न हो। यदि हम चाहते हैं कि भावी शान्ति-सम्मेलन वार्साई की दूसरी सन्धि न सिद्ध हो, और संसार में न्याय समता स्वतन्त्रता और प्रेम की व्यवस्था का अभ्युदय हो, तथा घृणा और गुटबन्दी का नाश हो, तो हमें ऐसे सम्मेलन में गाँधी के नेत्रत्व की अनिवार्य आवश्यकता है।

यह व्यक्ति अपनी ईसा जैसी स्पष्टोक्ति के लिये चौबीस घण्टे

के अन्दर ही बन्दी बना लिया गया, जिसके कारण हिन्सा की एक लहर उत्पन्न हो गई, पर वह गाँधी जी या काँग्रेस दल की योजना नहीं थी। अंग्रेजों ने जान बूझ कर राष्ट्र को नेतृत्वसे वञ्चित कर दिया। हिंसाको रोकने का ढंग अंग्रेज खूब जानते हैं, लेकिन अहिन्सा उन्हें कि कर्तव्यविमूढ़ बना देती है। भारतवर्ष के गत चौथाई सदी के इतिहास को देखिए, भारतवर्ष में अंग्रेजों के राज्य को हिंसा से वास्तविक खतरा नहीं हिंसा को तो अंग्रेज स्वयं ही बार-बार प्रोत्साहित करते रहे हैं। लेकिन उन्हें वास्तविक खतरा तो अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन से है, जिसके परिणाम दिन-दिन स्पष्ट होते जा रहे हैं।

काँग्रेसदल के द्रष्टिकोण को अच्छी तरह समझने के लिए, हमें यह जान लेना चाहिए कि अंग्रेज सरकार ने शान्तिपूर्ण अवज्ञा-आन्दोलन आरम्भ होने से पूर्व ही काँग्रेसदल और उसके नेताओं पर प्रहार कर दिया। वस्तुतः गाँधी जी बड़ी आशा से वायसराय के साथ बातचीत की योजना बना रहे थे, तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रधान, जनरल च्यागं काई शेक और ईवान मैस्की की मध्यस्थता में मामले का निवटारा करना चाहते थे। काँग्रेस अध्यक्ष मौलाना आज़ाद को एक स्पष्ट प्रस्ताव द्वारा अधिकार दिया गया था कि वे इन तीनों से बीच में पड़ने की अपील करें। लेकिन अंग्रेज बाहरी शक्तियों की मध्यस्थता पसन्द नहीं करते थे, मौलाना आज़ाद अभी ये पत्र लिख भी नहीं पाए थे, और गाँधी जी वायसराय से मिलने की योजना बना ही रहे थे कि सरकार ने उन्हें कारागार में बन्द कर दिया।

ब्रिटिश प्रचार-यन्त्र ने चतुराई के साथ वास्तविकताओं का ऐसा तोड़ मरोड़ कर चित्रण किया कि अमेरिकन लोग इस महत्व पूर्ण सचाई को भूल गए कि भारतीय नेता नए सिरे से समझौते की बातचीत चलाने तथा अनुकूल किन्तु

निष्पक्ष मध्यस्थता के लिये इच्छुक ही नहीं अपितु उत्सुकता के साथ आग्रह कर रहे थे।

अमेरिका के अंग्रेज-समर्थक बहुत से पेशेवर वक्ता भारतीय घटना चक्र का भ्रमपूर्ण चित्रण करने में व्यस्त रहे हैं, और उसी देश में जहाँ से भारतवर्ष और दुनियाँ में प्रजातन्त्र और स्वतंत्रता की आकाँक्षाओं के प्रति पथ-प्रदर्शन प्राप्त किया है, भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन के विरुद्ध एक अनुपम प्रचार जारी रहा है। कुछ लोग तो इस सीमा तक आगे बढ़ गये कि उन्होंने २३ जौलाई सन् १९४२ वाले संयुक्त राज्य अमेरिका के मंत्री मिस्टर कार्डेल हल के भाषण का भी यह अर्थ लगाया कि उसमें भारतवर्ष को डाँट फटकार दी गई है। मिस्टर हल के भाषण का अपेक्षित अंश इस प्रकार है "भूतकाल में हमारा यह ध्येय रहा है और भविष्य में भी रहेगा कि हम अपने प्रभाव का पूर्णतया उपयोग करते हुए उन समस्त देशों की जनता के लिये स्वतंत्रता का समर्थन करें जो अपने कामों से अपने को स्वतंत्रता के योग्य प्रमाणित करते हैं, तथा उसके लिए उद्यत हैं।" उनके भाषण की सारी ध्वनि स्वतंत्रता के लिए लड़ने की भावना से ओत-प्रोत है। भारतवर्ष भी अपनी स्वतंत्रता के लिए लड़ रहा है, इसलिए मंत्री हल की अनुमति का अनुकरण करने के कारण उसे दोषी नहीं ठहरा सकते।

गाँधी जी ने वायसराय को कई पत्र लिखकर स्पष्ट प्रमाणों द्वारा सिद्ध कर दिखलाया कि सरकार ने भयङ्कर परिस्थिति पैदा करने में जो जल्दी की वह भारी भूल थी। यदि सरकार चाहती तो शान्तिपूर्ण समझौता हो सकता था, परन्तु सरकार ने कोई अवसर न दिया। इस सम्बन्ध के पत्र परिशिष्ट में उद्धृत किए गए हैं।

दूसरा अध्याय

गिरफ्तारी से पूर्व अन्य कांग्रेस नेताओं का रुख

भारतीय स्वतन्त्रता पर कांग्रेस और कांग्रेस-नेताओं का रुख बिलकुल स्पष्ट था, निश्चित और स्पष्ट रूप से उनके सार्वजनिक भाषण, प्रकाशित वक्तव्यों से दिखलाया जा सकता है कि उनका रुख स्पष्ट है। प्रमुख नेताओं के तत्सम्बन्धी उद्धरण नीचे दिए जाते हैं।

पं० जवाहरलाल नेहरू

देहली ६ अप्रैल सन् ४२ को एक प्रेस वक्तव्य देते हुए पं० जी ने कहा — मैं प्रेसीडेण्ट रूजवेल्ट की प्रशंसा करता हूँ, कि वे एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी को योग्यता के साथ निबाह रहे हैं। मेरा विचार है कि भविष्य में वह एक प्रमुख स्थान लेगें, परन्तु हमने प्रश्नों के सुलझाने में उनका हस्तक्षेप नहीं चाहा। हम अनुभव करते है कि अपना भार हमें स्वयं उठाना चाहिये। हमने पिछले बाईस वर्षों से महान साम्राज्य का मुकाबिला किया है, हमने बावजूद तमाम सख्तियों और दण्डों के सामने भी सर नहीं झुकाया और आगे भी नहीं झुकाएँगे। हम यह अनुभव करते हैं कि भारत की स्वतन्त्रता प्राप्त करना हमारा ही कार्य है, अगर हममें शक्ति है तो हम उसे प्राप्त करेंगें नही तो हार जायगें। हमको अपने ऊपर विश्वास करना चाहियें दूसरों पर नहीं। यद्यपि अच्छे कार्यों में दूसरों के सहयोग का भी स्वागत करना चाहिये। हमें अंग्रेज राजनीतिज्ञों का बहुत अनुभव है,

लड़ाई ने चाहे कुछ भी कर दिया हो, परन्तु प्रमुख अंग्रेज नेताओं के स्वर में कोई अन्तर नहीं आया, हमारा पुराना परिचित लार्ड हेलीफैक्स आज हमें उपदेश देता हुआ भारतीयों को तृण समान कहता है। शायद ऐसा ही हो। यदि ऐसा ही है तो फिर हमारे पास नए-नए प्रस्ताव लेकर आने का झगझट क्यों उठाते हो। अँग्रेजों के कारनामों से वह खुश है। कुछ भी हो किन्तु हम अपनी पूर्ण स्वतन्त्रता का ध्येय नहीं बदल सकते। हम भारत माता की आजादी के लिये पूर्ण प्रयत्न करते हुए मौत से भी नहीं डरेंगे।

१० अप्रैल सन् ४२ को पं० जवाहर ने अपने एक वक्तव्य में कहा था कि भारतवर्ष के इस सङ्कट काल में, सुदूर के प्रवासी भारतवासियों ने मातृ-भूमि वापस आने की इच्छा सम्बन्धी तार भेजे हैं। जिससे यहाँ आकर वे आन्दोलन में भाग ले सकें। मैं उनके विचारों से सहमत हूँ, और मुझे विश्वास है कि अधिकारी उन्हें वापस लौटने की सुविधा देंगे। सर स्टेफर्ड क्रिप्स की बातचीत का परिणाम चाहे जो हो परन्तु देश-सेवा प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य है। इस कर्त्तव्य के अतिरिक्त हमारे लिये कोई रक्षा का उपाय नहीं है भारतवर्ष के विनाश-काल में कौन जीवित रह सकता है। मातृभूमि पुकार रही है, और प्रत्येक स्त्री पुरुष का कर्त्तव्य है कि उस पुकार को सुने। और हम अपनी जिम्मेदारियों पर मृत्यु पर्य्यन्त अटल रहें।

२० अप्रैल सन् ४२ को डिब्रूगढ़ (आसाम) में भारतीय शरणार्थियों के सम्मुख भाषण देते हुये पं० नेहरू ने कहाः—कि बर्म्मा की गम्भीर परिस्थिति युद्ध को आसाम के समीप ले आई है, चाहे कुछ भी हो हम हमले से झुक नहीं सकते। जैसे हम अंग्रजों के सामने नहीं झुके, उसी प्रकार जर्मनी और जापानियों के सामने भी नहीं झुकेंगे, बर्म्मा के भारतीयों को यह स्वाभाविक

है कि वह ऐसी गम्भीर परिस्थिति में देश को वापिस आ जाएँ, लेकिन यदि ऐसी परिस्थिति यहाँ हो गई तो हम कहाँ जायेंगे। उन्होंने लोगों को उपदेश दिया कि वे जहाँ पर हैं वहीं पर हमले का मुकाबिला करें। बर्मा के भारतीयों ने शिकायत की है कि विश्वासघातियों ने उनके साथ अत्याचार किए लेकिन उनको इन अत्याचारों का सामूहिक रूप से डटकर मुकाबिला करना चाहिये था न कि उन अत्याचारों के सामने एक-एक को झुक जाना। अन्त में पं० जी ने एक ऐसे आने वाले समय की आशङ्का करते हुए कहा, जबकि हम हर भारतीय को मातृभूमि की रक्षार्थ सर्वस्व बलिदान करना पड़ेगा। और जब हम भारतीय विजय के लिए युद्ध में पीछे नहीं रहेंगे।

३० जून सन् ४२ को अलीगढ़ [यू० पी०] में पं० नेहरू ने कहा कि हम जापान और जर्मनी के गुलाम नहीं बनना चाहते, हम उस हर एक जाति से युद्ध करेंगे, जो हमें गुलाम बनाना चाहेगी, हम अपने देश की रक्षा के लिए हर प्रकार से तय्यार हैं।

आपने १८ जोलाय को मेरठ में कहा:—हमारे सामने एक ही मार्ग खुला हुआ, है कि ब्रिटिश साम्राज्य वाद से खुला मोर्चा लें, इसी के द्वारा हमारी युद्ध-शक्ति बढ़ेगी इस समय युद्ध के तूफान में गोता लगा कर डूब जाना अकमरण्य रहने से अच्छा है।"

पं० जी ने इस बात पर जोर दिया कि कांग्रेस सदा, स्वतंत्रता और जनतन्त्रवाद की हामी रही है, इसीलिए उसने स्पेन चीन आदि पीड़ित देशों के प्रति सहानुभूति प्रदर्शन किया है। इंगलैण्ड ने जापान और जरमनी के सामने दबकर भूल की। वह यह आशा करते थे कि जर्मनी रूस के खिलाफ और जापान अमेरिका के खिलाफ महाशक्ति बने रहेंगे। इंगलैण्ड ने अपने इस

कार्य्य का दण्ड भोगा । पं० नेहरू ने बड़े विश्वास के साथ कहा कि यदि भारत को स्वतन्त्र कर दिया गया तो उससे इतनी शक्ति पैदा होगी, जो समस्त युद्ध को मित्रराष्ट्रों के पक्ष में परिवर्तित कर देगी। एमरी और क्रिप्स को तो मेरा यही उत्तर हैं, कि युद्ध और अनन्त युद्ध । पं० जी ने इस बात पर बारबार जोर दिया है कि हम ब्रिटेन का विरोध करते हुए जापान और जर्मनी की सहायता नहीं करना चाहते, हम एक स्वामी के स्थान पर दूसरे को नहीं देख सकते, हम किसी भी विदेशी सत्ता को नहीं सह सकते और स्वतन्त्रता लेने के लिए कटिबद्ध हैं ।

पांच अगस्त सन् ४२ को बम्बई में वक्तव्य देते हुए कहा—संसार के घटना-चक्र को देखते हुए अंग्रेजों के वचन को हम स्वीकार नहीं कर सकते । अबतो काँग्रेस जीवित रहने के लिए स्वतन्त्रता चाहती है, अब अधिक देर हमारा देश गुलाम नही रह सकता, और स्वतन्त्रता के लिए युद्ध करेगा। काँग्रेस के लिए ही नहीं, सारेदेश के लिए यह जीवन मरण का प्रश्न है । इसका परिणाम मित्रराष्ट्रों पर ही नहीं अपितु धुरीराष्ट्रों पर भी होगा। उन्होंने घोषित किया कि काँग्रेस का यह कदम भारत के इतिहास को बदल देगा, वास्तव में वह महान उत्तर दायित्व है, और काँग्रेस के इस आवाहन को जनता हृदय से पूर्ण करेगी । काँग्रेस जो करने जा रही है, वह शीघ्रता से नहीं, बल्कि गम्भीर विचार-विनिमय के बाद निश्चित किया गया है । भारत की माँग केवल भारत की स्वतन्त्रता तक ही सीमित नही, बल्कि उसका सम्बन्ध समस्त मानव जाति की स्वतंत्रता से है । हमें चिन्ता है कि हमारे अगले कदम से चीन और रूस को भी हानि पहुँचने की सम्भावना है । काँग्रेस इस बात के लिये इच्छुक है कि ऐसा कोई भी काम

न किया जाय जिससे धुरीराष्ट्रों को शक्ति मिले।

क्योंकि काँग्रेस पूर्णरूप से इस बात को मानती है कि धुरी राष्ट्रों की विजय से संसार की दासता अमर हो जायगी। परन्तु इसके साथ-साथ हम भारत की दासता को भी सहन नहीं कर सकते, अब काँग्रेस जान बूझकर इस तूफानी समुद्र में गोता लगाने को तय्यार खड़ी है। काँग्रेस इससे तनिक भी भयभीत नही है कि सरकार क्या करेगी। मौजूदा राज्य का जारी रहना देश और संसार के लिए महान दुर्भाग्य है। मलाया बर्म्मा आदि स्थानों की घटनाओं से अंग्रेजों की पूर्ण अयोग्यता सिद्ध हो गई है। अँग्रेजी साम्राज्य कागजी महल रह गया है, संसार में ऐसा कोई भी साम्राज्य नही हुआ जिसने इतने अल्प-काल में इतनी करारी हार खाई हो। परन्तु दुर्भाग्य है, कि तीन साल की निरन्तर हार से इन्होंने कोई सबक नहीं लिया।

सरदार पटेल

सरदार वल्लभभाई पटेल ने २८ जोलाय को अहमदाबाद में भाषण देते हुए कहा :— कि काँग्रेस कार्यसमिति ने बड़े दुख के साथ सार्वजनिक युद्ध का निश्चय किया हैं। गत तीन वर्ष की घटनाओं ने आगे परामर्श करने की गुञ्जाइश नहीं छोड़ी, भारतीय स्वतन्त्रता के प्रश्न पर अब कोई समझौता नहीं हो सकता। पिछले बीस सालों से जो भी कार्यक्रम चलाए गए हैं, उन्हें अब बिना रोक टोक सार्वजनिक रूप से चलाला जायगा, महात्मा जी का यह अन्तिम युद्ध, संक्षिप्त और तीव्रगति का होगा, जो एक सप्ताह में समाप्त हो जायगा।

कोई भी भारतीय इस युद्ध से अलग न रह सकेगा । विद्यार्थी अपना पढ़ना छोड़ इसमें कूद पड़ेंगे । भारत में फूट पैदा करने के बड़े-बड़े प्रयत्न किए जा रहे हैं, लेकिन काँग्रेस तो देश का शासन मुसलमानों को भी देने के लिए तय्यार है, यदि उन्हें मिल सके । बम्बई की अखिल भारतीय काँग्रेस की बैठक के बाद, महात्मा गाँधी की युद्ध-घोषणा पर यह देखा जायगा कि कितने भारतीय काँग्रेस के साथ हैं । अमेरिका और ब्रिटेन आज परेशान है और भारत को युद्ध के अन्त तक स्वतन्त्रता की प्रतीक्षा करने को कहते है । परन्तु यदि युद्ध के बाद ही स्वतन्त्रता देनी है तो आज ही स्वतन्त्र क्यों नहीं किया जाता । गत महा-युद्ध के बाद भारत को रौलट एक्ट और जलियाना वाला बाग़ दिया गया । काँग्रेस अपने पिछले अनुभवों से बुद्धिमान हो गई है, और विदेशी हमले से (जिसकी तुरन्त सम्भावना है) बचने के लिये स्वतन्त्रता की आवश्यकता है । भारत की स्वतन्त्रता का अर्थ होगा संसार से सब युद्धों की समाप्ति । जिस दमन का भय दिखाया जाता है, काँग्रेस उससे नहीं दब सकेगी । भारत महात्मा जी के अनुपमेय नेतृत्व में युद्ध-श्रान्त संसार को एक नया मार्ग दिखाना चाहता है । महात्मा जी गुजरात से बड़ी आशाएँ करते हैं ।

श्री राजेन्द्रप्रसाद

श्री राजेन्द्रप्रसाद जी ने २६ मई सन् १९४२ को मुङ्गेर में भाषण देते हुए कहा:— जापानी हमें आज विश्वास दिलाते हैं कि वह भारत को

स्वतन्त्र कराने आ रहे हैं, उनसे हमारा यही कहना है कि हे ईश्वर हमें ऐसे मित्रों से बचा, कोरिया और मंचूरिया की जो गति हुई वह जापानियों की सद्भावना की प्रतीक है।

आपने ३१ जोलाय को पटना में बोलते हुए कहा:—कि अँग्रेजों को भारत छोड़ो, माँग को स्वीकार न करने की दशा में काँग्रेस जो आन्दोलन आरम्भ करेगी, उसके सामने सब फीके पड़ जाँएगे। इस बार का आन्दोलन केवल जेल जाने तक सीमित न रहेगा। इस बार गोली और बमों की वर्षा, जायदाद की जब्ती आदि की सम्भावना है। इन सब भयों को देखते हुए ही कांग्रेस जनों को इस आन्दोलन में भाग लेना चाहिये। नई योजना में हर प्रकार का अहिंसात्मक सत्याग्रह शामिल रहेगा, यह आन्दोलन भारत की स्वतन्त्रता लिये अन्तिम युद्ध होगा। अहिन्सा के द्वारा हम संसार की सारी सशस्त्र शक्तियों का मुकाबिला कर सकते हैं। अन्त में डा० राजेन्द्रप्रसाद ने घोषणा की, कि काँग्रेस का किसी से भी झगड़ा नहीं है, यह अपने त्याग और बलिदान से अपने विरोधियों को बदलना चाहती है। काँग्रेस को विश्वास है कि विरोधी भी आन्दोलन में उसका साथ देगें।

पं० गोविन्दवल्लभ पन्त—

पं० गोविन्दवल्लभ पन्त ने ९ जोलाय को कानपुर में भाषण देते हुए कहा कि हम अपने देश की उस समय तक सफलतापूर्वक रक्षा नहीं कर सकते, जब तक देश स्वतन्त्र नहीं हो जाता।

२६ जौलाई को बरेली में पन्तजी ने कहा—

"आज महात्मा जी की जो योजना अनिश्चित है, वह बम्बई की अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी की बैठक के बाद निश्चित हो जायगी। मैं अपने देश वासियों से अनुरोध करता हूँ, कि वह आवाहन को तय्यार रहें।"

आचार्य कृपलानी—

३० जौलाय को बनारस में हिन्दू-विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों को सम्बोधन करते हुए कृपलानी जी ने कहा:—गाँधी जी एक सार्वजनिक आन्दोलन चलाने के लिये विवश हो गए, जिसका परिणाम यह तो अवश्य ही होगा कि लोग अधिक कष्ट-सहन के लिये तय्यार हो जायँगे, और मित्रराष्ट्रों को भी सहायता मिलेगी। समय के पुजारी अवसरवादी और खुशामदी आक्रमणकारियों का बर्म्मा और मलाया के समान स्वागत करेंगे। लेकिन भले और सच्चे आदमी हिम्मत के साथ वीरतापूर्ण युद्ध लड़ेंगे। यदि अमरीका ने भारतीयों के विरुद्ध अँग्रेजों को सहायता दी तो वह अपने इतिहास में एक काला अध्याय लिखेगा। जो कि जार्जवाशिङ्गटन और अब्राहिम लिङ्कन की कीर्तिको धूमिल करेगा।"

उपरोक्त भाषणों से स्पष्ट है कि काँग्रेस के प्रमुख नेताओं के

मस्तिष्क में भारत की रक्षा का प्रश्न प्रधान था। वह भारत को बर्मा मलाया सिङ्गापुर और रंगून की दुर्दशा से बचाना चाहते थे। इसी बात को ध्यान में रखते हुए भारत की शीघ्र स्वतन्त्रता की माँग थी। जापान और दूसरे आक्रमणकारियों के विरुद्ध तथा चीन और रूस की सहानुभूति मे निश्चित और स्पष्ट घोषणा की गई थी। जापान के पक्ष में कोई सूक्ष्म प्रवृत्ति भी नहीं थी। आने वाले काँग्रेस आन्दोलन के लिए कोई योजना या कार्यक्रम नहीं था। वास्तव में हरेकने यह बात कही थी कि अन्दोलन का रूप अहिन्सात्मक होगा, जिसमें भारतीयों को अपने त्याग और बलिदान का प्रमाण देना होगा। प्रत्येक काँग्रेस-नेता गाँधी जी के नेतृत्व और पथप्रदर्शन पर ही पूर्णतः अवलम्बित था।

तीसरा अध्याय

साधारण काँग्रेस-जनों का व्यवहार

गाँधी ने जो प्रकट किया था, काँग्रेस-नेता केवल उतना ही जानते थे, और काँग्रेस-नेताओं के आधार पर ही जनसाधारण ने अपना कर्त्तव्य निश्चय किया था। चोटी के किसी नेता ने भी साधारण काँग्रेसजनों के लिए कोई भी विस्तृत और निश्चित कार्य्यक्रम नहीं बतलाया था इस प्रकार बड़ी आतुरता से प्रत्येक काँग्रेसजन ऊपर के आदेश की प्रतीक्षा कर रहा था। ऊपर का आदेश वह था जो गाँधी जी ऐसे अवसर पर ईश्वरीय शक्ति से प्राप्त करते हैं, जिसके द्वारा वे लोगों को कार्य्य करने के लिए आवाहन करते हैं।

सारे देश की आँखें बम्बई-अधिवेशन पर लगी हुई थीं, जो काँग्रेस-जन बम्बई गये थे, वे सब कार्य्यक्रम जानने के प्रयत्न में लगे हुये थे, काँग्रेस-जन और प्रान्तीय नेता गाँधी जी से कार्य्यक्रम जानने की चेष्टा कर रहे थे। गाँधी जी ९ अगस्त को अचानक गिरफ्तार हो गये, जिससे कार्य्यक्रम बताने का समय ही न मिला।

गाँधी जी के साथ-साथ काँग्रेस के अन्य नेता भी गिरफ्तार कर लिए गए, शेष नेताओं ने साथ मिलकर कुछ कार्य्यक्रम बनाने का प्रयत्न किया, परन्तु जिन परिस्थितियों में रह थे, वह स्पष्ट हैं।

गाँधी जी के शब्दों में "सरकार ने घबराकर कार्य्य किया। और जान पड़ता है, नेताओं की एक दम गिरफ्तारी से लोग इतने उत्तेजित हो गए, कि वह आत्म-संयम खो बैठे। सार्वजनिक मनोवृत्ति से काँग्रेस-जन भी प्रभावित हो उठे। वे जनता का नेतृत्व न करके अनुगामी बन गए। वे सार्वजनिक उत्तेजना को न तो रोक पाए, और न उसके प्रवाह की दिशा को परिवर्तित कर सके। बढ़ते-बढ़ते यह उत्तेजना पागलपन की सीमा तक जा पहुँची। इस प्रकार जनता द्वारा जितने भी कार्य्य हुए उनका कोई संगठन नहीं था साधारण काँग्रेस जन ऐसी स्थिति का सामना करने के लिए तैयार नहीं थे, इसीलिए वह जनता का नियन्त्रण और नेतृत्व करने में असफल रहे। कुछ काँग्रेस-जन तो प्रवाह में बह गए कुछ किंकर्तव्य विमूढ़ हो गए, और कुछ बिना करे धरे ही गिरफ्तार कर लिए गए। कुछ ऐसे काँग्रेस-जन जो अपने को छिपा रहे थे, और काम करने से बच रहे थे, उनको सताया गया, मुकदमे चलाए गए, और अनेक यंत्रणाएँ दी गईं।

कुछ बचे हुये काँग्रेस-जनों को तारकाटना पटरी उखाड़ना तथा अन्य तोड़ फोड़ के कार्य्यों के अपराध में फँसा लिया गया था ऐसी परिस्थिति में भी कुछ काँग्रेसजनों ने शान्तिपूर्ण जलूस और प्रदर्शन संगठित करने के प्रयत्न किए लेकिन गोली की बौछार, दण्ड-प्रहार के कारण उनके प्रयत्न भी असफल ही रहे। इस कारण काँग्रेस-जन सार्वजनिक उत्तेजना को किसी दूसरी

ओर परिवर्तित न कर सकें।

यह स्पष्ट है कि साधारण कॉंग्रेस-जनों ने भी इस कार्य्य को संगठित नही किया, यही कारण हुआ कि सरकार द्वारा तेजी से आन्दोलन का दमन किया जा सका। बहुत से कॉंग्रेस-जनों को यदि दोषी ठहराया जा सकता है, तो वह दोष "अकर्मण्यता है। इसी कारण जब कर्म्म का समय आया तो वास्तव में उन्होंने कोई भी हिंसक या अहिंसक कर्म्म नही किया।

चतुर्थ अध्याय

--जन साधारण का व्यवहार--

९ अगस्त सन् ४२ और उसके बाद सरकारी क्रियाओं की जनता पर क्या प्रतिक्रिया हुई, यह पहले एक अध्याय में लिखा जा चुका है, भारत की साधारण जनता आधुनिक युद्ध कला से अनभिज्ञ और शस्त्रहीन जन-समूह मात्र है, शस्त्र-विधान (*Arms Act*) के अनुसार बन्दूक आदि तो क्या लम्बे फलके का चाकू तक रखना अवैधानिक हैं। इस प्रकार जन-साधारण की आज ऐसी दशा हो गई है कि वह हिंसक जन्तु और मुट्ठी भर डकैतों तक से अपनी रक्षा नहीं कर सकते। इस पर भी उन दिनों तो हाथ में लाठी डण्डा तक ले चलना मना था। अंग्रेजी राज्य के आरम्भ काल से ही भारत को नियमित रूप से नपुंसक बनाया गया है। अब वस्तव में वह भेड़ समान बना दिया गया हैं। उनके साथ कैसा भी व्यवहार किया जाय, उनके खून में गर्मी नही आती। इसीलिए नेताओं की गिरफ्तारी के बाद सरकार ने जनता पर अनेक भयङ्कर अत्याचार किए, फिर भी जनता पर उसकी प्रतिक्रिया इतनी कम हुई, कि सरकार स्थित रह सकी।

भारतीय जनता भावनाओं से भड़क उठी, वह हिंसक हो नही सकती थी

और अहिंसक उसे रहने नही दिया गया। भारतीय जनता ने वास्तव में क्या किया यह साधारण भाषा में वर्णन करना कठिन है। फिर भी भारतीयों का व्यवहार उनके जीवित रहने का सच्चा प्रतीक था। जो कुछ भी उन्होंने किया वह इतना कम था कि उनको इस चीज का दोषी ठहराया जा सकता कि उन्होंने अपने ऊपर अत्याचार करने वालों को कोई हानि नहीं पहुँचाई, और प्रतिक्रिया बहुत नम्र रहीं। वे दया और केवल दया के पात्र हैं। परन्तु खेद हैं कि उनके साथ ईसाई भारत सरकार ने ऐसा बर्ताव किया जैसा गाँधी जी कहते हैं:—

"सरकार ने जनता को पागल बना दिया, उन्होंने नेताओं की गिरफ्तारी करके पाशविक हिंसा का प्रारम्भ किया। भयङ्कर परिमाण पर किया हुआ हिंसा का संगठन, कम नहीं किया जा सकता और वह ईसा मसीह के बुराई के बदले भलाई करने के सिद्धान्त को मटियामेट करता है। मैं भारत सरकार के दमन-साधनों को किसी अन्य रूप में नहीं देखता।

पञ्चम अध्याय

सन् ४२ के कृत्यों की जिम्मेदार, भारतीय सरकार

सरकारी पक्ष को भारत-मन्त्री श्री एमरी ने ३१ मार्च सन् ४३ को इङ्लैण्ड की लोक-सभा में भाषण देते हुए निम्न प्रकार रक्खा :—"भारत में इस समय जो दशा है, उसके लिये ग्यारह सूबों में से केवल छै सूबों का ही इस समय प्रश्न है। क्योंकि पाँच सूबों मे तो भारतीय मन्त्रिमण्डल हैं, अक्तूबर सन् ३९ में काँग्रेस-आदेशानुसार इन छै सूबों में स्वशासन स्थापित कर दिया गया था, जिसके गवर्नर अपने हाथ में बागडोर लेने के लिये बाध्य हो गए थे। वर्तमान स्थिति को समझने के लिए काँग्रेस-नीति का समझना आवश्यक है। जो काँग्रेस आरम्भ में प्रजातन्त्रवादी थी, वह अब क्रमशः एक-तन्त्रवादी बनती जा रही है, जिसका लक्ष्य भारत से अँग्रेजी राज्य को निकाल कर अपना शासन स्थापित करना है। काँग्रेस की रूपरेखा, और विधि विधान एक मात्र गाँधी जी के हाथ में है। यहाँ पर मैं इस रहस्यपूर्ण व्यक्ति के गुणों का महत्व नहीं बताना चाहता। मेरे लिए इतना ही कहना पर्य्याप्त है कि गान्धी जी का सम्मोहक सन्यासी रूप, हिन्दुओं को बरबस

अपनी ओर खींच कर ऐसी संस्था का सर्वश्रेष्ठ तानाशाह और स्थायी सर्वोपरि प्रधान बना देता है, जिसके पास असंख्य धन संगठित शक्ति है। १९३७ में कांग्रेस ने प्रान्तीय चुनावों में १५८५ स्थानों में से ७११ स्थान लिए थे, जो प्रकट करता है कि यह ब्रिटिश भारत में बहुमत से था। परन्तु इसके द्वारा भी पाँच प्रान्तों में पूर्णतः बहुमत और तीन में अधिकार मिल गया। इस आशातीत सफलता के कारण नव-प्राप्त शक्ति की भावना से काँग्रेस नेता मदहोश हो गये। अपने बढ़ते हुए विरोध की चिन्ता न करते हुए उन्होंने यह धारणा बनाली कि केवल वही भारत के एकमात्र प्रतिनिधि हैं। उन्हें ऐसा प्रतीत होने लगा कि थोड़े से प्रयत्न से ही ब्रिटिश राज्य का मूलोच्छेद करके काँग्रेस-राज्य स्थापित करने में सफल हो सकेंगे। लड़ाई के कारण उनके शीघ्र सत्ता प्राप्ति के सुनहरे स्वप्न भङ्ग हो गए। आगामी भय से बचने की तय्यारी का पहला चिन्ह यह था कि काँग्रेस द्वारा एसेम्बली का बहिष्कार किया गया, काँग्रेस-सदस्यों के स्तीफे देने पर शेष सदस्यों ने राजा और देश के प्रति कर्तव्य पालन का प्रस्ताव पास किया। भारत ने लड़ाई में जो मुख्य भाग लिया, वह संसार जानता है। भारत-रक्षा कानून निर्विरोध पास हो गया पंजाब बङ्गाल सिन्ध के मन्त्रिमण्डल तथा व्यवस्थापिका सभाओं ने केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा के रवैये का समर्थन किया। और इसी प्रकार महासभा तथा नरमदल ने किया, भारत के राजाओं ने व्यक्तिगत रूप से, और राजसभा ने एकमत से राजभक्ति का पूर्ण परिचय दिया, यह सब बातें काँग्रेस के इस प्रचार को कि भारत जबरदस्ती लड़ाई में खींचा गया, झूँठा प्रमाणित करती हैं। पिछले कई सप्ताहों में लार्डलिनलिथगो ने काँग्रेस का समर्थन प्राप्त करने का महान प्रयत्न किया, परन्तु काँग्रेस

ने हाई कमाण्ड ने तो प्रान्तों के स्वशासन को अन्त करने का ही फैसला किया। इसके बाद अगस्त में वायसराय ने युद्ध समाप्त होने पर स्वतन्त्रता देने का वचन देते हुए, अपनी कार्य्यकारिणी में भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया। परन्तु श्री गाधी ने अपने साथियों समेत इस प्रस्ताव पर घृणा के साथ विवाद करने से मना कर के, युद्धविरोधी व्यक्तिगत सत्यागृह आरम्भ कर दिया, जो पूर्ण रूप मे असफल रहा।

गत मार्च मास में सर स्टैफर्ड क्रिप्स साहब भारत गए, और उनके प्रस्ताव इतने स्पष्ट और उदार थे जिन्हें अस्वीकार करना विचार में नहीं आ सकता था। काँग्रेस-कार्य्यकारिणी के प्रभावशाली सदस्य भी इसके पूर्णतः पक्ष में थे, फिर भी यह प्रस्ताव क्यों अस्वीकृत किए गए, ? इसके दो कारण हैं, एक तो वही जिसके कारण सन ४० की अगस्त घोषणा को रद्द किया गया था, हमने स्वतन्त्रता के लिए सब राजनैनिक दलों की एकता को आवश्यक बताया था। हमारी दोनों घोषणाओं में इस बात का विरोध किया गया था कि केवल काँग्रेस को ही एकाधिकार प्राप्त करने का अधिकार है। काँग्रेस की यह माँग थी कि राष्ट्रीय सरकार तुरन्त स्थापित करदी जाय, सर क्रिप्स इसे स्वीकार करने में विवश थे, क्योंकि इस स्वीकृति से अल्प मतों के साथ समझौता असम्भव हो जाता।

दूसरा शक्तिशाली कारण यह था कि उस अवसर पर पूर्व में हमारी जबरदस्त हार हो रही थी। प्रधान-मंत्री ने रङ्गून-पतन के तीन दिन बाद ही ११ मार्च को क्रिप्स मिशन को घोषणा की थी। जब यह वातचीत चल रही थी तब जापान तेजी से आगे बढ़ रहा था उस समय लङ्का ही नही भारत के बन्दरगाहों पर भी बम-वर्षा हो रही थी। ऐसा मालूम हो रहा था कि भारत के पूर्वीय

नगरों पर और भी बड़ी-बड़ी आफतें आने वाली हैं। हमने तो इन घटनाओं से क्रिप्स का कोई सम्बन्ध नहीं माना था लेकिन श्री गाँधी जी ने यह सम्बन्ध माना है। उनकी दृष्टि में तो क्रिप्स-मिशन हार तथा भावी आशङ्काओं का सङ्केत था। गाँधी जी ने तो इन प्रस्तावों को "दीवालिया बैङ्क का भावी चैक कहा था।" प्रस्तावों को रद्द करने के एक सप्ताह बाद, तथा बर्मा में निरन्तर हार होने के कारण, उन्होंने ऐसे आन्दोलन की योजना बनाई, जिसके द्वारा ब्रिटिश सरकार भारत छोड़ने को बाध्य होकर ऐसे शासन को अधिकार दे दे जो स्थित हो सके या न हो सके, या अराजकता में ही परिणत हो जाय। इसमें उनका कहाँ तक विश्वास था यह कहना तो कठिन है। गाँधी जी का गत अप्रैल का प्रस्ताव आपने देखा होगा, जिसका प्रारम्भिक वाक्य यह है कि "ब्रिटेन भारत की रक्षा करने में असमर्थ है, स्वतंत्र भारत का पहला काम जापान से समझौते की बात चीत करना होगा।"

कार्यकारिणी के सभी सदस्य इस प्रस्ताव से सहमत हो गये, प० जवाहरलाल जी के प्रभाव से उसमें परिवर्तन किया गया, क्योंकि वे चीन और रूस के प्रति हमदर्दी प्रकट करके भारत के लिए ब्रिटेन और अमेरिका का जनमत प्राप्त करना चाहते थे। केवल उक्त प्रस्ताव से राजा जी असहमत थे। राजा जी की गाँधी जी से की हुई अपील आप सब लोगों ने पढ़ी होगी।

साधारण भारत छोड़ो की माँग के समय उन्होंने यह विशिष्ट धमकी भी दी कि माँग पूरी न होने पर सार्वजनिक सविनय अवज्ञा या गाँधी जी के शब्दों में खुला विद्रोह किया जायगा। आठ अगस्त सन् ४२ को अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी ने इस विद्रोह पर स्वीकृति की मुहर लगादी

लेकिन भारत में हमारे साथ इससे तकड़ा अंश था, जिसके कि हम तथा समस्त मित्र-राष्ट्र आभारी हैं। वह थे वायसराय की कार्य्यकारिणी के वह सदस्य जिन्होंने शीघ्रता और दृढ़ता के साथ इन तमाम विद्रोह और बदमाशी के संगठनकर्ताओं की गिरफ्तारी का फैसला किया। इससे भी अधिक हम पुलिस फौज तथा सरकारी नौकरों के आभारी हैं जिन्होंने मजबूती से हमारा साथ दिया हम उस असंख्य हिन्दू और मुसलमानों जनता के भी आभारी हैं कि जो आन्दोलन से अलग, हमारे साथ रही

मैं उनसे कुछ नहीं कह सकता जो यह समझते हैं कि गाँधी जी का आन्दोलन अहिंसात्मक होने वाला था, यह जो भयङ्कर तोड़ फोड़ हुई, वह नेताओं की गिरफ्तारी के बाद केवल जनता का स्वाभाविक रोष प्रदर्शन था इस अन्धविश्वास की भी कोई हद है, महात्मा गाँधी और उनके साथियों के विरुद्ध मेरा आरोप स्पष्ट है, इसके अन्दर सब वास्तविक घटनाएँ हैं। बस अब हम इतना ही कह सकते हैं कि काँग्रेस के विद्रोह का भारत सरकार तथा प्रान्तीय सरकारों ने दमन कर दिया, इसके बाद भी गाँधी जी ने अपने एक विचित्र हथियार का प्रयोग किया, वह था गाँधी जी का शक्ति भर उपवास। परन्तु इससे भी वह भारत सरकार को अपनी रिहाई के लिए मजबूर न कर सके। दुख की बात है कि तीन वाइसराय की कार्य्यकारिणी के सदस्यों ने भी त्यागपत्र दिए। समस्त घटना-चक्र को देखते हुए काँग्रेस के साथ समझौता या नम्र व्यवहार करना भारी भूल होगी।"

इनके बाद श्री एमरी ने हिन्दू मुस्लिम अनैक्य के गीत गाए। अन्त में उन्होंने यह आश्वासन दिलाया कि वह हृदय से भारत का भला चाहते हैं, पर

यह भारतीय ही कर सकते हैं।

कॉंग्रेस-पत्रों को श्रीमती सरोजनी नायडू ने २५ जनवरी सन् ४४ को जोरदार शब्दों में एक वक्तव्य दिया। जिसका उद्धरण पत्रों में इस प्रकार दिया गया। "सब से पहले उन्होंने पथभ्रष्ट और निराश कॉंग्रेस-जनों पर इशारा करते हुए कहा, कि उन्हें विचार की स्वतन्त्रता तो है परन्तु जिन लोगों ने खुले आम कॉंग्रेस के निर्णयों को माना था, उनके लिए यह दुःख की बात है कि वह उनके विरोधी बन जायें, जबकि कॉंग्रेस-नेता जेलों में हो, तब कॉंग्रेस-निर्णय का विरोध करके कॉंग्रेस-संगठन को कमजोर बनावें। उन्होंने इसका बड़े जोरों से विरोध किया कि हिंसा कॉंग्रेस-योजना का परिणाम थी, या महात्मा गाँधी जापान के पक्ष में थे। यदि कोई ऐसा कहता है, तो वह सरासर झूँठ है। आगे आपने कहा "मैं अधिकार पूर्वक कह सकती हूँ, क्योंकि आज मैं ही एक कार्य्यकारिणी सदस्य जेल से बाहर हूँ। हम जापान के पक्ष में तो क्या हरएक विदेशी हमले के विरोधी रहे हैं, जिसमें हम सब एक मत हैं। श्रीमती नायडू ने कहा कि मई सन् ४२ में मीराबेन ने उड़ीसा से शरणार्थियों की दशा की रिपोर्ट गाँधी जी के पास भेजी और उसमें पूर्वी आक्रमण के समय अपना कर्त्तव्य पूछा, गाँधी जी ने उत्तर में स्पष्ट लिखा कि आक्रमणकारियों के साथ कोई सम्बन्ध, समझौता या व्यापार नहीं होना चाहिये। मुझे सबसे पहले इस पत्र का पता तब लगा जब गाँधी जी के उपवासकाल में उन्हें जापान-पक्ष का बताया जा रहा था। मीराबेन ने भी उस समय वायसराय को एक पत्र लिखकर उनके झूँठे प्रचार का खण्डन किया, तथा साथ में अपनी प्रश्नावली और गाँधी जी के पत्र को भेजा। मैं एक पुस्तक लिखकर यह बताऊँगी कि हम सब कॉंग्रेस कार्य्यकारिणी के सदस्य जापान के

विरोधी रहे हैं, हम प्रत्येक आक्रमणकारी के विरोधी रहेंगे यही काँग्रेस कार्य्यकारिणी की स्पष्ट स्थिति है।

गत १० मास पर प्रकाश डालते हुये सरोजनी ने कहा कि यदि सरकार चाहे तो राजनीतिक गत्यावरोध दूर हो सकता है। काँग्रेस मत के समर्थन में वही लोग ढुलमुल हो रहे हैं, जो पहले से सुदृढ़ नहीं थे। नायडू ने यह भी बताया कि गाँधी जी कोई आन्दोलन आरम्भ नहीं कर रहे थे, वह बातचीत करने का समय चाहते थे।

'करो या मरो "वाक्य के सम्बन्ध में जब सरोजनी से पूछा गया तो उन्होंने बतलाया कि इसका अर्थ केवल अहिंसा के वृत्त में रहकर ही कार्य्य करना था। महात्मा जी ने वायसराय को पत्र लिखकर भी यह स्पष्ट कर दिया था। जो लोग काँग्रेस-जनों की रिहाई चाहते हैं, उनके विषय में कहा "इससे अधिक लज्जा की कोई बात नहीं हो सकती, कि हमारी तरफ़ से दया की भीख माँगी जाय। मैं ऐसे मित्रों से याचना करती हूँ कि जो बाहर रहते हमारा विरोध करते हैं, वे हमारी रिहाई की माँग न करें। देश की तो यह माँग होनी चाहिए कि काँग्रेस-नेताओं पर मुकदमें चलाए जायें, और वे अपने विरुद्ध आरोपों का सामना करें। मुकदमे पर विचार करते हुए उन्होंने कहा कि अगर तुम्हारे पास निश्पक्ष अंग्रेज जज हों और उनके अन्दर पक्षपात न हो, तो मैं उनके सामने अपना मुकदमा कराने को तैयार हूँ। मैं यह भी चाहती हूँ कि यहाँ के आदमियों के सामने सरकार पर भी मुकदमा चलाया जाय।

उपरोक्त वक्तव्य में सरोजनी देवी ने काग्रेस-पक्ष का भली प्रकार स्पष्टीकरण करते हुए एमरी के सरकारी पत्र का पूर्ण उत्तर दे दिया है,

सरकारी पक्ष झूँठा और बनावटी होने के कारण किसी के भी गले नहीं उतरता, उसके विपरीत सरोजनी देवी ने काँग्रेस-पक्ष, गान्धी जी का मत हिन्सा, अहिन्सा, और करो या मरो" वाक्य का सत्य प्रतिपादन कर दिया है। जापान तथा अन्य सम्भावित आक्रमणकारियों के सम्बन्ध में भी अच्छी तरह समझा दिया है। सरोजनीदेवी की इस खुली चुनौती का उत्तर इस प्रकार दिया कि सरोजनीदेवी पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया कि वे किसी भी सार्वजनिक सभा और जलूस में भाग न ले सकेंगी। साथ ही पत्रों पर भी उनके भाषणों या वक्तव्यों को छापने पर प्रतिबन्ध लगा दिया।

काँग्रेस पक्ष के प्रश्नों का उत्तर देने में अपने को असमर्थ पाकर, सरकार ने कड़े प्रतिबन्ध लगाकर दिल की भड़ास निकाली, जो दूसरे रूप में सरकार की नैतिक हार का प्रमाण हैं।

वायसराय महोदय, लार्डलिनलिथगो ने १३ जनवरी सन् ४३ में गाँधी जी को पत्र लिखते हुए काँग्रेस को इन हत्याओं, पुलिस अधिकारियों को जीवित जलाने, रेल गाड़ियों को बरबाद करने तथा विद्यार्थियों को गुमराह करने का जिम्मेदार ठहराया। गाँधी जी ने इस पत्र के उत्तर में इसके लिये सरकार को उत्तरदायी बताते हुए कहा कि गिरफ्तारियां करके सरकार ने लोगों को हिन्सा पर उतारू किया। आगे चलकर मिस्टर जेम्स मेक्सटन ने निम्न बात इङ्गलैण्ड की साधारण सभा (*House of Commons*) में घोषित की कि मैं इस बात में विश्वास नहीं करता कि किसी भी भारतीय राजनीतिज्ञ, किसी भी काँग्रेस समर्थक या किसी भी साधारण भारतीय ने किसी पुलिस के आदमी को जलाया हो (शनिवार

.१२ सितम्बर सन् १९४३ के मॉंचेस्टर गार्जियन से)

वास्तविकता तो यह है कि सत्य छिपाए छिपता नहीं, इतिहास अपना निर्णय देता है, जिसके सामने संसार को झुकना पड़ता है। निर्णय केवलएक ही होगा कि अगस्त सन् ४२ में और उसके बाद निर्दोष भारतीयों को जिन्होंने स्वतन्त्रता के अधिकार की माँग की, निर्दयता के साथ कुचल दिया गया। यह निर्दयता उस सीमा तक पहुँची जैसी मानव इतिहास में आज तक सुनी नहीं गई।

सातवां भाग

"गम्भीर चेतावनी"

प्रथम अध्याय

"का वर्षा जब कृषी सुखाने,,
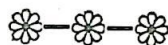
बर्मा के प्रसिद्ध क्रान्तकारी एम० थीन ने सत्य ही कहा है, "जनता का दमन शान्ति स्थापित कर सकता है, लेकिन वह शान्ति श्मसान की शान्ति होगी। जनता के पास बड़े प्रबल और भयङ्कर उपाय हैं, जिसके द्वारा वह अपने असन्तोष को प्रकट कर सकती है।

फिर जेम्स मेक्सटन ने इङ्गलैण्ड की साधारण सभा में कहा—"प्रधान--मन्त्री और भारत-मन्त्री दोनों भारत को स्वायत्त शासन देने की तनिक भी इच्छा नहीं रखते। उस समय तक प्रतीक्षा मत करो जब तक आपको शक्ति के द्वारा विवश कर दिया जाय—जो आप सरलता से सौजन्यपूर्वक दे सकते हैं। भारत का प्रश्न, ऐसा प्रश्न है जिसपर अंग्रेजों को ही नहीं अमेरिका को भी ध्यान देना चाहिए। इस विषय पर डाक्टर श्री धरणी ने एक मैत्रीपूर्ण चेतावनी निम्न प्रकार दी है। हाल की घटनाओं से सिद्ध हो गया है कि आधुनिक युद्ध का संचालक न झुकने वाला सिपाही और लड़ाई के आदर्श में विश्वास रखने वाला नागरिक ही है। एशिया के युद्ध को एशिया की जनता ही जीत सकती है, पर जनता के पास कोई वस्तु होनी चाहिए जिसके लिए वह युद्ध करें। पश्चिम का यही निश्चय होगा कि ब्रिटेन, फ्रांस और हालैण्ड तीन पूर्वीय औपनिवेशिक शक्तियाँ स्वयं ही एशियावासियों की पूर्ण सहायता

प्राप्त कर सकती है, परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि इन्हें पुराने साम्राज्यवाद ने दूरदर्शिता से वञ्चित कर दिया हैं। पूर्व के लोगों का पश्चिमी देशों पर विश्वास नहीं रहा, इसलिए अमेरिका को ही नेतृत्व करना पड़ेगा, क्योंकि एशिया अब भी अमेरिक पर विश्वास करता है। अमेरिका, एक ओर अंग्रेज और फ्राँस की संयुक्त नीति से अपना सहयोग हटा सकता है। जिसमें जिससे कि अमेरिकन और अंग्रेजो के मिश्रित साम्राज्ज्यवाद का भय रुक कर पूर्व और पश्चिम का सम्बन्ध--विच्छेद टल सकता है। दूसरी ओर अमेरिका अपने इन सहयोगियों को साम्राज्यवादी स्वार्थों को छोड़ने के लिए वाध्य कर सकता है, इससे एशिया में करोड़ो मित्र और सहायक बन सकते हैं। क्या अमेरिका से यह आशा करना अत्यधिक है ? अमरीका का उत्तरदायित्व उसकी शक्ति के अनुकूल ही होना चाहिए। मेरा यह विश्वास है कि अमेरिका को अपने साथियों से एशिया को स्वतन्त्रत कराने में साथियों की थोड़ी मान-हानि भी हो जाय तो चिन्ता नहीं करनी चाहिए। और ऐशिया में युद्ध जीतने के लिए इससे कम में काम न चलेगा शत्रु के अत्याचार और अपनी मानवता बताने से हम आत्म-सन्तुष्टि भले ही करलें लेकिन नए मित्र नहीं बना सकते। पाश्चात्य देशों में हिटलर के ऊपर विश्वास नहीं, लेकिन साथ ही अंग्रेजों पर भी विश्वास नहीं रहा हैं। स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध लगाने की मनोवृति को समाप्त कर देना चाहिए, यह प्रवृत्ति नाजी और जापानियों की देन है न कि पाश्चात्यों की। इस विश्व-युद्ध और विश्वसंगठन में सब को स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए, या किसी को भी नहीं। परेशान करने वाली ऐशिया की मनोवृति का परिचय जापान ने दिया है, इसने अनजाने ही संसार को यह भी सिखाया है कि यदि सारे संसार में विज्ञान समान होगा तो विवेक बुद्धि भी समान ही होनी चाहिए।

पूर्वीय और पश्चिमी युद्ध-परम्परा भावी विवेक-बुद्धि को एक शताब्दी के लिये रोक सकती है, इस प्रकार की भयङ्कर आपत्ति को हर प्रकार से रोकना चाहिये। पूर्व के साथ न्याय करने का मूल्य बहुत अधिक नहीं है एशिया का रोग अभी असाध्य नहीं हुआ है। एशिया में योरोप जैसी भयङ्कर राष्ट्रीयता नहीं है। एशिया की मनोवृत्ति रक्षात्मक है। पाश्चात्य देशों से स्वतंत्रता पाते ही वह दूर हो जायगी। अमेरिका और रूस आज भी पूर्व और पश्चिम के सम्पर्क स्थापन में सहायक हो सकते हैं।

इसमें विश्वास करना कठिन नहीं कि जापानी और नाजियों को मिटा दिया जायगा फिर भी घमण्डी-पाश्चात्य के चिन्ह, अंग्रेज तो बच ही जायेंगे। अंग्रेज-वंशजों को ही महान त्याग करना पड़ेगा, उनको अपनी उस मनोवैज्ञानिक भावना की—कि वे संसार में सर्वोत्तम हैं—कीमत देनी ही पड़ेगी, आज संसार उन्हें ऐसा नहीं समझता। अब उनके लिए दो ही मार्ग हैं, या तो सैनिक अत्याचारी बन जाँय, या अपनी मनोवृत्ति को बदल कर मानव-साम्य की भावना से सुखी हो जाँय। इन परिस्थितियों में उन्हें अपने विचार और व्यवहार तथा अपनी शासन प्रणाली को नहीं, अपितु पाश्चात्य मस्तिष्क और जीवन को भी बदलना पड़ेगा।

पूर्व पश्चिम को यह चेतावनी देता है, जिससे बाद में यह न कहा जाय, कि पश्चिम ने अपने व्यवहार में इसलिए अन्तर नहीं किया कि उसे समय पर चुनौती नहीं दी गई। यह भी स्मरण रहे जैसा कि बुद्ध भगवान ने कहा है कि "केवल मित्र ही चेतावनी देता है, शत्रु तो वार करता है"

श्री वैण्डल विल्की ने डाक्टर श्री धरणी का बड़े स्पष्ट शब्दों में समर्थन किया है, उनका कथन है कि "अमरीका को युद्ध समाप्त होने के बाद तीन

मार्गों में एक को चुन लेना चाहिये, सङ्कुचित राष्ट्रवाद, जिसका अन्तिम परिणाम अपनी स्वतन्त्रता खो देना है, अन्तर्राष्ट्रीय साम्राज्यवाद, जिसका अर्थ, अन्य राष्ट्रों की स्वतन्त्रता का बलिदान हैं, या ऐसे संसार का निर्माण करना जिससे राष्ट्रों को समान सुविधा प्राप्त हो। अमरीका को इसमें अन्तिम मार्ग ही चुनना चाहिये और इस चुनाव को क्रियात्मक रूप देने के लिये युद्ध ही नहीं वरना शान्ति पर भी विजय प्रात करने के लिए इस कार्य्य को अभी प्रारम्भ करना चाहिए। शान्ति के लिए तीन बातों की आवश्यकता है। पहले विश्वव्यापी शक्ति की व्यवस्था दूसरे संसार के समस्त मनुष्यों के लिए आर्थिक और राजनीतिक स्वतन्त्रता और तीसरे अमरीका को संसार की स्वतन्त्रता तथा शान्ति बनाए रखने के लिए रचनात्मक प्रयत्न करना चाहिए। जब मैं यह कहता हूं कि विश्वव्यापी शान्ति-योजना बननी चाहिए तो मैं शब्दशः विश्वभावना से ही कहता हूँ। देशों की भाँति ही महाद्वीप और महासागर भी संसार के भाग हैं, यह अनिवार्य है कि संसार के किसी भाग में तब तक शान्ति नहीं हो सकती, जब तक संसार में पूर्ण शान्ति नहीं होगी। एटलाण्टिक चार्टर जैसी नेताओं की घोषणा से नहीं, संसार के सब मनुष्यों के मानने से ही सम्भव है। इसलिए आज जब लड़ाई चालू है तभी अमेरिका, इङ्गलैण्ड, रूस, चीन और अन्य मित्रराष्ट्रों के लोगों को अपने लक्ष्य पर एकमत हो जाना चाहिए, केवल सुन्दर और आदर्श सिद्धान्तों का प्रकाशन मात्र, विल्सन के चौदह प्रस्तावों की भाँति खिल्ली उड़ाने का विषय बन जायगा। चारों प्रकार की स्वतन्त्रता केवल अस्थाई घोषणा मात्र से स्थापित नहीं हो सकती।

जब मैं कहता हूँ कि संसार में शान्ति के लिये स्वतन्त्रता आवश्यक है तब मैं उस प्रभा को बताता हूँ जिसको कोई मनुष्य नहीं रोक सकता, सारे

संसार के स्त्री पुरुष उस ओर चल रहे हैं। अब मनुष्यों को पुराने भय नहीं डराते। अब वह पाश्चात्य-लाभों के लिये पूर्वी दास बनने को तैयार नही। अब यह जानने के लिये है कि मनुष्य का हित सारे संसार के आधीन हैं वह इस बात पर दृढ़प्रतिज्ञ हैं कि अब उनके यहाँ साम्राज्यवाद को कोई स्थान नहीं है। अब वह पहाड़ों के उस ऊपर के मकान से आकर्षित नही होते जो सामन्तशाही का द्योतक है।

हमारे पाश्चात्य संसार और हमारी कथित महत्ता का परीक्षण हो रहा है, हमारी घमण्ड भरी बड़ी-बड़ी बातों से एशिया के लोग ठण्डे पड़ गये हैं। रूस चीन और मध्यपूर्व के रहने वाले स्त्री और पुरुष अपनी महान शक्ति से परिचित हो गये हैं, अब वह यह जानने लगे हैं कि संसार के बहुत से भविष्य उनके हाथ में हैं और उनका यह भी विचार है कि इन फैसलों से हर राष्ट्र के मनुष्य विदेशी शासन से मुक्त होकर आर्थिक सामाजिक और आध्यात्मिक उन्नति कर सकेंगे।

आर्थिक स्वतन्त्रता, राजनैतिक स्वतन्त्रता के समान ही आवश्यक है, यही नहीं कि मनुष्य दूसरों की उत्पन्न की हुई चीजें पा सके, बल्कि उसे यह अवसर भी मिलना चाहिए कि वह अपनी उत्पन्न की हुई वस्तुएं सारे संसार में पहुँचा सके। उस समय तक संसार में शान्ति स्थापित नहीं हो सकती, और न ही वास्तविक उन्नति और आर्थिक स्थिरता हो सकती है, जबतक कि बिना किसी रोक टोक के वस्तुएँ संसार के प्रत्येक भाग में जा सकें। परन्तु यदि हमने युद्ध के बाद बिना किसी समझौते के व्यापारिक बन्धनों को हटा दिया, तो एक महान आपत्ति आ जायगी, पर इसका भी ध्यान रखना चाहिए, कि व्यापारिक स्वतन्त्रता भी हमारे युद्ध का एक लक्ष्य है, मैं यह

जानता हूँ कि बहुत से मनुष्य विशेषतः अमेरिका में ऐसे है, जिनका जीवन-मापदण्ड अन्य भागों से बहुत ऊँचा है, जो कि भावी आशङ्काओं से घबरा गए हैं, जिनका विश्वास है कि ऐसा कोई भी प्रवाह हमारे जीवन-मापदण्ड को नीचा कर देगा, वास्तव में यह सब सोचना सत्य के विपरीत है।

अमेरिका की आर्थिक उन्नति के बहुत से कारण हैं; जैसे राष्ट्रीय-उत्पादन स्रोतों की अधिकता, राजनीतिक संस्थाओं की स्वतन्त्रता और जनता का चरित्र। मेरी सम्मति में इसका वास्तविक कारण यह है कि यहाँ पर वस्तुओं और विचारों के विनिमय में कोई बाधा नहीं है।

हमारा जीवन-मापदण्ड तब तक स्थिर नहीं रह सकता जब तक कि संसार में वस्तु-विनिमय स्वतन्त्र नहीं हो जाता। यह अकाट्य सत्य है कि यदि संसार के किसी भी भाग में किसी भी मनुष्य के जीवन-मापदण्ड को ऊँचा उठाया गया तो संसार के प्रत्येक मनुष्य का जीवन-मापदण्ड कुछ न कुछ अंश में ऊँचा उठ जायगा। अन्त में मैं पूर्व देशवासियों की ओर से यह निमन्त्रण देना चाहता हूँ, कि वह यह आशा करते हैं कि अमेरिका संसार की माँगों को पूरा कराने में पूर्ण भाग लेगा। वे चाहते हैं कि हम उनके साथ मिलकर स्वतन्त्र राष्ट्रों का एक ऐसा नया समाज बनाएँ, जिसमें पाश्चात्य देशों का आर्थिक अन्याय और राजनीतिक दुर्व्यवहार न हो। वह इस महान कार्य्य में हमें इसलिए भागीदार बनाना चाहते हैं, कि हम संसार के अन्यायों के विरुद्ध निस्सङ्कोच आवाज उठाएँ।

हमारे पूर्व के मित्र चाहते हैं कि हम अपनी शक्ति का उपयोग

स्वतन्त्रता और न्याय को अग्रसर करने में लगावें। जो लोग आज युद्ध में सम्मिलित नहीं हैं, वह भी बड़ी आतुरता से प्रतीक्षा कर रहे हैं कि हम इतिहास के इस महा चुनौती देने वाले अवसर को स्वीकार करें, जिसके अन्दर हम एक ऐसा समाज बना सकें जिसमें संसार के स्त्री और पुरुष स्वतन्त्रता से रहकर उन्नति कर सकें,

वास्तव में यह अवसर विश्व-इतिहास में महान चुनौती देनेवाला है, इस समय हमें इसमें उपेक्षा या देर नहीं करनी चाहिये। अन्यथा यह अवसर सदा के लिए हाथ से निकल कर यह स्मृति छोड़ जायगा कि हमने बहुत देर की।
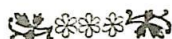
दूसरा अध्याय

"अत्याचारी की अवधि और बारी,

संसार में ऐसी कोई चीज नहीं, जो समय से सीमित न हो, हरएक वस्तु के लिये समय की सीमा है। वास्तव में मनुष्य समय की सीमा को सदैव नहीं जानता। यह सदा स्मरण रहे कि संसार में हर वस्तु नाशवान है, ऐसी कोई चीज नहीं जो स्थायी और अविनाशी हो, जिसका आदि है, उसका अन्त निश्चय है। किन्तु समय जहाँ सीमित हैं, वहाँ वस्तुओं का एक नियम तथा समय का एक नाप भी है, इसलिए हर एक वस्तु एक प्राकृतिक नियमानुसार बारी-बारी आती है।

अत्याचारी का आरम्भ होता है, इसलिए उसका अन्त निश्चय है, उसकी एक निश्चित अवधि होती है, जिसकी समाप्ति पर उसकी बारी आती है। परन्तु अत्याचारी के समय की अवधि का नाप भिन्न ही प्रकार से होता है। हिन्दू-धार्मिक ग्रन्थ भागवत में एक कथा है कि जब मथुरा का अत्याचारी राजा कंस, इतना अत्याचारी और क्रूर बन गया कि इस लोक के मनुष्य ही नहीं. बल्कि दूसरे लोकके देवता भी काँप गए, तब प्रसिद्ध देवदूत

नारद मुनि राजा कंस के पास पहुँचे, और उसको यह उपदेश दिया कि जब तेरी बहिन देवकी की आठवीं सन्तान तेरा वध करने वाली कही जाती है, तो तुझे यह निश्चय करना चाहिए कि आठवीं-का क्या अर्थ है, यदि एक चक्र खींचकर गणना की जाय तो कोई भी सख्या भी आठवीं हो सकती है, इसलिए तुझे प्रत्येक सन्तान का बध कर देना चाहिए। नारद मुनि का यह उपदेश प्रत्यक्ष में अत्याचार को बढ़ाता था। लेकिन वास्तव में यह अत्याचारी के अन्त का साधन था। अत्याचारी के लिए समय की अवधि नहीं. वरन उसने अत्याचारों की सीमा होती है, इस लिए जितने ही घोर अत्याचार होंगे. उतने ही शीघ्र अत्याचारी समाप्त होगा, इस लिए पीड़ितोंको घोर अत्याचारों से भयभीत नहीं होना चाहिए क्योंकि यह अत्याचारी के शीघ्र अन्त का द्योतक है। दीपक बुझने से पहले एक बार विशेष प्रकाश देता है, इसी प्रकार प्रत्येक अत्याचारी अपने अन्त के समय अपनी विशेष शक्ति प्रदर्शित करता है।

सचमुच भारत में अंग्रेजों के अत्याचार, और दानवता, उसके शीघ्र अन्त होने के निश्चित प्रमाण हैं, यह आशा का सन्देश है निराशा का नहीं। इसलिये पीड़ितों को ब्रिटिश राज्य के अत्याचारों की असीम वृद्धि आशा और छुटकारे का सन्देश है, परन्तु अंग्रेज शासकों को यह गम्भीर चेतावनी है। क्या वह इतिहास से सबक लेगें ? क्या वह देश और विदेश में अत्याचारी के भयङ्कर अन्त को देखकर कांपैगें ? यह स्मरण रहे कि पीड़ित अत्याचार के विरुद्ध भयङ्कर लड़ाकू भी होते हैं, और इस प्रकार संसार में महान कार्य्य को पूरा करते हैं, जबकि अत्याचारी ऐसे कार्य्य को नष्ट करने पर तुले होते हैं! यह अटल सत्य है कि विजय, न्याय और सत्य की होती है। संसार में सदैव सत्य और न्याय का नाद ही गूँजता है। इसीलिए पीड़ितों और अन्याय के

विरुद्ध लड़ने वालों का यह विश्वास होता है कि अन्याय के विरुद्ध न्याय की विजय होगी। इतिहास के अनेकों उदाहरण इसको सिद्ध करते हैं।

संसार के महान शक्तिशाली साम्राज्य, और सम्राट अत्याचारी बनते ही पल भर में पीस दिए जाते हैं। अत्याचार, पाशविकता और अन्याय का एक ही परिणाम होता है कि अत्याचारी को पूर्ण दण्ड भोगना पड़ता है, इतिहास के पृष्ठ बार-बार पुकार कर कह रहे हैं कि अत्याचारी की अवधि और बारी होती है, अत्याचारी की अन्तिम चेतावनी और पीड़ितों को आशा का सन्देश है।

आठवां भाग

'विश्व के सुख और शान्ति का सुप्रभात'
भारतीय–स्वतन्त्रता।

प्रथम अध्याय

विश्व को सन्देश

श्री विण्डल विल्की ने कहा "यह अनिवार्य है कि संसार के किसी भी भाग में शान्ति स्थापित करने के लिए, संसार के प्रत्येक भाग में शान्ति को सुरक्षित कर देना चाहिए।"

जब श्री विल्की प्रेजीडेण्ट रुजवेल्ट के कहने से संसार-भ्रमण को निकले तो २६ अगस्त सन् ४२ को न्यूयार्क से चलकर ४९ दिन में ३१ हजार मील का दौरा किया, उस समय उन्हें भारत में क्यों नहीं आने दिया गया ? क्योंकि उस समय ब्रिटिश सरकार भारत में इस प्रकार अत्याचार ढा रही थी, कि उनका पता लगना संसार के सामने उन्हें लज्जित कर देता। जब नागरिकों को बमों से मारा जाना संसार भर में अमानुषिक समझा जाता है, तब भारत में यह नियमित रूप से किया जा रहा था, कोड़ों का मारा जाना भी पाशविकता का चिन्ह समझा जाता है, परन्तु भारत में यह कानूनन प्रचलित था, कहने को यह शान्ति-स्थापन का प्रयत्न था, किन्तु वास्तव में स्वतन्त्रता, भिलाषी भारतीयों को पीड़ित करने का यन्त्र था।

इस विषय में नई देहली, २५ सितम्बर सन् ४२ का समाचार है कि श्री हृदयनाथ कुँजरू ने कोन्सिल आफ़ स्टेट में आज पूछा:—क्या कहीं जनता के ऊपर आसमान से बम बरसाए गए हैं? डिप्टी कमाण्डर इनचीफ साहब ने कहा:—निम्नलिखित पाँच स्थानों पर, १-पटना जिले में गरक के समीप रेलवे पर, जो स्थान बिहार शरीफ़ से बारह मील दूर है, २-भागलपुर जिले में साहबगंज रेलवे लाइन पर जो कुरसला से पन्द्रह मील उत्तर में है, ३-नदिया जिले के रानाघाट में जो कृष्णनगर से १६ मील दक्षिण में है, ४-मुङ्गेर जिले में हाजीपुर कटिहार लाइन की पसिहार रेलवे चौकी पर, और ५-तलचर रियासत में तलचर शहर से दो तीन मील दक्षिण में। इस सम्बन्ध में इङ्गलैण्ड की लोक-सभा में जो विवाद हुआ उसका निम्न उद्धरण है:—

सोरेन्सन—क्या माननीय सदस्य को यह पता नहीं है कि यदि योरोप के किसी भी भाग में जनता पर बम बरसाए गए होते, तो इस सभा में उसकी निन्दा की जाती, और यदि इस देश में ऐसा हुआ होता तो सर्वत्र क्रोधाग्नि उमड़ पड़ती, इसको दृष्टि में रखते हुए क्या वह देखेंगे कि इस रूप में—(बाधा डाली गई)

मिस्टर-सिलोन—पाइण्ट आफ़ आर्डर नियम की ओर ध्यान दिलाते हुए बोले:—सभापति जी! जब भारतीय नागरिकों पर बम गिराने की बात कही जा रही है, क्या तब आप करतल ध्वनि को नहीं रोक सकते? सभापति—जैसे माननीय सदस्य कह रहे हैं, मैंने ऐसी कोई बात नहीं सुनी।

इस घटना की आलोचना करते हुए न्यूयार्क के न्यूरिपब्लिक पत्र ने १२ अक्तूबर वाले अङ्क में लिखाः—कुछ दिन हुए इङ्गलैण्ड की लोकसभा में भारत पर विवाद होते समय ऐसा वक्तव्य दिया गया था कि भारत में हिन्दू जनता पर हवाई जहाज से बम बरसाये गए, इसके ऊपर अनुदार दल ने करतल ध्वनि की, जब सभापति से इसे रोकने की प्रार्थना की गई तो उसने अपनी असमर्थता प्रकट की। पत्र आगे लिखता है कि कुछ सदस्यों के कृत्यों पर सारी सभा को उत्तरदायी नहीं ठहराना चाहिए, हम जानते हैं कि इङ्गलैण्ड में भी हजारों आदमी भारत के लिए न्याय चाहते हैं, जो यह कहकर युद्ध चला रहे हैं कि वे संसार में प्रजातन्त्र स्थापित करेंगे। जब निर्दोष भारतीयों पर हवाई जहाज से बम बरसा कर मृत्यु का ताण्डव नृत्य किया गया, तो शासकवर्ग ने हथेलियाँ पीटीं।

श्री हेरल्ड लास्की ने ब्रिटिश सरकार की दमन-नीति पर १५ नवम्बर सन् ४२ को निम्न लेख लिखाः—

दमन-नीति का सबसे बड़ा दोष उन पुलों को जला देना है जिनके द्वारा समझौते पर पहुँचा जा सकता है। यहाँ यह कहना अनुचित न होगा कि अंग्रेज-सरकार और काँग्रेस के बीच जो दुःखद-संघर्ष चल रहा है, बहुत अंश तक उसका कारण परस्पर सद्भावना की कमी तथा सन्देह है, न कि उद्देश्य में विरोध। इस सन्देह का ही एक परिणाम यह है कि ब्रिटिश-सरकार ने कभी भी काँग्रेस के सम्बन्ध में अपनी दूरदर्शिता और कल्पना-शक्ति से काम नहीं लिया है और इसीलिए वास्तविक समस्या के सुलझाने और मुख्य प्रश्न जो सामने है उसका उत्तर देने में वह अब तक असफल रही है। अपने दबदबे को

तनिक भी ठेस लगना उसे बहुत खलता है और अपने निर्णीत उद्देश्यों तथा अभिप्रायों के विषय में तनिक से सन्देह से वह इतनी क्रुद्ध हो गयी है तथा काँग्रेस की नीति से संसार की स्वतन्त्रता को, जिसके लिये अंग्रेज जाति इतनी कुर्बानियाँ कर रही है, गहरा आघात लगता देख, उसमें इतना मलाल पैदा हो गया है कि वह गाँधी जी तथा काँग्रेस द्वारा प्रस्तुत समस्या को, कानून और व्यवस्था की दृष्टि से बड़ी खतरनाक और भयावह समझती है। इस नाजुक घड़ी में वह स्थिति को सुलझाने वाली कार्य्य-प्रणाली अपनाने में चूक गई। प्रश्न तो भारत की आजादी का है किस प्रकार ऐसे स्वतन्त्र-भारत का निर्णय हो सकता है जो युद्धोद्योग में अधिक से अधिक सहयोग दे सके।

"वायसराय और मिस्टर अमेरी ने इस प्रश्न की ओर कभी भी ध्यान नहीं दिया, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं, क्योंकि उनके गत-दो वर्षों के भाषणों और बात-चीत से शायद ही कभी व्यक्त हुआ हो कि वे भारत की स्वतन्त्रता के विषय में वैसे ही उत्सुक हों या सोचते हों जैसे भारतवासी। लेकिन आश्चर्य तो इस बात का है कि मि० ऐटली और मि० बोर्नन तथा सर स्टैफोर्ड क्रिप्स भी इस प्रश्न को भूल गये, जबकि आशा की जाती थी कि वे समस्या को सही दृष्टि से देखेंगे तथा साम्राज्यवादी-भावनाओं के कुहरे के दूषित-प्रभाव से उनकी दृष्टि अछूती बची रहेगी। यदि वे न भूलते यो स्पष्ट था कि जिन वाद-विवादों के कारण काँग्रेस को अपना अगस्त प्रस्ताव पास करना पड़ा तथा नेताओं की दुखद गिरफ्तारी हुई, उसके अन्तर्गत ऐसी महत्व-पूर्ण बातें थी जिनके आधार पर समझौते का रास्ता निकाला जा सकता था और अब भी उसके लिये गुन्जाइश है

भारत आजादी चाहता है। हमने उसे वचन भी दे दिया है। कि युद्ध में मित्रराष्ट्रों की विजय के बाद उसे स्वराज्य देकर यदि वह चाहे तो ब्रिटिश-कॉमन-वेल्थ से अलग हो जाने का भी अधिकार दे दिया जायगा। इस पर भारत के हर दल के लोग, (केवल काँग्रेस ही नहीं,) यह जवाब देते हैं कि केवल भविष्य के लिये वचन देना ही पर्याप्त नहीं है। तत्काल ही केन्द्र में प्रभाव-शाली स्वराज्य-सरकार की स्थापना की जाय ताकि भारत का दिल और दिमाग युद्धोद्योग के लिये पूरी तरह से जुट जाय। और इस विषय में, यह गौर करना बहुत आवश्यक है कि, काँग्रेस प्रस्ताव में, सम्भवतः नेहरू जी के आग्रह से, यह बात स्पष्ट-रूप से घोषित कर दी गई है, कि स्वतन्त्र भारत अपनी सारी शक्ति और साधनों के साथ मित्र-राष्ट्रों की ओर से लड़ेगा। इस प्रकार से देखें तो हममें कुछ भेद ही नहीं रह जाता, पर अफसोस है कि दमन की दुर्नीति हमें ऐसा करने से रोक रही है। सिर्फ समय के विषय में मत-भेद है। हम कहते हैं कि युद्ध के बाद स्वतन्त्रता और काँग्रेस ही नहीं, बल्कि सारा भारत यह कहता है कि स्वतन्त्रता, अभी। तरीके में भी कुछ अन्तर है, हम कहते हैं कि युद्ध-काल में वायसराय के आधीन भारतीय-सरकार· जो करीब-करीब ब्रिटिश- युद्ध में मन्त्रिमण्डल सा होगा और उसके बाद क्रिप्स प्रस्तावों में सुझाये गए ढंग पर या तत्सम्बन्धी किसी अन्य ढंग पर भारतीयों द्वारा निर्मित-विधान के अन्तर्गत भारतीय-सरकार जबकि अधिकांश भारतवासी तत्काल ही वास्तविक भारतीय-सरकार चाहते हैं, जो मित्र-राष्ट्रों के साथ उस प्रकार सहयोग करेगी, जैसे आस्ट्रेलिया कर रहा है। काँग्रेस-दल इतना और कहता है कि वास्तविक भारतीय-सरकार की स्थापना तब तक असंभव है जब तक कि हम लोग भारत में रहते हैं। निस्सन्देह युद्ध में विजय के बाद

वास्तविक-शक्ति-समर्पण के हमारे इरादे की सचाई में उसे विश्वास नहीं है।

"समस्या सुलझाई जा सकती है यदि उसे सुलझाने की हमारी इच्छा अटूट हो। यदि हम अपनी शान और मरतबे को पीछे रख भारतीय-स्वतन्त्रता को प्रथम स्थान दें तो समस्या को सुलझाना आसान है। यदि बर्मा और मलाया में बर्त्तानवी नीति को त्याग, हम बन्धनरहित भारतीय सद्भावना की प्राप्ति करना चाहते हैं और चाहते हैं कि भारतवासी हमारे युद्धोद्योग को अपना ही समझें, तो समस्या को सुलझाना कठिन नहीं है। सरस्टे० फोर्ड क्रिप्स ने कहा कि बड़े वैधानिक परिवर्तन करने होंगे, जो लड़ाई के समय में सम्भव नहीं।" पर मि० चर्चिल की विचारधारा ऐसी नहीं थी, जब उन्होंने अत्यन्त सङ्कटापन्न स्थिति में फ्रांस के साथ यूनियन का पैग़ाम भेजा। हमारे इतिहास में इससे बढ़कर वैधानिक-परिवर्तन का कोई प्रस्ताव नहीं मिल सकता। पर भारतीय मामिले के सम्बन्ध में उनकी विचारधारा बदल जाती है। वे कहते हैं "इसमें बड़ा खतरा है बड़े- माथा-पच्ची और बहस-मुबाहिसे की आवश्यकता इसके लिए होगी, जो इस समय सम्भव नहीं। इस तरह का कुछ प्रयत्न करने से हमारे स्वाभिमान को भी क्षति पहुँचेगी, सरस्टेफोर्ड ने अन्तिम-शब्द कह दिये थे। उससे आगे बढ़ने के लिए हम सम्प्रति तय्यार नहीं। इस तरह से निर्मित-एकता टिकाऊ नहीं होगी, आदि-आदि। लेकिन ग़ौर कर देखा जाय तो युद्ध एक खतरनाक परीक्षण के अतिरिक्त कुछ नहीं है। शासन के ढाँचे में ज़रा भद्दापन ही रह जाता, पर उससे यदि भारत-संतुष्ट हो जाता और लड़ने के लिए हृदय से तय्यार हो जाता, तो क्या बुराई थी। हमारी ओर से हृदय से लड़ने के लिए उद्यत-भारत

हमारे लिए एक महत्वपूर्ण आत्मिक तथा आधिभौतिक शक्ति हो जाता। और अन्तिम--शब्द की बात तो इतिहास में वही राष्ट्र करता है जो मृत्यु-मुख में जाना चाहता है।"

अहमदाबाद में १८ मार्च सन् १९२२ के विद्रोहात्मक-भाषण सम्बन्धी अपने मुक़दमे के अवसर पर गाँधी जी ने जो लिखित--वक्तव्य दिया था, उसमें भारतीय शासन-पद्धति की पोल खोली थी। उसमें से अपेक्षित उद्धरण नीचे दिये जाते हैं:—

"भारत की अर्ध--बुभुक्षित-जनता धीरे-धीरे जीवन-हीनता की ओर गिरी जाती है। उन्हें इतना भी ज्ञान नहीं रह गया है कि अपने लिये जिस अधम--आराम और सुख की कामना वे करते हैं, वह उन्हें विदेशी--शोषक की दलाली के उपहार स्वरूप ही प्राप्त हो रहा है। लाभ और दलाली के पैसे भी वास्तव में जनता के शोषण से ही प्राप्त होते हैं। वे इस वास्तविकता से सर्वथा अनभिज्ञ हैं कि ब्रिटिश--भारत में कानून के आधार पर व्यवस्थित सरकार केवल भारतीय-जनता के शोषण के लिये चलाई जा रही है। गावों में अस्थि-चर्मावशिष्ट जनों को देखकर इसका प्रत्यक्ष अनुभव किया जा सकता है। कोई तर्क और पांरगणन--सम्बन्धी जादूगरी किसी और प्रकार से इसका समाधान नहीं कर सकती। मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है कि इङ्गलैण्ड तथा भारत के शहरों में रहने वाले लोगों को, यदि कोई ईश्वर है, तो उसके सन्मुख उन्हें, मनुष्यता के विरुद्ध अपने इस अपराध के लिये, इतिहास में अपना सानी नहीं रखता" उत्तर देना होगा। इस देश में कानून का भी प्रयोग विदेशी--शोषक के हितार्थ ही किया गया है। पञ्जाब मार्शललॉ--केस के निष्पक्ष परीक्षण से मैं इस निर्णय पर

पहुँचा हूँ कि हर १० दण्डित व्यक्तियों में से ६ बिल्कुल निरपराध थे। भारतीय कचहरियों में ६६ प्रतिशत मामलों में, जहाँ यूरोपियन और हिन्दुस्तानी का मुकाबिला रहता है, हिन्दुस्तानी न्याय से वंचित कर दिया जाता है। यह कोई अतिरञ्जित चित्रण नहीं है। यह करीब-करीब प्रत्येक हिन्दुस्तानी का जिसको कुछ भी ऐसे मामलों से सम्बन्ध रहा है रोज का अनुभव है। मेरी सम्मति में जानते हों या अनजान में, इस प्रकार शोषक-वर्ग-हितार्थ न्याय-व्यवस्था का दुरुपयोग किया जाता है।

"सबसे बड़ा दुर्भाग्य तो यह है कि अंग्रेज और उनके भारतीय सहकारी जो देश के शासन-कार्य्य में उनका हाथ बँटाते हैं, यह जानते तक भी नहीं हैं कि वे इस तरह के किसी पाप में लगे हुये हैं जिसका वर्णन करने का यहाँ मैंने प्रयास किया है। मुझे संतोष है कि बहुतेरे अंग्रेज तथा भारतीय अधिकारी ईमानदारी के साथ विश्वास करते हैं कि संसार में सबसे श्रेष्ठ न्याय-प्रणाली के अनुसार वे काम कर रहे हैं और उनके आधीन भारत उत्तरोत्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रहा है, चाहे धीरे ही सही। वे नहीं जानते कि एक ओर से तो बड़ी ही रहस्य-पूर्ण और सूक्ष्म, पर साथ ही प्रबल आतङ्क-प्रणाली तथा शक्ति के संगठित प्रदर्शन ने और दूसरी ओर से प्रतिक्रिया प्रतिकार तथा आत्म-रक्षा के साधनों के अपहरण ने जनता को नपुंसक बना दिया है और उनमें ऐसी आदत पैदा करदी है जिससे शासक वर्ग की अनभिज्ञता और आत्म-प्रवञ्चना को प्रोत्साहन मिला है।"

नमक कानून तोड़ने के लिये, १६३० में अपनी डाँडी-यात्रा के समय, गाँधी जी ने अपने 'धर्म' की घोषणा करते हुए कहा था:—

"भारत में अंग्रेजी शासन ने इस बड़े देश का चारित्रिक आधि-भौतिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक हर प्रकार से सर्वनाश कर डाला है मैं इस राज्य को एक अभिशाप मानता हूँ। मैं इस शासन-प्रणाली को नष्ट-भ्रष्ट करने के लिए कृत-सङ्कल्प हूँ।

"मैंने कभी "*God save the King*" (ईश्वर हमारे राजा की रक्षा करे) का गाना भी गाया था और दूसरों से भी गवाया था। मैं प्रार्थना-पत्र भेजने, डेपूटेशन ले जाने तथा मैत्रीपूर्ण समझौते में, कभी विश्वास रखता था। किन्तु ये सब तरीके व्यर्थ गये। अब मैं जान गया हूँ कि इस सरकार को सुधारने के लिए यह सब तरीके कारगर नहीं हैं। विद्रोह मेरा धर्म होगया हैं हमारी लड़ाई अहिंसात्मक है। हम किसी को मारने नहीं जा रहे हैं. किन्तु हमारा यह परम धर्म है कि हम इस विदेशी-सरकार रूपी अभिशाप को मिटाए बिना चैन न लें।"

भारतीय-राष्ट्रीय-काँग्रेस, गाँधी जी और भारतीय जनता की स्थिति स्पष्ट है। भारत अपनी भलाई के लिए नही, अपितु सारे संसार के हितार्थ अपनी स्वतन्त्रता चाहता है। यदि संसार भारत जैसे विशाल देश की गुलामी तथा शोषण रूपी अन्याय को सहन करता है, तो संसार में कभी भी शान्ति और सुख का प्रसार नही हो सकता। पृथ्वी के एक भाग के करोड़ों लोग भूखे नङ्गे और निम्न-कोटि की दासता की बेड़ियों से जकड़े हुए मरें और दूसरे भाग के लोग मजा करें, यह कैसे हो सकता है। यह भयङ्कर असमानता कभी भी बर्दाश्त नहीं की जा सकती। संसार एक है और उसके सभी हिस्से एक दूसरे से अच्छी तरह मिले हुए हैं। इसे विभिन्न हिस्सों में विभक्त कर कुछ हिस्से में सदा के लिये दुःख से कराहना और दूसरों के लिए

सुख और समृद्धि से सहन नहीं किया जा सकता। इस वास्तविकता को पूर्ण हृदयङ्गम कर लेना चाहिए। मौज-भरी निरपेक्षता में इसे भुलाया नहीं जा सकता। यह स्मरण रखना चाहिए कि विश्व के किसी भी भाग में सुख-शान्ति की स्थापना के लिए सारे विश्व में हमें शान्ति और सुख का प्रसार करना होगा कोई भाग भी शेष भागों की अशान्ति और उपद्रवों से अछूता नहीं बच सकता। मामिला सारा, मनुष्य शरीर की तरह ही है और जिस प्रकार शरीर के किसी भाग को हम सारे शरीर तथा मनुष्य के हित के लिए, रोग-ग्रस्त नहीं रहने देते, उसी प्रकार विश्व की शान्ति प्रत्येक भाग की शान्ति और सुख पर पूर्णतया अवलम्बित है।

भारत की समृद्धि, शान्ति और सुख के लिए भारत की स्वतन्त्रता अनिवार्य-रूप से आवश्यक है। भारत को उसकी स्वतन्त्रता अवश्य मिलनी चाहिए और उसे प्राप्त करके ही वह चैन लेगा। पर संसार का इसमें क्या भाग होगा? क्या संसार मूक-दर्शक की भाँति खड़ा तमाशा देखता रहेगा या भारतीय स्वतन्त्रता का समर्थक बन भारतीय-जनता के साथ होने वाले इस भयङ्कर-अन्याय और अमानुषिक-बर्ताव को मिटाने में सहायक होगा। भारतीय-स्वतन्त्रता, वास्तव में विश्व-शान्ति और सुख का सुप्रभात है। क्या संसार सत्य और न्याय के इस पवित्र और विनीत-पक्ष के समर्थन के लिए कुछ करने को तय्यार है? यह प्रश्न है जिसका उत्तर संसार को देना है। यह कोरा प्रश्न ही नहीं है, बल्कि भारत की विश्व से अपील भी है।

अब ब्रिटेन पर विश्वास नहीं किया जा सकता और न करना ही चाहिए। ब्रिटिश-सरकार अपने सङ्कुचित स्वार्थों में लिप्त हो स्वार्थान्ध हो

रही है। स्वयं अंग्रेज लोग भी इसे अनुभव करते हैं। उनमें से कुछ ने यदा-कदा इसे व्यक्त भी किया है। जैसा कि मि० फ्रेनर ब्राक-वे स्वतन्त्र-मजदूर दल के राजनीतिक सेक्रेटरी ने लन्दन में १८ अप्रैल, सन् १६४४ को घोषित किया था :—

"भारत ब्रिटिश--राजनीतिज्ञता की असफलता का मूर्तिमान् प्रतीक है।" सहस्त्रों वर्ष पुरानी--सभ्यता और संस्कृति के धनी निरपराध और निःशस्त्र भारतीय आज एक ऐसे राष्ट्र द्वारा दासता की बेड़ियों से जकड़े हुए निरन्तर--शोषण और क्षुधा के शिकार बन रहे हैं, जो जाति अपनी सभ्यता और न्याय पर बड़ा नाज करती है। ऐ विश्व के न्याय की आत्मा! क्या तू इस अत्याचार अन्याय और क्रूरता के विरुद्ध अब भी विद्रोह नहीं करेगी और इसे शान्ति के साथ सहन करती चलेगी? भारत के करोड़ों क्षुधा-पीड़ितों की ओर से यह अपील है। भारत के कारागृहों से भी इसीकी प्रतिध्वनि निकल रही है। भारतीय जेलों की तन्हाई की कोठरियों में वर्षों से सड़ते हुए भारतीय देश--भक्तों के हृदयों से भी यही आवाज आ रही है इसके अतिरिक्त सेगाँव के सन्त महात्मा गाँधी भी डङ्के की चोट के साथ पुकार--पुकार कर यही कह रहे हैं:—

—"संसार के सुख और शान्ति के लिये भारत को स्वतन्त्र करो अन्त में विश्व की सद्विवेक-शक्ति तथा विश्व के जनमत से यह जोरदार अपील है कि वह न्याय के पक्ष को निर्धन, सहाय-हीन और निरपराध कोटि--कोटि मूक भारतवासियों के पक्ष को अभिमानी और लोभी साम्राज्य-वाद की फ़ौलादी ऐड़ियों के नीचे रौंदा जाने से बचाये? भारतीय-जनता की आवाज डूब न जाय और न ही उसकी उपेक्षा की जा सके। ऐ, विश्व! इस अपील के प्रति बहरा न बनजा। उठ, विद्रोह का झण्डा ऊँचा करके

दासता की बेड़ियों को सर्वत्र, संसार के हर-भाग में चकनाचूर करदे। भौगोलिक-सीमाओं को तोड़कर मानवता को एक करदे। सब में विश्व--बन्धुत्व की भावना भरके सारे विश्व का एक ऐसा संघ बनादे, जिसमें प्रत्येक देश और प्रत्येक जाति समता तथा स्वतन्त्रता का रसास्वादन कर सके। जब ऐसे संघ की स्थापना होगी, तभी विश्व में आनन्द की वन्शी बजेगी और सच्चे अर्थों में विश्व-शान्ति और सुख की नींव पड़ेगी। किन्तु याद रखिये! भारत की स्वतन्त्रता के साथ ही उस शुभ-दिन का आगमन होगा। इसलिये ऐ विश्व! शान्ति देवदूत और सत्य तथा अहिन्सा के प्रतीक कारागार में बन्द गाँधी की अन्तरात्मा से निकली आर्तपुकार को सुन। वह वयो--वृद्ध सन्त गाँधी, विश्वशान्ति का अवतार, आज विश्व को इस नाजुक घड़ी में समयोचित सन्देश दे रहा है।

उसने प्रत्येक ब्रिटेन-वासी, अमेरिकन तथा चियाँग--काई-शेक और प्रत्येक जापानी से भी अपील की है। वह ऐसी अपील लेकर सब के सामने प्रस्तुत हुआ है कि यदि उसकी सुनवाई हो गई तो संसार में शान्ति स्थापित हो जायगी। किन्तु, खेद! संसार इतना सीधा और सरल नहीं है। फिर भी अभी प्रलय की घड़ी नहीं आई है और न दुनियाँ का ही खात्मा होने जा रहा है। इसलिये अगर संसार को रहना है, तो अवश्य ही कभी न कभी उसे शान्ति और सुख की प्राप्ति होगी। पर इसकी प्राप्ति के लिये उसे अवश्य ही महात्मा गाँधी द्वारा निर्दिष्ट पथ का पथिक बनना पड़ेगा। देर-सवेर संसार को गाँधी के बताये मार्ग पर आना पड़ेगा, यह इस युग का सन्देश है। संसार तथा उसकी कोटि--कोटि जनता से, चाहे वह स्वयं पद-दलित है या पद-दलित करने वाली, भारत

की यही अपील है। यह निराशा की पुकार नहीं है और न ही निर्जन वन में की जा रही है, बल्कि यह एक वास्तविक अपील है और आशा का सन्देश है। ऐ विश्व! कमर कस कर तय्यार होजा और मानवता के प्रति होने वाले अत्याचारों के विरुद्ध विद्रोह करदे। विमूढ़-पशु की भाँति खड़ा मत रह।

अमेरिका की प्रसिद्ध लेखिका श्रीमती फ्रान्सिस गन्थर ने जो पं० जवाहरलाल नेहरू की शिष्य है, अपनी पुस्तक "भारत में क्रान्ति" में निम्न-लिखित शब्दों में भारत की स्वतन्त्रता और उस के प्रति अंग्रेजों के रुख को दर्शाया, जो वास्तव में विश्व के लिए भारत का सन्देश है—

"भारतीय-विद्रोह इतिहास में एक बिल्कुल खुला विद्रोह है जिसने ध्येय की प्राप्ति के लिए पूर्णतया, अविचलित रूप से सज्जनोचित साधनों का उपयोग किया। यह ऐसी क्रान्ति है जिसमें साधनों का महत्व भी उतना ही समझा गया जैसा ध्येय का। यह ऐसी क्रान्ति है, जिसमें घृणा, अन्तरिक गुप्त-चर-प्रणाली, विश्वास-घात और प्राण-हत्या का नाम तक भी नहीं है। इस क्रान्ति में विद्रोह की सहकारी-बुराइयों का बहिष्कार कर दिया गया था।

"भारतीय-क्रान्ति के दो पहलू हैं: (१) आन्तरिक (२) बाह्य। आन्तरिक-रूप से भारत अपने को एक आधुनिक स्वतन्त्र प्रजातन्त्र के रूप में देखना और ब्रिटेन की दासता से बिना किसी रक्त-पात और युद्ध से मुक्त होना चाहता है। इसके लिये उसकी दलील इस प्रकार है —"हम यहाँ एक महान राष्ट्र हैं, जिसमें ४० करोड़ जनता निवास करती है। हमारी प्राचीन-तम सभ्यता के बावजूद भी आज हम पराजित दास हैं। अब हममें

जागृति आई है और फिर से नव-बल का संचार हुआ है। हमने कुछ हद तक अपने को औद्योगिक, यान्त्रिक तथा आधुनिक उपकरणों से सुसज्जित कर लिया है। भारतीय सिपाहियों ने, बाहर बहादुरी के साथ युद्ध कर विजय-रस आस्वादन किया है। बन्धनमुक्त और स्वतन्त्र होने की हमारी उत्कट-कामना के साथ संयुक्त--राज्य अमेरिका, रूस, चीन और स्वतन्त्र--संसार की सहानभूति है। अन्ततोगत्वा कोई भी हमें इस ध्येय पर पहुँचने से रोक नहीं सकता। बिचारे ५-६ सौ अंग्रेज जो शासक के रूप में भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की शक्ति के प्रतीक-स्वरूप यहाँ वर्तमान हैं, क्या कर सकेंगे? हमें क्रान्ति का गुर मालूम है। शक्ति पर अधिकार जमा लेना भी हम जानते हैं। हम जानते हैं कि लेनिन हिटलर मुसोलिनी, ओलिवर क्रामवेल, नेपोलियन और जार्ज वाशिंगटन ने किस प्रकार शक्ति पर अपना अधिकार जमाया। हम निरे जङ्गली नहीं हैं। हम सभ्य हैं और हमने अपने इतिहास के विभिन्न -युगों का उपभोग किया है। अतीत का हमारा इतिहास हमसे छिपा नहीं है। क्या हम पुनः उनकी पुनरावृत्ति करेंगे? क्या हम अपने अतीत इतिहास से घृणा और हत्या से बचे रहना नहीं सीख सकते और बचकानी लड़ाइयों को छोड़ सच्ची शान्ति और मित्रता के पथ पर अग्रसर नहीं हो सकते?

"इसी तर्क-पद्धति के अनुसार, म० गाँधी और पं० नेहरू सन् १९३० से, जब पहिले-पहिल स्वतन्त्रता की घोषणा की गयी थी, भारतीयों को ब्रिटिश राज्य के विरुद्ध-विद्रोह के पथ पर दृढ़ता के साथ, अविचल-रूप से लिये जा रहे हैं। भारत अब अपनी स्वतन्त्रता-प्राप्ति के द्वार पर खड़ा है! स्वतन्त्रता कोई दान के रूप में ब्रिटेन से थोड़े ही मिल जाती। उसकी प्राप्ति के लिये स्वयं भारतीयों को अपना रक्त बहाना, श्रम करना और दिमाग लड़ाना ही पड़ेगा। इसलिये उन्होंने इतिहास में अपनी सभ्यता, सम्मान और वीरता की दृष्टि से शान्तिपूर्ण अनुत्तम-क्रान्ति को अपनाया।

"सम्भव है कि यहां संयुक्त-राज्य की जनता को अपनी आवाज से प्रभावित कर, उसके द्वारा ब्रिटेन की जनता को भी और अधिक प्रभावित कर, ब्रिटिश-सरकार को इस बात के लिये विवश किया जा सके कि वह प्रतिनिध्यात्मक-भारतीय सरकार के हाथों में शासन का उत्तरदायित्व सौंप दे। ऐसी भारतीय सरकार के पूर्ण-सहयोग से मित्र-राष्ट्रों को कोई बाहरी समस्यायें भारत में हल करने को न रह जायेंगी और वे लड़ाई जीतने तथा शान्ति प्राप्ति के लिये निश्चिन्त आगे बढ़ सकते हैं। किन्तु ब्रिटिश-वैदेशिक नीति में पूर्ण-क्रान्ति के बिना, ब्रिटिश-भारतीय नीति में यह परिवर्तन होना सम्भव नहीं प्रतीत होता है। क्या ऐसी क्रान्ति सम्भव है ?" स्वेच्छा से ही ब्रिटेन में क्रान्ति होगी और फलत: भारत में तथा विश्व में भी क्रान्ति होगी, यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर भविष्य ही दे सकता है।

अन्त में हम लामोनल फ़ील्डन की निम्न-पंक्तियाँ उद्धृत करते हुए यह प्रकरण समाप्त करते है :—

"भारतीय-स्वतन्त्रता इङ्गलैण्ड की ईमानदारी की कसौटी है। ९९ वर्ष व्यतीत हो गये हैं, जब लखनऊ के लारेन्स ने सन् १८४४ ई० में लिखा था कि :—"हम भारत को सदा के लिये अपने पन्जे में रखे रहने की आशा नहीं कर सकते। अत: हमें वहाँ अपना व्यवहार ऐसा रखना चाहिये, कि जब हमारा सम्बन्ध-विच्छेद भारत से हो, तो हम परस्पर सद्भावना और प्रेम के साथ अलग हों न कि किसी भारी हलचल से विवश हो, कसक, मलाल और कटुता के साथ। ताकि भारत इङ्गलैण्ड का एक महान् मित्र बना रह जाये।" कैसी

उच्च-विचार धारा से ओत प्रोत ये शब्द एक शताब्दी से कानों में गूँज रहे हैं। क्या आज भी हम उन शब्दों को प्रतिध्वनित नहीं कर सकते ? ”

भारत ने चैलेन्ज स्वीकार कर लिया है। अब वह ब्रिटिश-अत्याचार के विरुद्ध लड़ने के लिये-बद्ध परिकर है और भारत में ब्रिटिश शासन की समाप्ति के लिये कृत-संकल्प हो गया है। इस महान् उद्योग में चाहे जो भी मुसीबतें झेलनी पड़ें और चाहे जो-जो कुर्बानियाँ करनी पड़ें, बिना ध्येय की प्राप्ति किये अब भारत चैन नहीं लेगा। किसी की क्या ही अच्छी उक्ति हैं।:—

“जब एक बार स्वतन्त्रता का युद्ध छिड़ जाता है, तो जब तक विजय प्राप्त न हो जाय, अनवरत रूप से चलता रहता हैं।

दूसरा अध्याय

मानवता से अपील
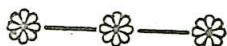
मनुष्य बुद्धिमान और युक्तिमान् जन्तु है। वह चीजों को स्वयं सोचता और देखता है। वह वास्तविकता के प्रति सदैव अन्धा नहीं रखा जा सकता। स्वार्थ-वशी-भूत व्यक्तियों और दल विशेष द्वारा सत्य पर पर्दा डालने की तमाम कोशिशों के बावजूद भी सच्चाई उसे मालूम हो जाती है। मनुष्य को जो इस प्रकार जानकारी होती है, वह कोरी जानकारी ही नहीं होती है। यह एक प्रबल-प्रेरकशक्ति होती है जो उसकी भावनाओं को जागृत कर उसे महान प्रयास के लिये क्रियाशील बना देती है। एक मनुष्य क्या कर सकता है, यह कह कर उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती, न करनी चाहिये।

संसार आज कुछ स्वार्थ-गुटों द्वारा आक्रान्त है, जो अपने को विश्व का शासक मानते हैं तथा विश्व की शान्ति और समृद्धि के ऊँचे-ऊँचे सिद्धान्त बघारते हैं। किन्तु वास्तव में वे भरसक यही प्रयत्न करते हैं कि "मनुष्य" अज्ञ बना रहे, और मानवता के विरुद्ध बड़े से बड़े अत्याचार करता रहे। इस प्रकार आज "मनुष्य" का, 'मनुष्य' के वध के लिये, जो उसका साथी है, उसी का

का है, निरपराध है, प्रयोग किया जा रहा है । आज 'मानव' ही "मानव" की स्वतन्त्रता और समृद्धि का अपहरण कर उसे दास बनाने के लिये कृत-संकल्प दिखाई पड़ रहा है । यह सब कुछ उससे विश्व की शान्ति और समृद्धि के नाम पर कराया जा रहा है । यह दुस्कृत्य का नङ्गा नाच आज संसार में सर्वत्र हो रहा है । इससे भी बुरी बात यह है कि मानव से मानव के विरुद्ध यह सब इस ढङ्ग से कराया जा रहा है, जिसे अमानुषिक और नीच-तम पशुता कहा जाय तो भी अत्युक्ति न होगी । इस प्रकार मनुष्य अधःपतित हो पशुओं में भी नीचतम-पशु बन गया है । इसके ज्वलन्त उदाहरण स्वरूप हमने भारत में ब्रिटिश-राज्य के आधीन घटित घटनाओं का (विशेषकर अगस्त सन् ४२ और उसके बाद की घटनाओं का) दर्दनाक और सच्चा चित्र खींचा है। मानव-जाति के पञ्चमाँश के साथ कैसा असहनीय और अमानुषिक व्यवहार हो रहा है, इस पर ध्यान देना सिर्फ भारतीय देश-भक्तों और भारतीय जनता का ही कर्त्तव्य नहीं है, जो इसके शिकार बन रहे हैं, बल्कि प्रत्येक मानव का संसार में सर्वत्र ही यह पवित्र कर्त्तव्य होना चाहिये कि इस घोर पशुता को रोकने के लिये प्रयत्न-शील हो । "मानव" किस प्रकार से पशुओं में भी अधम-तम पशु बन गया है, यह ऐसा विषय नहीं जिसकी उपेक्षा की जा सके । जैसे शीशे के महल में खड़ा कुत्ता अपने ही प्रतिबिम्ब पर कूद पड़ता है, वही हालत आज भारत में पैदा कर दी गई है । "मानव" आज "मानव" को अपना तथा अपने साथी और भाई बन्धुओं का ही प्रतिबिम्ब नहीं मानता है । एक अंग्रेज भारतीय के साथ पशुता-पूर्ण-व्यवहार करता है और ठीक उसीका अनुकरण एक भारतीय भी जो सरकारी नौकरी में है, करता है । एक निर्धन, निरपराध, निःशस्त्र भारतवासी, के साथ जो घृणित दुर्व्यवहार आज बिना इस लिहाज के कि स्त्री है या पुरुष, बच्चा है या बूढ़ा,

हिन्दू है या मुसलमान, हिन्सक है या अहिन्सक, हो रहा है । मुझे विश्वास है कि मानव के अन्दर वर्त्तमान मानवीयता की भावना अवश्य इससे उत्तेजित हो विद्रोह करने के लिये आगे बढ़ेगी । पिछले पृष्ठों में वर्णित दर्दनाक कहानी को श्रवण करते ही मानव का खून खौल उठता है, तो फिर उन लोगों की क्या हालत होगी जिन्होंने यह सब स्वयं अपनी आँखों से देखा तथा इस कुकृत्य से अपने हाथों को रँगा । हाय ! मनुष्य के अधःपतन की यह चरम सीमा है !

ऐ मनुष्य ! चाहे तू भारत में हो, ब्रिटेन में रहता हो या अमेरिका, रूस, चीन वा अन्य विश्व के किसी भाग का निवासी हो, तुझे 'मानव" द्वारा "मानव" के साथ इस कुकृत्य और दुर्व्यवहार पर लज्जित होना चाहिये । ऐ "मानव" मानवता के नाम पर तू उठ और "मानव" पर "मानव" के इस अमानुषिक अत्याचार के विरुद्ध विद्रोह कर और मानव को बन्धन-मुक्त कर उसे सुखी बना, तभी निश्चित-रूप से विश्व में शान्ति और समृद्धि का प्रसार होगा !

ऐ 'मानव' तू मानव-शिरोमणि 'गाँधी जी को जेल में बन्द और विश्व के पन्चमान्श को दासता की बेड़ियों से जकड़ा हुआ कैसे सहन कर सकता है ? तब भी, ऐ "मानव" तू "विश्व-स्वतन्त्रता" "विश्व-शान्ति" और "विश्व-समृद्धि" के गुन गुनाते कल-कल-गान सुनता है । किन्तु यह क्या झूठे नारे नहीं हैं, जो तुम्हारी आँखों में धूल झोंकने के लिये लगाये जा रहे हैं । ऐ "मानव" उठ जाग, काफी सो चुका । उन लोगों के हाथ की कठपुतली और धरोहर अब और अधिक दिनों तक न बना रह जिन्होंने तुझे तेरे ही विरुद्ध लड़ाकर तुझे इतना अधिक

अधःपतित कर दिया है कि तुझे स्वयं अपने ऊपर अवश्य शर्म आनी चाहिये तथा लज्जा और अपमान से नत-मस्तक हो जाना चाहिये।

काफ़ी ख्वारी हो चुकी। ऐ 'मानव'! अपनी दासता के जुवे को उतार फेंक, गुलामी की जँजीरों को तोड़दे और अपने दोनों हाथों में साहस और स्फूर्ति लेकर उठ खड़ा हो! और इस अत्याचार, अन्याय तथा जन-संहार के विरुद्ध सारी शक्ति से विद्रोह का झण्डा बुलन्द कर! "मानव" को पूर्णतया बन्धनमुक्त कर उसे सर्वत्र स्वतन्त्र कर। ऐसा वातावरण पैदा कर कि हर मनुष्य में परस्पर समानता, स्वतन्त्रता और भ्रातृ-भावना का उदय हो। मानव को चलने फिरने और कार्य करने की पूरी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिये। तभी मनुष्य सुखी-शान्त और सन्तुष्ट होगा, जिससे विश्व भी शान्ति और समृद्धि के पथ-पर अग्रसर हो सकेगा, तथा युद्ध और हिन्सा से छुटकारा पा उसे विश्राम मिलेगा। "मानव-मानव के बीच की घृणा का अन्त हो विश्व-प्रेम और सद्भावना की पवित्र गङ्गा बह चलेगी और तब मनुष्य अपनी खोई हुई मानवता को फिर से प्राप्त कर सुखी और सन्तुष्ट हो जायगा। वह अत्यन्त-सुख का दिन होगा जब मनुष्य और मानव के बीच भेद नहीं रह जायगा तथा मानव परस्पर एक दूसरे का मानव के रूप में आलिङ्गन करेगा। मानव की मानव पर प्रभुता का इसके साथ ही अन्त हो मानव के सुख और शान्ति का शुभ उदय होगा, जिससे सारे विश्व में शान्ति और समृद्धि का विस्तार होगा। इस प्रकार फ्रांस के भविष्य-वक्ता रूसो का स्वप्न तथा अतीत के सभी ऋषि-मुनियों के प्रयत्न सफली--भूत होंगे और सारा संसार एक स्वर से गाँधी जी के "सत्य" और "अहिंसा" की विजय स्वीकार कर एक-राग से पुराने, किन्तु

नवीनतम आकर्षण से भरे "स्वतन्त्रता" "समानता" और "विश्व-बन्धुत्व" के तराने गायेगा, जो सच्चा प्रतीक होगा, राजनीतिक स्वतन्त्रता, आर्थिक समानता तथा सामाजिक--न्याय का।

यह एक मार्मिक अपील है जो बिना किसी भेद-भाव के मानव-मात्र से मानवता के उस अंश-द्वारा की गई है, जो अत्याचारों से इतनी निर्ममता पूर्वक पादाक्रान्त कर दिया गया था कि अन्तिम--आश्रय के रूप में उसका पीड़ित--हृदय संसार के सभी भागों में बसने वाले मनुष्यों के सन्मुख यह अपील लेकर प्रस्तुत होने को बाध्य हुआ। यह आशा और उत्साह का एक सन्देश है जो संसार के लिये शान्ति और समृद्धि के एक नये-युग की घोषणा करता है। इसलिये ऐ 'मानव! इस अपील को व्यर्थ मत जाने दे और मानुषीय अत्याचारों के विरुद्ध विद्रोह करके उन्हें सदा के लिये समाप्त कर देता कि विश्व में कहीं भी अन्याय, असमानता और दासता का नाम-निशान भी न रह जाय। इसके लिये जो भी त्याग किया जाय, वह थोड़ा और सस्ता होगा।

मानव! तू दुर्बल नहीं है। अपनी शक्ति को अनुभव कर। तू अजेय है। तेरे दृढ़-संकल्प के सामने टिकने का साहस किसी में भी नहीं है। एक बार विद्रोह के लिये खड़ा हो जाय तो तू संसार को स्वतन्त्र कर देगा और ऐसी अग्नि-प्रज्वलित कर देगा जो मानव के सारे पापों को भस्मीभूत कर देगी।

सबसे बड़ा अत्याचार आज इस पृथ्वी पर "भारतवर्ष की परतन्त्रता ही है। भारतवर्ष की स्वतन्त्रता विश्व में एक राष्ट्र के-दूसरे राष्ट्र-द्वारा तथा एक जाति के दूसरी जाति द्वारा होने वाली शोषण की समाप्ति की प्रतीक होगी। इससे भारत में बहुत बड़े पैमाने पर हो रहे अत्याचारों अन्यायों और

अमानुषिकताओं का भी अन्त हो जायगा। इस प्रकार प्रतिद्वन्दिता, प्रलोभन और गृद्ध-दृष्टिता को प्रोत्साहन देने वाले कारणों का भी खातमा हो जायेगा। इससे विश्व की कोटि-कोटि जनता की आँखें खुल जायेंगी और वह स्वतन्त्र-रूप से सोचने और वस्तुस्थिति को इसके सच्चे रूप में देखने लग जायगी। इस प्रकार विश्व में तर्क, बुद्धिमत्ता, न्याय और नेकनीयती की हुकूमत का आरम्भ होगा। वास्तव में इससे विश्व की शान्ति और सुख के नये युग के सुप्रभात का पदार्पण होगा। जिसमें न कलह होगा, न प्रतिद्वन्दिता, न घृणा और न वैर-भाव। यह शान्ति मनुष्य को मानवता का दिग्दर्शन करायेगी और मानव के लिये मानव में स्वाभाविक-सहानुभूति का आविर्भाव करेगी। इस प्रकार यह मानव की मानव के प्रति सबसे जोरदार और अन्तिम अपील है कि वह खड़ा हो और अपने अस्तित्व को व्यक्त करने के लिये आदमी के अन्दर वर्त्तमान मानवता का साक्षात्कार करे।

यह तो युग ही ऐसा है जिसमें आदमी को विद्रोह के लिये उठ खड़ा होना चाहिये और उसके द्वारा आदमी को बन्धनमुक्त करके संसार को शान्त और सुखी बनाना चाहिये। इस उच्च और महान् ध्येय की प्राप्ति के लिये सबसे प्रथम और अन्तिम क़दम जो उठाना है, वह भारत की स्वतन्त्रता है। इसलिये यह अवसर, जो युगों में कभी प्राप्त होता है, खोने न पावे।

याद रखो! कहीं इतिहास को यह न निर्णय देना पड़े कि इस युग का "आदमी" विवेक-हीन और बुज़दिल था।
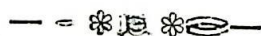
परिशिष्ट

परिशिष्ट (१)

अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी का प्रस्ताव

(बम्बई ८ अगस्त १९४२)

अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी ने कार्य-समिति के १४ जुलाई १९४२ वाले प्रस्ताव और बाद की घटनाओं पर, जिनमें ब्रिटिश सरकार के जिम्मेदार प्रवक्ताओं के कथन तथा भारत व विदेशों में हुई आलोचनाएँ भी शामिल हैं, बड़े ध्यान से विचार किया है। कमेटी प्रस्ताव को पसन्द करती है और उसे स्वीकार करती है, क्योंकि प्रस्ताव के बाद की घटनाओं ने इसका औचित्य और भी सिद्ध कर दिया है और यह स्पष्ट कर दिया है कि भारत की खातिर व मित्रराष्ट्रों के उद्देश्य की सफलता के लिए भारत से अविलम्ब ब्रिटिश-शासन हटाया जाना आवश्यक है। इस शासन के जारी रहने से भारत निर्बल और पतित हो रहा है वह अपनी रक्षा खुद करने और दुनिया की स्वतन्त्रता के कार्य में योग देने में अधिकाधिक असमर्थ हो रहा है।

कमेटी रूसी और चीनी मोर्चों पर स्थिति के बिगड़ने को चिन्ता की दृष्टि से देखती है और अपनी आजादी की रक्षा के लिए रूसी व चीनी लोगों की वीरता की सराहना करती है। यह बढ़ता हुआ खतरा उन के लिए जो आजादी के लिए कोशिश करते हैं और आक्रमणग्रस्तों के साथ सहानुभूति रखते हैं, यह जरूरी कर देता है कि वे साथी राष्ट्रों द्वारा बरती जा रही नीति के आधारों की परीक्षा करें, जिनके कारण कि बार-बार और घातक, पराजयों का मुँह देखना पड़ा है। इन प्रकार के उद्देश्यों और नीतियों तथा तरीकों का अनुसरण करने से उस असफलता को सफलता में नहीं बदला जा सकता, क्योंकि पिछले

अनुभव ने सिद्ध कर दिया है कि उसमें असफलता की जड़ मौजूद है। इन नीतियों का आधार आजादी पर उतना नहीं रहा है जितना पराधीनता और औपनिवेशिक देशों पर प्रभुत्व रखना और साम्राज्यवादी परम्परा और तरीकों को कायम रखना है। साम्राज्य का कायम रहना शासक-शक्ति की ताकत को बढ़ाने के बजाय एक बोझ और एक अभिशाप सिद्ध हुआ है। हिन्दुस्तान जो कि आधुनिक साम्राज्यवाद का जीता जागता नमूना है, इस समस्या का मुख्य बिन्दु बन गया है, क्योंकि भारत की आजादी के आधार पर ही ब्रिटेन और साथी राष्ट्रों की परीक्षा होगी और एशिया और अफ्रीका के लोगों में आशा और उत्साह का सञ्चार होगा।

"इस प्रकार इस देश में अंग्रेजी राज को खतम करने का सवाल एक महत्वपूर्ण और जरूरी सवाल है जिस पर युद्ध का भविष्य और आजादी तथा लोकतंत्र की सफलता निर्भर करती है। आजाद भारत अपने महान् साधनों को संसार की आजादी के लिए तथा नाजीवाद, फासिस्टवाद और साम्राज्यवाद-विरोधी लड़ाई में झोंक कर उस विजय को निश्चित कर देगा। इसका न केवल भौतिक रूप से युद्ध के भविष्य पर असर पड़ेगा, बल्कि वह तमाम पराधीन और पीड़ित मानवता को साथी राष्ट्रों के पक्ष में खड़ा कर देगा और इन राष्ट्रों को जिनका भारत साथी होगा, दुनिया का नैतिक और आध्यात्मिक नेतृत्व प्रदान कर देगा। पराधीन भारत ब्रिटिश साम्राज्यवाद का चिन्ह बना रहेगा और साम्राज्यवाद का कलङ्क तमाम साथी राष्ट्रों के भविष्य पर असर डालेगा।"

"अतः आज जो खतरा है, वह भारत की आजादी और अंग्रेजी प्रभुत्व के अन्त को जरूरी बना देता है। भविष्य के वादों अथवा गारण्टियों से मौजूदा स्थिति पर असर नहीं पड़ सकता या उस खतरे का मुकाबिला नहीं किया जा सकता। उनसे जनता के दिलों पर जरूरी मनोवैज्ञानिक असर नहीं पड़ सकता। सिर्फ आजादी की चमक ही लाखों आदमियों की उस शक्ति और उत्साह को जागृत कर सकती है जो फौरन युद्ध के स्वरूप को बदल डालेगी।"

"अतः अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी अंग्रेजी सत्ता के हिन्दुस्तान से हट जाने की माँग को अपने पूरे जोर के साथ फिर दुहराती है। भारत की स्वतन्त्रता की घोषणा होने के बाद, एक अस्थाई सरकार बनायी जायेगी और आजाद भारत साथी राष्ट्रों का मित्र बन जायेगा और आजादी की लड़ाई के संयुक्त उद्योग में उनकी मुसीबतों और कष्टों में हिस्सा बटायेगा। अस्थायी सरकार देश की मुख्य पार्टियों और दलों के सहयोग से ही बनाई जा सकती है। इस तरह वह संयुक्त सरकार होगी और वह भारत के सभी महत्वपूर्ण दलों की प्रतिनिधि होगी। उसका मुख्य काम होगा भारत की रक्षा करना और आक्रमण का मुकाबिला करना। वह साथी राष्ट्रों के साथ सहयोग करती हुई अपनी तमाम सशस्त्र और अहिंसक शक्तियों से ऐसा करेगी। वह खेतों और कारखानों में अन्यत्र काम करने वाले मजदूरों की भलाई और तरक्की की कोशिश करेगी, जिनके हाथों में ही तमाम सत्ता और अधिकार होने चाहिएँ। अस्थाई सरकार विधान-निर्मातृ पञ्चायत की योजना बनाएगी। वह पञ्चायत भारत सरकार का ऐसा विधान बनाएगी जो सब वर्गों को मान्य हो यह विधान, काँग्रेस के ख्याल के अनुसार संघात्मक होना चाहिये और वह उनमें शामिल होने वाले अंगों को अधिक से अधिक स्वतन्त्रता देगा और अवशिष्ट अधिकार भी उन्हीं के हाथों में रहेंगे। साथी राष्ट्रों और भारत के भावी सम्बन्ध इन तमाम आजाद देशों के प्रतिनिधि अपने पारस्परिक लाभ और आक्रमण का प्रतिरोध करने के अपने समान कार्य की दृष्टि से तय करेंगे। आजादी भारत को आक्रमण का सफल प्रतिरोध करने के योग्य बनाएगी, क्योंकि जनता की संयुक्त इच्छा और शक्ति उसके पीछे होगी।

"भारत की आजादी विदेशी गुलामी में पड़े हुये तमाम एशियाई राष्ट्रों की आजादी का चिन्ह और पूर्वभूमिका होगी। बर्मा, मलाया, हिन्द चीन, डच इण्डीज, ईरान ईराक आदि देशों को भी उनकी मुकम्मिल आजादी मिलनी चाहिये। यह साफ समझ लिया जाना चाहिये कि इनमें से जो देश आज जापान के आधीन है उन्हें बाद में किसी दूसरी औपनिवेशिक ताकत के शासन या नियन्त्रण में नहीं रखा जायेगा।

"इस खतरे की घड़ी में यद्यपि अखिल भारतीय कॉंग्रेस कमेटी मुख्यतः भारत की स्वाधीनता और रक्षा से सरोकार रखती है, किन्तु कमेटी की राय है कि भावी शान्ति, सुरक्षा और संसार की व्यवस्थित तरक्की के लिये आजाद राष्ट्रों का विश्व--संघ कायम होना चाहिये। और किसी आधार पर आधुनिक दुनिया की समस्याओं को हल नहीं किया जा सकता। इस प्रकार का विश्व-संघ उसके अन्तर्भूत राष्ट्रों की आजादी को सुरक्षित कर देगा, एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र के शोषण और आक्रमण को रोकेगा। राष्ट्रीय अल्प संख्यकों को संरक्षण देगा, पिछड़े हुए इलाकों और लोगों की तरक्की करेगा और सब के समान हित के लिये दुनिया के साधनों का संग्रह सम्भव बना देगा। इस प्रकार के विश्व--संघ की स्थापना के बाद सब देशों में निःशस्त्रीकरण सम्भव हो जायगा और विश्व-संघ की रक्षा-सेना, विश्व-शान्ति की रक्षा करेगी और आक्रमण को रोकेगी।

"आजाद भारत ऐसे विश्व--संघ में खुशी से शामिल होगा और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं का हल करने में दूसरे देशों के साथ बराबरी के आधार पर सहयोग करेगा।

"ऐसे संघ के द्वारा उन सब के लिए खुले होने चाहिएँ जो उसके मूलभूत सिद्धान्तों से सहमत हों। किन्तु युद्ध के कारण संघ शुरू में जरूरी तौर पर साथी राष्ट्रों तक सीमित रहेगा। ऐसा कदम यदि इस समय उठाया गया तो उसका युद्ध पर, धुरी राष्ट्रों की जनता पर और आने वाली शान्ति पर जबरदस्त असर पड़ेगा।

किन्तु कमेटी अफसोस के साथ महसूस करती है कि युद्ध के दुःखजनक और भारी, सबको और दुनिया के सिर पर खतरों के मँडराने के बावजूद कुछ देशों की सरकारें अभी विश्व--संघ की दशा में यह अनिवार्य कदम उठाने को तय्यार नहीं है। ब्रिटिश सरकार की प्रतिक्रिया और विदेशी अखबारों की गुमराह आलोचना से भी यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत की आजादी की सीधी-सी मांग का भी विरोध किया जा रहा

है, हालाँकि मौदूदा खतरे का सामना करने, अपनी रक्षा करने के लिये
हिन्दुस्तान को समर्थ बनाने और चीन तथा रूस को उनकी जरूरत की
घड़ी में मदद पहुँचाने की दृष्टि से ही मुख्यतः इस माँग को पेश किया
गया है। कमेटी चीन अथवा रूस की रक्षा में किसी तरह बाधा न डालने
को उत्सुक है, क्योंकि इन देशों की आजादी बहुमूल्य है और उसकी रक्षा
की ही जानी चाहिए। कमेटी साथी राष्ट्रों की रक्षा--शक्ति में भी किसी
तरह का विघ्न नहीं डालना चाहती। किन्तु भारत और साथी राष्ट्र दोनों
को खतरा बढ़ रहा है और इस मौके पर निष्क्रियता और विदेशी शासन-
तन्त्र की आधीनता न केवल भारत को गिरा रही है और अपनी रक्षा करने
और आक्रमण का मुकाबिला करने की उसकी शक्ति को घटा रही है,
बल्कि यह बढ़ते हुए खतरे का कोई जवाब नहीं है और साथी राष्ट्रों की
जनता की कोई सेवा नहीं है। ब्रिटेन और साथी राष्ट्रों के नाम कार्य-
समिति की हार्दिक अपील का अभी तक कोई अनुकूल जवाब नहीं मिला
है और अनेक विदेशी हलकों में जो आलोचना हुई है, वह भारत
की और दुनिया की जरूरत के प्रति अज्ञान की सूचक है। उससे कभी-
कभी भारत की आजादी के विरोध की भी ध्वनि निकलती है, जो प्रमुख
और जातीय श्रेष्ठता की मनोवृत्ति प्रकट करती है। इसको एक स्वभिमानी
कौम, जिसे अपनी शक्ति और अपने उद्देश्य के औचित्य का ध्यान है,
सहन नहीं कर सकती।

अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी इस अन्तिम समय में, विश्व-स्वतन्त्रता
के हितार्थ एक बार फिर ब्रिटेन व साथी राष्ट्रों से यह अपील करती।
लेकिन महसूस करती है कि अब राष्ट्र को एक-एक ऐसी साम्राज्यवादी सरकार
के खिलाफ अपनी आवाज उठाने से अधिक रोकना न्यायसङ्गत नहीं है
जो उस पर प्रभुत्व जमाए हुए है और जो उसे अपने मानवता के हितार्थ
काम करने से रोके हुए है। कमेटी इसलिए, भारत की स्वतन्त्रता व स्वाधीनता
के अधिकार को स्वीकार कराने के निमित्त एक बड़े पैमाने पर अहिन्सात्मक
सामूहिक आन्दोलन आरम्भ करने की इजाजत देती है ताकि देश उस समस्त

अहिन्सात्मक शक्ति का उपयोग कर सके जो कि उसने विगत २२ वर्षों के शान्तिपूर्ण संग्राम के द्वारा सञ्चय की है। इस प्रकार का आन्दोलन महात्मा गाँधी के नेतृत्व में चलना चाहिए, अतः कमेटी गाँधी जी से प्रार्थना करती है कि वह नेतृत्व अपने हाथ में लें, देश का पथ-प्रदर्शन करें।

कमेटी भारतीय जनता से अपील करती है कि वह उन खतरों व मुसीबतों का साहस व सहिस्णुता के साथ सामना करे जो कि उनको उठानी पड़ेंगी और महात्मा गाँधी के नेतृत्व के आधीन एक होकर भारतीय स्वतन्त्रता के अनुशासित सैनिकों की तरह उनकी हिदायतों पर चले। उसे यह स्मरण रखना चाहिए कि इस आन्दोलन का आधार अहिंसा है। एक समय ऐसा भी आ सकता है, जब कि हिदायतों का जारी करना या उनका हमारे लोगों के पास पहुँचना सम्भव न हो और काँग्रेस कमेटियाँ काम न कर सकें। जब ऐसा हो जाय तब इस आन्दोलन में भाग लेने वाले प्रत्येक स्त्री व पुरुष को स्वयं आम हिदायतों के अन्दर रहते हुवे काम करना चाहिए। प्रत्येक भारतीय को, जो स्वतन्त्रता चाहता है और उसकी प्राप्ति के लिये प्रयत्न करता है स्वयं अपना पथ-प्रदर्शक होना चाहिए और कठोर मार्ग पर जहाँ कोई विश्राम करने की जगह नहीं है और जो अन्त में भारत की स्वतन्त्रता व मुक्ति पर ले जाता है, आगे बढ़ते रहना चाहिए।

अन्त में अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी ने यद्यपि आजाद भारत के भावी शासनतन्त्र के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट कर दिए हैं, किन्तु वह स्पष्ट कर देना चाहती है कि काँग्रेस सामूहिक संघर्ष आरम्भ करके अकेले अपने लिए सत्ता प्राप्त करने का इरादा नहीं रखती। शासन-सत्ता, जब मिलेगी, भारत की समस्त जनता के लिए होगी।

परिशिष्ट (२)

काँग्रेस-महासमिति में गान्धी जी का पहिला भाषण

इससे पहले कि आप कार्य-समिति के प्रस्ताव पर विचार शुरू करें, मैं आपके सामने दो एक बातें रख दूँ। मैं चाहता हूँ कि आप दो बातें अच्छी तरह समझ लें और उन पर उसी दृष्टि से विचार करें, जिससे कि मैं उन्हें आप के सामने रख रहा हूँ। मैं अपने ही दृष्टिकोण से इसलिये विचार कराना चाहता हूँ, क्यों कि यदि आप उसे पसन्द करेंगे, तो आपको मेरी तमाम हिदायतों पर अमल करने के लिए कहा जायगा यह एक बड़ी जिम्मेदारी होगी। कुछ लोग ऐसे हैं जो मुझसे पूछते हैं कि क्या मैं वही आदमी हूँ जो सन् १९२० में था। अन्तर केवल इतना है कि अब मैं कुछ बातों में १९२० से अधिक मजबूत हूँ। मैं आपको यह इस तरह समझाता हूँ। एक आदमी है, जो जाड़े की ऋतु में बहुत सारे वस्त्र पहिनकर निकलता है लेकिन गर्मी में वही आदमी बहुत कम वस्त्रों के साथ घूमता फिरता है। यह बाहरी परिवर्तन उस आदमी के अन्दर कोई परिवर्तन नहीं करता। कुछ लोग ऐसे हैं जो यह कहेंगे कि मैं आज कुछ कहता हूँ और कल कुछ। लेकिन मैं आपको बतलाता हूँ कि मेरे अन्दर कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। मैं अहिंसा के सिद्धान्त पर पहले की तरह ही कायम हूँ। यदि आप इससे उकता गए हैं तो आपको मेरे साथ चलने की जरूरत नहीं है। आपके लिए यह जरूरी या अनिवार्य नहीं है कि आप इस प्रस्ताव को पास ही करें। यदि आप स्वाधीनता व स्वराज्य चाहते हैं और यदि आप यह महसूस करते हैं कि जो चीज मैं आपके सामने रखता हूँ वह ठीक और अच्छी है तभी आप इसे स्वीकार करें। केवल इसी प्रकार आप मुझे पूर्ण सहायता दे सकते हैं। यदि आप ऐसा नहीं करेंगे, तो मुझे डर है कि आपको अपने किये पर पछताना पड़ेगा। यदि कोई आदमी गलती

करके उस पर पश्चाताप करता है, तो इसमें कुछ अधिक हानि नहीं है ; लेकिन वर्तमान मामले में आप देश को भी खतरे में डाल देंगे । यदि आप जो कुछ मैं कहता हूँ उस पर पूरी तरह विश्वास न रखते हों, तो आपसे प्रार्थना करूंगा कि आप प्रस्ताव को स्वीकार न करें । लेकिन यदि आप इसे स्वीकार कर लेते हैं और मुझे अच्छी तरह नहीं समझते तो फिर हममें झगड़ा हो जायगा—हालाँकि वह होगा मित्रता पूर्ण ही ।

"दूसरी बात जो मैं आपको समझाना चाहता हूँ, वह आपकी बड़ी जिम्मेदारी है। काँग्रेस महासमिति (अ० भा० काँग्रेस कमेटी) के सदस्य पार्लिमेण्ट के सदस्यों की तरह हैं । काँग्रेस सारे भारतवर्ष का प्रतिनिधित्व करती है । काँग्रेस अपने जन्म से ही किसी खास दल या जाति या प्रान्त की नहीं रही है । इसने आरम्भ से ही समस्त राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करने का दावा किया है और आपकी तरफ से मैंने यह दावा किया है कि आप केवल काँग्रेस के रजिस्टर्ड सदस्यों के ही प्रतिनिधि नहीं, बल्कि समस्त राष्ट्र के प्रतिनिधि हैं ।"

राजाओं का उल्लेख करते हुए महात्मा गान्धी ने कहा "राजा ब्रिटिश शासन की उपज हैं । इनकी संख्या ६०० या इससे भी अधिक होगी । इनको जैसा कि आपको मालूम है, शासक-शक्ति ने भारतीय, भारत व अंग्रेजी भारत के बीच भेद करने के लिए पैदा किया है । यह सच हो सकता है कि ब्रिटिश भारत व देशी भारत की परिस्थितियों में अन्तर हो, लेकिन रियासती लोगों के अनुसार ऐसा कोई भेद नहीं है । काँग्रेस उनका भी प्रतिनिधित्व करने का दावा करती है ! काँग्रेस ने रियासतों के प्रति जो नीति धारण की वह मेरी ही सलाह से की गई थी । उसमें कुछ परिवर्तन हो गए हैं, लेकिन आधार वही है । राजा लोग चाहे कुछ भी कहें, उनके प्रजाजन यह कहेंगे कि वे भी वही चीज चाहते हैं जो कि हम चाहते हैं ।

यदि हम इस आन्दोलन को उस ढँग से चलाएँ जैसा मैं चाहता हूँ, तो राजाओं को उसकी अपेक्षा कहीं अधिक लाभ होगा । जिसकी वे कभी आशा कर सकते हैं । मैं कुछ राजाओं से मिला हूँ और उन्होंने यह कह कर

कि हम उनसे अधिक स्वतन्त्र हैं, अपनी लाचारी जाहिर की है; क्योंकि उन्हें सर्वोच्च सत्ता द्वारा हटाया जा सकता है।

"मैं आपको फिर स्मरण कराऊँगा कि आप प्रस्ताव तभी स्वीकार करें, जब कि इसे हृदय से पसन्द करते हों, क्योंकि यदि आप ऐसा नहीं करेंगे, तो आप मुझे व अपने को खतरे में डाल देंगे। यह है वह चेतावनी जो मैं आपको देना चाहता हूँ। पहले मेरे पास वह सामग्री नहीं थी, जो आज मौजूद है। ईश्वर ने मुझे एक अवसर दिया है और यदि मैं इससे लाभ न उठाऊँ तो मैं एक मूर्ख हूँगा। मैं स्वयं अपने को ही नहीं खोऊँगा, बल्कि मैं अहिन्सा के उस महान् रत्न को भी खो दूँगा जो ईश्वर ने मेरे हाथ में सौंपा है।

मैं आपका ज्यादा समय नहीं लूँगा क्योंकि यदि आप प्रस्ताव को स्वीकार कर लेंगे तो मुझे आपके सामने फिर बोलना पड़ेगा। लेकिन तब भी मैं आपका एक घन्टे से अधिक समय नहीं लूँगा। मैं आपको साफ तौर से जो समझाना चाहता हूँ, वे दो बातें हैं—एक तो वह रास्ता जिसपर आपको चलना है और दूसरा वह आदमी जिसके साथ आपको यात्रा करनी है। कुछ लोग यह कहते हैं कि मेरा काम विनाश करना है और मैं किसी चीज का निर्माण करना नहीं जानता। इसका कारण यह है कि मुझे अवसर ही नहीं मिलता। मैं किसी भी मौके का जरूर स्वागत करूँगा और आपको दिखाने की आशा करता हूँ कि क्या किया जा सकता है। मुझपर बर्बाद करने का आरोप लगाया जाता है। यदि आप इसे अच्छी तरह समझते हैं, तो स्वतन्त्रता मिलने पर हम सब उस सब का पुनर्निमाण कर सकेंगे जो कि नष्ट हुआ है। आरम्भ से ही आप लोगों में यह विश्वास होना चाहिए।

हमें कम से कम सात प्रान्तों में शासन चलाने का एक अवसर मिला था। हमने अच्छा काम करके दिखाया जिसकी बृटिश सरकार द्वारा भी तारीफ की गई। आपका काम स्वतन्त्रता-प्राप्ति के साथ ही समाप्त नहीं हो जायगा। आप अहिन्सात्मक तरीके से बतौर सैनिक बने रहेंगे।

सैनिकवादी, शक्ति प्राप्त करते ही डिक्टेटर बन जाते हैं। हमारी व्यवस्था में ऐसे डिक्टेटरों के लिए कोई स्थान नहीं है। हमारा उद्देश्य स्वतन्त्रता प्राप्त करना है और जो भी शासन की बागडोर सम्भाल सकता है, वह सम्भाले। हो सकता है कि इसे आप पारसियों के हाथ में सौंपने का निश्चय करें। आपको यह नहीं कहना चाहिये कि पारसियों के हाथों में सत्ता क्यों सौंपी जानी चाहिए। हो सकता है कि सत्ता उन लोगों को दी जाय, जिनके कभी कांग्रेस में नाम भी न सुने गये हों यह निश्चय करना जनता का काम होगा। आपको यह महसूस नहीं करना चाहिए कि जो लोग स्वाधीनता के लिये लड़े, उनमें हिन्दुओं की संख्या बहुत ज्यादा और पारसियों व मुस्लिमों की संख्या बहुत कम थी। जब हम स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेंगे तो सारा वातावरण ही बदल जायगा।

"कुछ लोग ऐसे हैं जो अँग्रेजों के प्रति अपने दिल में घृणा रखते हैं। मैंने लोगों को यह कहते सुना है कि वे उनसे तङ्ग आ गये हैं। साधारण लोग अँग्रेजों और उनकी सरकार के साम्राज्यवादी रूप में कोई अन्तर नहीं समझते। उनके लिये दोनों एक ही हैं। ऐसे भी लोग हैं जिन्हें जापानियों के आगमन पर कोई आपत्ति नहीं है उनके लिये शायद यह मालिकों का परिवर्तन होगा। लेकिन यह एक खतरनाक बात है, जिसे आपको अपने दिल में से निकाल देनी चाहिये। यह एक निर्णायक समय है। यदि हम चुप रहें और अपना पार्ट अदा न करें तो यह हमारे लिये ठीक नहीं होगा। यदि केवल ब्रिटेन और अमेरिका ही इस युद्ध को लड़ें और हम सिर्फ इच्छा या अनिच्छा से धन की सहायता देते रहें, तो यह एक अच्छी बात नहीं है! लेकिन हम अपनी असली बहादुरी व दृढ़ता तब ही दिखा सकते हैं, जब कि यह हमारी अपनी लड़ाई बन जाय। फिर तो एक-एक बच्चा वीर हो जायगा। हम अपनी स्वतन्त्रता लड़ कर प्राप्त करेंगे। वह आकाश से गिर कर नहीं मिल सकती। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि जब हम काफी बलिदान कर चुकेंगे और अपनी शक्ति का प्रमाण दे देंगे, तो अँग्रेजों को हमें स्वतन्त्रता देनी पड़ेगी। हमें अँग्रेजों के प्रति अपने हृदयों से घृणा निकाल देनी चाहिये। कम से कम

मेरे हृदय में ऐसी कोई घृणा नहीं है। दर असल पूछा जाय तो इस समय मैं अँग्रेजों का इतना बड़ा मित्र हूँ जितना कि पहले कभी नहीं था। कारण यह है कि इस समय वे मुसीबत में हैं। मेरी मित्रता का तकाजा है कि मैं उन्हें उनकी गलतियों से परिचित कर दूँ। चूँकि मैं उस स्थिति में नहीं हूँ, जिसमें कि वे हैं—एक खाई के किनारे पर और उसमें गिरने के करीब—इसलिये यदि वे मेरे हाथ भी काटना चाहें तो मेरी मित्रता की मांग है कि मुझे उन्हें खाई से बाहर निकालने की कोशिश करनी चाहिये।

'यह है मेरा दावा, जिस पर शायद बहुत से लोग हँसेंगे। लेकिन फिर भी मैं कहता हूँ कि यह सच है। एक ऐसे समय पर जब कि मैं अपने जीवन की सबसे बड़ी लड़ाई आरम्भ करने जा रहा हूँ, मेरे हृदय में अँग्रेजों के प्रति घृणा नहीं हो सकती। यह खयाल कि वे मुसीबत मे हैं इसलिये मुझे उन्हें धक्का लगा देना चाहिये, मेरे हृदत में बिलकुल नहीं है और न कभी रहा ही है। हो सकता है कि क्रोध में आकर वे ऐसी बातें करदें, जिससे आप उत्तेजित हो जाँय, लेकिन फिर भी आपको हिन्सा का सहारा लेकर अहिन्सा का अपमान नहीं करना चाहिये। जब कोई ऐसी घटना हो जायेगी, तो आप यह समझ लें कि आप मुझे जीवित नहीं पायेंगे, चाहे मैं कहीं भी रहूँ, उनका खून आपके सिर पर होगा। यदि आप यह न समझें तो आपके लिये प्रस्ताव को अस्वीकार कर देना बहतर होगा। मैं उन बातों के लिये आप पर कैसे इलजाम लगा सकता हूं, जिन्हें आप समझने की सामर्थ्य ही नहीं रखते? लड़ाई में यह एक ही सिद्धान्त है जिसका आपको अमल करना चाहिये।

कभी विश्वास न करो—जैसा कि मैंने कभी विश्वास किया है- कि अँग्रेज लोग हारने वाले हैं। मैं इङ्गलैण्ड को कायरों का राष्ट्र नहीं समझता। मैं जानता हूँ कि हार मानने से पहिले ब्रिटेन का प्रत्येक व्यक्ति बलिदान हो जायगा। हो सकता है कि वे हार जाँय और बर्मा, मलाया आदि स्थानों की तरह आपको भी पुनः जीतने की आशा से, छोड़कर चले जाँय। यह उनकी सैनिक चाल हो सकती है। लेकिन मान लीजिये कि वे हमें छोड़ देते हैं, फिर हमारा क्या होगा? उस हालत में जापान यहाँ आयेगा। जापान के यहाँ आगमन का अर्थ

चीन और शायद रूस का भी अन्त होगा।

"इन मामलों में नेहरू जी मेरे गुरु हैं। मैं न रूस की न चीन की पराजय का साधन बनना चाहता हूँ। यदि ऐसा हुआ तो मैं अपने से ही घृणा करूँगा।

"आप जानते हैं कि मैं तेज रफ्तार से चलना पसन्द करता हूँ। लेकिन यह हो सकता है कि मैं इतना तेज नहीं चल सकूँ, जितना कि आप चाहते हैं। सरदार पटेल ने कहा बतलाते हैं कि आन्दोलन एक सप्ताह में समाप्त हो जायगा। मैं जल्दी करना नहीं चाहता। यदि आन्दोलन एक सप्ताह में समाप्त हो गया तो यह एक जादू होगा और यदि ऐसा हुआ तो इसका अर्थ होगा कि ब्रिटिश हृदय पिघल गया है। हो सकता है ब्रिटेन को अक्ल आ जाय और वह यह समझ ले कि उन लोगों को, जो उनके लिए लड़ने को तय्यार हैं, जेल में बन्द करना गलती है। हो सकता है कि श्री जिन्ना के हृदय में भी कुछ परिवर्तन हो जायं। कुछ भी हो वह सोचेंगे कि जो लोग लड़ रहे है, वे देश के सुपुत्र हैं और यदि वह चुप बैठे रहे तो पाकिस्तान से उन्हें क्या लाभ होगा? अहिन्सा एक ऐसा शस्त्र है, जो हर एक की मदद कर सकता है। मैं जानता हूँ कि अब तक अहिन्सा की दिशा में हमने कोई विशेष प्रगति नहीं की है और इसलिये यदि ऐसा कोई परिवर्तन हुआ तो मैं इसे हमारे बाईस साल के प्रयत्नों का परिणाम समझूँगा और कहूँगा कि ईश्वर ने हमें इसे प्राप्त करने में सहायता दी है।

जब मैंने "भारत छोड़ो" का नारा उठाया तो भारत के लोगों ने, जो निराशा अनुभव कर रहे थे, समझा कि मैंने उनके सामने एक नई चीज रक्खी है। यदि आप असली स्वतन्त्रता चाहते हैं तो आपको एक होना होगा और इस प्रकार का मिलन एक सच्चा लोकतन्त्र उत्पन्न करेगा। मैंने फ्रांसीसी क्रान्ति के बारे में बहुत कुछ पढ़ा है। कारलाइल की कृतियाँ मैंने तब पढ़ीं जब कि मैं जेल में था। मैं फ्रेन्च लोगों के लिए भारी श्रद्धा रखता हूँ। पं० जवाहरलाल नेहरू ने मुझे रूसी क्रान्ति के बारे में सब

कुछ बतलाया है। लेकिन मेरी राय में उनकी लड़ाई लोकतन्त्र के लिए नहीं थी। मेरे लोकतन्त्र का अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपना मालिक खुद है। मैंने काफ़ी इतिहास पढ़ा है और मैंने कोई ऐसा परीक्षण नहीं पाया जो लोकतन्त्र की स्थापना के लिये अहिन्सा द्वारा किया गया हो। एक बार आप इन बातों को समझ लें, तो आप हिन्दू मुसलमानों के भेद भाव पूर्णतया भूल जायेंगे।

यह प्रस्ताव जो कि आपके सामने रक्खा गया है कहता है कि हम कूप-मण्डूक रहना नहीं चाहते। हमारा लक्ष्य एक विश्व-संघ है। यह सिर्फ अहिन्सा के द्वारा बन सकता है। निशस्त्रीकरण तब ही सम्भव हो सकता है जब कि आप अहिन्सा के इस अद्वितीय शस्त्र का प्रयोग करें। ऐसे लोग भी हैं जो मुझे एक स्वप्नदर्शी कह सकते हैं, लेकिन, मैं आपको बतलाता हूँ कि मैं एक पक्का बनिया हूँ और स्वराज्य प्राप्त करना मेरा एक धन्धा है। यदि आप इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करेंगे तो मुझे कोई दुख नहीं होगा। विपरीत इसके मैं हर्ष से नाच उठूँगा, क्योंकि आप फिर मुझ पर से वह भारी जिम्मेदारी हटा लेंगे जो आप मुझ पर रखने जा रहे हैं। मैं आप से अहिन्सा की नीति अपनाने को कहता हूँ। मेरे लिये यह एक धर्म है लेकिन जहाँ तक आपका सम्बन्ध है मैं चाहता हूँ कि आप इसे बतौर एक नीति के ग्रहण करें। अनुशासित सैनिकों की भाँति आप इसे पूर्णतया स्वीकार करें और जब आप लड़ाई में शामिल हों तो इस पर जमे रहें।

दूसरा भाषण

"प्रस्ताव पास करने के लिये मैं आपको बधाई देता हूँ। जिन्होंने प्रस्ताव का विरोध किया उनको भी उनके विश्वास और साहस के लिए

वधाई है। प्रस्ताव का विरोध करने में शर्म की कोई बात नहीं थी। हमने १९२० से ही यह सबक सीख रक्खा है। यदि हम सचाई पर दृढ़ रहें तो अल्पमत में रहने पर भी श्रेष्ठ कहलाएंगे। मैंने यह सब बहुत दिन हुए सीखा था। मैंने अब विरोध करने वाले सदस्यों से एक और सबक सीखा है। मुझे यह देखकर प्रसन्नता है कि उन्होंने इस दशा में मेरा अनुकरण किया है।"

एक समय था जबकि प्रत्येक मुसलमान भारत को अपनी मातृ-भूमि समझता था। अलीबन्धु ऐसा ही समझते थे। मैं यह विश्वास करने को तय्यार नहीं हूँ कि उनका ऐसा कहना मिथ्या अथवा धोखेबाजी थी मैं अपने सहयोगियों पर अविश्वास करने के बजाय अपने को अज्ञान में रखना बहतर समझता हूँ। हजारों हिन्दुओं और मुसलमानों ने मुझसे कहा कि यदि साम्प्रदायिक एकता स्थापित हो सकती है तो मेरे ही जीवनकाल में। बचपन से ही हिन्दू मुस्लिम और साम्प्रदायिक एकता में मेरा पक्का विश्वास रहा है। स्कूल के दिनों से ही मैं भारत की एकता में यकीन करता हूँ। जब मैं अफ्रीका गया तो मैंने एक मुसलमान मुवक्किल के लिये पैरवी की मैंने वहां मुसलमानों के लिए कार्य किया। मैं उन पर कभी विश्वास नहीं करता अफ्रीका से मैं निराश या पराजित होकर नहीं लौटा। मैं उस निन्दा की परवाह नहीं करता जो कुछ मुस्लिम मित्र मेरे ऊपर थोप रहे हैं। मैं नहीं जानता की मैंने कौन सा ऐसा गुनाह किया है। जो वह मुझसे नाराज है। निःसन्देह मैं गाय की पूजा करता हूँ। मेरा विश्वास है कि प्रत्येक प्राणी ईश्वर की सृष्टि है। मेरे मुस्लिम मित्र विशेषकर मौलाना बारी और मौलाना आजाद इसका समर्थन कर सकते हैं। मैं मुसलमानों के साथ खाना खाता हूँ। मैं बिना जाति धर्म का ख्याल किए सब के साथ खाना खाता हूँ। मैं किसी से घृणा नहीं करता। मुझमें किसी के प्रति घृणा नहीं है। लखनऊ के एक स्व० मौलाना बारी मेरे मेजबान थे। वह पूरे सज्जन थे। वह समय था जब कि आपसी अविश्वास

और सन्देह नहीं था। श्री जिन्ना पहले कांग्रेसी रह चुके हैं। इस समय वे गलत रास्ते पर मालूम देते हैं मैं उनके लिये दीर्घायु की प्रार्थना करता हूँ और चाहता हूँ कि वह मुझसे अधिक जीवित रहें। एक दिन आयेगा जब वे समझेंगे कि मैंने उनका या मुसलमानों का कोई अहित नहीं किया मैं मुसलमानों की ईमानदारी में पूरा विश्वास रखता हूँ मैं उनका बुरा नहीं चाहूँगा चाहे वे मुझे मार ही क्यों न डालें। वे मेरे बारे में कुछ भी ख्याल कर सकते हैं, परन्तु मैं आज भी वही हूँ जो पहले था। आज तर्क की गर्मागर्मी में मुसलमान अपने को भूलकर मेरी निन्दा कर सकते हैं। इस्लाम निन्दा करना नहीं सिखलाता। यदि भारतीय मुसलमान पैगम्बर के सच्चे अनुयायी हैं तो उन्हें उनकी शिक्षा पर ईमानदारी से अमल करना चाहिये। उनकी की हुई निन्दा मुझ पर गोलियों से भी तेज वार कर सकती है फिर भी मैं उसका स्वागत करने को तैयार हूँ।

"कोई भी आदमी मुझे हानि नहीं पहुँचा सकता क्योंकि मैं कभी किसी का बुरा नहीं चाहता। पाकिस्तान की योजना केवल श्री जिन्ना की जेब में है। वह गलत फहमी फैला रहे हैं। वह सचाई को छिपा नहीं सकते मैं पाकिस्तान के औचित्य अथवा अनौचित्य के बारे में बहस नहीं करना चाहता। अरब में पैगम्बर ने अकेले ही इस्लाम का प्रचार किया था। शुरू में उनके कोई अनुयायी नहीं थे। श्री जिन्ना मुसलमानों के नेता होने का दावा करते हैं। यदि इस चीज से जिन्ना को संतोष हो जाता है तो मुझे और कुछ नहीं कहना है। परन्तु मुझे भय है कि उनमें अहङ्कार बहुत है और यही उन्हें नष्ट कर देगा। अनेक मुसलमानों ने मुझसे कहा है कि पाकिस्तान शुभ प्रभाव नहीं है। परन्तु यदि सारे मुसलमान पाकिस्तान लेना चाहें तो उन्हें कोई रोक नहीं सकता। हिन्दू, मुसलमानों पर अनुचित दबाव नहीं डाल सकते।

"विश्वव्यापी संघ आपसी समझौते से ही स्थापित हो सकता है। मैं मुसलमान भाइयों से प्रार्थना करता हूँ कि वे विकार-रहित भाव से उचित अनुचित में अन्तर समझने का प्रयत्न करें। इस मामले को एक पञ्चायत के सिपुर्द कर दिया जाय और पञ्चायत का निर्णय हम सब को स्वीकार हो। यदि

मुसलिम लीग इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करती तो वह दूसरों पर अपनी योजना को जबरदस्ती कैसे लाद सकती है ? उन्हें पहले सारे देश को समझाकर पाकिस्तान का समर्थक बनाना चाहिये। यदि वे लोगों की राय बदलने में और उन्हें समझाने में असमर्थ रहते हैं, तो जबरदस्ती पाकिस्तान लादने से आन्तरिक कलह फैलेगा। मैं ऐसी दुखद घटना को देखने के लिए जीवित नहीं रहना चाहता। इस्लाम किसी से घृणा करना नहीं सिखाता। यह विश्व-प्रेम और आपनी सहनशीलता की शिक्षा देता है, प्रभु ने जो पवित्र मुझे कर्त्तव्य सौंपा है, उसके लिए मैं अपनी सारी शक्ति और पूरी जिन्दगी लगा दे रहा हूँ। इसके लिए मैं अपना जीवन भी बलिदान करने को तैयार हूँ। हिन्दू मुस्लिम एकता मुझे प्रिय है। हम सब को भारत की आजादी प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए।

"श्री जिन्ना कॉंग्रेस के कार्यक्रम और उसकी माँग में विश्वास नहीं रखते। श्री जिन्ना की राय बदलने तक मैं स्वतन्त्रता के लिए प्रतीक्षा नहीं कर सकता। मैं बहुत अधीर हो चुका हूँ। साम्प्रदायिक एकता निश्चय ही आवश्यक है, लेकिन देश के लिए आजादी प्राप्त करना कहीं अधिक जरूरी है। आपको जानना चाहिए कि हम स्वतन्त्रता किसी सम्प्रदाय विशेष के लिये नहीं, सबके लिए समान रूप से चाहते हैं। उदाहरण के लिए मेरे पुत्र हीरालाल की ही मिसाल लें। उसने इस्लाम स्वीकार किया था। क्या धर्म बदलने से वह अपनी राष्ट्रीयता और देश भी बदल सकता है? मान लें कि वह राष्ट्रीयता और देश भी बदल सकता है लेकिन वह इससे क्या अपने पिता को मानने से इनकार कर सकता है अपनी माँ के कहने पर उसने मुझे एक पत्र लिखा था। मेरी पत्नी ने मुझे बताया कि उसे इस बात का दुखः नहीं है कि उसके बेटे ने दूसरा धर्म स्वीकार कर लिया, लेकिन दुख इस बात का है कि वह शराबी है। मेरा पोता अपने पिता की खोज में गया था लेकिन जब उसने अपने पिता को पाया तब वह बुराइयों से घिरा था।

"मैं मौलाना आजाद के इस कथन से सर्वथा सहमत हूँ कि अंग्रेज, शासन-सत्ता किसी भी जाति को सौंप दें। यदि मुसलमानों को शासन सत्ता

सौंप दी गई तो मुझे दुख नहीं होगा। भारत भारतीय मुसलमानों का भी मातृदेश है।

"इस आन्दोलन का नेतृत्व मैं आपके सेनापति या नियामक की हैसियत से नहीं कर रहा हूँ, बल्कि देश के एक विनम्र सेवक की हैसियत से। और जो सबसे अच्छी तरह सेवा करता है वही उनमें प्रधान बन जाता है। मैं राष्ट्र का प्रधान सेवक हूँ। मैं अपने आपको इसी दृष्टि से देखता हूँ। जो दिक्कतें आपको उठानी पड़ेंगी, उनमें मैं आपका साझीदार बनना चाहता हूँ।

मैं जानता हूँ कि पिछले कुछ सप्ताहों में भारत और विदेशों में मेरे बहुत से मित्र मुझसे नाराज हो गए हैं और वे न केवल मेरी बुद्धिमानी पर, बल्कि ईमानदारी पर भी सन्देह करने लगे हैं। मैं बुद्धिमानी को इतना महत्व नहीं देता जितना कि ईमानदारी को देता हूँ। मेरे लिए ईमानदारी ही सबसे बड़ा खजाना है।

इसके बाद गांधी जी ने उस मैत्री का जिक्र किया जो उनकी अनेक वायसरायों और विशेषकर लार्ड लिनलिथगो से रही है। गाँधी जी ने कहा कि उनके लिये यह वास्तव में बड़ा कठिन कार्य्य है कि उन्हे एक ऐसे वायसराय का विरोध करना पड़ेगा जो कि उनका मित्र रह है। इसके बाद गांधी जी ने स्पष्ट श्री सी० एफ० एण्डरूज के साथ अपनी मैत्री का जिक्र करते हुए कहा कि "इस समय एण्डरूज की आत्मा मुझे प्रेरणा दे रही है। जितने अंग्रेजों को मैं जानता हूँ उनमें एण्डरूज सबसे महान आत्मा थे। एण्डरूज के साथ मेरी इतनी गहरी मैत्री थी जितनी कि किसी भारतीय से भी नहीं रही। हमारे बीच कोई भेद, कोई गुप्त बात नहीं थी। जो कुछ उनके हृदय में होता था वे बिना सङ्कोच के मुझ से कह देते थे। यह सच है कि वह गुरुदेव (स्व० रवीन्द्रनाथ ठाकुर) के भी मित्र थे। परन्तु वह गुरुदेव की महानता से सहम जाते थे।

"इस पृष्ठभूमि के साथ मैं दुनिया के सामने घोषित करना चाहता हूँ कि आज चाहे पाश्चात्य देशों के कुछ मित्रों का आदरभाव और विश्वास

अपने अन्तःकरण की आवाज को दबा नही सकता। आप उसे हृदय की वाणी कहें अथवा कुछ भी कहें, परन्तु वह कुछ है जरूर और चाहे मैं शब्दों में व्याख्या न कर सकूँ, उसे मैंने समझा जरूर है। यह आवाज मुझे कह रही है कि मुझे अकेले सारी दुनियाँ से लड़ना पड़ेगा। वह मुझे यह बात बता रही है कि तुम तब तक सुरक्षित हो जब तक कि तुम दुनिया की आँखों से आँखें मिलाए हुए हो, चाहे संसार की आँखें खूनी ही क्यों न हो। उस संसार से भय न करके, प्रभु का भय मन में धर कर बढ़े चलो। यही चीज मेरे हृदय में है। मैं जानता हूँ कि मुझे अपनी पत्नी, मित्रों और संसार की सब चीजों को छोड़ना पड़ेगा मैं अपनी जिन्दगी का पूरा समय बिताना चाहता हूँ। परन्तु मैं नही समझता कि इतने दिन जिन्दा रहूँगा। जब मैं नहीं रहूँगा, भारत आजाद होगा, और भारत ही नही सारी दुनिया आजाद होगी।

मैं नहीं मानता कि अमेरिका या इङ्गलैण्ड आजाद हैं। वे अपने विचारों के अनुसार भले ही आजाद हों पर मेरी राय में नहीं। मैं जानता हूँ कि आजादी क्या चीज है। अँग्रेज शिक्षकों ने ही मुझे उसके अर्थ समझा दिये हैं। मैं इस शब्द का अर्थ उसी के अनुसार लगाता हूं जो मैंने समझा है और अनुभव किया है।

"अनजाने में काँग्रेस प्रारम्भ से ही अहिंसा की नीति को अपनाती रही है। मैं यह नहीं कहता कि प्रत्येक नेता, बिना किसी अपवाद के अहिंसा की नीति स्वीकार करता हैं। मैं जानता हूँ कि अनेक नेता अहिंसा में विश्वास नहीं करते, परन्तु मैं बिना परीक्षा किए साधारणतः उन पर विश्वास करता हूँ।। क्योंकि यही सिद्धान्त मेरे सारे जीवन पर लागू रहा हैं। अपने आरम्भ से ही काँग्रेस ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के अपने मूल ध्येय के लिए अहिंसा को अपनी आधार भूत नीति माना है।

"मैं अपने आलोचकों से अपील करता हूँ कि वे मेरी ईमानदारी पर संदेह करने से पहले अपने दिलों को टटोलें! मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक अँग्रेज और प्रत्येक मित्रराष्ट्र अपने हृदय को टटोलै कि आज आजादी की माँग करके

कांग्रेस क्या गुनाह कर रही है क्या यह कहना बुरा है? क्या इस संस्था पर अविश्वास करना उचित है। मैं आशा करता हूँ कि अँग्रेज ऐसा नहीं सोचते मैं आशा करता हूँ कि संयुक्तराष्ट्र के राष्ट्रपति और जापान के साथ अपने देश के अस्तित्व के लिये अभी भी लड़ने वाले जनरल च्याँगकाईशेक ऐसा नहीं सोचेंगे।

जवाहर लाल नेहरू को एक साथी स्वीकार करने के बाद मुझे आशा है वह ऐसा नहीं करेंगे। मैं श्रीमती च्याँगकाईशेक से स्नेह करने लगा हूँ। वह मेरी दुभाषिया का काम करती थी। और मुझे उनपर अविश्वास नहीं है। अभी तक श्रीमती चाँग ने यह नहीं कहा कि हमने अपनी आजादी की माँग करके कोई गलती की है। अँग्रजों की उस कूटनीति के लिये मेरे हृदय में प्रशंसा के भाव हैं जिसके द्वारा उन्होंने अपने साम्राज्य को अब तक सुरक्षित रक्खा है। परन्तु अब इसे औरों ने भी सीख लिया है और वे उस पर अमल कर रहे हैं।

यदि सारे मित्रराष्ट्र मेरा विरोध भी करें अथवा यदि सारा भारत भी मुझे यह समझाने का प्रयत्न करे कि मैं गलती पर हूँ, फिर भी मैं आगे बढ़ता रहूँगा—न केवल भारत के, बल्कि सारी दुनिया के खातिर।

ब्रिटेन ने भारत को अनेक बार उत्तेजित किया है। इसके बावजूद हम बगल में छुरी नहीं भोंकेंगे। हम बहुत अधिक शराफत दिखाते रहे हैं। अब भी हम कोई नीच काम नहीं करेंगे।"

इसके बाद गाँधी जी ने बताया कि सरकार को परेशान करने की उनकी पिछली नीति और प्रस्तुत नीति में क्या अन्तर है। मेरी आज की और पिछली माँग में कोई अन्तर नहीं है। इस समय मित्र देशों के सामने उनकी जिन्दगी का सब से बड़ा मौका है जबकि वे भारत को आजाद करके अपने इरादों का औचित्य सिद्ध कर सकते हैं। उनके सामने इस समय ऐसा अवसर है कि जो जीवन में दूसरी बार नहीं आता। इतिहास यह कहेगा कि उन्होंने

अवसर आने पर भारत के प्रति पुराना ऋण चुकाने का प्रयत्न नहीं किया। मैं इस समय सारे संसार के आशीर्वाद की इच्छा रखता हूँ। और मित्रराष्ट्रों के सक्रिय सहयोग की माँग करता हूँ। उनके प्रति मैं इससे अधिक और कुछ नहीं कहना चाहता। मैंने फैसिस्टों और प्रजातन्त्रों को बावजूद उनकी अनेक सीमाओं के सदैव ही अलग-अलग समझा है और फैसिज्म तथा साम्राज्यवाद के बीच भी अन्तर स्वीकार किया है।

"कांग्रेस से मैं प्रतिज्ञाबद्ध हूँ। वह जीतेगी या मर मिटेगी।"

परिशिष्ट (३)

हर एक जापानी से

❀❀❀❀

शुरू में ही मुझे स्वीकार कर लेना चाहिए कि गोकि आपके लिए मेरे मन है कोई दुर्भाव नहीं है, तो भी चीन पर किये गये आपके हमलों को मैं बहुत ही नापसन्द करता हूँ। अपनी महानता के ऊँचे शिखर से आप साम्राज्यशाही आकाँक्षा के गहरे गर्त में उतर पड़े हैं। आप अपनी इस महत्वाकाँक्षा को तो सफल न कर सकेंगे, मगर हो सकता है कि आप एशिया के अङ्ग-भङ्ग के जनक बन जाये। इस तरह अनजाने ही आप उस विश्व-संघ और विश्वबन्धुत्व की स्थापना के बाधक होंगे, जिसके बिना मानवता के लिए कोई आशा नहीं रह जाती।

आपके राष्ट्र के अनेक गुणों का मैं पिछले पचास पचपन वर्षों से प्रशंसक रहा हूँ। जब मैं १८ साल का लड़का ही था और लन्दन में पढ़ता था, मैंने स्वर्गीय सर एडविन एर्नाल्ड की रचनाओं द्वारा आपके इन गुणों को सराहना सीखा था। जब दक्षिण-अफ्रीका में मैंने सुना कि आपने रूसी फौजों पर विजय प्राप्त की है, तो मैं हर्ष से गद्‌गद्‌ हो गठा था। सन् १९१५ में दक्षिण अफ्रीका से हिन्दुस्तान लौटने के बाद में उन जापानी साधुओं के निकट सम्पर्क में आया था, जो समय-समय पर हमारे आश्रम में आकर आश्रमवासी की तरह रहे थे। उनमें से एक तो सेवाग्राम-आश्रम के अपने बहुमान्य सदस्य ही बन गए थे। और अपनी कर्त्तव्य परायणता, अपने उन्नत आचरण, अपनी अटूट और नियमित उपासना, अपनी सुजनता, विभिन्न परिस्थितियों में शान्त रहने की अपनी शक्ति और और मुँह पर सदा खेलने वाली सहज मुसकान के कारण—जो उनकी आन्तरिक शान्ति

का अचूक प्रमाण था वे हममें से हर एक के अपने बन गये थे हम-सब उन्हें प्यार करने लगे थे और अब जबकि ग्रेट ब्रिटेन के साथ आपकी लड़ाई की घोषणा के कारण वह हमसे दूर ले जाए गये हैं, हम उन्हें अपने एक प्रिय सहकारी के नाते बराबर याद किया करते हैं। अपनी स्मृति के रूप में वह हमारे साथ अपनी दैनिक प्रार्थना और अपना छोटा ढोल छोड़ गए हैं। और अब यह दोनों हमारी सुबह शाम की प्रार्थना के अङ्ग बन गए हैं।

इन सुखद स्मृतियों की इस पार्श्व भूमिका के साथ जब प्राप्त समाचारों के आधार पर अगर वे सच हों—मैं चीन पर किए गये आपके अकारण आक्रमण का विचार करता हूँ और उस महान व प्राचीन देश को जिस निष्ठुरता के साथ आप ध्वस्त कर रहे हैं उसका ख्याल करता हूँ तो मुझे बेहद रन्ज होता है।

संसार की दूसरी महान शक्तियों की बराबरी में बैठने की आपकी महत्वाकाँक्षा उचित ही थी। लेकिन चीन पर आक्रमण करके और धुरी राष्ट्रों के गुट में शामिल हो कर निश्चय ही आपने अपनी महत्वाकाँक्षा के अनावश्यक अतिरेक का परिचय दिया है।

मैं तो यह सोचता था कि चीन जैसे महान और प्राचीन राष्ट्र को, जिसके प्राचीन पौराणिक साहित्य को आपने अपना साहित्य माना है, अपने पड़ोसी के रूप में पाकर आप गर्व का अनुभव करेंगे। परस्पर एक दूसरे के इतिहास, परम्परा और साहित्य को समझने के कारण होना तो यह चाहिए था कि आप दोनों एक दूसरे के दुश्मन न बन कर—जैसे कि आज हैं—मित्र बने होते।

अगर मैं अपने देश में स्वतन्त्र होता और अगर आप मुझे अपने मुल्क में आने देते, तो दुर्बल होने पर भी मैं अपने स्वास्थ्य की और शायद प्राणों की भी परवाह न करके आपके देश में पहुँचता और आपको उस अन्याय से विमुख होने के लिये समझाता। जो आप चीन के साथ, दुनियाँ के साथ और फलतः अपने साथ कर रहे हैं।

लेकिन आज मैं उतना स्वतन्त्र नहीं हूँ और आज हमारी हालत तो यह है कि हमें एक दूसरे साम्राज्यवाद का विरोध करना पड़ रहा है। जिसे हम। आपके साम्राज्यवाद और नाजीवाद से किसी भी कदर कम नापसन्द नहीं करते ब्रिटेन की इस सत्ता का विरोध करके हम ब्रिटिश जनता को कोई नुकसान नहीं पहुँचाना चाहते। हम तो उनका हृदय परिवर्तन करना चाहते हैं। ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ हमारी बगावत एक निहत्थी और खुली बगावत है। हिन्दुस्तान का एक महत्व-पूर्ण हाल अपने विदेशी शासकों के साथ एक भीषण किन्तु मित्रता पूर्ण लड़ाई लड़ने में लगा है।

लेकिन आज इस कार्य में उसे किसी विदेशी सत्ता की सहायता की तनिक भी जरूरत नहीं है। अगर आपका यह ख्याल हो कि ऐसे समय, जबकि हिन्दुस्तान पर आपके हमले की भावना बढ़ी चढ़ी है, मित्रराष्ट्रों को परेशान करने के लिए ही हमने यह खास मौका चुना है। तो मैं कहूँगा कि आपका यह खयाल गलत है क्योंकि मैं जानता हूँ कि आपको बिल्कुल गलत खबर पहुंचाई गई है। अगर हम ब्रिटेन के सङ्कट से लाभ उठाना चाहते हैं तो करीब ३ साल पहले, जब लड़ाई छिड़ी थी, हम वैसा कर सकते थे।

ब्रिटिश हुकूमत को हिन्दुस्तान से हटाने के लिए जो आन्दोलन हमने शुरू किया है, उसका कोई गलत अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए सच तो यह है कि हिन्दुस्तान की आजादी के बारे में आपकी चिन्ता के जो समाचार हमें मिलते हैं वे यदि विश्वसनीय हों, तो कोई वजह नहीं मालूम होती कि ब्रिटेन के हिन्दुस्तान की आजादी को मान लेने के बाद आप उस पर कोई हमला करें? साथ ही, चीन पर किए गए आपके क्रूर आक्रमणों के साथ आपकी इस कही जाने वाली चिन्ता का कोई मेल भी तो नहीं बैठता।

मैं आपसे कह देना चाहता हूँ कि अगर आप यह मानते हों कि लोग हिन्दुस्तान में खुशी २ आपका स्वागत करेंगे तो वह बिल्कुल गलत होगा। ऐसा कोई भ्रम आप अपने दिल में नहीं रखिये वर्ना आपको बुरी तरह पछताना पड़ेगा। अँग्रेजों को हिन्दुस्तान से हटाने के आन्दोलन का लक्ष्य और हेतु तो यह है कि उसे स्वतन्त्र बनाकर इस लायक बनाया जाय कि वह सब प्रकार की सैनिक

और साम्राज्यवादी महत्वाकाँक्षाओं का डटकर मुकाबिला कर सके, फिर चाहे वह ब्रिटिश साम्राज्यवाद हो, चाहे आपके साँचे में ढला हुआ कोई और वाद हो। अगर हम ऐसा नहीं करते, तो अपनी इस श्रद्धा के बावजूद कि अहिंसा की रसायन द्वारा ही संसार की सैनिक वृत्ति और सैनिक महत्वाकाँक्षाओं को बदला जा सकता है, हम दुनिया के बढ़ते हुए सैनिकवाद के असहाय और हीन दर्शक ही रह जाते हैं।

खुद मुझे इस बात का डर है कि हिन्दुस्तान की आजादी का एलान किए बिना मित्रराष्ट्र धुरीराष्ट्रों के उस गुट को हराने में कभी समर्थ न हो सकेंगे, जिसने हिंसा को धर्म का सा उच्च स्वरूप दे दिया है। मित्रराष्ट्र आपको और आपके साथियों को तब तक हरा नहीं सकते, जब तक कि आपकी क्रूरता और युद्ध कौशल में भी वे आपको पछाड़ न दें। अगर वे आपके इन तरीकों का अनुकरण करेंगे तो निश्चय ही उनकी इस घोषणा का कोई अर्थ न रह जायगा कि वे संसार को प्रजातन्त्र और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के लिए सुरक्षित रखना चाहते हैं। मैं महसूस करता हूँ कि उनके लिए आपकी इस क्रूरता का अनुकरण करने से बचने की शक्ति प्राप्त करने का एक ही उपाय है, और वह यह है कि वे इसी क्षण हिन्दुस्तान की आजादी का एलान करें और उसे अमली रूप दें ताकि असन्तुष्ट हिन्दुस्तान का जबरदस्ती से प्राप्त किया जाने वाला सहयोग स्वतन्त्र हिन्दुस्तान के स्वेच्छापूर्ण सहयोग से बदल सके।

हमने ब्रिटेन के और मित्रराष्ट्रों के सामने न्याय के नाम पर, उनके अब तक के अपने दावों के सबूतों के तौर पर, और उनके निज के हित की सिद्धि के लिए अपनी यह माँग पेश की है। आपसे मैं मानवता के नाम पर अपील करता हूँ। मुझे यह देखकर ताज्जुब होता है कि आप यह समझ नहीं पा रहे कि क्रूरतापूर्ण युद्ध किसी एक की बपौती नहीं है। इसमें कोई शक नहीं कि अगर मित्रराष्ट्र आपको न हरा सकें, तो दूसरी कोई ताकत आपके तरीके से बढ़िया तरीके निकालकर आप ही के हथियार से आपको हरा देगी। अगर आप जीत भी गए तो अपने इन क्रूर कर्मों का स्तुति-गान करने में उन्हें किसी प्रकार के गर्व का अनुभव न हो सकेगा, फिर भले ही आपके ये क्रूरकर्म,

कितनी ही चतुराई और निपुणता के साथ क्यों न किए गए हों।

अगर आपकी जीत भी हुई तो उससे यह साबित न होगा कि आपका पक्ष सच्चा था। उससे तो सिर्फ यही साबित होगा कि आपकी संहारक शक्ति बढ़ी चढ़ी थी। स्पष्ट ही यह बात मित्रराष्ट्रों को भी लागू होती है। बशर्ते कि एशिया और अफ्रीका के दूसरे सभी पराधीन देशों को स्वतन्त्र करने की प्रतिज्ञा और प्रमाण के रूप में वे हिन्दुस्तान को स्वतन्त्र करने का न्याय और पुण्य कार्य इसी क्षण न करें।

ब्रिटेन से जो अपील हमने की है, उसमें हमने यह भी कहा है कि स्वतन्त्र हिन्दुस्तान मित्रराष्ट्रों को अपनी फौज हिन्दुस्तान में रखने देगा। हमारी यह तजवीज इस बात का सबूत है कि हम मित्रराष्ट्रों को उनके कार्य में किसी प्रकार की हानि पहुँचाना नहीं चाहते। अपनी इस तजवीज के जरिये हम आपको भी यह जताना चाहते हैं कि कहीं भूल से आप यह न समझ लें कि ब्रिटेन के हटते ही आप आसानी से हिन्दुस्तान में अपना शासन जमा सकेंगे। यहाँ यह दोहराने की तो जरूरत ही नहीं कि अगर आपने ऐसा कोई ख्याल अपने दिल में रखा और उस पर अमल किया तो हमारा देश जितनी भी ताकत बटोर सका, उतनी तमाम ताकत के साथ आपका मुकाबला करने में हरगिज न चूकेगा। मैं इस आशा के साथ आपसे यह अपील कर रहा हूँ कि सम्भव है, हमारे इस आन्दोलन का आप पर और आपके साथियों पर भी सही असर पड़े—वह आपको सच्चे मार्ग पर ले जाय और आपको और आपके साथियों को उस मार्ग से लौटने के लिए विवश करे जो नैतिक दृष्टि से सचमुच आपके सर्वनाश का कारण बनेगा और जिससे मानव मानव नहीं रह जायेंगे, बल्कि हृदय हीन जड़यन्त्र बन जायेंगे।

मेरी अपील का ब्रिटेन की ओर से अपनी इस अपील का जवाब मिल सकता है, उसके मुकाबिले आपकी ओर से अपनी इस अपील का जवाब मिलने की मुझे बहुत ही कम आशा है। मैं जानता हूँ कि अंग्रेजों

में न्याय बुद्धि का नितान्त अभाव नहीं है। और वे मुझे पहचानते भी हैं। मगर मैं आपको इतना नहीं जानता कि आपके बारे में कोई फैसला दे सकूँ। आपके विषय में जितना कुछ मैंने पढ़ा है उससे तो मुझे यही मालूम हुआ है कि आप तलवार को छोड़कर और किसी की नहीं सुनते काश कि यह सब गलत हो, यानी कि ये सारी बातें आपको बुरी तरह बदनाम करने के लिए ही लिखी गई हों, और यह कि मैं आपके हृदय के किसी सच्चे तार को छू सकूँ! कुछ भी क्यों न हो—मानव स्वभाव की संवेद--शीलता में, उचित जवाब देने की उसकी क्षमता में-मुझे अमर विश्वास है। अपने इसी विश्वास के बल पर मैंने हिन्दुस्तान में जल्दी ही शुरू होने वाले नये आन्दोलन की कल्पना की है, और इसी विश्वास ने मुझे आपके नाम यह अपील लिखने को प्रेरित किया है।

आपका मित्र और शुभचिन्तक:—

१८-७-४२ मोहनदास करमचन्द गान्धी

परिशिष्ट (४)

मार्शल चाँगकाईशेक के नाम

प्रिय जनरल !

कलकत्ते में आपके साथ और आपकी उदाराशय पत्नी के साथ जो पाँच घण्टों का सम्पर्क मुझे प्राप्त हुआ वह मैं कभी नहीं भूल सकता। आजादी के लिए आपके द्वारा लड़ी जाने वाली लड़ाई के कारण मैं सदैव ही आपकी ओर आकर्षित होता रहा हूँ और आप से जो सम्पर्क और बातचीत का अवसर मुझे मिला, उसने तो चीन और उसकी समस्याओं को मेरे और भी निकट ला दिया है। बहुत दिन हुए १९०५ और १९१३ के बीच जब मैं दक्षिण अफ्रीका में था तो जोहान्सवर्ग के निवासी चीनियों के सम्पर्क में रहता था। पहले पहल तो मेरा उनसे परिचय वकील और मुवक्किल के नाते हुआ। उसके बाद दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के ओर से शुरू किए गये आन्दोलन में मेरा परिचय उनसे सहयोगियों के नाते हुआ। मारीशस में भी मैं उनके सम्पर्क में आया। उसी समय से मैंने उनकी किफायत शारी परिश्रम, साधन-सम्पन्नता और घरेलू एकता को प्रशंसा की दृष्टि से देखना प्रारम्भ किया है। बाद में भारत में कई वर्ष तक हमारे साथ एक चीनी मित्र रहे और हम सब उन्हें बहुत प्रेम करने लगे थे।

इस प्रकार मैं आपके देश की ओर अत्यधिक आकर्षित होता रहा हूँ और भारत वासियों की भाँति आपकी आजादी की लड़ाई में भी हमारी पूरी-पूरी सहानुभूति रही है। हमारे पारस्परिक मित्र जवाहरलाल नेहरू ने

जिनका चीन-प्रेम, हमारे मन से शायद ही कम होगा, चीन की लड़ाई के प्रत्येक पहलू मे हमें परिचित रक्खा है।

चीन के प्रति इन भावनाओ के कारण और क्योंकि मेरी यह परम इच्छा है कि हमारे दोनो देश एक दूसरे के अधिक निकट आएँ और पारस्परिक हित के लिये एक दूसरे मे सहयोग करें, मैं आपको यह बताने के लिये उत्सुक हूँ कि भारत से ब्रिटिश सत्ता के हटाये जाने के लिये जो माँग हमने शुरू की है उसका तात्पर्य जापान के विरुद्ध, भारत के रक्षा-प्रबन्ध को किसी भी प्रकार कमजोर करने अथवा आपके द्वारा लड़े जाने वाले युद्ध में किसी भी प्रकार आपकी परेशानी बढ़ाने को नही हैं। भारत किसी भी आक्रमणकारी के सामने नहीं झुकेगा और उसका मुकाबिला करेगा। मैं आपके देश की आजादी का बलिदान कर अपने देश की आजादी खरीदने का गुनाह नहीं करूँगा मेरे सामने यह समस्या उठती ही नहीं, क्योंकि मुझे यह स्पष्टतः दिखाई देता है कि भारत को इस प्रकार आजादी प्राप्त नहीं हो सकती और भारत या चीन पर जापान के प्रभुत्व मे हममें से एक के या दूसरे के देश को और विश्व की शान्ति को हानि ही पहुँचेगी जापान के उस प्रभुत्व को रोकना ही होगा और मैं भारत को अपना कर्त्तव्य पालन करते देखना चाहूँगा।

मेरा कहना है कि जब तक भारत गुलाम है वह अपना उपरोक्त कर्त्तव्य पालन नहीं कर सकता। मलाया, सिंगापुर और बर्मा की घटनाओं को भारत ने एक असहाय दर्शक की दृष्टि से देखा है। हमें इन दुखद घटनाओं से सबक लेना चाहिये और प्रत्येक उपाय से इन दुर्भाग्य-पूर्ण देशों में होने वाली घटनाओं की पुनरावृत्ति को रोकना चाहिये। परन्तु जब तक हम इन्हें रोकने के लिये कुछ भी नहीं कर सकते और वही घटनाएँ भारत में भी हो सकती हैं तथा इस प्रकार विनाशकारी रूप से भारत और चीन को पंगु बना सकती है। मैं इस दुखपूर्ण घटना को दोहराये जाते हुये नहीं देखना चाहता।

ब्रिटिश सरकार ने हमारे सहायता के प्रस्तावों को बारबार अस्वीकार किया है और क्रिप्स मिशन की हाल की असफलता ने हमारे दिल। में एक गहरा घाव छोड़ दिया है। हमारे मन की इस पीड़ा में से भारत स्वयं अपनी रक्षा कर

सके और चीन को अपनी सामर्थ्य भर सहायता दे सके।

मैंने आपको अहिंसा में अपने परम विश्वास के बारे में बताया है और यदि सारा राष्ट्र इसे अपना ले तो इसके अचूक प्रभाव में मेरी आस्था है। मेरा यह विश्वास आज भी उतना ही अटल है जितना पहले था। परन्तु मैं सोचता हूँ कि भारत को आज यह विश्वास इतनी मात्रा में नहीं है। आजाद भारत की सरकार राष्ट्र के विभिन्न अंगों के प्रतिनिधित्व के आधार पर ही कायम होगी।

आज सारा भारत अपने को असहाय और निराश महसूस कर रहा है भारतीय सेना में अधिकांशतः लोग गरीबी के दबाव के कारण भर्ती हुए हैं। उनके सामने कोई आदर्श या उद्देश्य नहीं हैं और किसी भी दृष्टि से भारतीय सेना को राष्ट्रीय सेना नहीं कहा जा सकता। इसमें से जो किसी आदर्श के लिए अथवा भारत और चीन के लिये अहिंसात्मक उपायों द्वारा अथवा शस्त्रास्त्रों द्वारा लड़ने की इच्छा भी रखते हैं, वे विदेशी जुए के नीचे रहने के कारण ऐसा नहीं कर सकते। हमारे देशवासी यह भी जानते हैं कि आजाद भारत न केवल अपने लिये बल्कि चीन और विश्व--शक्ति के लिये भी निश्चयात्मक कार्य्य कर सकता है। मेरे जैसे बहुत से व्यक्ति यह महसूस करते हैं कि इस असहाय अवस्था में रहना और जब कि कुछ कार्य करने का मार्ग खोला जा सकता है, उस समय घटना–चक्र को अपने आप चलने देना न तो न्याय संगत ही है और न मानवोचित। अतः वे महसूस करते हैं कि आजादी प्राप्त करने के लिये प्रत्येक उपाय किया जाना चाहिये। ब्रिटिश सत्ता से भारत और ब्रिटेन के बीच अस्वाभाविक सम्बन्ध को तत्काल समाप्त किये जाने के लिये मेरी माँग का यही इतिहास है।

यदि हम यह उपाय नहीं करेंगे तो भारतीय जनमत के गलत और हानिकारक मार्ग अपनाने का भारी खतरा है। इस बात की प्रत्येक सम्भावना है कि केवल भारत में ब्रिटिश सत्ता को कमजोर करने के लिये ही भारतीयों के हृदय में जापान से आन्तरिक सहानुभूति पैदा हो जायेगी। यह भावना बढ़ते--बढ़ते इस विश्वास में भी परिणत हो सकती है कि अपनी आजादी

प्राप्त करने के लिए हम कभी भी दूसरों की ओर नहीं ताकेंगे। हमें आत्म-विश्वास पैदा करना होगा और स्वयं अपनी मुक्ति प्राप्त करने की सामर्थ्य भी। यह तभी हो सकता है जब हम अपने आपको गुलामी से आजाद करने के लिए एक दृढ़ प्रयास करें। यह आजादी आज एक अनिवार्यता बन गई है। ताकि हमें दुनिया के आजाद राष्ट्रों की पंक्ति में उचित स्थान मिल सके।

यह पूर्णतः स्पष्ट करने के लिए कि हम जापानी आक्रमण को प्रत्येक उपाय से रोकना चाहते हैं; मेरी व्यक्तिगत राय है, और मुझे विश्वास है कि आजाद भारत की सरकार भी इससे सहमत होगी, कि मित्रराष्ट्र हमारे साथ की गई सन्धि द्वारा भारत में अपनी फौजों को रख सकेंगे और जापान के सम्भावित आक्रमण के विरुद्ध भारत को अड्डा बना सकेंगे।

मेरे द्वारा आपको यह आश्वासन दिये जाने की कोई आवश्यकता नहीं है कि भारत में नए आन्दोलन का प्रवर्तक होने के नाते मैं जल्दबाजी में कोई काम नहीं करूंगा। मेरा प्रोग्राम चाहे जो भी हो यह ख्याल मुझे सदैव रहेगा कि उससे चीन में जापान की आक्रमणात्मक कार्रवाई को प्रोत्साहन तो नहीं मिलता। मैं एक ऐसे प्रस्ताव के लिए सारी दुनियाँ का समर्थन प्राप्त करने की कोशिश कर रहा हूँ जो कि मुझे स्वयंसिद्ध दिखाई देता है और जिसके द्वारा भारत और चीन की रक्षा की शक्ति बढ़ेगी ही। मैं भारत में जनमत को तय्यार और अपने साथियों के साथ परामर्श कर रहा हूँ। यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं कि ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध मैं जो भी आन्दोलन प्रारम्भ करूंगा वह पूर्णतः अहिन्सात्मक होगा। मैं ब्रिटिश अधिकारियों के साथ मुठभेड़ न लेने के लिए प्रत्येक चेष्टा कर रहा हूँ। परन्तु यदि भारत की आजादी हासिल करने के लिए, जो कि इस समय हमारा तत्कालिक उद्देश्य है, ब्रिटेन से मुठभेड लेनी आवश्यक ही हो गई तो मैं कोई भी खतरा, चाहे वह कितना ही भारी क्यों न हो, उठाने में संकोच नहीं करूंगा।

बहुत शीघ्र ही आप जापान के आक्रमण तथा हमले के विरुद्ध अपने मुकाबिले के और चीन के लिए भीषण दुख और मुसीबतों के पाँच वर्ष पूरे कर लेंगे। चीन की जनता के लिए मेरे हृदय में गहरी सहानुभूति है और उनके अपने देश की आजादी तथा एकता के लिए किए जाने वाले बहादुराना युद्ध तथा अपरिमित त्याग के लिये अत्यधिक प्रशंसा है। मुझे विश्वास है कि यह वीरता और बलिदान व्यर्थ नहीं जायेगे। इनका परिणाम अवश्य ही निकलेगा। अतः आपको, श्रीमती चाँग को और चीन के महान राष्ट्र को मैं आपकी सफलता के लिए हार्दिक और सच्ची सद्भावनाएँ भेजता हूँ। मैं उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा हूँ जबकि आजाद भारत और आजाद चीन मैत्री और भ्रातृभाव से एक दूसरे की सहायता करेंगे, जो कि न केवल उनके लिए बल्कि सारे एशिया और सारे संसार के लिए लाभदायक प्रमाणित होगी।

आपकी स्वीकृति का अनुमान कर मैं इस पत्र को "हरिजन" में प्रकाशित कर रहा हूँ।

आपका मित्र

मोहनदास करमचन्द गान्धी

परिशिष्ट (५)

गान्धी वायसराय पत्र व्यवहार

(*)(*)(*)(*)

नव वर्ष से पूर्व संध्या १९४२ ई०

प्रिय लार्ड लिनलिथगो !

यह पत्र बहुत ही व्यक्तिगत है । मैं इस वर्ष को बिना उस बोझ को अपने हृदय पर से हटाए जो आपके विरुद्ध हृदय में संघर्ष और विरोध की भावनाओं के कारण लद गया है, समाप्त न होने दूंगा । मैंने ऐसे कितने ही दिन गुजारे और विरुद्ध उमड़ती भावनाओं को दबाए रक्खा है । मेरा विचार है कि हम दोनों दोस्त थे । इस विचार को कि हम दोनों दोस्त थे शायद हम दोनों ही प्यार करेंगे परन्तु ९ अगस्त से अब तक जो कुछ हुआ है उससे मुझे आश्चर्य होता है । आया आप भी मुझे अपना मित्र मानते हैं या नहीं । शायद आपकी इस गद्दी पर बैठने वाले वायसराय से कभी मेरा इतना निकट सम्बन्ध नहीं रहा ।

आपके द्वारा मेरी गिरफ्तारी, उस पर प्रकाशित विज्ञप्ति, राजा जी को दिए गये उत्तर और उनके कारण मिस्टर एमरी द्वारा लगाये गये मुझ पर आरोप और ऐसी ही अनेक बातें, जिन्हें मैं एकत्र कर सकता हूँ, इस बात को दिखाती हैं कि जरूर इस बीच कहीं न कहीं मेरी ईमानदारी पर अविश्वास

किया गया है । इस सम्बन्ध में दूसरे काँग्रेस-जनों का नाम तो यों ही आ गया है। काँग्रेस पर लगाये गए आरोपों की जड़ मैं मालुम देता हूँ । अगर मैं अब तक भी आपका मित्र हूँ तो किसी सख्त कार्यवाही करने से पूर्व मुझे बुलाया क्यों नहीं और मुझे अपने सन्देह बता कर उन बातों के बारे में अपना विश्वास पक्का क्यों नहीं कर लिया ? दूसरे जिस दृष्टि से मुझे देखते हैं मैं भी अपने को उसी दृष्टि से देख सकता हूँ, पर इस सम्बन्ध में मैं वैसा नहीं कर सका। इस सिलसिले में सरकार की ओर से जितने वक्तव्य दिए गए हैं मैं देखता हूँ, स्पष्ट असत्य हैं। मैं इतनी कृपा से भी गिर गया कि मुझे एक मरते हुये मित्र से भी सम्पर्क न कायम करने दिया गया मेरा मतलब प्रो० भंसाली से है जो चिमूरकाण्ड के सम्बन्ध में उपवास कर रहे हैं। यद्यपि मेरे पास सरकारी सेन्सर द्वारा प्राप्त अखबारों की कटी छटी खबरों के अलावा कोई आधार नहीं है तो भी मुझसे आशा की जाती है कि मैं कुछ काँग्रेस जन कहे जाने वाले व्यक्तियों की हिंसा की निन्दा करूँ। मैं लिखने को बहुत लिख सकता हूँ, पर मुझे यह दुख कथा लम्बी नहीं करनी है। मुझे विश्वास है कि जितना लिखा है उससे ही आप त्रिगल को पूरा कर लेंगे।

आप जानते हैं कि १९१४ के अन्त में दक्षिणी अफ्रीका से लौटते समय एक सन्देश लाया था जो मुझे १९०६ में सूझा था—अर्थात मानव जीवन के सभी क्षेत्रों में हिंसा और असत्य के स्थान पर सत्य व अहिंसा का प्रचार करना। सत्याग्रह के कानून में हार नहीं है। जेल इस सन्देश के प्रचार के अनेक तरीकों में से है, पर इनकी भी अपनी सीमाएं हैं। आपने मुझको ऐसे स्थान पर कैद कर दिया है जहाँ मनुष्य के लिए प्रत्येक सुख और सुविधा उपस्थित हैं। मैंने सुखोपभोग की दृष्टि से नहीं कर्तव्य की भावना से इन सुविधाओं का लाभ उठाया है। जिन लोगों के हाथ में सत्ता है वह जरूर ही किसी दिन निर्दोष लोगों पर किए गये अन्याय का अनुभव करेंगे ऐसी मुझे आशा है। मेरा विचार था कि छः माह तक रह देखूँ। इस अवधि के साथ ही धैर्य भी समाप्त हो रहा हैं। परीक्षा की घड़ियों में सत्याग्रह के कानून में एक मार्ग निर्देशित किया गया है। एक वाक्य में वह उपवास द्वारा शरीर

की आहुति देना है। सत्याग्रह के कानून में यह अन्तिम उपाय है। जब तक इससे बच सकूँ, मैं इसका आश्रय लेना नहीं चाहता। मेरी भूलें मुझे समझा दीजिए मैं सुधार लूँगा। आप मुझे मिलने के लिए बुला सकते हैं या किसी ऐसे व्यक्ति को जो आपका विश्वासपात्र होने के साथ ही आपके विचारों को भली भांति जानता हो मुझे समझाने के लिए भेज सकते हैं। कुछ करना चाहें तो दूसरे भी कई रास्ते हैं। क्या शीघ्र जवाब की आशा करूँ? नव वर्ष में हम सबको शान्ति मिले, मेरी यही कामना है।

आपका सच्चा मित्र

मो० क० गाँधी

वायसराय का जवाब

१३ जनवरी १९४३ ई०

प्रिय मि० गान्धी!

आपके ३१ दिसम्बर के व्यक्तिगत पत्र के लिये धन्यवाद। यह मुझे अभी मिला है। इसके व्यक्तिगत ढङ्ग को मैं मानता हूँ और स्पष्टता का स्वागत करता हूँ। मेरा उत्तर भी उतना ही स्पष्ट और व्यक्तिगत होगा जितना आप चाहते हैं जितना आपका पत्र खुद था।

आपका पत्र पाकर मुझे प्रसन्नता हुई क्योंकि मैं इन महीनों बहुत परेशान रहा हूँ। यह बात मैं उतने स्पष्ट रूप से कह रहा हूँ जितनी मित्रता देखते हुये होनी चाहिये। प्रथमतः मेरी परेशानी का कारण काँग्रेस द्वारा अगस्त में निर्धारित नीति है और दूसरे जब इसके परिणाम में देश के भीतर हिन्सा और अपराध बढ़े, जिनका बढ़ना जरूरी था तो आपने या काँग्रेस कार्यसमिति के किसी भी सदस्य ने उनकी निन्दा में एक भी शब्द न कहा। मैं भारत पर विदेशी इसले की कोई बात नहीं कहता जब आप पहले पहल पूना में आये

तो मुझे मालूम हुआ कि आपको अखबार नहीं मिलते। मैंने इसे ही आपकी खामोशी का कारण समझा। जब आपको और कांग्रेस कार्यसमिति के सदस्यों को उनकी इच्छानुसार अखबार देने का प्रबन्ध कर दिया तो मैं निश्चित था कि अखबारों में घटनाओं की खबरें हैं उन्हें पढ़कर आप को भी उतनी ही परेशानी और दुख हुआ होगा जितना हम सबको हुआ। और आप स्पष्ट उनकी निन्दा करने तथा दूर-दूर तक जाहिर कराने के लिये परेशान होंगे। पर ऐसा नहीं हुआ। इससे मुझे सचमुच बड़ी निराशा हुई। मेरी निराशा उस समय और भी बढ़ जाती है जब मैं इन हत्याओं का, पुलिस अफसरों को जीवित जला देने का, सम्पत्ति के नाश और विद्यार्थियों की गुमराही का ख्याल करता हूँ, जिन्होंने भारत की नेकनामी और कांग्रेस पार्टी को इतनी हानि पहुँचाई है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि जिन खबरों का आपने जिक्र किया है उनकी मजबूत बुनियाद है। मैं तो चाहता हूँ वे निराधार होतीं क्योंकि उनकी कहानी बुरी है। मुझे भली भांति ज्ञात है कि कांग्रेस आन्दोलन, कांग्रेस और उसके पीछे चलने वालों पर आपकी बात का बड़ा असर है मैं स्पष्ट कहता हूँ, यदि मैं इस बात का अनुभव कर सकूँ कि इन सब का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व आप पर नहीं है। (यह दुख जनक है कि जब प्रारम्भिक उत्तरदायित्व नेताओं का है तो दूसरों को कानून तोड़ने वाले या उसके शिकार बन जाने के लिये नतीजा भुगतना पड़ेगा)

लेकिन अगर आप के पत्र को पढ़ कर मैंने उसका मतलब यह समझा है कि जो हुआ उनके प्रकाश में आप अपना कदम पीछे हटाना चाहते हैं और पिछली गर्मी (अगस्त) में जो नीति निर्धारित की थी उससे अपने आपको अलग करना चाहते हैं तो मुझे इसकी सूचना देदें। मैं इस सम्बन्ध में तुरन्त आगे विचार करूँगा। लेकिन अगर मैं आपकी मंशा नहीं समझ सका तो बिना देर किये मुझे सूचित कीजिये यह किस सम्बन्ध में है। आप यह भी बताएँ कि मेरे सामने कौन निश्चित प्रस्ताव रखना चाहते हैं। आप इन कई वर्षों के बाद मुझे भली भाँति जान गए हैं इसलिये मेरा विश्वास करेंगे, कि मुझको जो भी सन्देश आप से मिलेगा, उसे पढ़ कर पूरा विचार

करूँगा। आपकी भावनाओं और प्रयोजनों को गहरी चिन्ता के साथ समझने को उत्सुक हूँ।

आपका—
लिनलिथगो

महात्मा गान्धी का प्रतिउत्तर

(व्यक्तिगत)

१९ जनवरी १९४३ ई०

प्रिय लार्ड लिनलिथगो !

आपका १३ जनवरी का कृपा पत्र कल ढाई बजे शाम को मिला। मैं आपसे पत्र पाने की आशा मार चुका था। इस अधीरता के लिए क्षमा कीजियेगा। यह जानकर कि आप से मेरी दोस्ती का सम्बन्ध टूटा नहीं है, जैसा पत्र में है, मैं खुश हूँ।

मैंने ३१ दि० के पत्र में कुछ अप्रसन्नता प्रकट की है और जवाब में आपने भी नाराजी दिखाई। तात्पर्य यह कि आप मेरी गिरफ्तारी को ठीक मानते हैं तथ आपकी राय में जिन भूलों का अपराधी मैं हूँ उनके लिए आप दुखी हैं।

मुझे डर है कि आपने मेरे पत्र का सही नतीजा नहीं निकाला। मेरे पत्र का जो आपने अर्थ निकाला उसे ध्यान में रख कर आपका पत्र पढ़ने से मुझे आपका मत जब स्पष्ट न हुआ कि आप चाहते क्या हैं। मैं उपवास करना चाहता था और यदि पत्र व्यवहार का कोई नतीजा न निकला और देश में चीजों के अकाल के कारण देश के लाखों लोगों को जो कष्ट भोगना पड़ रहे हैं और इसके अलावा देश में जो (तोड़ फोड़ और दमन

आदि इ०) हो रहा है उसको यदि मुझे एक असहाय व्यक्ति की भाँति देखने को विवश होना पड़ा तो मैं अब भी उपवास करना चाहूँगा।

मेरे पत्र का आपने जो अर्थ समझा है यदि मैं स्वीकार न करूँ, तो आप चाहते हैं कि मैं आपके समक्ष कुछ निश्चित सुझाव रक्खूँ। यह मैं तभी कर सकता हूँ जब मुझे कार्य-समिति के सदस्यों के साथ रख दिया जाय।

यह स्पष्टतः आपको विश्वास है कि मैंने भूल की है। यदि आप मुझे इसका विश्वास करा देते तो मुझे किसी से सलाह करने की जरूरत न थी। जहाँ तक मेरे काम से सम्बन्ध है मैं पूर्णतः और स्पष्टतया अपनी भूल मान लेता तथा उसे परिमार्जित कर देता लेकिन मुझे यह विश्वास नहीं हुआ कि मैंने भूल की है। मुझे मालूम नहीं कि आपने २१ सितम्बर १९४२ वाले भारत सचिव के नाम पत्र को देखा है या नहीं। मैंने इसमें और १४ अगस्त वाले आपको लिखे गये पत्र में जो कहा है उस पर अब भी कायम हूँ।

निःसंदेह ९ अगस्त के बाद की होने वाली घटनाओं के लिए मुझे दुख है लेकिन क्या इसका सारा दोष मैंने भारत सरकार पर नहीं लगाया है। इसके अलावा मैं उन घटनाओं पर जिनपर न मेरा प्रभाव है और न अधिकार, एक तर्फी खबरों के आधार पर अपनी सम्मति नहीं प्रकट कर सकता। आप उन खबरों को सच मान लेने के लिए जो सरकारी महकमों के अफसर पेश करते हैं, बाध्य हैं, पर मुझसे आप ऐसी आशा नहीं कर सकते। ऐसी खबरें, अबसे पहले भी अक्सर गलत साबित हुई हैं। इसलिए मैंने अपने ३१ दि० वाले पत्र में पूछा था कि जिस सूचना के आधार पर आप अपने विश्वास पर कायम हैं, मुझे उसका विश्वास दिला दें। मुझ से आप जिस वस्तु की आशा करते हैं शायद आप स्वीकार करेंगे, उसे देने में मेरे सामने एक खास कठिनाई है।

लेकिन पहाड़ की चोटी पर खड़ा होकर भी मैं यह कह सकता हूँ

कि अहिन्सा में मेरा उतना ही विश्वास है जितना पहले कभी था । आप शायद यह न जानते होंगे कि कांग्रेस जनों की ओर से जब कभी कोई हिन्सा की गई तो मैंने उसकी स्पष्टतः खुले शब्दों में निन्दा की है, और कई बार सार्वजनिक रूप से प्रायश्चित भी किया है । इस सम्बन्ध में उदाहरण देकर मैं आपको थकाना नहीं चाहता । मैं यहाँ सिर्फ इतना कहना चाहता हूँ कि पहले कभी ऐसा करते समय मैं एक स्वतन्त्र व्यक्ति था।

इस बार जैसा कि मैं कह चुका हूँ कदम सरकार को हटाना पड़ेगा । मुझे अपनी सम्मति के विरुद्ध राय प्रकट करने के लिये क्षमा कीजिये । मुझे विश्वास है कि यदि आपने उस दमन से हाथ रोक लिया होता और मुझसे मिलना मंजूर कर लिया होता तो इससे भलाई ही होती । ८ अगस्त की रात को मैंने आप से मिलने के लिए कहा था । पर आपने मुझसे मिलना ना मंजूर कर दिया । क्या मैं आपको याद दिलाऊँ कि भारत सरकार ने आज से पूर्व भी अपनी गलतियाँ मानी हैं । जब जनरल डायर अपराधी साबित हुए तो पंजाब में उसने अपनी भूल मानी है, कानपुर में एक मस्जिद का कोना वापस देकर उसने अपनी भूल मानी है । बङ्ग भङ्ग को रद्द करके भी उसने अपनी भूल मानी है । यह सब उसने बड़े पैमाने पर की गई हिन्सा के बावजूद किया था । संक्षेप में :—

(१) अगर आप चाहते हैं कि मैं अकेला ही उस ओर कदम उठाऊं तो मुझे विश्वास करा दीजिये कि मैंने भूल की है । तब मैं उसमें काफी सुधार कर लूँगा ।

(२) यदि आप चाहते हैं कि मैं कांग्रेस की ओर से कुछ प्रस्ताव रक्खूँ तो मुझे कार्य-समिति के सदस्यों के बीच रख दीजिये । मैं आपसे इस गत अवरोध को खत्म करने के लिए निश्चय करने की प्रार्थना करता हूँ ।

यदि कोई बात स्पष्ट न हो या आपके पत्र का उत्तर पूरा न हो तो कृपया मुझे बता दें । मैं उसका संतोष जनक उत्तर देने की कोशिश करूँगा । मैं कोई बात अपने हृदय में छिपा कर रखना नहीं चाहता । मुझे मालूम हुआ है

कि मेरे पत्र आपको बम्बई की सरकार द्वारा मिलते हैं। इससे जरूर कुछ न कुछ समय व्यर्थ जाता है। चूँकि समय की बात इस सम्बन्ध में महत्व की है इसलिए इसका ध्यान रखते हुए ऐसी हिदायतें निकाल दें कि इस कैम्प के सुपरिन्टेण्डेण्ट मेरे पत्र आपको सीधे भेज दिया करें।

आपका सच्चा मित्र
मो० क० गान्धी

वायसराय का उत्तर

(व्यक्तिगत)

२५ जनवरी १९४३ ई०

प्रिय मि० गान्धी !

१—आपके १९ जनवरी के पत्र के लिए अनेक धन्यवाद। यह मुझे अभी मिला है। यह कहने की जरूरत नहीं कि मैंने उसे बहुत ध्यान से पढ़ा है। लेकिन भय है कि अब भी मैं आपकी बात समझ नहीं पाया। पहले पत्र में मैंने आपको स्पष्ट बता दिया था कि जो घटनाएँ हुईं, उनको देखते हुए और जो हुआ उसकी जो जानकारी मुझे है उनके आधार पर अनिच्छा पूर्वक मुझे काँग्रेस आन्दोलन और आपको हिन्सा और अपराध की दुख जनक हलचलों और क्रान्तिकारी कार्य्यों का उत्तरदायी मानना पड़ता है। जिनके कारण से अब तक इतनी हानि हुई और भारत की नेक नामी को धक्का लगा। आप इसके उत्तरदायी हैं क्योंकि अगस्त के निर्णय के समय आप ही इसके पूर्णसत्ता तथा अधिकार प्राप्त वक्ता थे। आपने अहिन्सा के सिलसिले में जो भी कहा है उसे ध्यान में रक्खूँगा। आपने जो हिन्सा की निन्दा की है उससे मुझे प्रसन्नता है। भूतकाल में आपने इस मुख्य सिद्धान्त को जो स्थान दिया वह मुझसे अविदित नहीं। लेकिन पिछले माह और इस समय होने वाली घटनाएँ बताती हैं कि कम से कम आपके कुछ अनुयायियों

ने इसे पूर्णतः नहीं निभाया है। आप जिस आदर्श के प्रचारक हैं उसका आचरण आपके यह अनुयायी नहीं कर सके। केवल यह बात उन लोगों के सम्बन्धियों के आश्वासन के लिए काफी नहीं है जिनकी जानें कॉंग्रेस और उसके अनुयायियों की हिन्सा पूर्ण कार्यवाहियों के कारण चली गई हैं। इससे उन लोगों को जिनकी सम्पत्ति नष्ट हुई थी कोई सुभावना नहीं मिलता। इन सब कामों का दोष आपने सरकार पर लगाया है। मुझे भय है कि मैं आपके इस कथन को इसका जवाब नहीं मानता। इस सम्बन्ध में हमारे सामने कुछ सचाइयाँ हैं। हमें उन्हें ध्यान में रखकर चलना है। पहले पत्र में मैंने साफ साफ लिखा था कि आप जो कहना चाहते हैं या खास सुझाव पेश करना चाहते हैं तो कह दें या पेश करदें। मैं इसके लिए चिन्तित हूँ। तब तक सरकार को इस सम्बन्ध में अपनी सफाई नहीं पेश करनी है। बल्कि कॉंग्रेस को और आपको पेश करनी है।

२—इस स्थिति में यदि आप यह सूचना देने के लिए उत्सुक हों कि आप ६ अगस्त के कॉंग्रेस महासमिति के प्रस्ताव से और उसके द्वारा समर्पित नीति से अलग हैं और यदि भविष्य के सम्बन्ध में भी उचित आश्वासन दें तो यह कहने की जरूरत नहीं कि मैं इससे आगे विचार करने के लिए बिल्कुल तय्यार हूँ। वास्तव में इस सम्बन्ध में साफ-साफ बात करने की बहुत ज्यादा जरूरत है। मैं जानता हूँ कि यदि मैं बात साफ शब्दों में रक्खूँ तो आप बुरा न मानेंगे।

३—बम्बई के गवर्नर को यह प्रबन्ध कर देने के लिए कह दूँगा कि वे आपके पत्र को मुझे अपनी मार्फत भेजा करें। इससे उनके पहुँचने में कम देर लगेगी।

आपका

लिनलिथगो

गान्धी जी का पत्र

२६ जनवरी १९४३ ई०

प्रिय लार्ड लिनलिथगो !

आपने मेरे १९ जनवरी के पत्र का जवाब तुरन्त दे दिया इसके लिए मुझे आपको धन्यवाद जरूर देना चाहिये। आप कहते हैं आपका पत्र बिलकुल स्पष्ट है। मैं चाहता हूँ कि मैं भी इससे सहमत होता। इसका मुझे विश्वास है कि आपका स्पष्टता से मतलब किसी एक खास राय से नहीं है। मैंने आपसे प्रार्थना की है और जब तक जीवित रहूँगा करूंगा कि मुझे इस बात का विश्वास दिला दें कि ९ अगस्त के बाद जनता की ओर से जो हिंसा हुई, यद्यपि वह सब काँग्रेस नेताओं की सामूहिक गिरफ्तारियों के बाद हुआ उसका कारण काँग्रेस का अगस्त का प्रस्ताव है। क्या प्रकाशित हिंसा की जिम्मेदारी सरकार की कठोर और अवाँच्छनीय कार्यवाही पर नहीं है।

आपने तो यह भी नहीं बताया कि काँग्रेस प्रस्ताव का कौन सा भाग बुरा या आपत्ति जनक है। उस प्रस्ताव का कतई यह मतलब नहीं कि काँग्रेस ने अहिंसा की नीति छोड़ दी है। वह निश्चित रूप से हर प्रकार से फासिज्म के विरुद्ध है। जिन स्थितियों में सारे देश के लोग लड़ाई में प्रभावशाली सहयोग दे सकते हैं उन स्थितियों की बात भी उसमें है। यह क्या कम दोषारोपण का कार्य है? प्रस्ताव के उस भाग पर जिसमें जन-आन्दोलन की बात है, एतराज किया जा सकता है। लेकिन एतराज का कारण केवल सत्याग्रह का विचार तो नहीं हो सकता, क्योंकि "गान्धी इरविन पैक्ट" में सविनय अवज्ञा का सिद्धान्त व्यवहार में मान लिया गया है। और फिर यह आन्दोलन भी तो उस मुलाकात से पूर्व प्रारम्भ होने वाला न था जिसकी आशा मैं आपसे लेने वाला था।

अब उन दोषारोपणों को लीजिये जो भारत मन्त्री जैसे जिम्मेदार अधिकारी ने मुझपर और काँग्रेस पर किए हैं । ये इल्जाम अभी साबित नहीं हुए और मेरी राय में साबित भी न होंगे ।

निसन्देह मैं सुरक्षित रूप से यह कह सकता हूँ कि अपनी कार्यवाही के औचित्य का सिद्ध करना, बयानों से नहीं प्रत्युत ठोस सबूतों से सरकार का काम है । लेकिन जो लोग "काँग्रेस-जन" की ख्याति पा गये हैं उनके द्वारा की गई हत्याओं का जिम्मेदार आप मुझे ठहराते हैं । हत्याओं की वास्तविकता मैं आशा करता हूँ; मैं भी वैसे ही देख रहा हूँ जैसे आप । इस सम्बन्ध में मेरा उत्तर है कि सरकार ने लोगों को उत्तेजना से पागल कर दिया । उसने गिरफ्तारी के रूप में शेर की भाँति भयावनी हिन्सा शुरू करदी यह हिन्सा इतने पैमाने पर बढ़ गई कि उसने ही "हिन्सा का विरोध न करो" ईसा की इस नीति को तो क्या—जान के बदले जान लेने की मूसा की नीति को भी हटा दिया है और उसके स्थान पर एक के बदले दस हजार की नीतिं को कायम कर दिया है । सरकार ने जो सर्वशक्ति सम्पन्न थी, जिन दमनकारी तरीकों का सहारा लिया उसका मैं कोई दूसरा अर्थ नहीं निकाल सकता ।

इनमें उन करोड़ों की दर्दनाक कहानियां भी जोड़ दीजिये जो भारत व्यापी आवश्यक चीजों के अभाव के कारण उठानी पड़ रही हैं । मैं इस खयाल के अलावा और कुछ सोच ही नहीं सकता कि अगर जनता की चुनी हुई एसेम्बली के प्रति जवाब देह एक वाँच्छित राष्ट्रीय सरकार होती तो जनता की ये तकलीफें अगर बिल्कुल मिट न गई होतीं तो कुछ कम जरूर हो जातीं । यदि ऐसी स्थिति में कोई उपयुक्त दवा न मिली तो मुझे अपनी सामर्थ्य के अनुसार उपवास करना पड़ेगा जो सत्याग्रहियों के लिये एक विहित कानून है । मैं ९ फरवरी के प्रातःकाल के नाश्ते के बाद २१ दिन का उपवास शुरू कर दूँगा जो २ मार्च को सुबह खत्म होगा । प्रायः अपने उपवास के सिलसिले में मैं नमक मिला पानी पीता हूँ । लेकिन आज

छल पानी मेरे पेट के अनुकूल नहीं पड़ता इसलिए इसबार मैं पानी को पीने लायक बनाने के लिये खट्टे नीबू का रस मिलाकर लूँगा। मैं आमरण अनशन नहीं करना चाहता बल्कि यदि प्रभु की इच्छा हो तो अग्नि परीक्षा के बाद जिन्दा रहना चाहता हूँ। यह उपवास इससे भी पहले समाप्त हो सकता है यदि सरकार इस कष्ट से मुक्त करने के लिए आवश्यक दवा दे सके।

मैं पहले दो पत्रों की तरह इस पत्र पर व्यक्तिगत शब्द नहीं लिख रहा हूँ। वे पत्र किसी माने में गोपनीय न थे तो भी उनमें व्यक्तिगत प्रार्थना थी।

आपका सच्चा मित्र

मो० क० गान्धी

पुनश्च:—यह बात भूल से रह गई थी।

सरकार ने एक खास बात भुला दी है कि अगस्त के प्रस्ताव में काँग्रेस ने अपने लिए कुछ भी नहीं माँगा था उनकी माँगे देश की समूची जनता के लिए थीं। काँग्रेस इस बात के लिए तय्यार थी और उसकी इच्छा भी थी, जैसा आपको ज्ञात होगा, कि सरकार कायदे आजम जिन्ना को युद्ध काल के लिए आवश्यक कुछ सर्व-सम्मत के आधीन ऐसी राष्ट्रीय सरकार बनाने के लिये कहे जो बाकायदा चुनी हुई एसेम्बली के प्रति जबाबदेह हो। श्रीमती सरोजनीदेवी के सिवा कार्यसमिति के सदस्यों से अलग रहने के कारण मैं नहीं जानता कि इस समय उनका क्या विचार है तो भी सम्भवतः उन्होंने अपना विचार बदला न होगा।

वायसराय का जवाब

३ फरवरी १९४३ ई०

प्रिय मि० गान्धी,

आपके २९ जनवरी के पत्र के लिए जो मुझे अभी मिला अनेक

धन्यवाद । मैंने इसे हमेशा की तरह बड़ी सावधानी से आपके तर्कों को पूर्णतः समझने के लिये और आपके विचार जानने की भावना से पढ़ा पर मेरा यह विचार कि पिछली गर्मियों में देश में जो गड़बड़ी फैली उसके लिये काँग्रेस और आप जवाबदेह हैं नहीं बदला है। मैंने अपने पिछले पत्र में कहा था कि घटनाओं की अपनी जानकारी के बाद मेरे सामने इसके सिवा कोई रास्ता नहीं रह गया है कि अगस्त के कांग्रेस फैसले के समय उसके अधिकार प्राप्त नेता के रूप में आपको हिंसा और अपराधों के आन्दोलन के लिए जिम्मेदार न मानूं। इसके जवाब में आपने प्रार्थना की है कि मैं अपनी इस राय के लिए आपको विश्वास दिला दूं। आपके पत्रों में ऐसी कोई बात मुझे नहीं मिली जिससे यह मालूम हो कि आप निष्पक्ष होकर ऐसी जानकारी चाहते हैं। अगर ऐसी बात न होती तो मैंने आपकी प्रार्थना तुरन्त स्वीकार करली होती। यद्यपि आप अपने पिछले पत्र में अखबारों में छपी हुई खबरों के आधार पर पिछले दिनों घटित घटनाओं की जिम्मेदारी सरकार पर डालने में नहीं हिचके हैं, फिर भी आपने अपने प्रत्येक प्रश्न में इन खबरों पर गहरा अविश्वास जाहिर किया है। इस पिछले पत्र में तो आपने यह भी कहा है कि जिन सरकारी खबरों की सच्चाई पर मैं विश्वास करता हूँ, मैं आप से उन्हीं खबरों की सच्चाई पर विश्वास करने की आशा नहीं कर सकता। इस स्थिति में यह बात साफ नहीं है कि आप मुझसे दूसरे किस तरीके से विश्वास करने की आशा या इच्छा करते हैं। लेकिन वास्तव में भारत सरकार ने उन कारणों को कभी छुपाया नहीं है जिनके आधार पर वह कांग्रेस को और उसके नेताओं को हिन्सात्मक, ध्वंसकारी और आतङ्कवादी कार्यों के लिए जिम्मेवार ठहराती है। ये हिन्सात्मक, ध्वंसकारी और आतङ्कवादी कार्य ८ अगस्त के काँग्रेस के प्रस्ताव के बाद हुए जिसमें कांग्रेस ने अपनी माँगों को पूरा कराने के लिए जन आन्दोलन की घोषणा की, आपको उस आन्दोलन का नेता नियत किया और काँग्रेस के नेताओं के अभाव में काँग्रेसजनों को जैसा वे उचित समझें वैसा करने का अधिकार दिया। जो संस्था इन शब्दों में प्रस्ताव पास करती है उसको उस प्रस्ताव के बाद

में हुई घटनाओं की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेने से इनकार करने का कोई हक नहीं है। इस बात के सबूत हैं कि आप और आपके मित्रों को इस नीति के फलस्वरूप हिंसा होने की आशा थी, और आप इसको दरगुजर करने के लिए भी तय्यार थे इस बात के भी सबूत हैं कि यह हिंसा कांग्रेस की पहले से सोची हुई योजना का हिस्सा थी और वह कांग्रेसी नेताओं की गिरफ्तारी से पहले ही बन चुकी थी। कांग्रेस पर जो इलजाम लगाये गये हैं वे कैसे हैं यह गृह सदस्य ने १५ सितम्बर के अपने भाषण में एसेम्बली में सार्वजनिक रूप से बता दिया है। अगर आप फिर भी इस सम्बन्ध में जानकारी चाहते हों तो मैं आपको इन्हें देखने के लिए कहूँगा। सम्भव है कि अखबारों में छपा हुआ इनका बयान नाकाफी हो, इसलिए मैं इनकी पूरी नकल आपके पास भेजता हूँ। मैं केवल इतना और कह देना चाहता हूँ कि उस समय जो नतीजा निकाला गया था वह उसके बाद में मिले हुए सबूतों से सही साबित हो गया है। मेरे पास ऐसे काफी सबूत हैं। जिनसे मालूम होता है कि ध्वंसात्मक कार्रवाइयाँ काँग्रेस महासमिति के नाम से निकाली गई हिदायतों के मुताबिक की जा रही हैं प्रसिद्ध काँग्रेस जनों के हिंसा और हत्या के कामों में खुलकर हिस्सा लिया है और अब भी काँग्रेस का एक छुपा हुआ संगठन काम कर रहा है जिसमें काँग्रेस कार्य-समिति के एक सदस्य की पत्नी खास हिस्सा ले रही हैं। और बमों के धड़ाकों की योजनाओं में और दूसरे अतङ्कवादी कामों में क्रियात्मक रूप से लगी हैं जिनसे सारा देश ऊब गया है अगर हम इस सारी जानकारी पर अमल नहीं करते हैं या इसको लोगों में जाहिर नहीं कर देते हैं तो इसका सबब यह है कि उसका ठीक समय अभी आय नहीं है। लेकिन आप विश्वास रक्खें कि कभी न कभी काँग्रेस पर जो आरोप हैं उनको साबित करना ही होगा। तब आपको और आपके साथियों को अगर वे दे सकें तो दुनिया के सामने अपनी सफाई देनी होगी अगर इस बीच में उस कदम से जिसके सम्बन्ध में आप सोचते से जान पड़ते हैं, इस जिम्मेदारी से बाहर निकलने का कोई आसान तरीका तलाश करने की कोशिश करेंगे तब फैसला आपके खिलाफ जायगा।

मुझको आपकी यह बात पढ़कर कुछ ताज्जुब हुआ कि ५ मार्च १९३१ई० के दिल्ली के समझौते में जिसका जिक्र आपने "गान्धी इर्विन पैक्ट" के नाम से किया है सविनय कानून भङ्ग का सिद्धान्त साफ तौर पर मान लिया गया है। मैंने उस समझौते को फिर से पढ़ा। यह समझौता इस आधार पर हुआ था कि सविनय कानून भङ्ग को "अमली तौर पर बन्द कर दिया जायगा"। और "सरकार बदले में कुछ कदम उठायेगी" ऐसे दस्तावेज में सविनय कानून भङ्ग को स्वीकार करना स्वाभाविक था। लेकिन मुझको इसमें ऐसी कोई बात दिखाई नहीं देती जिससे यह मालूम होता हो कि सविनय कानून भङ्ग को किन्हीं भी हालतों में कानून के मुताबिक मंजूर कर लिया गया था। मैं इस बात को इससे ज्यादा साफ नहीं कह सकता कि मेरी सरकार ऐसा नहीं मानती।

आपकी बात मान ली जाय तो इसका अर्थ यह होगा कि देश की सरकार जिस पर शान्ति और व्यवस्था को कायम रखने की जिम्मेदारी है, उन राजद्रोहात्मक और क्रान्तिकारी आन्दोलनों को बिना मुकाबला किए चलने दे जिनको आपने "खुला विद्रोह" कहा है और हिन्सा की, आने जाने के साधनों में रुकावटें डालने की, निर्दोष लोगों पर हमले करने की और पुलिस अफसरों और दूसरे लोगों की हत्यायें करने की तय्यारियों को भी बिना रुकावट डाले जारी रहने दे। इसमें सन्देह नहीं है कि सरकार पर और मुझपर आपके और कांग्रेस के नेताओं के खिलाफ वक्त से बहुत पहले सख्त कार्यवाई करने का इल्जाम लगाया जा सकता है लेकिन मैं और सरकार आप को और कांग्रेस को उस जगह से हटने का प्रत्येक अवसर देने के लिए चिन्तित रहे हैं जहाँ बने रहने का आपने निश्चय कर लिया था। पिछले जून और जुलाई में दिये गए आपके वक्तव्य, कांग्रेस कार्य-समिति का १४ जुलाई का प्रस्ताव, और उसी दिन किया हुआ आपका यह एलान कि जब बातचीत की गुंजाइश नहीं रही है और

आखिर यह तो "खुला विद्रोह" है सब के सभी खतरनाक और ध्यान देने योग्य हैं, चाहे इसमें आपकी आखिरी बात "करो या मरो" को न भी शामिल करें; लेकिन फिर भी धीरज के साथ—जो शायद रखना उचित न था, यह निश्चय किया गया कि इन्तिजार किया जाय। अन्त में कॉंग्रेस महासमिति ने यह बात साफ करदी कि अगर सरकार हिन्दुस्तान के लोगों की तरफ अपनी जिम्मेवारी पूरी करना चाहती है तो अब कॉंग्रेस के रुख को और ज्यादा बरदश्त नहीं किया जा सकता।

मैं आखिर में यह कहना चाहता हूँ कि आपने जो फैसला करने की मुझे इत्तिला दी है उस पर आपकी तन्दुरुस्ती और उम्र का ख़याल करके मुझको कितना अफसोस होता है। मैं आशा करता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि आप अब भी समझदारी से काम लेंगे। उपवास के खतरों का ख्याल करते हुए उपवास करने या न कराने के फैसले आप खुद ही कर सकते हैं और उसकी और उसके नतीजों की जिम्मेवारी भी केवल आपके ऊपर ही होगी। मैं सचाई के साथ विश्वास करता हूँ कि जो कुछ मैंने कहा है उसको ध्यान में रखकर आप अपने निश्चय पर फिर अच्छी तरह से सोचें। यदि आप ऐसा करना तय करेंगे तो मैं उसका स्वागत करूँगा। मैं स्वभावतः जान बूझ कर आपको अपनी जिन्दगी खतरे में डालते हुए देखना नहीं चाहता—केवल यह ही इसका कारण नहीं है. बल्कि इसका कारण यह भी है कि मैं राजनैतिक उद्देश्य से उपवास करना राजनैतिक दबाव (हिंसा) समझता हूँ जो नैतिक दृष्टि से उचित नहीं हो सकता। मैंने आपके पहले लिखे हुए लेखों से यह भी जाना है कि आपका ख्याल भी यही है।

आपका

लिनलिथगो

महात्मा गान्धी का पत्र

५ फरवरी १९४३ ई०

प्रिय लार्ड लिनलिथगो,

मेरे २९ जनवरी के पत्र के जवाब में आपने ५ फरवरी को जो लम्बा पत्र लिखा है उसके लिए मुझे आपको धन्यवाद देना है। मैं आपकी आखरी बात पर सब से पहले विचार करूँगा। यह उस उपवास के सम्बन्ध में है जिसको मैं ९ फरवरी से शुरू करने का विचार कर रहा हूँ। एक सत्याग्रही के दृष्टिकोण से आपका पत्र मेरे लिए उपवास का निमन्त्रण है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इस कदम की जवाबदेही और उसके नतीजों की जवाबदेही मेरी अपनी होगी। आपने एक ऐसी बात कह दी है जिसको सुनने के लिए मैं तय्यार नहीं था। दूसरे पैरे के आखीर में आपने इस कदम को "जिम्मेदारी से बचने का एक आसान तरीका ढूँढने की कोशिश" कहा है। आप जैसे मित्र मेरे ऊपर ऐसा तुच्छ और कायरता पूर्ण मशा रखने का लाञ्छन लगा सकेंगे यह मैं खयाल भी नहीं कर सकता था। आपने इसको राजनैतिक दबाव भी कहा है और मेरे खिलाफ मेरे ही पिछले लेखों का हवाला दिया है। मैंने जो कुछ लिखा है मैं उसपर कायम हूँ। मैं यह मानता हूँ कि मेरा यह कदम उन लेखों के विरुद्ध नहीं है। मैं नहीं जानता कि आपने ये लेख स्वयं पढ़े हैं या नहीं।

मैं तो दावा करता हूँ कि जब मैंने आपसे अपनी भूल का विश्वास करने की बात कही तो अपनी भूल समझने के लिए अपना मस्तिष्क खुला रख कर ही कही। सरकारी खबरों में गहरा अविश्वास रहते हुए भी अपनी भूल समझने के लिए मैं तय्यार हूँ। ये दोनों बातें आपस में बेमेल नहीं हैं।

आप कहते हैं कि "मुझको उस नीति के फलस्वरूप हिन्सा होने

की आशा थी, मैं इसको दरगुजर करने के लिए तय्यार था और जो हिन्सा हुई वह काँग्रेस द्वारा नेताओं की गिरफ्तारी से बहुत पहले तय्यार किए गए कार्यक्रम का एक हिस्सा थी। आप अपने पास उसके सबूत भी बताते है। मैंने ऐसा कोई सबूत नहीं देखा है जिससे इस गम्भीर आरोप का समर्थन होता है। आपने यह मजूर किया है कि इन सबूतों का एक हिस्सा अभी प्रकाशित होना बाकी है। आपने ग्रह-सदस्य के जिस भाषण की एक प्रति मुझको भेजने की कृपा की है वह तो सरकारी वकील का शुरू आती भाषण है। इसमें कांग्रेस--जनों पर ऐसे इल्जाम लगाये गए हैं जिनका समर्थन नहीं हुआ है। इसमें सन्देह नहीं कि उन्होंने हिन्सा के विस्फोट का सुन्दर वर्णन किया है, लेकिन यह तो बताया ही नहीं कि यह विस्फोट ठीक उसी समय क्यों हुआ। आपने पुरुषों और स्त्रियों को उन पर मुकदमे चलाने से पहले ही और उनकी सफाई सुनने से पहले ही सजाएँ दे दीं। निःसन्देह जब मैं आपसे यह सबूत दिखाने को कहता हूँ जिसके आधार पर आप उनको अपराधी मानते हैं तो मैं कोई बुराई नहीं करता। आपने अपने पत्र में जो कुछ कहा है वह विश्वासोत्पादक नहीं है। सबूत इङ्गलैण्ड के कानून के मुताबिक होने चाहिएँ।

अगर काँग्रेस कार्य--समिति के सदस्य की स्त्री बम०विस्फोटों और दूसरे आतङ्कवादी कार्यों की योजनाओं में सक्रिय भाग ले रही हैं तो उन पर अदालत में मुकदमा चलाया जाना चाहिए। जिस महिला का आपने जिक्र किया है वह उन कामों को जिनको करने का उन पर इल्जाम लगाया जाता है, ९ अगस्त की सामूहिक गिरफ्तारियों के बाद ही कर सकी जिनको मैंने सिंह के जैसी हिन्सा कहा है।

आप कहते हैं कि कांग्रेस के खिलाफ जो इल्जाम हैं उनको प्रकाशित करने का समय अभी नहीं आया है। क्या आपने कभी यह भी सोचा है कि ये इल्जाम किसी निष्पक्ष अदालत के सामने पेश किए जाने पर बेबुनियाद साबित हो सकते हैं? यह भी मुमकिन है कि कुछ सजा पाये हुए आदमी इस अर्से में मर चुकेंगे या कुछ सबूत जिनको जीवित [illegible] वक्त

पेश कर सकते है तब मिलने असम्भव हो जायेंगे ?

मैं इस बात को फिर दुहराता हूँ कि ५ मार्च १९३१ को सरकार की ओर से तत्कालीन वायसराय के और काँग्रेस की ओर से मेरे बीच जो समझौता हुआ था उसमें सविनय कानून-भङ्ग का सिद्धान्त साफ तौर पर मान लिया गया था। समझौते का ख्याल करने से पहले ही खास-खास काँग्रेस-जन जेलों से रिहा कर दिए गए थे। मुझे आशा है कि यह बात आपको मालूम होगी। काँग्रेस--जनों को समझौते के मुताबिक कुछ मुआवजा भी दिया गया था। सविनय कानून भङ्ग तभी बन्द किया गया था जब सरकार ने शर्तें पूरी की थीं। यह मेरी सम्मति में उन स्थितियों में सविनय कानून भङ्ग को कानून के मुताबिक मान लेना ही था। इसलिए आपका यह कहना कुछ अजीब मालूम होता है कि सरकार सविनय कानून-भङ्ग किन्हीं भी हालतों में कानून के भीतर नहीं स्वीकार करती। आप ब्रिटेन की सरकार के रिवाज की उपेक्षा करते हैं जिसमें शान्तिपूर्ण प्रतिरोध के रूप में सविनय कानून भङ्ग को कानून के मुताबिक मान लिया गया है

आपने मेरे पत्रों में एक जगह ऐसा अर्थ निकाल लिया है जो मेरे एक पत्र में किए गये इस एलान के खिलाफ पड़ता है जिसमें मैंने कहा है कि मैं इस समय भी विशुद्ध अहिन्सावादी हूँ। क्यों कि आपके जिस पत्र का मैं जवाब दे रहा हूँ उसमें आपने कहा है कि मेरा दृष्टिकोण मान लेने का अर्थ यह होगा कि देश की अधिकार प्राप्त सरकार, जिस पर देश में शान्ति और व्यवस्था कायम रखने की जिम्मेदारी है, उन आन्दोलनों को बिना रुकावट चलने दे जिनमें हिंसा करने की, आने और जाने के साधनों को नष्ट करने की, निर्दोष लोगों पर हमले करने की और पुलिस अफसरों और दूसरे लोगों की हत्या करने की तय्यारियाँ शामिल हैं। मैं आपका एक अजीब मित्र होऊँगा जिसके सम्बन्ध में आपका विश्वास है कि वह इन अजीब बातों को कानून के मुताबिक मान लेने के लिए आपको कह सकता है।

आपने जो विचार और बयान मेरे बताए हैं उनका मैंने विस्तृत जवाब

नहीं दिया है। ऐसे जवाब के लिए न तो यह जगह है और न यह समय। मैंने केवल उन बातों को चुन लिया है जिनका जवाब तुरन्त देने की जरूरत थी। मैंने अपने लिए जो परीक्षा चुनी है उससे बचने के लिये आपने कोई रास्ता खुला नहीं रहने दिया। मैं इसका आरम्भ ९ फरवरी को करूँगा और उतना निर्मल अन्तःकरण लेकर करूँगा जितना सम्भव है। आपने इसको राजनैतिक दबाव (हिंसा) कहा है, फिर भी उच्चतम अदालत के सामने यह मेरी न्याय की अपील है जिसे मैं आप से प्राप्त नहीं कर सका हूँ। अगर मैं इस अग्नि-परीक्षा में से जीवित नहीं बच सका तो मैं उस न्यायाधीश के सम्मुख अपनी निर्दोषिता का पूरा विश्वास लेकर जाऊँगा। हमारी आने वाली पीढ़ियाँ एक सर्व-शक्तिमान सत्ता के प्रतिनिधि के रूप में आपके और अपने देश और उसके द्वारा मानवता की सेवा का प्रयत्न करने वाले एक विनीत मानव के रूप में मेरे बीच न्याय करेंगी।

मेरा पहला पत्र जल्दी में लिखा गया था इसलिए एक खास पैरा उसमें पीछे से जोड़ना पड़ा था। मैं अब उस पत्र की साफ-साफ नकल प्यारेलाल द्वारा टाइप की हुई भेजता हूँ जिन्होंने महादेव देसाई की जगह ले ली है। इसमें आपको पीछे से जोड़ा हुआ वह पैरा अपनी ठीक जगह पर मिलेगा।

आपका सच्चा मित्र

मो० क० गान्धी

सरकार के गृह विभाग के संयुक्त सैक्रेटरी का पत्र

७ फरवरी १९४३ ई०

प्रिय मि० गान्धी,

वायसराय महोदय ने भारत सरकार को सूचित किया है कि—आप

कुछ खास स्थितियों में २१ दिन का उपवास करने का विचार कर रहे हैं जिसकी सूचना आपने उनको दी है। सरकार ने इस स्थिति पर विचार कर लिया है और विचार करने के बाद वह उन नतीजों पर पहुँची है, जिनका जिक्र साथ के सरकारी वक्तव्य में हैं। यह वक्तव्य आपका इरादा कायम रहने की हालत में अखबारों में प्रकाशित कर दिया जायगा।

आपको इस वक्तव्य से ज्ञात हो जायगा कि भारत सरकार आपको उपवास करता हुआ देख कर बहुत दुखी होगी। मुझे आपको यह सूचित करने की हिदायत दी गई है और साथ के वक्तव्य से भी यह जाहिर है कि अगर आपने अपना उपवास का इरादा नहीं छोड़ा तो आप उपवास कायम रहने तक जेल से छोड़ दिए जायेंगे ताकि आप उसको पूरा कर सकें। आप उपवास के समय में जहां कहीं जाना चाहेंगे वहां जा सकेंगे। भारत सरकार का विश्वास है कि आप आगा खाँ के महल को छोड़कर कहीं दूसरी जगह अपने रहने का इन्तिजाम कर लेंगे।

यदि आप इस सुविधा का फायदा किसी कारण न उठाना चाहते हों, जिस पर सरकार को दुख ही होगा, तो सरकार इस वक्तव्य में उचित हेरफेर कर देगी और उसकी एक नकल आपके पास भेज देगी; लेकिन सरकार की इच्छा के अनुसार मैं उसकी यह चिन्ता और आशा फिर दुहराता हूँ कि जिन बातों का ख्याल रखना उसने इतना जरूरी समझा है उन बातों का ख्याल रखना आप भी उतना ही जरूरी समझेंगे और इस इरादे पर अमल नहीं करेंगे। उस हालत में निःसन्देह कोई भी वक्तव्य प्रकाशित करने की आवश्यकता नहीं होगी।

आपका

आर० टाटेनहम

सरकार के संयुक्त सैक्रेटरी को गान्धीजी का उत्तर

८ फरवरी १९४३

प्रिय सर रिचार्ड,

मैंने बड़ी सावधानी के साथ आपका पत्र पढ़ा। मुझे दुख के साथ यह कहना पड़ता है कि वायसराय महोदय और मेरे बीच जो पत्र व्यवहार हुआ है उसमें ऐसी कोई बात नहीं है जिससे मेरे लिए उपवास करने के इरादे को वापस लेना उचित हो जाता। इस को रोकने या स्थगित करने की शर्तें मैं वायसराय महोदय को लिखे गये पत्रों में बता चुका हूँ।

अगर मेरी सुविधा के लिए अस्थायी तौर पर मुझे रिहा कर देने की तजवीज है तो मुझको रिहाई की जरूरत नहीं है। एक नजरबन्द या कैद की हैसियत में उपवास करने में मुझे सन्तोष होगा। अगर यह रिहाई सरकार की सुविधा की दृष्टि से दी जा रही है तो मुझे दुख है कि मैं चाहे ऐसा करना पसन्द करूँ तो भी उसके अनुकूल चलने में मैं असमर्थ हूँ। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि एक कैदी की हैसियत से जहाँ तक मानव के लिए सम्भव है मैं वहीं तक खुद उपवास से, जितनी उसको हो सकती है उससे ज्यादा असुविधा के कारण नहीं पैदा होने दूँगा।

मैंने स्वतन्त्र व्यक्ति के रूप में इस उपवास को करने का विचार नहीं किया है। अब से पहले की भाँति इस समय भी ऐसी स्थितियाँ पैदा हो सकती हैं जिनमें मुझको स्वतन्त्र व्यक्ति के रूप में उपवास करना पड़ सकता है, इसलिए अगर मुझको रिहा कर दिया गया तो मैं इस रूप में उपवास नहीं करूँगा जिसका जिक्र मैंने अपने पत्रों में किया है। मुझको स्थिति की नए सिरे से जाँच करनी पड़ेगी और अपने कर्त्तव्य का फैसला करना होगा। मुझे झूठे बहाने करके जेल से रिहा होने की कोई इच्छा नहीं

है। जो कुछ मेरे विरुद्ध कहा गया है उसके बावजूद मुझे आशा है कि मैं अपनी सत्य और अहिंसा की प्रतिज्ञा ही मेरी जिन्दगी को कायम रखने लायक बनाती है चाहे आत्म-सन्तोष के लिए ही सही, मैं तो यही कहता हूँ। जब कभी मुझे बाहरी अन्धकार आ घेरता है जैसा कि इस समय भी है, तब अपने इस विश्वास को दुहराने से मुझको लाभ होता है।

मुझको ऐसा नहीं करना चाहिए जिससे सरकार को इस पत्र पर फैसला करने में कोई जल्दबाजी करनी पड़े। मुझको मालूम हुआ है कि आपका यह पत्र टेलीफून पर बोलकर लिखाया गया है। सरकार को काफी वक्त देने के ख्याल से अगर जरूरत होगी तो मैं अपने उपवास को १० फरवरी बुधवार तक रोक दूँगा।

सरकार जो वक्तव्य प्रकाशित करना चाहती है और जिसकी एक नकल आपने मुझको भेजने की कृपा की है उसके सम्बन्ध में मुझको कोई राय नहीं देनी है, लेकिन अगर उसके सम्बन्ध में मेरे लिए राय देनी सम्भव होती, तो मैं यह जरूर कहता कि इससे मेरे साथ अन्याय होता है। उचित यह होगा कि सारा पत्र व्यवहार ही प्रकाशित कर दिया जाय, और लोगों को खुद फैसला करने दिया जाय।

आपका
मो० क० गान्धी

सरकार का जवाब

९ फरवरी १९४३ ई०

प्रिय मि० गान्धी,

मुझसे कहा गया है कि आपके ८ फरवरी के पत्र की पहुँच आपको भेज दूँ। यह पत्र वाइसराय और उनकी कार्यकारिणी परिषद् के सामने पेश

कर दिया गया है । सरकार को आपके इस फैसले से बहुत दुख हुआ है । उसकी स्थिति अब भी वही है । वह आपको उपवास करने के लिए उपवास कायम रहने के वक्त तक रिहा करने को तय्यार है; लेकिन अगर आप इस सुविधा का फायदा उठाना नहीं चाहते और नजरबन्दी की हालत में ही उपवास करना चाहते हैं, तो आप ऐसा केवल अपनी जिम्मेदारी पर ही करेंगे और उसकी जोखम भी खुद ही लेंगे । उस हालत में आपके अपने डाक्टर आपकी देख भाल करेंगे और उपवास के समय में सरकार से मंजूरी लेकर आपके मित्र आपसे मुलाकात भी कर सकेंगे । सरकारी वक्तव्य के मजमून में मुनासिब हेरफेर करने के बाद प्रकाशित कर दिया जायगा ।

आपका

आर० टाटनहम

गान्धी जी का पत्र

१४ अगस्त १९४२

प्रिय लार्ड लिनलिथगो,

सरकार का अपने काम को सही साबित करने वाला प्रस्ताव बात को बिगाड़ कर गलत रूप से रखने वाली चीजों से भरा है । आपके भारतीय साथियों ने उसका समर्थन किया है इस बात का इससे बढ़कर कोई महत्व नहीं कि आप भारत में सदैव ऐसे सेवक पा सकते हैं । उनका सहयोग—जनता तथा और पार्टी क्या कहती हैं इसका ख्याल न करते हुए भी—इस बात को साबित करता है कि आप भारत छोड़ दें—

भारत की सरकार ने कम से कम मेरे एक आन्दोलन के श्री गणेश [illegible] तो रास्ता देखा ही होता । मैंने खुले तौर से कह दिया था कि ठोस आन्दोलन

शुरू करने से पहले आपको एक पत्र देने का विचार है और वह पत्र आपके पास कांग्रेस की तरफ से निष्पक्ष जाँच के लिए अपील के रूप में होता।

आप जानते हैं कि काँग्रेस ने उस हर भूल को सुधारा था जो उसकी माँग की धारणा में दोषपूर्ण पाया गया था अगर आपने मुझे अवसर दिया होता तो मैं सारी कठिनाइयों को निभा लेता। सरकार के द्वारा उठाया कदम, किसी को भी सोचने को मजबूर कर सकता है कि काँग्रेस जिस प्रकार से धीरे-धीरे और धैर्य के साथ सीधे कदम की ओर बढ़ रही थी, उससे सम्भव था दुनिया की जनता काँग्रेस के निकट आती जाती और सरकार के, काँग्रेस की माँग को न मानने वाले, बहाने के खोखलेपन का भण्डा फूट जाता।

अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी के प्रस्ताव पास करने के बाद कम से कम शुक्रवार और शनिवार के मेरे भाषणों की रिपोर्टों का रास्ता तो जरूर देखा होता और आपने उसमें देखा होता कि मैं शीघ्र ही कोई कदम उठाने नहीं जा रहा हूँ। आपने उस समय दिए गए बीच के अवकाश का फायदा उठा कर काँग्रेस की माँग को पूरी कराने की सम्भावनाओं को निकाला होता।

प्रस्ताव में है—"भारतीय सरकार ने धैर्यपूर्वक राह देखी है कि काँग्रेस को अब भी समझ आ जाए पर उसे इस आशा से निराश ही होना पड़ा" मेरा खयाल है कि अधिक बुद्धिमानी से मतलब है कि काँग्रेस अपने को खतम कर देती।

जो सरकार भारत को आजादी देने के लिए वादा कर चुकी है उस माँग को जो सदैव उचित है, खतम करने की आशा काँग्रेस से क्यों करती है? क्या यह एक ऐसी चुनौती थी जिसका एक जवाब दमन ही था जब कि माँग करने वाली पार्टी से धैर्यपूर्वक तर्क हो सकता था?

यह कहना कि माँग मजूर करने से "भारत एक गड़बड़ी में फस जायगा" मैं कहने का साहस करता हूँ कि मानवता के विश्वास पर आरोप है। खैर, माँग नामजूर करने से सारा देश और सरकार दोनों ही गड़बड़ी में पड़

गए हैं । कॉंग्रेस संयुक्त राष्ट्रों के हितों से अपने हित मिलाने की हर कोशिश कर रही थी ।

सरकारी प्रस्ताव में कहा गया है—"गवर्नर जनरल पिछले कुछ दिनों से, जो कॉंग्रेस दल के द्वारा गैरकानूनी और कहीं-कहीं हिन्सात्मक कार्यवाहियां करने की खतरनाक तय्यारियाँ की जा रही हैं अच्छी तरह जानते हैं जिनमें तार काटना, पटरी उखाड़ना, सड़क खोदना, हड़तालों का संगठन, सरकारी नौकरों का भड़काना, रक्षा के कामों में विघ्न डालना और रंगरूटों की भरती में रुकावट डालना शामिल हैं"।

यह सच्चाई को भोंडे और गलत रूप में रखना है । हिन्सा कहीं भी किसी रूप में सोची भी नहीं गई । अहिन्सक कदम में क्या शामिल होगा, इसकी परिभाषा को विचित्र तरीके से लिया गया है, जैसे कॉंग्रेस कोई हिन्सात्मक कार्यवाही करने जा रही हो ।

हर चीज पर कॉंग्रेस के दायरे में खुले तौर से विचार विनमय हुआ था क्योंकि कोई चीज छिपा कर की जाने वाली न थी । और जब मैं आप से उस काम को छोड़ देने को कहूँ जिससे आप अंग्रेज जनता को हानि पहुँचा रहे हैं तो यह आपकी नेकनीयती में बाधा देना कैसे हुआ ?

मुख्य कॉंग्रेस--जनों की गैरहाजिरी में उनके खिलाफ गलत-गलत चीजें छापने के स्थान पर ज्योंही आपको इन चीजों की खबर मिली थी । आपने उन सब पार्टियों के खिलाफ जो तय्यारियाँ" कर रही थीं, कार्यवाही की होती । वह सही रास्ता होता । सरकार ने अपने प्रस्ताव में जुर्मों के समर्थन में कुछ नहीं कहा और यह अन्यायपूर्ण वर्ताव के जुर्म से बरी नहीं हो सकती ।

कॉंग्रेस आन्दोलन जनता में बलिदान की उस भावना को लाने के लिए किया जाने वाला था, जिससे सरकार उसकी बात सुनने के लिए ध्यान दे । यह सिर्फ उस जन-समर्थन को दिखाने के लिए होता जो कॉंग्रेस के पीछे था यह समय एक जन आन्दोलन को जो अहिन्सक था कुचल देने

के लिए बुद्धिमत्तापूर्ण था ?

सरकारी प्रस्ताव में आगे है—"काँग्रेस भारत की आवाज नहीं है। तथापि खुद अपने अधिकार जमाने के लिए, अपनी तानाशाह नीति के लिए उसके नेताओं ने सदा भारत को एक राष्ट्र बनने देने के रास्ते में अड़चनें डाली हैं" हिन्दुस्तान के सब से पुराने राष्ट्रीय आन्दोलन पर यह इलजाम लगाना उसको बुरी तरह बदनाम करना है। ऐसी सरकार द्वारा कही गई यह बात झूठ है, जिसने, जो प्रकाशित हुए कागजों के द्वारा साबित हो सकता है, लगातार हर राष्ट्रीय प्रयत्न को जो आजादी की तरफ ले जाता खतम करने की कोशिश की है, और काँग्रेस को सही या गलत तरीके से दबाया है।

भारतीय सरकार ने कभी भी काँग्रेस की उस बात पर विचार नहीं किया जिसमें उसने कहा था कि अगर भारत की आजादी की घोषणा के साथ यदि वह काँग्रेस पर अस्थायी राष्ट्रीय सरकार बनाने के लिए विश्वास न कर सके तो वह मुस्लिम लीग से ऐसा करने के लिए कहे और काँग्रेस उस सरकार को नेकनीयती से मानने को तय्यार हो जायेगी जो कि मुस्लिम लीग द्वारा कायम की जायगी। ऐसे प्रस्ताव में और उस जुर्म में जो काँग्रेस के खिलाफ तानाशाह होने का लगाया जाता है कहीं भी साम्य नहीं है।

मुझे सरकारी प्रस्ताव की परीक्षा करने दीजिये—"ज्योंही राष्ट्र का एक दूसरे के प्रति विद्वेष खतम हो जाता है त्योंही भारत खुद निर्णय करने, आजादी के साथ हर पार्टी के आधार पर जो उसकी परिस्थितियों के योग्य हो अपनी सरकार चुनने के लिए आजाद होगा"।

क्या इसमें कुछ भी सत्यता है ? सारी पार्टियाँ आज भी एक निर्णय पर नहीं आई। क्या यह लड़ाई के बाद भी सम्भव हो सकेगा ? क्या पार्टियों को आजादी से पूर्व ही कुछ करना होगा।

पार्टियाँ बरसात में कुकरमुत्ते की तरह उठ खड़ी होती हैं और उनके प्रतिनिधित्व के बिना किसी प्रमाण के सरकार उनका स्वागत करती है, जैसा उन्होंने पहले भी किया है कि यदि वह आजादी के लिए जबनी लपालपी को

साथ-साथ कॉंग्रेस और उसके कामों का विरोध करती रहें तो सरकार की भेंट में निराशा और पस्तहिम्मती तो पुरानी चीज हैं।

इसलिए तर्क पूर्ण "छोड़ दो" की आवाज, पहले। केवल ब्रिटिश शक्ति की समाप्ति पर और भारत की राजनैतिक स्थिति में आधारभूत परिवर्तन होने पर यानी गुलामी से आजादी पाने पर ही, सच्ची प्रतिनिधि सरकार, चाहे स्थायी, हो या अस्थायी सम्भव है। इस माँग के रखने वाले की जिन्दा समाधि ने गतिरोध को खत्म न करके और गहरा ही किया है।

आगे सरकारी प्रस्ताव है—"भारतीय सरकार कॉंग्रेस के द्वारा रक्खा गया यह सुझाव कि भारत के करोड़ों जन इतने शहीद देशों की मिसाल होते हुए भी, अपने भविष्य के विषय में अनिश्चित होते हुए भी हमलावर के हाथों में अपने को सौंप देने को तय्यार हैं, इस महान देश की जनता की भावनाओं का सच्चा प्रतिनिधि नहीं मान सकती"।

मैं करोड़ों के विषय में तो नहीं जानता लेकिन कॉंग्रेस के वक्तव्य के लिए अपनी ही गवाही पेश करता हूँ। यह सरकार पर है कि वह कॉंग्रेस के गवाह को न माने।

यह किसी भी साम्राज्यवादी शक्ति को पसन्द नहीं कि उससे कोई कहे कि वह खतरे में है। कॉंग्रेस ब्रिटेन से केवल इसीलिए भारत को आजाद करने की और अपना साम्राज्यवाद खतम करने को कहती है क्योंकि वह उन साम्राज्यवादी ताकतों की तरह जो बरबाद हो चुकी हैं उसे खत्म होते नहीं देखना चाहती।

कॉंग्रेस का आन्दोलन के विचार दोस्ताना होने के अलावा और किसी वजह से नहीं था। कॉंग्रेस का विचार साम्राज्यवाद का खतम करना उतना ही ब्रिटिश जनता और मानवता के हित में है जितना भारत के हित में। खिलाफ लगाए गये जुर्मों के विरोध में मैं फिर कहता हूँ कि कॉंग्रेस का समूचे भारत और विश्वहित से अलग कोई हित नहीं है।

प्रस्ताव का अन्तिम अंश मनोरंजक है। "परन्तु भारत की सुरक्षा की, उसके लड़ाई जारी रखने की शक्ति की, और बिना किसी भय या पक्षपात

के भारत के लोगों में सन्तुलन बनाए रखने की जिम्मेदारी हमारी है" इस सम्बन्ध में मैं तो इतना ही कह सकता हूँ कि मलाया सिङ्गापुर और बरमा में जो कुछ हुआ उसके बाद यह बात कहना सत्य का उपहास करना है। यह देखकर दुख होता है कि जिन दलों को खुद सरकार ने जन्म दिया है वह उन्हीं का सन्तुलन रखने का दावा करती है।

एक बात और, जिस उद्देश्य की घोषणा की गई है वह हमारा और भारत सरकार का संयुक्त उद्देश्य है। बहुत स्थूल शब्दों में हमें चीन और रूस की स्वतन्त्रता रक्षा की करनी है। भारत सरकार का खयाल है कि उस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए हिन्दुस्तान की स्वतन्त्रता जरूरी नहीं है। मेरा खयाल इसके विपरीत है।

इस सम्बन्ध में मैंने जवाहरलाल नेहरू को अपना पैमाना बनाया है। उनका रूस और चीन से व्यक्तिगत सम्बन्ध, चीन और रूस के भावी सर्व-नाश दुख जितना ज्यादा उन्हें दिखा देता है उतना मुझे नहीं, और यदि कहने दें तो—आपको भी नहीं। उस दुख के सामने वह साम्राज्यवाद से अपना पुराना विरोध भी भूल गये वह नाजीवाद और फासिस्टवाद की सफलता से मुक्ति से भी ज्यादा डरते हैं। मैंने इस सम्बन्ध में उनसे लगातार बातें की हैं वे जिस उत्साह से मेरी स्थिति के विरुद्ध लड़े उसे मैं नहीं कह सकता पर मेरे तर्कों की सच्चाई से वह झुक गए। ऐसा उन्होंने तब किया जब साफ-साफ वह देख लिया कि भारत की आजादी के बिना चीन और रूस की स्वतन्त्रता भी खतरे में है। निःसन्देह आपने ऐसे शक्तिमान मित्र और साथी को कैद करके भूल की है। सरकार ने, एक ही उद्देश्य के रहते हुए भी, काँग्रेस की माँग का उत्तर तीव्र दमन से दिया है और यदि मैं इसका यह नतीजा निकालूँ कि ब्रिटिश के लिए संयुक्त-राष्ट्रों के उद्देश्य की उपेक्षा भारत पर अधिकार अधिक महत्वपूर्ण है तो आश्चर्य न होना चाहिये। उसके द्वारा यह प्रकट नहीं हुआ लेकिन यह उसकी साम्राज्यवादी नीति का मुख्य अङ्ग है।

और इसी इरादे के कारण काँग्रेस की माँग नामन्जूर हुई तथा

दमन शुरू हुआ। यह हत्याकाण्ड जो इतिहास में इतने बड़े पैमाने पर कभी नहीं हुआ, यह दम घोटने वाला है लेकिन इसके साथ सत्य की जो हत्या हो रही है उससे काँग्रेस की स्थिति और भी मजबूत होती है। सरकारी प्रस्ताव सत्य की इस हत्या के उदाहरणों से भरा पड़ा है।

इस लम्बे पत्र को मैं दुख के साथ भेज रहा हूँ। लेकिन आपकी कार्यवाही को मैं चाहे जितना नापसन्द करूँ आपका वैसा ही मित्र हूँ जैसा पहले मैं अब आपसे भारत सरकार की सारी नीति पर फिर से विचार करने की अपील करता हूँ। जो अंग्रेजों के मित्र होने का दावा करता है उसकी प्रार्थना की उपेक्षा न कीजिए। ईश्वर आपका मार्ग प्रदर्शन करे।

आपका

मो० क० गान्धी

वायसराय का उत्तर

२२अगस्त १९४२ ई०

आपके १४ अगस्त के पत्र के लिए धन्यवाद जो मुझे १ या २ दिन पूर्व ही मिला है। कहने की आवश्यकता नहीं कि आपने जो कुछ लिखा है, मैंने बड़े ध्यान से पढ़ा है। और आपके विचारों पर गहराई से सोचा है। लेकिन मुझे भय है कि उसका परिणाम यही है कि मैं कार्यकारिणी के प्रस्ताव पर की गई आपकी आलोचना को या वह प्रर्थना जिसमें भारत सरकार की नीति पर पुनः विचार करने को कहा गया है, नामन्जूर कर दूँ।

आपका

भारत सरकार के मन्त्री को गान्धी जी का पत्र

२३ सितम्बर १९४२ ई०

महोदय!

काँग्रेस के साथ व्यवहार करने में सरकार जिस नीति पर रही है, उसके लिए वर्तमान सरकार के साथियों के कितने ही राग अलापे जाने के बावजूद मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि अगर सरकार ने उस पत्र का, जिसको मैंने वायसराय को भेजने का विचार किया था, और उसके परिणाम की राह देख ली होती तो देश पर कोई मुसीबत न आई होती, और यह दुख जनक बर्बादी, जिसकी खबरें आई हैं। जरूर न हुई होतीं।

तमाम विरोधी कथनों के बावजूद मेरा दावा है कि अब भी काँग्रेस की नीति पूर्णरूपेण अहिन्सात्मक है। नेताओं की सामूहिक गिरफ्तारियों से ऐसा जान पड़ता है, लोग क्रोध से पागल हो गये और उनको अपने ... अधिकार न रहा। इस होने वाली बरबादी की जिम्मेदारी मैं महसूस करता हूँ काँग्रेस पर नहीं, सरकार पर है।

मुझको सरकार के सामने यही ठीक रास्ता मालूम होता है कि वह काँग्रेस के नेताओं को छोड़ दे, सब दमनकारी कानूनों को वापस ले ले और समझौते के उपाय खोजे। सचमुच हिन्सा की किसी भी कार्यवाही को रोकने के लिये सरकार के पास काफ़ी साधन हैं। दमन से तो केवल असन्तोष और रोष ही पैदा होता है।

चूँकि मुझे अखबार लेने की अनुमति मिल गई है इसलिए मेरा कर्त्तव्य है कि देश की दुखजनक घटनाओं पर होने वाली अपनी प्रतिक्रिया सरकार तक पहुँचाऊँ। अगर सरकार का ख्याल हो कि कैदी की हैसियत से मुझे ऐसे पत्र न लिखने चाहिए तो सरकार की सूचना पाने पर फिर ऐसी भूल न होगी।

आपका
मो० क० गान्धी

नोट—इस पत्र की स्वीकृति सरकार द्वारा बाकायदा पहुँचादी गई थी।

Digitized by Sarayu Trust Foundation, Delhi and eGangotri

भारत सरकार के मन्त्री को गान्धी जी का पत्र

२३ सितम्बर १९४२ ई०

महोदय !

कॉंग्रेस के साथ व्यवहार करने में सरकार जिस नीति पर रही है, उसके लिए वर्तमान सरकार के साथियों के कितने ही राग अलापे जाने के बावजूद मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि अगर सरकार ने उस पत्र का, जिसको मैंने वायसराय को भेजने का विचार किया था, और उसके परिणाम की राह देख ली होती तो देश पर कोई मुसीबत न आई होती, और यह दुख जनक बर्बादी, जिसकी खबरें आई हैं। जरूर न हुई होतीं।

तमाम विरोधी कथनों के बावजूद मेरा दावा है कि अब भी कॉंग्रेस की नीति पूर्णरूपेण अहिन्सात्मक है। नेताओं की सामूहिक गिरफ्तारियों से ऐसा जान पड़ता है, लोग क्रोध से पागल हो गये और उनको अपने [illegible] अधिकार न रहा। इस होने वाली बरबादी की जिम्मेदारी मैं महसूस करता हूँ कॉंग्रेस पर नहीं, सरकार पर है।

मुझको सरकार के सामने यही ठीक रास्ता मालूम होता है कि वह कॉंग्रेस के नेताओं को छोड़ दे, सब दमनकारी कानूनों को वापस ले ले [illegible] समझौते के उपाय खोजे। सचमुच हिन्सा की किसी भी कार्यवाही को [illegible] के लिये सरकार के पास काफ़ी साधन हैं। दमन से तो केवल असन्तोष और रोष ही पैदा होता है।

चूँकि मुझे अखबार लेने की अनुमति मिल गई है इसलिए मेरा कर्तव्य है कि देश की दुखजनक घटनाओं पर होने वाली अपनी प्रतिक्रिया सरकार तक पहुँचाऊँ। अगर सरकार का ख्याल हो कि कैदी की हैसियत से मुझे ऐसे पत्र न लिखने चाहिए तो सरकार की सूचना पाने पर फिर ऐसी भूल न होगी।

आपका
मो० क० गान्धी

नोट—इस पत्र की स्वीकृति सरकार द्वारा बाकायदा पहुँचादी गई थी।